रामचन्द्रिका सटीक

कविवर श्रीकेशवदासरचित

जिसका

श्रीरामचरणपरागमधुकर मैथिलीचरणसमाश्रित जानकीप्रसाद ने अत्युत्तम नागरी भाषा में तिलक किया

बाबू मनोहरलाल भार्गव, बी. ए., सुपरिं[illegible]

मुंशी नवलकिशोर सी. आई. ई., के छापेखाने में छपी

सन् १९१५ ई० ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

रामचन्द्रिका सटीक ॥

वन्दना ॥

कवित्त ॥ कुंडलित शुण्ड गण्ड गुंजत मलिंदझुण्ड बन्दन विराजै मुण्ड अद्भुतगति को । भालशशिभाल तीनि लोचन विशाल राजैं फणिगण-माल शुभसदन सुमति को ॥ ध्यावत विनाहीं श्रम लावत न बार नर पावत अपार मोद भार धनपति को । पापगन मंदन को विघन निकंदन को आठो याम वंदन करत गनपति को १ स० ॥ जिनको अवलोकतहीं मनरंजन कंजन की रुचि दूरि बहैये । मधुपालिन मालिन की द्युतिशालिन आलिन दामन के मनठैये ॥ निधि सिद्धि अशेष के धाम सदा सुख पूरण पूरण पुण्य न पैये । पदवन्दन कै गिरिजापति के रघुनन्दन राम की कीरति गैये २ क० ॥ तीन्यौरूप तेरेई प्रभावनि त्रिदेव उतपति प्रतिपाल प्रलै निज गति कीजिये । नारद गणेश व्यास बालमीकि शेष आदि तव कृत पूरी लोक लोक यश लीजिये ॥ सागर अपार हौं चहत पैरि पार जायो जग उपहास के प्रकाशभय भीजिये । शारदा भवानि कहौं जोरि युगपानि जन जानकीप्रसाद पै कृपाकी कोर दीजिये ३ दोहा ॥ उत वरणन रघुवर सु-यश इत मम प्रणप्रतिपाल ॥ ताते पवनकुमार को करौं भरोस विशाल ४ बारबार वन्दन करौं गुरुचरणन सुखपाइ ॥ निज शिक्षा अंजन हृदय दियो अदृष्ट देखाइ ५ कवित्त ॥ दामिनीसी दमकति पीतपट भांति हीराहार वक-पांतिको प्रकाश धरियत है । जुगुनू से भूषण जवाहिर जगत सुनि शबदम-यूर साधु मोद भरियत है ॥ जानकीप्रसाद जग हरित करन मीठे बैन रस बैरी ज्यों जवासे जरियत है । राजसभा विपद विराजैं छविधाम नित राम घनश्याम को प्रणाम करियत है ६ षट्पद ॥ परमप्रीति सिय जासु संग दामिनिसम सोहै । शीशमुकुट बहुरंग अंग सुरधनुछवि रोहै ॥ कौंधनि हँसनि सुबैन वारि जगहित बरसावहिं । निरखि संतजन मोर जोर जय शोर मचावहिं ॥ मन चतुर किसान विचारि करि नहिं उपाय देख्यो बियो । घनश्याम राम उरआनि करि स्वमतिशालि सिंचन कियो ७

दोहा ॥ तापरिपाक अघाय मन चंचलतानि विहाइ॥ रामचन्द्रिका को तिलक लाग्यो करन बनाइ ८ कठिनाई तम ग्रन्थगृह थलथल विविध विहारु॥ तिलक दीप विनु अबुध क्यों लखैं पदारथ चारु ९ तासों सुमति विचारि चित कीन्हें तिलक अपार ॥ देखि रीति तिनकी कस्यो हौं निजमति अनुसार १० घनाक्षरी ॥ मेदिनी अमर अभिधान चिन्तामनि गनि हारावली आदिको समत उर धरिकै । बालमीकि आदि कविताकी मतिभीनों दीनों ज्योतिष प्रमाण कहूं जुगुति निहारिकै ॥ ग्रन्थ गुरुताके भय सकल न लीन्हों कीन्हों अरथ उकुति पद कठिन ठिहारिकै । रामचन्द्रजूके चरणनि चित राखि रामचन्द्र चन्द्रिकाको कीन्हों तिलक विचारिकै ११ चंचलाछन्द ॥ नैन सूरज वाजि सिद्धि निशीश संवत् चारु । शुक्र संयुत शुक्लपक्ष सुरेशपूजित बारु ॥ चारु दिक्तिथि हस्ततार वरिष्ठयोग नवीन । रामभक्तिप्रकाशिका अवतार तादिन कीन १२ सोरठा ॥ रावणादि मति हीन राम सीय प्रति कटुवचन ॥ तहां अर्थ मृदु कीन जानि प्रभाव सरस्वती १३ दोहा ॥ शब्द लग्यो संबन्धमें रह्यो छन्द में शेष ॥ ताहि मिलायो आनिकै यों कहुँ कथा विशेष १४ कहुँ पूरब पर कथनको लख्यो विरोध विचारि ॥ तहां निवारणको कियो निज मतिकी अनुहारि १५ जहां केर पर्य्यायपद अर्थ बोध नहिं होहि ॥ तहां तासु इति अन्त दै लिख्यो दूसरो जोहि १६ तहां विरोधाभास है अर्थ विरोध प्रकाश ॥ लिख्यो अर्थ अविरोधही तासों सहित हुलास १७ कठिन शब्दको अर्थ जहँ एकठौर नहिं देखि ॥ तहां दसरे ठौर में जानब लिख्यो विशेखि १८ ॥ इति ॥

श्रीगणेशाय नमः ।

रामचन्द्रिका सटीक ॥

बालक मृणालनि ज्यों तोरिडारै सब काल कठिन कराल त्यों अकाल दीह दुखको । विपति हरत हठि पद्मिनी के पातसम पंक ज्यों पताल पेलि पठवै कलुखको ॥ दूरिकै कलंक अंक भवशीशशशिसम राखतहैं केशोदास दासके वपुखको । सांकरेकी सांकर न सनमुख होतही तो दशमुख मुख जोवै गजमुखमुखको १ ॥

बालक पांच वर्षको हाथीसों जैसे मृणाल पौनारोंको सब कालमें तोरि डारत है तैसे गणेश कठिन औ कराल भयानक औ अकाल कहे असमय को जो दीह कहे बड़ो पुत्रमरणादि दासनको दुख है ताको तोरत हैं औ जैसे बालक पद्मिनी कमलिनी के पातको हरत तोरत है तैसे ये विपत्ति दरिद्रादिको हरत हैं औ बालक जैसे पगसों दाबि पंक कहे कीचको पेलिकै पातालको पठावत है तैसे ये कलुप जे पाप हैं तिनको पठावत हैं इहां गजराज को त्यागकरि बालकसम यासों कह्यो पद्मिनी पत्रादि तोरनमें बालक को उत्साह रहत है तैसे गणेशजूको विपत्त्यादि विदारण में बड़ो उत्साह रहत है कौतुकही विदारत हैं औ गणेशजू दासनके कलंकको अंक कहे चिह्नको दूरि करिकै जैसे भव महादेव के शीशको शशि है कलंक रहित ताही विधि दासनके वपुष शरीरको राखत हैं औ जिनके सन्मुख होतही सांकर राजभयादि ताकी सांकर बंधन कही जंजीर सो नहीं रहति ऐसे जे गजमुख गणेश हैं तिनके मुखको दशमुख जे ब्रह्मा विष्णु

महेश तिनके गुरु जोवै कहे निरखते हैं स्तुति करत हैं अथवा दृशमुख जे दशौं दिशा हैं तिनके मुख हैं अर्थ यह दशौंदिशन के माखी स्तुति करत हैं ॥ दश्चवर्पो गजो बाल इत्यभिधानचिन्तामणिः ॥ तो इहां स्तुतिसों अभिकांक्षित वस्तुको मांगिवो सूचित भयो तासों आशीर्वादात्मक मंगल है दूसरो अर्थ जो ग्रंथ कविलोग करतहैं ताकी कथा प्रथम संक्षेप सों कहत हैं सो युक्तिसों याही मंगलाचरण में कह्यो है बालक या पदते श्रीरामचन्द्र को जन्म सूचित भयो औ सबको कालरूप जे सुबाहु ताड़कादि हैं तिन्हें मृणालन पौनारिन के समान सहजही तोरि डारत भये मारत भये औ कठिन औ कराल कहे भयानक ऐसा जो धनुषहै औ अकाल कहे कुसमय को जो दीह बड़ो दुख है ब्याहकृत उत्सव में परशुराम कृत दुख गर्वगति समेत तिनहुनको त्यों कहे ताही प्रकार तो मृणालन बहुवचन है तासों ताड़कादि बध धनुभंग परशुरामगतिभंग सर्वत्र समता कियो इति बालकांडकथा ॥ औ राज्यत्यागरूप जो विपत्ति है ताको हठिकै हरंत कहे ग्रहण करत भये भरतादि को कह्यो न मान्यो आप पद्मिनी कमलिनी के पात कहे पुष्प पत्रसम सुकुमार हैं इति अयोध्याकांडकथा ॥ औ पंक ज्यों कहे पंकके सदृश नीच ऐसा जो बिराध है ताको पेलिकै पातालको पठावत भये बाल्मीकीय रामायण में लिख्यो है कि काहू अस्त्र शस्त्र सों न मरै तब रामचन्द्र जीवतही गाड़िलियो ताही प्रकार कलुष पापरूप जे खरदूषणादि हैं तिनहुनको मारयो इति आरण्यकांडकथा ॥ औ कलंकको है अंक चिह्न जाके ऐसा जो बंधुपत्नीभोगी बालि है ताको दूरि करत मारत भये औ दास जो सुग्रीव है ताको भव महादेव के शीशके शशिके सम राखत भये जैसे भवशीशशशिको राहुको भय नहीं रहत तैसे शत्रुभयरहित सुग्रीव को कियो अथवा महादेवके माथेमें द्वितीयाको चन्द्रमा है यासों या जनायो कि भव संसार को राज्यपाइ सुग्रीव की और बढ़ती हैहै इति किष्किन्धाकांड तथा याही पदमें सुन्दरौकांड है ॥ केशव जे रामचन्द्र हैं तिनके दास जे सुग्रीव हैं तिनके दास जे हनुमान् हैं ताके बपुष शरीरको भवशीशशशि सम राखत भये कि लंका में प्रकाशित करते भये कलंकरूप जे सिंहिका अक्षयकुमारादि हैं तिनको दूरि करिकै कहे मारिकै इति सुन्दरकांडकथा ॥ औ रामचन्द्रके सन्मुख होतही बिभीषण के सांकर कष्टकी जो सांकर जंजीर रही शीत कहे न रहत भई रामचन्द्र के दर्शनही सों

विभीषणको दुख दूरिभयो तब दशमुख जो ब्रह्मा विष्णु महेश हैं ते विभीषणको मुख जोवत भये कि धन्य है विभीषण जाको रामचन्द्र अङ्गीकार कस्यो औ गजमुख जो गणेश हैं तिन मुख कहे आदि दै और देवता हैं ते को कहे कहा हैं अर्थ यह गणेशादि देवता तो जोवतही भये औ सांकर जे यमादिक हैं तिनको सांकर कहे कष्टदेवैया ऐसा जो रावण है सो रामचन्द्र के सन्मुख होतही न रहतभयो गजमुख जे गणेश हैं तिनके मुख कहे श्रेष्ठ ऐसे जो रामचन्द्र हैं तिनके मुखको जोवत भयो अर्थ यह उनके लोकको प्राप्त भयो अथवा मुख जोवै कहे मुख में लीन होत भयो तुलसीकृत रामायण में लिख्यो है कि ॥ तासु तेज प्रभु वदन समाना । सुर नर सबन अचंभौ माना ॥ इति युद्धकांडकथा ॥ औ सांकर जो रावण है ताके सांकर जो रामचन्द्र हैं तिन्हैं अयोध्याके सन्मुख होतही दशमुख जे ब्रह्मा विष्णु महेश हैं ते मुख कहे मुख्य औ गजमुख जे गणेश हैं ते रामचन्द्रको मुखजोवै कहे स्तुति करत हैं अथवा दशमुख कहे दशौ दिशाके मुख्य औ गजमुख मुख कहे हाथिन में मुख्य ते मुख जोवै कहे रामचन्द्रको मुख निहारत हैं इति उत्तरकांडकथा ॥ कोऊ कहै कि एक पदमें कैयो फेरि अर्थ कियो सो संक्षेप कथा है तासों दूषण नहीं है याही विधि रामायणादिक तिलककारन अर्थ कियो है याहूपर कोऊ हठ करै ता लिये द्वितीय प्रकार सों अर्थ बालक जो है शिशु सो जैसे बालखेलमें मृणालनको बिनहीं श्रम तोरिडारै कहे तोरि डारत है इहां बालकपदमें जाति में एकवचन है त्यों कहे ताही विधि कठिन अतिकठोर औ भयानक ऐसा जो शम्भुधनुप है ताको बाल अवस्था में बालखेलसम रामचन्द्र तोस्यो त्यहि मुख कहे आदि दै ताड़कावधादि सीयविवाहादि जे बालकांडकी संपूर्ण कथाहैं तिनको इहां मुखपद क्रमकी आदि मो नहीं है श्रेष्ठतामो है औ अकाल कहे कुसमयको जो दीह दुख है अर्थ राम राज्याभिषेक में केकयीको वर मांगिबो रामवनगमन दशरथमरण भरतको व्रत करि नन्दीग्राम में वसन या प्रकारको जो अकाल दुख है त्यहिमुख जे चित्रकूट गमनादि अयोध्याकांडकथा हैं तिनको औ विराध खरदूषणादि राक्षसनको मारिकै ऋषिलोगनकी विपत्तिको सहजही पद्मिनीके पातसम हरत कहे दूरिकरत पंकरत पंक जे पाप हैं तिनको जैसे पेलिकै पातालको पठवै कहे पठै देत हैं अर्थ आपने दासनके जैसे पातक नाश करत हैं ताही विधि कलुप कहे पापरूप बंधुपत्नीभोगी जो बालि है ताको पठायो

अर्थ मारयो तिन मुख जे आरण्यकांड औ किष्किन्धाकांड की कथा हैं तिनको ऋषिनकी विपत्तिहरणादि आरण्यकांड कथा जानौ आदि पदते सीयहरणादि जानौ औ बालिवधादि किष्किन्धाकांड कथा जानौ आदि पदते सप्तताल बेधन सुग्रीव राज्याभिषेकादि जानौ औ क जो है अग्नि तासों लंकके जे अंक कही ध्वजादि चिह्न हैं तिन्हैं दूरिकै बहे विध्वंस करिकै जारिकै इति अर्थ हनुमान् के करसों लंका जारिकै दास जो विभीषण है ताके वपुष को आजु पर्यंत राखत हैं रक्षा करत हैं अर्थ रावणादिको मारि जो विभीषण को लंकाको राज्य दियो तामें आजुलों रक्षा करत हैं तिन मुख कथन को हनुमान् के करसों लंकादाहादि सुन्दर-कांडकी कथा जानौ औ रावणादि को वधकरि विभीषणको राज्यदानादि लंकाकांड कथा जानौ औ भरतको जो सांकर कहे नन्दीग्राम में यतीवेष बसिबेको कष्ट है ताही को जो सांकर कहे बंधन जंजीर है ताको जो नशन कहे नाश करिबो है अर्थ रामचन्द्र आइकै जो भरत के यतीवेष को क्लेश दूरि करयो है तेहि मुख कस है आदि दै औ ज कहे यज्ञ मुख कहे आदि दै अर्थ अश्वमेधादि जे मुख कहे मुख्य कथा हैं तिनको जोग कहे गीत है अर्थ कथन है ताको जे जोवै कहे देखत हैं अर्थ इन कथन सों युक्त रामच-न्द्रिका को जे पढ़त हैं तेही कहे निश्चय करिकै दशमुख मुख होते हैं अर्थ वक्तृत्व करिकै दशमुख के सदृश जिनको एक मुख होतहै बड़े वक्ता होत हैं ॥ मयूरेग्नौ च पुंसि स्यात्सुखशीर्षजलेषु कम् ॥ इति मेदिनी ॥ गंगीतं गातुगाता च गौश्च धेनुः सरस्वतीत्येकाक्षरीयजनेयः समाख्यातः इत्येकाक्षरी १ ॥

बानी जगरानी की उदारता बखानी जाइ ऐसी मति कहौ धौं उदार कौनकी भई । देवता प्रसिद्ध सिद्ध ऋषिराज तपवृद्ध कहि कहि हारे सब कहि न कहूं लई ॥ भावी भूत वर्तमान जगत बखानत है केशोदास केहू न बखानी काहू पै गई । बर्णै पति चारिमुख पूत बर्णै पांचमुख नाती बर्णै षटमुख तदपि नई नई २ ॥

जगरानी कहे जगमें श्रेष्ठ ऐसी जे वाणी सरस्वती हैं तिनकी उदारता बड़ाई जासों बखानी जाइ कहौ ऐसी मति बुद्धि उदार बड़ी कौने प्राणीकी

भई है अर्थ काहूकी नहीं भई देवता बृहस्पति आदि औ प्रसिद्ध जे सिद्ध देवयोनि विशेष हैं अथवा भग आदि ऋषिराज वाल्मीक्यादि अथवा सिद्ध जे ऋषिराज हैं तपवृद्ध लोमश मार्कण्डेय आदि जाकी उदारताको कहि कहि कहे वर्णिवर्णिकै सब हारे हैं कहिकै सब उदारता काहू न लई कहे पाई अर्थ उदारता को अंत न पायो हारे यासों कह्यो कि अब नाहीं बखानत औ भावी कहे जे हैहैं औ भूत जे ह्वैगये वर्तमान जे हैं जगत् कहे जगके जे प्राणी ते बखानत हैं सो केशवदास कहते हैं कि केहूं कहे काहू प्रकार सों काहू प्राणी सों उदारता न बखानी गई औ पति जे ब्रह्मा हैं ते चारि मुख सों औ पूत महादेव पांच मुखसों नाती स्वामिकार्त्तिक षण्मुखनों वर्णत हैं ताहूपर नई नई कहे नवीन नवीन रहति है अर्थ यह कि यहि प्रकार मुख वृद्धिसों वर्णत हैं परंतु इनको वर्णन जाकी उदारताको छुइ नहीं सकत अथवा ज्यहि वाणी के पति को चारिमुख औ पूतको पांचमुख नातीको षण्मुख सब वर्णन करत हैं यासों या जनायो कि चारिमुख सों संपूर्ण जगत् उत्पत्ति के कर्ता पंचमुख सों नाशकर्ता षण्मुख सों देवतन के रक्षक ऐसे पति पुत्र नाती हैं जाके यासों बड़ी बड़ाई जनायो औ ताहूपर नवीन नवीन होति जाति है २ और अर्थ जा मति सों वाणी जो सरस्वती है तासों जगरानी सीताजूकी उदारता बखानी जाइ ऐसी मति वाणी के कौन की कीन्हीं भई है अर्थ कौने ऐसी मति वाणी को दीन्हीं औ जा वाणी के पति पुत्रादि चतुरादि मुखसों वर्णत हैं और अर्थ एकही है अथवा सरस्वती की उक्ति है कि वाणी जो मैं हौं तासों जगरानी सीताजूकी उदारता बखानी जाइ कहे जाति है काकु सों अर्थ यह कि मोसों नहीं बखानी जाति काहेते कि ऐसी कौनकी उदारमति भई है कि जो बखानै काहे ते कि देवतादि औ मेरे पति पुत्रादि सब बखानत हैं ताहूपर नई नई रहति है ऐसी सरस्वती को अथवा सीताजूको नमस्कार करत हौं इति शेषः यामें नमस्कारात्मक मंगल है २ ॥

अन्यच्च ॥ पूरण पुराण अरु पुरुषपुराण परिपूरण बतावैं न बतावैं और उक्तिको । दरशन देत जिन्हें दरशन समुझै न नेति नेति कहै वेद छांड़ि भेदयुक्तिको ॥ योनि यह केशोदास अनुदिन राम राम रटत रहत न डरत पुनरुक्तिको ।

रूप देहि अणिमाहि गुण देहि गरिमाहि भक्ति देहि महि-माहि नाम देहि मुक्तिको ३ ॥

जिन रामचन्द्रको पूरण कहे संपूर्ण अठारहो पुराण अथवा पूरण कहे जे कछु वस्तु चाहत नहीं शुकादि पुराण स्कंदादि औ पुरुषपुरातन लोमश मार्कंडेय आदि ते परिपूर्ण कहे सर्वत्रव्याप्त बतावत हैं और उक्ति कहे कथा को नहीं बतावत अर्थ की ओर तर्क नहीं करत श्रीरामचन्द्रजी जाको द-र्शन देत हैं ताको फेरि दर्शन की समुझ ज्ञान नहीं रहति अर्थ जाको रामचन्द्र को दर्शन होत है सो तिनमें लीन हैजात है सायुज्य मुक्ति को प्राप्त होत है अथवा और दर्शन स्त्री पुत्रादि की समझ नहीं रहति अर्थ संसार को बंधन मोह छूटिजात है रामरूपही ध्यानमें निरखत है औ वेद जिनको अनेक भेदसों गान करि नेति नेति कहे नइति नइति कहे याही प्रकार को है सो न कहे नहीं हम जानत या प्रकार सब भेदकी युक्तिको छोड़ि कहत है अर्थ यह कि जिनको प्रमाण वेदऊ नहीं जानत रूप जो रामचन्द्र को है सो अणिमा सिद्धि को देत है औ गुण जे हैं ते गरिमा सिद्धि देत हैं औ भक्ति महिमा सिद्धि को देति है औ नाम मुक्तिको देत है यह जानिकै काव्यरीति में एकई वस्तु को द्वैबार कहौं तौ पुनरुक्ति दूषण होत है ताको भय छोड़िकै मुक्ति की इच्छाकरि अनुदिन रोज रोज राम नामको रटन हौं अर्थी दोषं न पश्यतीति प्रमाणात् और अर्थ जो राम नाम को पुराणादि परिपूर्ण कहे भुक्ति मुक्त्यादि सब वस्तु सों पूरित अथवा सर्वत्र व्याप्त बखानत हैं सर्वत्र रहत हैं जहां चाहिये तहां लीजिये सब स्थान में मिलत हैं औ जिनको दर्शन कहे षट्शास्त्र तिनकी समुझ नहीं है तिनको रामचन्द्र दर्शन देत हैं अति मूर्ख वाल्मीक्यादि नामहीं के जपसों रामचन्द्र को दर्शन पायो अथवा दर्शन ज्ञान देत हैं नेति नेति कहे नइति नइति कि सम्पूर्णार्थ इनहीं से कहे कि वाल्मीकै से हीनगतिका यवनादि अनेकन पतितनको रामनामै सिद्धता को प्राप्त कीन है जाति कुल विद्याके भेद की युक्ति को छांड़िकै कछू जाति कुल विद्यापर नहीं है जोई नामोच्चारण करै सोई सिद्ध होइ या प्रकार वेद कहत है अथवा प्रथमहीं को अर्थ जानो जा नाम के माहात्म्यको वेद नहीं जानत फेरि नाम कैसो है रूप सौन्दर्य औ अणिमा सिद्धि औ अनेक गुण औ गरिमा सिद्धि औ महिमा सिद्धि औ नाम

कहे यश औ मुक्तिको देत है तौ सौन्दर्यादि जे दृष्टफल हैं ते जहां देखिये तहां रामनामहीं के प्रभावसों जानियो औ मुक्ति अदृष्टफल है ताके अर्थ अन्त्य अवस्था में सब रामनाम कहावतहैं यह सनातन रीति चली आवति है तासों जानियत है कि मुक्ति को दाता रामनाम छोड़ि दूसरो नहीं है अथवा रूप जो है वेप तामें अणिमादि सिद्धि देते हैं जैसो सूक्ष्मरूप चाहैं तैसो धरैं औ गुणन में गरिमा सिद्धि देत हैं रामनाम के जप प्रभावते सब गुण विद्यादि गुरु होतहैं औ भक्ति में महिमा सिद्धि बड़ाई देत है जो राम नाम जपतहै सो बड़ो भक्त कहावत है औ नाममें मुक्ति को देतहै अर्थ राम भजन प्राणिन की मुक्तिको जीवन में सब नाम गनत हैं अथवा नाम यश औ मुक्ति को देत है सो यह कहे ऐसो प्रभाव जानिकै केशवदास जो है सो पुनरुक्ति भय छांड़िकै अनुदिन राम नाम को रटत है या ग्रन्थ में राम नाम वस्तु है ताको निर्देश करत मंत्र है तासों वस्तु निर्देशात्मक मंगल है ३ ॥

सुगीतछंद ॥ सनाढ्यजाति गुनाढ्य हैं जगसिद्ध शुद्ध स्वभाव। कृष्णदत्त प्रसिद्ध हैं महि मिश्र पंडितराव ॥ गणेश सो सुत पाइयो बुध काशिनाथ अगाध। अशेषशास्त्र बिचारिकै जिन जानियो मत साध ४ दोहा ॥ उपज्यो तेहि कुल मन्दमति शठ कविकेशवदास ॥ रामचन्द्रकी चन्द्रिका भाषा करी प्रकास ५ सोरहसै अट्ठावन कातिक सुदि बुध वार ॥ रामचन्द्रकी चन्द्रिका तब लीन्हो अवतार ६ बालमीकिमुनि स्वप्न में दीन्हो दरशन चारु ॥ केशव तिनसों यों कह्यो क्यों पाऊं सुखसारु ७ मुनि-श्रीछंद ॥ सिद्धि ऋद्धि ८ सारछंद ॥ रामनाम सत्यधाम ९ और नामको न काम १०॥

गुणाढ्य गुणनसों पूरित औ साधुमत उत्तममत छंद उपजाति है जा छंद में और और द्वै आदि छंद के चरण होइँ सो छंद उपजाति कहावतिहै ४।५ जो मैं तिथि नहीं कह्यो सो वार पदते सात वारहैं तासों सप्तमी तिथि सब कहते हैं परंतु ज्योतिष के ग्रन्थ ग्रहलाघवादि के मत सों कल्पांत अहर्गण किये बुधवार पंचमी औ द्वादशीको आवतहै सो द्वादशी भद्रातिथि है और

बुधे भद्रा सिद्धियोग होतहै औ कार्त्तिक सुदी एकादशी को विष्णु जागतहैं विष्णुके जागे के उपरान्त ग्रन्थारम्भ करचो तौ चैत्रादिमास गणनासों कार्त्तिक पर्यंत आठ औ रविवारादि वार गणनासों बुधपर्यंत चारि जोरि द्वादशी तिथि जानो ६ सुखसार मुक्ति चौबीसयें प्रकाश में रामचन्द्र कह्यो है कि जगछूटे सुख योग तासों जानों ७ तीनि छंदकी अन्वय एक है सिद्धि जो आठ अणिमादिक हैं और ऋद्धि सम्पत्ति औ सत्यको धाम ऐसो जो रामनाम है तासों सुखसार पैहौ सुखसार देबेको और नामको काम नहीं है तौ सिद्धिको धाम कहि ऐहिक सुखप्रद जनायो औ सत्तको धाम कहि सत्यही ब्रह्म है तासों ब्रह्मरूपप्रद जनायो अर्थ जीवत में या लोक में सुखद है औ अन्तमें ब्रह्मपदप्रद है ८ । ९ । १० ॥

केशव-रमणछंद ॥ दुख क्यों टरी है ॥ मुनि-हरिजू हरी है ११ मुनि-तरणिजाछंद ॥ बरणिबे बरणसो ॥ जगत को शरणसो १२ प्रियाछंद ॥ सुखकंद है रघुनंदजू ॥ जग यों कहै जगबंदजू १३ सोमराजीछंद ॥ गुनो एकरूपी सुनो वेद गावैं ॥ महादेव जाको सदा चित्तलावैं १४ कुमारललिताछंद ॥ विरंचि गुण देखै । गिरा गुणनि लेखै ॥ अनंत मुख गावै । विशेष यही न पावै १५ ॥

केशव पूछ्यो कि लोभ मोहादि कृत जो दुखहै सो कैसे टरिहै तब मुनि कह्यो कि जब तू रामनाम ग्रहण करिहै तब रामचन्द्र हरिहैं छोड़ाइ हैं इहां हरिशब्द यासों कह्यो कि 'हरति दुःखमिति हरिः' अर्थ दुखहरिबो उनके नामहीं को अर्थ है ११ दुख छोड़ाइ रामचन्द्र मुक्ति देहैं या निश्चय के अर्थ रामचन्द्र को ईश्वरत्व केशवको मुनि चारि छंद में देखावत हैं जो जगत्को शरण रक्षक है सो बरण रूप राम रूप अथवा रामनामांक तुम करिकै बर्णिबे है अर्थ रामचन्द्रको रूप अथवा राम नाम वर्णन करो १२ सब जग कहत है कि रघुनन्दन जे रामचन्द्र हैं ते सुख के कंद कहे मूल हैं इनहीं के आश्रित सब सुख हैं औ जगबंद हैं सब जग जिनको वंदना करत है सुख कंद कहि या जनायो कि सुखसार रामचन्द्रही सों पाइ है और देव देबे को समर्थ नहीं हैं १३ जिन रामचन्द्र को वेद जो हैं सो

एकरूपी कहे जो सदा एकरूप रहत हैं ब्रह्मज्योति जासों गुन्यो कहे ठहरायो है सो गान करत हैं सो हम वेदवाक्य सों सुन्यो है अथवा एक कहे जिनसम दूसरो नहीं है औ रूपी कहे अनेक रूपसों सर्वत्र व्याप्त हैं फिरि कैसे हैं जिनको महादेव सदा ध्यावते हैं १४ यामें रामचन्द्र के गुणन को माहात्म्य है अनंत शेष विशेष निर्णय १५ ॥

नगस्वरूपिणीछंद ॥ भलो बुरो न तू गुनै। वृथा कथा कहै सुनै ॥ न रामदेव गाइहै। न देवलोक पाइहै १६ षट्पद ॥ बोलि न बोल्यो बोल दयो फिरि ताहि न दीन्हो। मारि न मार्यो शत्रु क्रोध मन वृथा न कीन्हो ॥ जुरि न मुरे संग्राम लोककी लीक न लोपी। दान सत्य सन्मान सुयश दिशि विदिशाओपी ॥ मन लोभ मोह मद कामवश भयो न केशवदास भणि। सोइ परब्रह्म श्रीराम हैं अवतारी अवतारमणि १७ दोहा ॥ मुनिपति यह उपदेश दै जबहीं भयो अदृष्ट ॥ केशवदास तहीं कर्यो रामचन्द्रजू इष्ट १८ ॥

तू अनेक कथा वृथा कह्यो सुनो करतहै आपनो भलो बुरो नहीं गुनतो विचारतो जबलौं जैसे पूर्व कहिआये ऐसे रामदेवको न गाइहै तबलौं अनेक कथनसों देवलोक न पैहै इहां देवलोक वैकुंठ जानो वैकुंठ देबे की शक्ति रामचन्द्रही में है और देव नहीं देसकत कहूं रामलोक पाइ है पाठ है तो रामलोक वैकुंठ १६ प्रथम ईशत्व वर्णन कर्यो अब यामें रामचन्द्र को स्वभाव गुण वरण्यो है रामचन्द्रजू बोले सो फेरि नहीं बोले अर्थ जो एक बात कह्यो सोई कर्यो है फेरि बदलिकै और बात नहीं कह्यो वनगमनादि वचन ते जानो औ जाको दान दियो ताको फेरि नहीं दीन्हो अर्थ एकही बार ऐसो दियो जामें वाके फेरि मांगिबे की इच्छा नहीं रही विभीषणादि को लंकादानादिते जानो और शत्रुको एकही बार ऐसो मारिकै नाश कियो जामें फेरि नहीं मारिबे पर्यो खरदूषण रावणादि वधते जानो औ संग्राममें जुरिकै नहीं मुरे खरदूषण रावणादिके युद्धते जानो औ लोककी लीक मर्यादाको लोप नहीं कियो रावणके वधसों ब्रह्मदोष मानि अश्वमेध करनादि सों जानो औ दान औ सत्य औ सन्मान के सुयश करिकै दिशा औ विदिशा ओपी

हैं अर्थ जिनको सुयश दिशि विदिशन में छाइरह्यो है औ जिनको मन लोभ औ मोह औ मद औ कामके वश नहीं भयो राज्य त्यागादि सों लाभ विवश जानो माता पिताको दुखित हुये देखि वनगमन करनादि सों मोह विवश जानो औ अगस्त्यादि ऋषिन के यथोचित सत्कारसों मद विवश जानो एकपत्नीव्रतसों काम विवश जानो जाके ऐसे स्वभाव गुण हैं सोई श्रीराम वाराहादि अवतारन में मुनिश्रेष्ठ अवतारी कहे अवतार को धरे साक्षात् परब्रह्म हैं अथवा श्रीरामअवतारी कहे अनेक अवतारन को धरत हैं औ परब्रह्म हैं १७ अदृष्ट अन्तर्धान इष्ट पूज्य देवता १८ ॥

गाहाछंद ॥ रामचन्द्रपदपद्मंवृंदारकवृंदाभिवंदनीयम् ॥ केशवमतिभूतनयालोचनं चंचरीकायते १९ ॥ चतुष्पदीछंद ॥ जिनको यशहंसा जगत प्रशंसा मुनिजनमानसरंता । लोचन अनुरूपनि श्यामस्वरूपनि अंजनअंजित संता ॥ कालत्रयदर्शी निर्गुणपर्शी होत विलम्ब न लागै । तिनके गुण कहिहौं सब सुख लहिहौं पाप पुरातन भागै २० ॥

वृंदारक जे देवता हैं तिनके वृंद समूह तिन करिकै अभिवंदनी अर्थ जिनको अनेक देवता वंदना करत हैं ऐसे जे रामचन्द्रके पदपद्म पदकमल हैं तिन तन प्रति केशवदास की मतिरूपी जो भूतनया सीता हैं ताके लोचन चंचरीकायते कहे चंचरीक भ्रमर के ऐसे आचरण करत हैं अर्थ जब मुनिकी आज्ञासों रामचन्द्रको इष्टदेवता करयो तब सीतासम सदा राम निकटवर्तिनी हमारी मति के लोचन कमल में भ्रमर सदृश रामचन्द्र चरण में अनेक कौतुक करनेलगे १९ मानस मानसर औ मन आय आपने लोचननके अनुरूप कहे योग्य और के लोचनके योग्य कज्जलादि अंजन है संतन के लोचनन के योग्य रामरूपही है ऐसे जे जिन रामचन्द्र के अनेक प्रतिबिंब श्यामस्वरूपरूपी अंजन है तिनकरि जे संत अंजित हैं अर्थ रामचन्द्रके प्रतिबिंब रूपनको जे संतजन ध्यान में आनत हैं अथवा श्यामस्वरूपनि कहे श्यामरूपतारूपी जो अंजन है ताकरिकै जे संत अंजित हैं तिन संतनको त्रिकालदर्शी औ निर्गुणपर्शी नेत्रन करि ज्योति स्पर्श करै या अर्थ ब्रह्मज्योति के द्रष्टा होत बेर नहीं लागति जे रामचन्द्रको ध्यान करत हैं ते त्रिकालदर्शी होत हैं औ ब्रह्मज्योति को

देखते हैं इति भावार्थः अथवा निर्गुणदर्शी होत कहे निर्गुण ज्योति में मिलिजात बेर नहीं लागति अथवा निर्गुणते पर अन्य विष्णुकी श्री शोभा होत बेर नहीं लागति पुरातन पूर्वकृत २० ॥

दोहा ॥ जागति जाकी ज्योति जग एकरूप स्वच्छंद ॥ रामचन्द्रकी चंन्द्रिका बरणतहौं बहुछंद २१ रोलाछंद ॥ शुभ सूरजकुलकलशनृपतिदशरथ भये भूपति। तिनके सुत भये चारि चतुर चित चारु चारु मति ॥ रामचन्द्र भुवचन्द्र भरत भारतभुवभूषण। लक्ष्मण अरु शत्रुघ्न दीह दानव दलदूषण २२ छत्ताछंद ॥ सरयू सरिता तट नगर बसै अवध नाम यश धामधर ॥ अघओघविनाशी सब पुरवासी अमरलोक मानहु नगर २३ ॥

ज्योति ब्रह्मज्योति अथवा अंगछवि औ बहुछंद कहे अनेक रंग तौ जा रामरूपी चन्द्रकी ज्योति तौ एकरूप है ताकी चन्द्रिका अनेक रंग हैबो आश्चर्य है यह युक्ति है औ अर्थ यह कि बहुत छंद जे दोहादि हैं तिनसों युक्त २१ सूर्यकुल के कलश जे नृपति अजादि हैं तिनमें दशरथ भूपति राजा भये भारत भरतखंड २२ यशको धाम कहे घर है धरा पृथ्वी जाकी औ जा पुरीके वासी देवतन सरिस अघ पापनके ओघ समूहन के विनाशी हैं तासों देवलोक सम है २३ ॥

छप्पै ॥ गाधिराजको पुत्र साधि सब मित्रशत्रुबल। दान कृपान विधान वश्य कीन्हो भुवमंडल ॥ कै मन अपने हाथ जीति जग इंद्रिनगन अति। तपबल याही देह भये क्षत्रिय ते ऋषिपति ॥ तेहि पुर प्रसिद्ध केशव सुमति काल अतीतागतनि गुनि। तहँ अद्भुतगति पगुधारियो विश्वामित्र पवित्र पुनि २४ प्रज्झटिकाछंद ॥ पुनि आये सरयू सरित तीर। तहँ देखे उज्ज्वल अमल नीर ॥ नव निरखि निरखि द्युति गति गँभीर। कछु बरणन लागे सुमतिधीर २५ ॥

अतिनिपट कुटिलगति यदपि आप । वह देत शुद्धगति छुवत आप ॥ कछु आपुन अधअधगति चलंति । फलपति तन को ऊरधफलंति २६ मदमत्त यदपि मातंग संग । अति तदपि पतितपावन तरंग ॥ बहु न्हाइ न्हाइ जेहि जल सनेह । सब जात स्वर्ग शूकर सुदेह २७ ॥

त्रिकालदर्शीत्वते जेतो काल बीते रामचन्द्र को अवतार होनो रहै सो काल अतीत कहे बीतो जानिकै औ जा काल में रामचन्द्रजू यज्ञरक्षा करन लायक भये सो काल आगत आयो गुनिकै २४।२५ दुवौ छंदन में विरोधाभास है आप कहे अपना औ आप कहे जल के छुवतही शुद्धगति मुक्ति देत है अथवा जाके जल को कहूं अनतहूं छुवौ तौ शुद्धगति देत है ऊरध पदते स्वर्ग जानो २६ मद मदिरा सों मत्त यद्यपि मातंग चाण्डालन को संग है विरुद्धार्थः ॥ "मातङ्गः श्वपची हस्तीत्यभिधानचिन्तामणिः" औ मत्त गज जामें स्नान करते हैं इत्यविरोधः ॥ पतितपावन कहे पतितनको पवित्रकर्ता स्नेहनसों ताके जल में न्हाइ न्हाइकै शूकर पर्यन्त बहु प्राणी सुंदर देहको धरि सब स्वर्ग जातहैं अथवा सनेह कहे अप्सरादिकनके इति शेषः ॥ स्नेह सहित अर्थ अप्सरादि स्नेह सहित ताको स्वर्ग लै जाती हैं अथवा तेहिके जलके स्नेहहू सों कहूं होइ सरयूजलमें स्नेह करै स्वर्ग जाइ कहूं सदेहपात है देह सहित स्वर्ग जाइ अर्थ याही देहमें देवरूपताको प्राप्त ह्वै जात हैं जिनको देह त्यागहू को कष्ट नहीं होत इति भावार्थः अथवा शूकर देहसहित जे जीव हैं ते स्वर्ग जातहैं और देहधारी तौ जातही हैं२७॥

नवपदीछंद ॥ जहँ तहँ लसत महामदमत्त । वरबारन बारनदलदत्त ॥ अंगअंग चरचे अतिचंदन । मुंडनभुरकेदेखियबंदन २८ दोहा ॥ दीह दीह दिग्गजनके केशव मनहुँ कुमार ॥ दीन्हे राजा दशरथहि दिगपालन उपहार २९ अरिल्लछंद ॥ देखि बाग अनुराग उपज्जिय । बोलत कल ध्वनि कोकिल सज्जिय ॥ राजति रतिकी सखी सुवेषनि । मनहुँ बहति मनमथ संदेशनि ३० ॥

ग्राम बाहर जहां तहां महावत हाथिनको फेरतहैं तिनका वर्णन है सुभावोक्ति है अथवा स्थानपर बँधे हैं वारण हाथी तिनके दल चमूको अकेलेइ दलिडारत हैं यासों अतिबली जानो अथवा बार कहे बेर नहीं लागति शत्रुदल को दलिडारतहैं भुरके लगाये चंदन रोरी २८ दिक्पाल इंद्रादि उपहार भेंट २९ कल अव्यक्त मधुर ३० ॥

फूलिफूलि तरु फूल बढ़ावत । मोदत महामोद उपजावत ॥ उड़त पराग न चित्त उठावत । भँवर भ्रमत नहिं जीव भ्रमावत ३१ पादाकुलकछंद ॥ शुभसर शोभै । मुनिमन लोभै ॥ सरसिज फूले । अलि रसभूले ॥ जलचर डोलैं । बहु खग बोलैं ॥ बरणि न जाहीं । उर अरुझाहीं ३२ चतुष्पदी छंद ॥ देखी वनवारी चंचलभारी तदपि तपोधन मानी । अतितपमय लेखी गृहथित पेखी जगत दिगंबर जानी ॥ जग यदपि दिगंबर पुष्पवती नर निरखि निरखि मन मोहै । पुनि पुष्पवतीतन अति अतिपावन गर्भसहित सभ सोहै ३३ पुनि गर्भसँयोगी रतिरसभोगी जगजनलीन कहावै । गुणि जग जललीना नगरप्रबीना अतिपतिके चित भावै ॥ अति पतिहि रमावै चित्तभ्रमावै सौतिन प्रेम बढ़ावै । अब यों दिन रातिन अद्भुतभांतिन कविकुल कीरति गावै ३४ ॥

मोदत कहे सुगंध को पसारत ३१ । ३२ द्वैछंद को अन्वय एकहै वनवारी कहे उपवन औ श्लेष ते वनकी वारी कुमारी कुमारी पक्ष विरोध है वाटिका पक्ष शुद्धार्थ है विरोधाभास अलंकारहै चंचलस्वभाव चंचल औ वायुयोगसों चंचल हैं पत्तजा भारी कहे गरु है देह जाकी औ दीर्घ वृक्षयुक्त तपोधन तपस्विनी औ तपस्वी सम शीत घाम तोय दुख सहति है गृह घर और परिखा क्षारदीवालीति दिगंबर वस्त्र रहित दुवौ पक्ष में पुष्पवती रजोधर्मिणी औ प्रफुल्लित तन अति कहे स्थूलकाय औ बहुत भूमि में विस्तार है जाको अतिपावन पवित्र अति दुवौ पक्षमें गर्भ सहित गुर्विणी औ फल गर्भ सहित यासों सदा फलोत्पत्ति जनायो रतिरस

सुरति औ प्रीति जगजनलीना अनेकपुरुषभोगिनी परकीया इति । औ जगके जनन करिकै युक्त अर्थ अतिसुख पाइ जगजन बैठत हैं जामें प्रवीणा दोष रहित और सर्वोत्तमा नवीना पाठ होइ तौ नवोढ़ा औ नूतन याने आपनो पुरुष औ राजा सौंपी पतिकी और स्त्री औ राजपत्नी ३३ । ३४ ॥

हाकलिकाछंद ॥ संग लिये ऋषि शिष्यन घने । पावकसे तपतेजनि सने ॥ देखत सरिता उपवन भले । देखन अवधपुरी कहँ चले ३५ मधुभारछंद ॥ ऊँचे अवास । बहुध्वज प्रकास ॥ शोभाविलास । शोभै अकास ३६ आभीरछंद ॥ अतिसुंदर अतिसाधु । थिर न रहत पल आधु ॥ परम तपोमय मानि । दंडधारिणी जानि ३७ हरिगीतछंद ॥ शुभ द्रोणगिरिगणशिखर ऊपर उदित औषधिसी गनो । बहु वायुवश वारिद बहोरहि अरुझि दामिनिद्युति मनो ॥ अति किधौं रुचिर प्रताप पावक प्रकट सुरपुरको चली । यह किधौं सरित सुदेश मेरी करी दिवि खेलति भली ३८ ॥

उपवन वाटिका ३५ अवास घर ३६ दंडधारिणी हैं दंडिन के व्रतको धरे हैं दंडी दंड धरे रहते हैं ये दंड कहे ध्वजदंड धरे हैं कैसो है ध्वजा औ दंडी अतिसुंदर हैं सुवस्त्र रचित औ तप तेज करि भव्यरूप हैं साधु राग द्वेष रहित दुवौ हैं थिर न रहत वायु योग सों चंचल रहती हैं औ अनेकतीर्थन में फिस्यो करत हैं औ परम तपोमय हैं सदा शीत घाम तोय सहती हैं औ प्राणायामादि अनेक तप करत हैं और अर्थ विरोधाभास है विरोधार्थ अतिसाधु हैं औ पल आधु थिर नहीं रहतीं तौ साधु विषे चंचलता विरोध है औ परम तपोमय कहे बड़े तपको करती हैं औ दंडधारिणीहैं दंड कहे राजदंड डांड़इति धारण करता है लेता है तौ तपस्वी को दंड लेबो विरोध है अविरुद्धार्थ प्रथम को ते जानो ३७ द्रोणगिरि सदृश मंदिर हैं शिखर अग्रभाग औषधि सरिस कस्यो तासों अरुणपताका वर्णन जानो औ कि दामिनी बिजुली की द्युति हैं अरुझिरही हैं तिनको वारिद के वश्य है अर्थ वारिदकी आज्ञासों वायु वश कहे अनेक प्रकारसों बहोरत हैं मेघनके पास लै जायो चहत है यासों मंदिरन की अतिउच्चता

जनायो प्रताप पावक रघुवंशिन को इति शेषः या प्रकार अरुण पताका पंक्तिको वर्णन करि यह पदसों दूसरी श्वेतपताका पंक्तिको अवलोकि वर्णन लगे सो जानो मेरी करी कहे बनाई विश्वामित्र सृष्टि करन लागे हैं तब नदी बनायो है सो आकाशमें है पुराणोक्त है कविप्रियाहू में कह्यो है कि "ऊंचे ऊंचे अटनि पताका अति ऊंची जनु कौशिककी कीन्ही गंग खेलैं ये तरलतर।" अथवा मेरी कहे हमारी भगिनी भगिनीति शेषः। दिवि कहे दिव्यरूप कहे खेलति है आकाशमें कौशिकी नदी है सो विश्वामित्र की भगिनी है ३८॥

दोहा॥ जीति जीति कीरति लई शत्रुनकी बहुभांति॥ पुरपर बांधी शोभिजै मानो तिनकी पांति ३९ त्रिभंगीछंद॥ सम सब घर शोभैं मुनिमन लोभैं रिपुगण क्षोभैं देखि सबै। बहु दुंदुभि बाजैं जनु घन गाजैं दिग्गज लाजैं सुनत जबै॥ जहँतहँ श्रुति पढ़हीं बिघन न बढ़हीं जय यश मढ़हीं सकल दिशा। स-बई सबविधि छम बसत यथाक्रम देवपुरीसम दिवसनिशा४०॥

ताही श्वेतपताका पंक्तिमें फेरि तर्क है ३९ द्वैछंदको अन्वय एकहै क्षोभैं डरत हैं हम समर्थ रातिउ दिन देवपुरी सम है यामें श्लेषार्थहू है कैसी देवपुरी औ अयोध्या है सम बराबरि है दिन राति जामें घटत बढ़त नहीं छः महीना उत्तरायण दिन रहत है दक्षिणायन राति रहत है औ सम है तुल्य आनन्ददायक है रातिउ दिन जामें रात्रिहूको चौरादिको भय नाहीं होत और अर्थ दुवौपक्ष एकही है ४०॥

कविकुलविद्याधर सकलकलाधर राजराज वर वेष बने। गणपति सुखदायक पशुपति लायक सूर सहायक कौन गने॥ सेनापति बुधजन मंगल गुरुजन धर्मराज मन बुद्धि घनी। बहु शुभ मनसाकर करुणामय अरु सुरतरंगिणी शोभसनी ४१॥

फेरि कैसी है देवपुरी कवि शुक्र औ कुलकहे समूह विद्याधरनके विद्याधर देवयोनि विशेष हैं औ सकलकलाधर चन्द्रमा औ राजराज कुबेर ये सब वरवेष कहे सुंदर वेष कहे रूपसों बने हैं औ सुखदायक जो गणपति गणेश हैं औ लायक कहे श्रेष्ठ पशुपति महादेव हैं औ सूर कहे सूर्य और

जे इंद्रसहायक कामादि हैं तिन्हैंको गनै अर्थ कि अनेक हैं सेनापति स्वामिकार्त्तिक औ बुधजन चन्द्रपुत्र जनपद इहां स्वरूपको वाची है औ मंगल भौम औ गुरु बृहस्पति औ गण कहे गणदेवता " आदित्यविश्ववसवस्तुषिता भास्वरानिलाः । महाराजिकसाध्याश्च रुद्राश्च गणदेवता इत्यमरः ॥ " औ मनमें बुद्धि है घनी जिनके ऐसे धर्मराज कहे यमराज हैं बहुशुभयुक्त हैं मनसाकर कहे कल्पवृक्ष औ करुणामय कहे विष्णु औ सुरतरंगिणी आकाश गंगा इन सबकी शोभासों सनी है अर्थ ये सब बसत हैं यामें अयोध्या कैसी है कवि काव्यकर्ता बाल्मीकि सदृश औ विद्या चतुर्दश " अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसान्यायविस्तरः । पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्याश्चैताश्चतुर्दश ॥ इति मनुः " अथवा धनुर्विद्यादि तिनके धर्ता औ सकल कहे चौंसठिहू कलनके धर्ता औ राजराज कहे बड़े राजाते वरवेष सों बने हैं अनेक राजा राजा दशरथ की सेवामें हाजिर पुरीमें बसे रहत हैं औ सुखदायक गणपति कहे यूथप औ लायक श्रेष्ठ पशुपति गोपालादि अथवा गजादि औ सहायक कहे जे सबकी सहाय करत हैं ऐसे जे शूर योधा हैं तिन्हैं को गनै बहुत हैं औ सेनापति चमूनाथ बुधजन पंडित औ मंगल कहे मंगलपाठी औ गुरुगण वशिष्ठादि अथवा मंगलकर्ता जे गुरुगण वशिष्ठादि हैं औ मनमें बुद्धि है घनी जाके ऐसो धर्मराज कहे न्यायदर्शी हैं कोतवालेति औ बहुत प्राणी शुभ जो मनसा मनोभिलाष है ताके करनहार हैं अर्थ मनोरथके दाता हैं औ बहुत करुणामय कहे दयाशील हैं औ सुरतरंगिणी सरयू इनकी शोभासों सनी है अर्थ इन सबसों युक्त है ४१ ॥

हीरकछंद ॥ पंडितगण मंडितगुण दंडितमति देखिये । क्षत्रियवर धर्मप्रवर क्रुद्धसमर लेखिये ॥ वैश्य सहित सत्य रहित पाप प्रकट मानिये । शूद्रशकति विप्रभगति जीव जगति जानिये ४२ ॥

पंडित पद ते ब्राह्मण जानौ ते अनेक गुण जे शास्त्रादि हैं तिनसों मंडित युक्त हैं औ दंडित हैं शिक्षित हैं मति जिनकी अर्थ सतमति सों युक्त हैं औ क्षात्रिय क्षत्रधर्म करिकै प्रवर बली हैं औ समरही में क्रोध करत हैं औ वैश्य बनियां सत्यसों युक्त हैं औ पापसों रहित हैं औ शूद्रनके जीव में ब्राह्मणकी भक्ति जगति है ताही में तिनकी शक्ति बल जानियत है अर्थ शूद्र

भक्तियुक्त ब्राह्मणनकी सेवा करत हैं अथवा शूद्रन के जीवमें शक्ति कहे देवी औ विप्रकी भक्ति जगति है शूद्रनको देवी औ ब्राह्मणनकी उपास वासना उचितहै या प्रकार आपने आपने धर्मसों युक्त चारोंवर्ण बहत हैं यामें ४२॥

सिंहविलोकितछंद ॥ अतिमुनि तन मन तहँ मोहि रह्यो। कछु बुधि बल वचन न जाय कह्यो ॥ पशु पक्षि नारि नर निरखि तबै। दिन रामचन्द्र गुण गनत सबै ४३ मरहट्टाछंद॥ अतिउच्च अगारानि बनी पगारनि जनु चिंतामणि नारि। बहु सतमखधूपनि धूपित अंगनि हरिकीसी अनुहारि॥ चित्रीबहुचित्रनि परमविचित्रनि केशवदास निहारि। जनु विश्वरूपको अमल आरसी रची विरंचि विचारि ४४ सोरठा ॥ जग यशवंत विशाल राजादशरथ की पुरी ॥ चन्द्रसहित सबकाल भालथली जनु ईशकी ४५॥

दिन कहे दिनप्रति ४३ बहुत जे अतिउच्च अगारघर हैं बहु पदको संबंध सर्वत्र है तिनकी जे बनी पगार परिखा हैं छारदेवालीति कहूं शिरबन्दी कहत हैं तिनमें लगी अनेक पुरकौतुक देखिबेको चिंतामणि सदृश नारी स्त्री ठाढ़ी हैं चिंतामणि सदृश जिनको देखि मनोभिलाष पूरे होत हैं या प्रकारके श्री भवन हैं औ बहुत घर सत कहे उत्तम जे मखयज्ञ हैं तिनके धूपनकहे धूमन करिकै धूपित अंगनि सों युक्त हैं ते हरि विष्णु के अनुहारि हैं अर्थ श्यामरूप हैं ऐसे यज्ञशाला हैं औ बहुत घर परम विचित्र कहे अद्भुत चित्रनिसों चित्रित हैं तिन्हैं मानो विरंचि ब्रह्मा विचारि एकाग्र चित्त करिकै विश्वरूप जो संसार है अथवा विराटरूप ताकी आरसी ऐना बनायो है जैसे ऐनामें बिंब सदृश प्रतिबिंब देखिपरत है तैसे संसारमें जो वस्तु है सो सब मंदिरनमें चित्रित है ऐसे चित्रशाला हैं पुरीमें पैठि तिन्हैं विश्वामित्र निहारि कहे देखत भये ४४ जगमें विशाल सुंदर औ यशवंत कहे यशयुक्त जो राजा दशरथकी पुरी है सो सबकाल चन्द्रमा सहित मानो ईश महादेवकी भालथली है चन्द्र सरिस यश है विशाल दुवौ हैं यासों सदा निष्कलंक यशयुक्त पुरी को जनायो ४५॥

कुंडलिया ॥ पंडित अति सिगरी पुरी मनहुँ गिरागति

गूढ़ । सिंहनियुत जनु चंडिका मोहति मूढ़ अमूढ़ ॥ मोहति मूढ़ अमूढ़ देवसँग दितिसों सोहै । सब शृंगार सदेह मनो रति मन्मथ मोहै ॥ सब शृंगार सदेह सकल सुख सुखमा-मंडित । मनो शची विधि रची विविध विधि वरणत पंडित ४६ ॥

सिगरी पुरी अतिपण्डित है अर्थ पुरीके निवासी जन सब पण्डित हैं यासों मानो गति कहे दशा है गूढ़ जाकी अर्थरूप पुरी है अपनी दशा को छपाये मानों गिरा सरस्वती हैं गिराहू के आशते जन अतिपण्डित होत हैं अथवा मनहूं को औ गिरा कहे वचननहूं की गति है गूढ़ जाकी अर्थ जाकी दशा को अन्त मन वचन नहीं पावत चण्डिकाको सिंह वाहन है औ विकरालरूप देखि मूढ़ औ अमूढ़के भय से मोह होत है पुरी पुरुषसिंहन सों युक्त है औ अतिविचित्र शोभा निरखि मूढ़ अमूढ़ के आनन्द से मोह होत है अदिति के देवता पुत्र हैं तासों संग में देव रहत हैं इहां अदिति पदकी अकारको लोप है भाषा के कविनको नियम है कहूं अकारादिपद की अकारको लोपकरि डारत हैं यथा । विहारीकृत सप्तशतिकायाम् "अधिक अँधेरो जग करै मिलि मावस रविचंद ॥" अथवा दिति दैत्यमाता सम है जैसे दिति सों बड़े वीर दैत्य भये हैं तैसे अयोध्याहू में अनेक वीर उत्पन्न होत हैं रति मन्मथ कामकी स्त्री है तासों मनको मोहति है पुरी शोभासों कामहूको मन मोहति है तासों अतिशोभायुक्त जानौ शची इंद्राणि हूं राज्यादि सब सुख औ सब सुखमा शोभासों मण्डितहै औ अनेकविधि सों पण्डित वर्णन करत हैं ऐसी पुरीहू है अथवा सुखमासों मण्डित युक्त सकल जे सुख हैं तिनसों सची कहे संचित पूंजीभूत मानों विधातैं रच्यो है अर्थ पूर्णसुख औ पूर्णशोभा एकत्रकरि ताहीको पुरी बनायो है ४६ ॥

काव्यछंद ॥ मूलनहींको जहां अधोगति केशव गाइय । होमहुताशनधूम नगर एकै मलिनाइय ॥ दुर्गति दुर्गनहीं जो कुटिलगति सरितनही में । श्रीफलको अभिलाष प्रकट कवि कुलके जीमें ४७ दोहा ॥ अतिचंचल जहँ चलदलै विधवा बनी न नारि ॥ मन मोह्यो ऋषिराजको

अद्भुत नगर निहारि ४८ सोरठा ॥ नागर नगर अपार महामोहतम मित्रसे ॥ तृष्णालताकुठार लोभसमुद्रअगस्त्य से ४६ दोहा ॥ विश्वामित्र पवित्र मुनि केशव बुद्धिउदार ॥ देखत शोभा नगरकी गये राजदरबार ५० ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-
चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांविश्वामित्रस्या-
ऽयोध्यागमनंनाम प्रथमः प्रकाशः ॥ १ ॥

मूल जर अधोगति नरक औ नीचेकी गति गमन हुताशन अग्नि दुर्गति नरक औ दुष्करि कहे गति जिनमें कुटिलता इति श्रीफल द्रव्य औ बिल्व-फल कुचनकी उपमा देबेको परिसंख्यालंकार है ४७ चलदल पीपरवृक्ष बनी वाटिका सोई विधवा है याहू में परिसंख्या है ४८ नागर प्रवीन मित्र सूर्य जो सदा सब वस्तु पाइबे की इच्छा है सो तृष्णा जानौ औ जो कछू वस्तु देखि सुनिकै इच्छा चलै सो लोभ जानौ ४६ । ५० ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकी-
प्रसादनिर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायां प्रथमः प्रकाशः ॥ १ ॥

दोहा ॥ या दूसरे प्रकाश में मुनि आगमन प्रकास ॥ राजासों रचना वचन राघव चलन विलास १ हंसछंद ॥ आवत जात राजके लोग ॥ मूरति धारी मानहु भोग २ मालतीछंद ॥ तहँ दरबारी । सब सुखकारी ॥ कृतयुग कैसे । जनु जन वैसे ३ दोहा ॥ महिष मेष मृग वृषभ कहुँ भि-रत मल्ल गजराज ॥ लरत कहूं पायक नटत बहुनर्तक नट-राज ४ समानिकाछंद ॥ देखि देखिकै सभा । विप्र मोहियो प्रभा ॥ राजमंडली लसै । देवलोकको हँसै ५ मल्लिकाछंद ॥ देशदेशके नरेश । शोभिजै सबै सुवेश ॥ जानिये न आदि अंत । कौन दास कौन संत ६ दोहा ॥ शोभित बैठे तेहि सभा सातद्वीप के भूप ॥ तहँ राजादशरथ लसैं देवदेवअनु-

रूप ७ देखि तिन्हैं तब दूरिते गुदरानो प्रतिहार ॥ आये विश्वामित्रजू जनु दूजो करतार ८ उठि दौरे नृप सुनतही जाइ गहे तब पाँइ ॥ लैआये भीतर भवन ज्यों सुरगुरु सुरराइ ९ सोरठा ॥ सभामध्य बैताल ताहि समय सो पढ़ि उठ्यो ॥ केशव बुद्धि विशाल सुंदर शूरो भूप सो १० ॥

१ । २ कृतयुग सत्ययुग ३ मल्लबाहु युद्धकर पायकं पटेबाज नटत कहे नाचत हैं नर्तक नृत्यकारी ४ । ५ जहां सिंहासनमें राजा दशरथ बैठे हैं सो आदि है तहांते जहां पर्यंत दरबारी बैठे हैं सो अन्त है सो आदि ते अंत तक दरबारिनमें कौन दास कहे सेवक है औ कौन संत कहे स्वामी है यह नहीं जानियत अर्थ सब दरबारी राजसाज सँवारे हैं " सद्विद्यमाने सत्ये च प्रशस्तार्चितसाधुषु इत्यभिधानचिंतामणिः ॥" इहां आर्चितपदको पर्याय स्वामी जानौ ६ देवदेव इन्द्र ७ गुदरानो जाहिर कियो कर्तार ब्रह्मा ८ । ९ बैतालभाट १० ॥

बैताल–घनाक्षरी ॥ विधिके समान हैं विमानी कृतराज हंस विविध विबुधयुत मेरुसों अचल है । दीपति दिपति अति सातौ द्वीपदीपियत दूसरो दिलीपसों सुदक्षिणा को बल है ॥ सागर उजागरकी बहु वाहिनी को पति छनदान प्रिय किधौं सूरज अमल है । सब विधि समरथ राजै राजा दशरथ भगीरथ पथगामी गंगाकैसो जलहै ११ दोहा ॥ यद्यपि ईंधन जरि गये अरिगण केशवदास ॥ तदपि प्रतापानलन के पलपल बढ़त प्रकास १२ तोमरछंद ॥ बहुभांतिपूजि सुराइ । करजोरिकै परिपाइ ॥ हँसिकै कह्यो ऋषि मित्र । अब बैठ राज पवित्र १३ सुनि–सुनि दान मानसहंस । रघुवंश के अवतंस ॥ मनमांह जो अतिनेहु । यकबात मांगे देहु १४ ॥

विमानीकृत कहे वाहनीकृतहैं राजहंस जिन करिकै ब्रह्माको हंस वाहन है और राजा विमानीकृत कहे मानरहित किये हैं राजनके हंस जीव

जिन करिकै अथवा विमानीकृत वाहिनीकृत हैं राजन के हंस जीव जिन करिकै अर्थ शत्रु भय सों मित्र प्रेमसों मनमें चढ़ाये रहत हैं विबुध देवता औ पण्डित दिलीपकी स्त्री को सुदक्षिणा नाम रह्यो ताके पातिव्रत को बल रह्यो औ सुष्ठु जो दक्षिणा दान द्रव्य है वाहिनी नदी औ चमू छनदा रात्रि न हो हे प्रिय ! जाकी सूर्यके अमल में अर्थ सूर्य के प्रकाशमें रात्रिको नाश होत है अथवा छनदान कहे जलांजलिदान औ क्षणक्षण प्रति दानही प्रिय जिनको क्षणक्षण में दानदीबो करत हैं गङ्गाजल सगरके सुतनके तारिबे को भगीरथके पीछे पीछे आयो है औ राजा कुल पंथगामी हैं श्लेषधर्मोपमा है कोऊ परंपरित रूपक कहत हैं ११। १२ ऋषिनमों मित्र सूर्य सम हैं १३ दान-रूपी जो मानस मानसर है ताके तुम हंसहौ अर्थ दानही में है विहार जिनको बड़े दाताहौ अवतंस कर्णभूषण १४ ॥

राजा—अमृतगतिछंद ॥ सुमति महामुनि सुनिये। तन मन धन सब गुनिये ॥ मनमहँ होइ सो कहिये। धनि जो आपुन लहिये १५ ऋषि—दोधकछंद ॥ राम गये जबते वन माहीं। राकस वैर करैं बहुधाहीं ॥ रामकुमार हमैं नृप दीजे। तौ परिपूरण यज्ञकरीजै १६ तोटकछंद ॥ यह बात सुनी नृप-नाथ जबै। शरसे लगे आखर चित्त सबै ॥ मुखते कछु बात न जाइकही। अपराध विना ऋषि देहदही १७ राजा—अतिकोमलकै सब बालकता। बहु दुष्कर राक्षस घालकता॥ हमहीं चलिहैं ऋषि संग अबै। सजि सैन चलै चतुरंगसबै १८ विश्वामित्र—षट्पद ॥ जिन हाथन हठि हरषि हनत हरिणी रिपुनन्दनि। तिनन करत संहार कहा मद मत्तगयन्दनि ॥ जिन बेधत सुख लक्षलक्ष नृपकुँवर कुँवरमनि। तिन बाणनि वाराह बाघ मारत नहिं सिंहनि ॥ नृपनाथ नाथ दशरथ सुनिय अकथकथा यह मानिये। मृगराज राजकुल कलश अब बालक वृद्ध न जानिये १९॥

जो वस्तु आप लहिये लीजिये सो धन्य है १५ राम परशुराम १६ । १७ हाथी घोड़ा रथ पियादा चारों सेनाके अङ्ग हैं १८ हरिणी के साहचर्यते रिपु पदते हरिणीरिपु कहे सिंह जानौ जिन हाथन सिंह हरिणी मारत हैं तिन सों कहा गजनको नहीं मारत अर्थ गजहू मारत हैं औ कुँवरन में मणिश्रेष्ठ ऐसे नृपकुँवर जिन बाणनि सुख कहे सहजही लक्ष कहे लाखन लक्ष निशाना बेधत हैं तिनसों बाराह बाघ सिंहनहूको नहीं मारत अर्थ मारत हैं हे नृपनाथ ! यह कथा अकथ कहे अतर्क मानौ निश्चय इति अथवा अकथ कहे अद्भुत जो यह कथा है ताको मानिबे कहे निश्चय मानौ आशय यह रामचन्द्र राक्षसन को वध करिहैं यामें सन्देह ना करौ १६ ॥

सुन्दरीछंद ॥ राजनमें तुम राज बड़े अति । मैं मुखमांगौं सो देहु महामति ॥ देवसहायकहौ नृपनायक । है यह काज रामहिं लायक २० राजा—मैं जो कह्यो ऋषि देन सो लीजिय । काज करो हठ भूलि न कीजिय ॥ प्राण दिये धन जाहिं दिये सब । केशव राम न जाहिं दिये अब २१ ऋषि—राज तज्यो धन धाम तज्यो सब । नारि तजी सुत शोच तज्यो तब ॥ आपनपौ जो तज्यो जगवन्द है । सत्य न एक तज्यो हरिचन्द है २२ ॥

एक समय इंद्र नारदसों हरिश्चन्द्रके सत्य प्रतापादिको माहात्म्य सुनि इंद्रासन लेबेको भयमानि दुःखित भये हैं तब ब्रह्मादि देवन इंद्रको धैर्य दैकै हरिश्चन्द्र का सत्य भंग करिबे के लिये नारदको विश्वामित्रके पास पठयो विश्वामित्र नारदमुखसों देवनकी आज्ञा सुनि काहू कामरूपी राक्षसको बोलाइ कह्यो कि तू शूकररूप है अयोध्यामें जाइ राजा हरिश्चन्द्रको मृगयामिस हमारे आश्रम में ल्याउ राक्षस सो कियो विश्वामित्रके आश्रम में राजा को ल्याइ लुप्त भयो आश्चर्ययुक्त है राजा आश्रम नदी में नहाइ कपटद्विजरूप धरि विश्वामित्रको सब पृथ्वी औ सर्वस्वदान करयो है फेरि विश्वामित्र कह्यो है कि शतभार सुवर्ण दक्षिणा देहि तौ सर्वस्व लेहैं नाहीं तौ सत्यको छोड़ो तब काशीमें जाइकै मदनानाम स्त्री औ रोहिताश्व नाम पुत्र को देवशर्मा ब्राह्मण के हाथ साठिभार सुवर्ण को बेंच्यो है और चालीसभार

सुवर्णको कालसेन चांडालके हाथ अपना बिकाइ सौभार सुवर्ण विश्वामित्र को दियो फेरि चांडाल की आज्ञा ते श्मशान घाटपर उचित द्रव्य लेवेको बैठे हैं कछू दिनमें पुष्प तोरत में रोहिनाश्वको सर्प काट्यो मरयो ताको लै मदना वहाइबे को गई तहां चांडालको उचित पंचमुद्रा लैहीकै बहावन दियो है याप्रकार सुतको शोच छोंड़यो सत्य पाल्यो यह संक्षेप कथा लिख्यो है विशेष सों हरिश्चन्द्रोपाख्यान पुराणन में प्रसिद्ध है २० । २१ । २२ ॥

राज वहै वह साज वहै पुर । नाम वहै वह धाम वहै गुर॥ झूठेसों झूठइ बांधत हौ मन । छोंड़तहौ नृप सत्यसनातन २३ दोहा ॥ जान्यो विश्वामित्र के कोप बढ़्यो उर आइ । राजादशरथ सों कह्यो वचन वशिष्ठ बनाइ २४ षट्पद ॥ इनहीं के तप तेज यज्ञकी रक्षा करिहैं । इनहीं के तप तेज सकल राक्षसबल हरि हैं ॥ इनहीं के तप तेज तेज बढ़िहैं तन तूरण । इनहींके तप तेज होहिंगे मंगल पूरण ॥ कहि केशव जय युत आइहैं इनहींके तप तेज घर । नृप वेगि राम लक्ष्मण दुवौ सौंपौ विश्वामित्रकर २५ ॥

साज छत्र चामर चमू आदि नाम यश गुरु वशिष्ठ झूठे जे पुत्रादि हैं तिन सों झूठई कहे वृथाही मनको बांधत हौ लगावत हौ अथवा झूठेसों कहे झूठेन सहित है अर्थ पुत्रादि झूठे माया के प्रपंच हैं तिनसों मिलिकै झूठई जो झुठाई है तासों मनको बांधत हौ अर्थ कि ना बांधौ अथवा झूठेकीसों कहे झूठेकी तरह जैसे झूठा प्राणी झुठाईमें मन लगावत है तैसे तुमहूं लगावत हौ औ सनातन कहे परम्परा को सत्य छांड़त हौ देनकहि अब नहीं देत सो न चाहिये २३ । २४ तेज प्रताप तूरण जल्दी मंगल विवाहादि २५ ॥

सोरठा ॥ राजा औरन मित्र जानहु विश्वामित्र से ॥ जिनको अमित चरित्र रामचन्द्रमय मानिये २६ दोहा ॥ नृप पै वचन वशिष्ठको कैसे मेट्यो जाइ । सौंप्यौ विश्वामित्र कर रामचन्द्र अकुलाइ २७ पंकजवाटिकाछंद ॥ राम चलत नृप के युगलोचन । वारिभरित भये वारिदरोचन ॥ पांयनपरि

ऋषिके सजि मौनहिं । केशव उठि गये भीतर भौनहिं २८
चामरछंद ॥ वेदमंत्रतंत्रशोधि अस्त्रशस्त्रदै भले । रामचन्द्र
लक्ष्मणौ सो विप्र क्षिप्र लैचले ॥ लोभ क्षोभ मोह गर्व काम
कामनाहईं । नींद भूख प्यास त्रास वासना सबै गईं २९ ॥

राक्षसवधमें अमित कहे संपूर्ण जो चरित्रहैं सो रामचन्द्रमय कहे रामचन्द्र-चरितमय रामचन्द्रचरितस्वरूपनि जिनको विश्वामित्रहीको चरित्र मानौ अर्थ जो राक्षसवधमें वा वेधत्नादिकृत रामचन्द्र करि हैं सो कृत रामचन्द्रद्वारा है विश्वामित्रही करिहैं आशय यह कि यामें कछु श्रम रामचन्द्रको नहीं है ये केवल तुम्हारे पुत्रको यश दियो चाहत हैं याते इनसम मित्र दूसरो न जानौ अथवा रामचन्द्रमय कहे रामचन्द्र प्रति समर्पित मानिये अर्थ जो करत हैं सो रामचन्द्रको समर्पण करत हैं २६ । २७ वारिजल सों भरित रोचनको वारिद मेघ भये अरुण रंगहै आंसुनकी वर्षा करन लागे २८ वेदके मंत्र औ तंत्रशास्त्रके मंत्र शोधि शोधिकै दियो अथवा वेदके मंत्र दिये बलातिबला-विद्या दियो है सो वाल्मीकीयरामायण में लिख्यो है औ तन्त्रशास्त्रके मंत्रन सों शोधि शोधिकै मन्त्रित करिकै अस्त्र शस्त्र दिये क्षिप्र कहे जल्दी तिन विद्यनके प्रभाव सों लोभादिकी वासना दूरि भई ॥ यथा रघुवंशे "तौ ब-लातिबलयोः प्रभावतोः विद्ययोः पथि मुनिप्रदिष्टयोः । मम्लतुर्न मणिकुट्टि-मोचितौ मातृपार्श्वपरिवर्तिनाविव " २९ ॥

निशिपालिकाछंद ॥ कामवन राम सब वास तरु दे-
खियो । नैन सुखदैन मन मैनमय लेखियो ॥ ईश जहँ कामतनु
कै अतनु डारियो । छोंड़ि वह यज्ञथल केशव निहारियो ३०
दोहा ॥ रामचन्द्र लक्ष्मणसहित तन मन अतिसुखपाइ ॥
देख्यो विश्वामित्रको परम तपोवन जाइ ३१ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्री-
रामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांरामचन्द्र-
लक्ष्मणयोर्विश्वामित्रतपोवनगमनंनाम
द्वितीयः प्रकाशः ॥ २ ॥

जा वनमें महादेव कामको जास्यो है ताको कामबन नामहै अथवा कामवन कहे अभिलापको दाता वन ता वनमें रामचन्द्र सब वास कहे ऋषिनके वास कुटीति औ तरु वृक्ष देख्यो अथवा वास तरु सुगंधयुक्त तरु मैनमय कहे कामस्वरूप ता वनमें ईश महादेव जहां जा स्थान में कामको जास्यो है तास्थानको देखि छोड़िकै विश्वामित्रको यज्ञथल जाइकै देख्यो ३० । ३१ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां द्वितीयःप्रकाशः ॥ २ ॥

दोहा ॥ कथा तृतीय प्रकाशमें वन वरणन शुभ जानि ॥ रक्षण यज्ञ मुनीशको श्रवण स्वयंवर मानि १ षट्पद ॥ तरु तालीस तमाल ताल हिंताल मनोहर। मंजुल बंजुल तिलक लकुचकुल नारिकेर वर ॥ एला ललितलवंग संग पुंगीफल सोहै। सारी शुककुल कलित चित्त कोकिल अलि मोहै ॥ शुभ राजहंस कलहंसकुल नाचत मत्त मयूरगन। अतिप्रफुलित फलित सदा रहै केशवदास विचित्र वन २ सुप्रियाछंद ॥ कहुँ द्विजगण मिलि सुख श्रुतिपढ़हीं। कहुँ हरिहरि हरहर रटरटहीं ॥ कहुँ मृगपति मृगशिशु पय पियहीं। कहुँ मुनिगण चितवत हरि हियहीं ३ नाराचछंद ॥ विचारमान ब्रह्मदेव अर्चमान मानिये। अदीयमान दुःख सुःख दीयमान जानिये ॥ अदण्ड्यमान दीन गर्व दण्ड्यमान भेद वै। अपठ्यमान पापग्रन्थ पठ्यमान वेद वै ४ ॥

१ तालीस वृक्षविशेष हिंताल खजूरि बंजुल अशोक लकुच बड़हर २ मृगपति पदते सिंहकी स्त्री पुरुष जातिमात्र जानौ अर्थ सिंहिनिन को पय दूध मृगबालक पियत हैं यासों या जनायो कि जहां सहजहूं वैर नहींहै कृत्रिमकी कहावतहै औ कहूँ तेई मृगशिशु मुनिनके हियको हरिकै मुनिनके ओर चितवत हैं यासों मृगबालकन की अति सुंदरता जानो ३ जहां सदा ब्रह्म जो वेदहै सोई विचार्यमान है विचास्यो जात है अथवा परब्रह्म देव पदते यहां विष्णु जानौ अथवा सदेव यासों या जनायो कि सुदेव सेवा में सब रहत हैं

कोऊ कुदेव यक्षिणी आदिकी सेवा नहीं करत औ दुःख अदीयमानहै कोऊ काहूको दुःख नहीं देत सुख दीयमान है औ दीन अदंडमान है दीनको कोऊ दंड ताड़न नहीं करत औ वै कहे निश्चयकारि गर्व औ भेद दंडमान है पापग्रंथ मारण मोहनादि के ग्रंथ अपठ्यमान हैं कोऊ नहीं पठत ४ ॥

विशेषछंद ॥ साधुकथा कथिये तहँ केशवदास जहां। विग्रह केवल है मनको दिनमान तहां ॥ पावन वास सदा ऋषिको सुखको वरषै। को वरणै कवि ताहि विलोकत जी हरषै ५ चंचला ॥ रक्षिबेको यज्ञकूल बैठे वीर सावधान। होन लागे होमके जहां तहां सबै विधान ॥ भीमभांति ताड़का सो भंग लागि कर्न आइ। बान तानि रामपैन नारि जानि छांड़िजाइ ६ ऋषि–सोरठा ॥ कर्म करति यह घोर विप्रनको दशहू दिशा ॥ मत्त सहस गज जोर नारी जानि न छांड़िये ७ राम–शशिवदना ॥ सुनु मुनिराई। जग दुखदाई ॥ कहि अब सोई। जेहि यश होई ८ ऋषि–कुंडलिया ॥ सुता विरोचनकी हुती दीरघ जिह्वा नाम। सुरनायक वह संहरी परमपापिनी वाम ॥ परमपापिनी वाम बहुरि उपजी कवि माता। नारायण सो हती चक्र चिन्तामणिदाता ॥ नारायण सो हती सकलद्विजदूषणसंयुत । त्यों अब त्रिभुवन नाथ ताड़का तारहु सह सुत ९ ॥

साधुकथा उत्तमकथा विष्णुविषयकिनी आदि अथवा साधु जे संतजन हैं नारदादि तिनकी कथा तहां तेहि आश्रममें मुनिजनन करिकै कथिये कथन करियत है औ जहां केवल मनहींको निग्रहहै मन इंद्रिनको राजा है मनके निग्रहसों सब इंद्रिनको निग्रह जानौ औ तहां मान दिनहीके है और काहूके नहींहै दिनपक्ष में मान प्रमाण दिनमान केतौ है यह पूछिबेकी रीति लोकमें प्रसिद्ध है अन्यत्र मानगर्व परिसंख्यालंकार है अथवा दिनहीको मान आदर है यज्ञादि सत्कर्म दिनही में होते हैं तासों ५। ६। ७। ८ विरोचन बलिके पिताकी सुता दीर्घजिह्वा नाम पापिनी रही ताको सुरनायक इंद्र मारयो है

औ फेरि अतिपापिनी कवि जे शुक्र हैं तिनकी माता भई ताको नारायण मास्यो है एकसमय देवनके युद्धमें हारिकै दैत्य आकाशके शरणमें बचिवो जानिकै शुक्रमाताके शरण जाइ लुकाने तहां शत्रुको रक्षक जानि इंद्रकी आज्ञा सों विष्णु शुक्रमाताका शिर चक्रसों खंडन करि दैत्यनको मास्यो है ताही कोपसों भृगुमुनि जाइ विष्णुके उरमें लात मास्योहै और आपने पुत्र शुक्रको दैत्यगुरु कियो है यह कथा पुराणनमें प्रसिद्धहै कैसे हैं नारायण चिंतामणि दाता हैं अथवा चिंतामणि सरिस दाता हैं सकल द्विजदूषणसंयुक्त ताड़का को विशेषण है औ सहसुत कहे मारीच सहित यासों या जनायो कि इंद्र विष्णुहूं दुष्ट स्त्री वध कियो है ९ ॥

दोहा ॥ द्विजदोषी न विचारिये कहा पुरुष कह नारि ॥ राम विराम न कीजिये वामतड़का तारि १० मरहट्टाछंद ॥ यह सुनि गुरुबानी धनुगुनतानी जानी द्विजदुखदानि ॥ ताड़का सँहारी दारुणभारी नारी अतिबल जानि ॥ मारीच विडास्यो जलधि उतास्यो मास्यो सबल सुबाहु । देवनिगुण पर्ष्यो पुष्पनि वर्ष्यो हर्ष्यो अति सुरनाहु ११ दोहा ॥ पूरण यज्ञ भयो जहीं जान्यो विश्वामित्र ॥ धनुषयज्ञकी शुभकथा लागे सुनन विचित्र १२ ॥

विराम कहे बेर १० ताड़कादि बधसों गुणनकी परीक्षा कियो कि ये गुण विष्णुही में हैं तासों विष्णुको अवतार भयो अब रावणवध है है यह जानि इंद्र हर्षित भये ११ । १२ ॥

चंचरीछंद ॥ आइयो तेहि काल ब्राह्मण यज्ञको थल देखिकै । ताहि पूंछत बोलिकै ऋषि भांति भांति विशेखिकै ॥ संग सुंदर राम लक्ष्मण देखि देखि सो हर्षई । बैठिकै सोइ राजमंडल वर्णई सुख वर्षई १३ ब्राह्मण-शार्दूलविक्रीड़ित छंद ॥ सीता शोभन ब्याह उत्सव सभा संभारसंभावना । तत्तत्कार्यसमग्रव्यग्र मिथिलावासी जना शोभना ॥ राजा

राजपुरोहितादि सुहृदो मंत्री महामंत्रदा । नानादेश समागता नृपगणा पूज्या परा सर्वदा १४ ॥

जनकपुरको ब्राह्मण सीयस्वयंवर के अर्थ काहू राजाको निमंत्रण लिये जातरह्यो सो यज्ञको स्थान देखिबेको स्वभावही आयो अथवा ऋषिहीको निमंत्रण ल्यायो है अथवा कोऊ साधारण पथिक ब्राह्मण है ताको निकट बोलि कहे बोलाइ कै विश्वामित्र भांतिभांति विशेषसों जनकपुरकी कथा पूंछत हैं सो ब्राह्मण ऋषि के संग राम लक्ष्मणको देखि ऋषिकी स्त्रीके वचन सत्य जानि अब सीताको ब्याह हैहै यह निश्चयकरि हर्षित आनन्दित होतहै काहेते पंचम प्रकाशमें तृतीय छन्दमें ब्राह्मण कहिहै कि काहू ऋषिकी स्त्रा चित्र में सीताको ऐसो कोऊ वरु लिखि सुहाई जैसो रामचन्द्रको देखियत है १३ सीताको जो शोभन कहे सुन्दर ब्याहहै और जो उत्सवसभा कहे कौतुकसभा है स्वयंवरसभा इति ताके जे अनेक संभार सामग्री हैं अनेक राजसत्कारादि वस्तु तिनकी जो संभावना विचार है तासों राजा जनक औ राजपुरोहित शतानंद तिन्हैं आदि दै और जे सुहृद् मित्रहैं औ महामंत्रके देनहार जे मंत्री हैं औ समग्र कहे संपूर्ण मिथिलावासी जे शोभन कहे सुबुद्धिजन हैं ते सब तत्तत्कार्य कहे आपने आपने उचितकार्य में व्यग्र कहे आसक्तहैं संलग्न इति अथवा आकुल हैं "व्यग्रोऽव्यासक्त आकुले इति मेदिनी ।" औ सर्वदा पूज्य औ पर कहे उत्कृष्ट ऐसे नानादेश अनेकदेशके नृपगण समागत कहे आये हैं १४ ॥

दोहा ॥ खंडपरेको शोभिजै सभामध्य कोदंड ॥ मानहुँ शेष अशेषधर धरनहार बरिबंड १५ सवैया ॥ शोभित मंचनकी अवली गजदंतमयी छवि उज्ज्वल छाई । ईश मनो वसुधा में सुधारि सुधाधरमंडल मंडि जुन्हाई ॥ तामहँ केशवदास विराजत राजकुमार सबै सुखदाई । देवनसों जनु देवसभा शुभ सीयस्वयंवर देखन आई १६ दोहा ॥ नवति मंच पंचालिका कर संकलित अपार ॥ नाचति है जनु नृपतिकी चित्तवृत्ति सुकुमार १७ सोरठा ॥ सभामध्य गुणग्राम वंदीसुत द्वै शोभहीं ॥ सुमति विमति यह नाम राजनको वर्णन

करैं १८ सुमति-दोहा ॥ को यह निरखत आपनी पुलकित बाहु विशाल ॥ सुरभि स्वयंवर जनु करो मुकुलित शाखरसाल १९ ॥

जामें देशांतरनके राजालोग आय आय बैठत हैं ऐसी स्वयंवरसभा में चारों ओर मंच कहे मचानन की अवली पंक्ति बनति है १५ सो मंचावली सीयस्वयंवर में गजदंत हाथीदांतनकी बनी है तामें ब्राह्मण उत्प्रेक्षा करत है कि ईश जे विधाता हैं ते मानो जुन्हाई सों मंडिकै युक्त करिकै वसुधा पृथ्वी में सुधाधर चन्द्रमाको मंडल कहे परिवेष सुधारि कहे सुधास्यो बनायो है ज्योत्स्नायुक्त चन्द्रपरिवेष सम कहे मंचावली की अतिश्वेतता जनायो ईश बनायो सम कहे अतिरुचिर रचना जनायो औ देवसरिस राजकुमार हैं देवसभा सरिस मंचावली जानो १६ पंचालिका नृत्य की जातिविशेष है अपारकर कहे हस्तक भेदसों संकलित युक्त १७ । १८ सुरभि कहे वसंतरूपी जो स्वयंवरहै त्यहि मानो रसाल आंबकी शाखको मुकुलित बौरयुक्त कस्यो है जैसे वसंत में आंबकी शाख बौरति है तैसे धनुष उठाइबे को मोदकरि बाहु रोमांचित भयो अथवा सुरभिरूपी जो है स्वयं कहे अपना त्यहि वर कहे सुन्दर रसालशाख को मुकुलित कियो है १९ ॥

विमति-सोरठा ॥ ज्यहि यशपरिमलमत्त चंचरीक चारण फिरत ॥ दिशि विदिशन अनुरक्त सुतौ मल्लिकापीड़ नृप २० सुमति-दोहा ॥ जाके सुखमुखबासुते बासित होत दिगंत ॥ सो पुनि कहु यह कौन नृप शोभित शोभ अनंत २१ विमति-सोरठा ॥ राजराज दिगवाम भालखाल लोभीसदा ॥ अतिप्रसिद्ध जग नाम काशमीर को तिलक यह २२ ॥

पांच छंदन में विमतिके पांच प्रश्नोंको श्लेषसों उत्तर दियो है मल्लिकनाम जो पर्वत है ताको आपीड़ कहे शिखाभूषण है अर्थ मल्लिक पर्वत को राजा है । यथाच पद्मपुराणे " मल्लिकाख्यो महाशैलो मोक्षदः परमो नृणाम् । यत्राङ्गेषु नृणां तोयं श्यामं वा निर्मलं भवेत् ॥ पातकस्यापहारीदं नरा दृष्टं तु तीर्थकम् ४ " औ मल्लिका जो चँबेली है ताको आपीड़ शिखाभूषण बेणी मालादि "शिखा स्वापीडशेखरौ इत्यमरः" कैसोहै राजा औ माला ज्यहि के यशरूपी जो परिमल सुगंध है तासों मत्त चंचरीक भ्रमर सदृश जे

चारण भाट हैं ते दिशि विदिशन में अनुरक्त संलग्न फिरत हैं अर्थ जाको यश दिशि विदिशन में भाट गावत फिरत हैं औ यशसदृश जो परिमल सुगंध है तामें मत्त चारणसदृश जे चंचरीक भ्रमर हैं ते दिशि विदिशन में अनुरक्त फिरत हैं अर्थ जाके सुगंध में मत्त है भ्रमर दिशि विदिशन में उड़त फिरत हैं २० सुखकहे सहज मुख के बासु सुगन्धते २१ काशमीर को तिलक कहे काशमीर देशको राजा औ काशमीर कहे केशरिको तिलक कैसोहै राजा औ तिलक राजराज जे कुबेर हैं तिनकी दिशा उत्तर दिशारूपी जो वाम स्त्री है ताके भालको लालरक्त जो सुमेरुहै सो है लोभी सदा ज्यहि राजाको अर्थ सुमेरु के यह इच्छा रहति है कि इंद्र को राज छोड़ि या राज.को राज हमपर होय यासों या जनायो कि राजा रूप गुण करि इंद्रहू सों अधिकहै अथवा यह राज सुमेरु को सदा लोभी है इंद्रको जीति सुमेरुपर राज्य करिवे की इच्छा राखत है और राजराज दिक्सदृश जे वाम स्त्री हैं राजराज दिक् सदृश कहे या जनायो जैसे द्रव्यरूप लक्ष्मी सों युक्त उत्तर दिशा है तैसे शोभारूप लक्ष्मी सों युक्त स्त्री है तिनके भाल को जो लालरत्न है शोभा है सदा जा तिलकको अर्थ जो तिलक लालहूकी शोभा बढ़ावत है तासों तिलक के निकट रहिबेकी भाल लालके इच्छा रहति है आशय यह कि [illegible] भूषित औ अतिसुन्दरीहू तिन के शोभा बढ़ावत है साधारण नहीं है औ अर्थ राजराज कहे राजन को राजा है और दिशारूपी जो वाम स्त्री है ताके भाल को लाल है औ लोभी है सदा कहे याचकनकी याचकताको याचकन को याचिवो सर्वदा जाको भावत है अर्थ बड़ो दाता है सदा पर सों मैं याचकता की कहतहौं और अर्थ राजदिक् जो उत्तरदिशा है ताके वामभाग जो पूर्वदिशा है ताके भालको लाल सूर्य ताको सदा लोभी ऐसा जो काशमीर देश है ताको राजा है अति जाड़े सों जा देशवासिन के सदा सूर्योदय की इच्छा रहति है २२ ॥

सुमति–दोहा ॥ निजप्रताप दिनचर करत लोचन कमल प्रकास ॥ पान खात मुसुकात मृदु को यह केशवदास २३ ॥

अर्थ यह जाके अंगन में प्रताप कांति की झलक सब लोचन पसारिकै निहारत हैं २३ ॥

विमति–सोरठा ॥ नृप माणिक्य सुदेश दक्षिणतिय जिय भावतो ॥ कटितटसुपटसुवेश कलकांची शुभ मंडई २४ ॥

समति-दोहा ॥ कुंडलपरसत मिस कहत कहौ कौन यह राज ॥ शंभुशरासनगुन करो कर्णालंबित आज २५ विमति-सोरठा ॥ जानहिं बुद्धिनिधान मत्स्यराज यहि राजको ॥ समर समुद्र समान जानत सब अवगाहिकै २६ सुमति-दोहा ॥ अंगरागरंजित रुचिर भूषणभूषित देह ॥ कहत विदूषक सों कछू सो पुनि को नृप येह २७ ॥

नृपमाणिक्य नृपश्रेष्ठ औ उत्तम माणिक्य राजा कैसो है कि सुंदर है देश द्राविड़ादि जामें ऐसी जो दक्षिणदिशारूपी तिय है ताको अतिभावत है जा दक्षिण दिशाके कटितट में कहे मध्यभाग में सुंदर है पटपद्धति जाको औ कल कहे दुःख रहित ऐसी जो कांचीनाम पुरी है ताको मंडत है भूषित करत है अर्थ कि याके देशमें मध्यभाग में विष्णुकांची शिवकांची पुरी है तामें जाको वास है माणिक्य कैसो है कि सुदेश कहे सुंदरी दक्षिण कहे प्रवीण जे तिय स्त्री हैं तिनको अतिभावतो है फेरि कैसो है कि सुष्टुपट वस्त्रयुक्त जो कटितट है तामें कलकहे अव्यक्त मधुर स्वरयुक्त जो कांची क्षुद्रघंटिका है ताको मंडई कहे भूषित शोभित करै है २४ कर्णालंबित करो कर्णपर्यंत खैंचो २५ मत्स्यनाम जो देशविशेष है मछरीबंदर करि प्रसिद्ध है ताको यह राजा है और मत्स्यराज राघव मत्स्य सो जैसे समुद्र को अवगाहि मँझाइकै सब जानत हैं ऐसे राजा समररूपीसमुद्र को मँझाइ कै सब समर भेद को जानत है अर्थ कि बड़ो शूर है "मत्स्यो मीने पुमान् भूम्नि देशे इति मेदनी" २६ विदूषक मसखरा "हास्यकारी विदूषक इत्यमरः" २७ ॥

विमति-सोरठा ॥ चंदनचित्र तरंग सिंधुराज यह जानिये ॥ बहुत वाहिनी संग मुक्तामाल विशालउर २८ दोहा ॥ सिगरे राजसमाज के कहे गोत गुणग्राम ॥ देश स्वभाव प्रभाव अरु कुल बल विक्रम नाम २९ घनाक्षरी ॥ पावक पवन मणि पन्नग पतंग पितृ जेते ज्योतिवंत जग ज्योतिषिन गाये हैं। असुर प्रसिद्ध सिद्ध तीरथ सहित सिंधु केशव चराचर जे वेदन बताये हैं ॥ अजर अमर अज अंगी औ

अनंगी सब अरणि सुनावै ऐसे कौने गुण पाये हैं । सीताके स्वयंवरको रूप अवलोकिबे को भूपनको रूपधरि विश्वरूप आये हैं ३० सोरठा ॥ कह्यो विमति यह टेरि सकलसभाहि सुनाइकै ॥ चहूं ओर कर फेरि सबही को समुझाइकै ३१ गीतिकाछंद ॥ कोइ आजु राजसमाजमें बल शम्भु को धनु कर्षि है । पुनि श्रवण के परिमाण तानि सो चित्त में अति हर्षि है ॥ वह राज होइ कि रंक केशवदास सो सुख पाइहै । नृपकन्यका यह तासुके उर पुष्पमालहि नाइ है ३२ ॥

सिंधुराज सिंधुदेश लाहौरको राजा औ समुद्र चंदनके चित्रकी तरंग है अंगन में जाके अर्थ चित्र विचित्र चंदन अंगन में लाये है औ चंदन वृक्षनसों चित्र विचित्रहै तरंग जाकी अनेक चंदन वृक्ष जाकी तरंगनमें वहत हैं वाहिनी चमू औ नदी मुक्तनकी माला पहिरेहै औ मुक्तनकी माला पंगति समूहेति सोहै उरमें वदनमें जाके "सिंधुर्वमथुदेशाब्धिनदेनासरति स्त्रियामितिमेदिनी" २८बल अंगबल, विक्रम बुद्धिबल २९ पन्नग सर्प शेषादि पतंग पक्षी गरुड़ादि असुर दैत्य राक्षस वाणासुर रावणादि सिद्ध देवजाति विशेष अथवा तपस्वी अजर कहे जरा बुढ़ाईसों रहित देवता अमर हनूमानादि अज ब्रह्मादि अंगी अंगधारी अनंगी कामादि विश्वरूप संसारभरेके रूप प्राणी ३०।३१ कर्षिहै उठाइहै ३२॥

दोहा॥नेक शरासन आसनै तजै न केशवदास ॥ उद्यम कै थाक्यो सबै राजसमाज प्रकास ३३ विमति-सुंदरीछंद॥शक्ति करी नहिं भक्तिकरी अब । सो न नयो पल शीश नये सब ॥ देख्यों मैं राजकुमारनके वर । चाप चढ़्यो नहिं आप चढ़े खर ३४ विजय ॥ दिक्पालनकी भुवपालनकी लोकपालनहू कि न मातु गईच्वै । भांड़भये उठि आसनते कहि केशव शम्भु शरासनको छ्वै ॥ काहू चढ़ायो न काहू नवायो सुकाहू उठायो न आंगुरहू द्वै । स्वारथ भो न भयो परमारथ आये हैं वीर चले वनिता ह्वै ३५ ॥

इति श्रीस्वयंवरसभावर्णननाम तृतीयः प्रकाशः ३ ॥

जो या धनुषको उठाइ है ताको नृपकन्या व्यर्थ पुष्पमाला पहिराइ है ऐसे विमति के वचन सुनि सब राजसमाज समूह धनुष उठाइबे में उद्यम कहे उपाइ करतभये परंतु शरासन नेकु आसनको हू न छोड़त भयो अर्थ रंचकहू ना उठ्यो २३ जब धनुष काहू सों न उठ्यो तब क्रोधयुक्त है विमति कह्यो धनुष उठाइबेमें राजकुमारन शक्ति बल नहीं कियो धनुषकी भक्ति कियोहै काहे कि धनुष न नयो औ पलमात्र सबके शीश नवत भये तौ जाकी जो भक्ति करतहैं ताको शीश नावत प्रणाम करत हैं तासों आप खर गर्दभ में चढ़े अर्थ गर्दभ में चढ़े प्राणी सब निन्दितभये २४ किन चै गई कहे गर्भपतन काहे ना भयो २५॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकी-प्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां तृतीयःप्रकाशः ॥ ३ ॥

दोहा ॥ कथा चतुर्थ प्रकाशमें बाणासुरसंवाद ॥ रावण सों अरु धनुष सों दशमुखबाणविषाद १ सबही को समुझेउ सबन बलविक्रम परिमाण ॥ सभामध्य ताही समय आये रावण बाण २ अडिल्लछंद ॥ नरनारि सबै । भयभीत तबै ॥ अचरिज्जु यहै । सब देखि कहै ३ दोहा ॥ है राकस दश-शीश को दैयत बाहु हजार ॥ कियो सबनि के चित्त रस अद्भुत भय संसार ४ रावण-विजोहाछंद ॥ शंभुकोदंड दै । राजपुत्री किते ॥ टूक द्वै तीनिकै । जाहुँ लंकाहि लै ५ वि-मति-शशिवदनाछंद ॥ दशशिर आवो । धनुष उठावो ॥ कछु बल कीजै । जग यश लीजै ६ बाण-गीतिकाछंद ॥ दशकंठरे शठ छांड़ि दे हठ बारबार न बोलिये । अब आजु राजसमाज में बल साजु चित्त न डोलिये ॥ गिरिराज ते गुरु जानिये सुरराजको धनु हाथलै । सुख पाय ताहि चढ़ाय कै घरजाहिरे यश साथलै ७॥

रावणसों बाणासुरको संवाद है ना उठ्यो तासों दशमुख औ बाणको धनुष सों विषाद दुःख है १ । २ बाण रावणको देखि सब प्राणी आश्चर्य यहै शब्द कहत भये ३ दशशीशको राक्षस औ हजारबाहुको दैत्य सबनके

चित्तमें अद्भुत औ भैंयरसको संसार रच्यो अर्थ अति आश्चर्य औ भय सों युक्त कियो दशशिर हजारबाहु देखि अद्भुतरस भयो भयानकरूप देखि भयरस भयो ४ रावण विमति सों कह्यो कि शम्भुकोदण्ड हमको दै कहे दीजिये औ राजपुत्री कहां है ताको बताओ धनुष तोरि राजपुत्री लै लंकाहि जाउँ ५। ६ विमति सों कहत ऐसे सबन के गर्बवचन सुनि रोषकरि बाण बोलत भये राजसभा नें बलको साज पराक्रम करु चित्त करिकै ना डोलु अर्थ मनोरथ ना करु अथवा बलकी साज सों अथवा बल औ साज सैन्यादि सों चित्त ना डोलावो मनोरथ ना करौ अर्थ यहां तुम्हारो बल ना चलि है सुरराज महादेव के गिरिराज ते कैलास ते सुरराजको धनुष गुरु गरू जानौ सुरराज पदको संबंध गिरिराजहू में है ७ ॥

मंथनाछंद ॥ वाणी कही बान। कीन्हीं न सो कान ॥ अद्यापि आनी न। रेवंदि कानीन ८ बाण–मालतीछंद ॥ जो पै जिय जोर। तजौ सब शोर ॥ शरासन तोरि। लहौ सुख कोरि ९ रावण–दंडक ॥ वज्रको अखर्वगर्व गंज्यो ज्यहि पर्वतारि जीत्यो है सुपर्व सर्व भाजे लै लै अंगना। खंडित अखंड आशु कीन्हों है जलेशपाशु चंदनसी चन्द्रिका सों कीन्हीं चंद वंदना ॥ दंडकमें कीन्हों कालदंडहूको मानखंड मानो कीन्हूं कालहीकी कालखंडखंडना। केशव कोदंड विशदंड ऐसी खंडे अब मेरे भुजदंडनकी बड़ी है विडंबना १०॥

अतिगर्व सों बाणकी बाणी कान में ना करयो अर्थ ना सुन्यो फेरि विमति सों कह्यो कि रे कानीन, रुद्रबन्दि! अद्यापि राजपुत्री को ना ल्यायो ८ अर्थ राजपुत्री मालरूपी सुख शरासन तोरे विना न पैहै ९ जिन भुजदंडन वज्र को जो अखर्व बड़ो गर्व है ताको गंज्यो विदारयो अर्थ इंद्रकी रक्षा औ शत्रुवध करिबे में वज्र के अमोघताको गर्व रह्यो सो इनमें निष्फल भयो पर्वतारि इंद्रको इन जीत्यो तब सर्व सुपर्व देवता अपनी अपनी स्त्री लैलै भागत भये फेरि अखंड काहूके खंडिबे योग्य नहीं ऐसो जो जलेश वरुण को पाशु फांस है ताको आशु जल्दी जिन खंडन कियो तोरयो औ जिनकी वंदना पूजा चंदनसी चन्द्रिका सों चन्द करयो अर्थ [illegible]

ने जिनको सुखद चांदनीसों सुख दियो युद्ध ना कियो औ कालदंड यमराज को आयुध ताके यमराजरक्षा शत्रुवध करिबे को मान गर्व रह्यो ताको खंडन कियो औ काल जे यमराज हैं तिनहीं को खंड खंडना इन ऐसी कियो मानो काल कहे यमके काल ईश्वर कीन्हों अर्थ जैसे यमको काल निर्भय है यमके खंडन करत है तैसे.करयो यासों या जनायो कि मैं इन भुजदंडनसों इनको सबको जीत्यों है केशवकवि कोदंड धनुप विश जो नारी विडंबना निंदा १० ॥

बाण–तुरंगमछंद ॥ बहुत वदन जाके । विविध वचन ताके ॥ रावण ॥ बहुभुजयुत जोई । सबल कहिय सोई ११ दोहा ॥ अति असार भुजभारहीं बली होहुगे बान ॥ बाण ॥ मम बाहुन को जगत में सुनु दशकंठ विधान १२ सवैया ॥ हौं जबहीं जब पूजन जात पितापद पावन पापप्रनासी। देखि फिरौं तबहीं तब रावण सातौ रसातलके जे विलासी ॥ लै अपने भुजदंड अखंड करौं क्षितिमंडल छत्रप्रभासी। जानै को केशव केतिक बार मैं शेशके शीशन दीन उसासी १३ रावण–कमलछंद ॥ तुम प्रबल जो हुते । भुजबलनि संयुते ॥ पितहि भुव ल्यावते । जगत यश पावते १४ बाण–तोमरछंद ॥ पितु आनिये किहि ओक। दिय दक्षिणा सब लोक ॥ यह जानिये वन दीन। पितु ब्रह्मके रसलीन१५॥

रावण के वचन में काकूक्ति है ११ असार बलरहित १२ अखंड संपूर्ण १३।१४ हे रावण! दीन हमारो पिता ब्रह्म परब्रह्म के रस स्वाद में लीन है तू यह जानि कहे जानु १५ ॥

सवैया ॥ कैटभ सो नरकासुरसो पल में मधु सो मुर सो ज्यहि मारयो। लोक चतुर्दश रक्षक केशव पूरण वेद पुराण विचारयो ॥ श्रीकमलाकुचकुंकुममंडित पंडित देव अदेव निहारयो। सो कर माँगन को बलि पै करतारहु ने करतार पसारयो १६ रावण–दोहा ॥ हमैं तुम्हैं नहिं बूझिये विक्रम वाद

चित्तमें अद्भुत औ भैयरसको संसार रच्यो अर्थ अति आश्चर्य औ भय सों युक्त कियो दशशिर हजारबाहु देखि अद्भुतरस भयो भयानकरूप देखि भयरस भयो ४ रावण विमति सों कह्यो कि शम्भुकोदण्ड हमको दै करै दीजिये औ राजपुत्री कहां है ताको बताओ धनुष तोरि राजपुत्री लै लंकाहि जाउँ ५ । ६ विमति सों कहत ऐसे सवन के गर्ववचन सुनि रोषकरि बाण बोलत भये राजसभा नें बलको साज पराक्रम करु चित्त करिकै ना डोलु अर्थ मनोरथ ना करु अथवा बलकी साज सों अथवा बल औ साज सैन्यादि सों चित्त ना डोलावो मनोरथ ना करौ अर्थ यहां तुम्हारो बल ना चलि है सुरराज महादेव के गिरिराज ते कैलास ते सुरराजको धनुष गुरु गरू जानौ सुरराज पदको संबंध गिरिराजहू में है ७ ॥

मंथनाछंद ॥ वाणी कही बान । कीन्हीं न सो कान ॥ अद्यापि आनी न । रेवंदि कानीन ८ बाण–मालतीछंद ॥ जो पै जिय जोर । तजौ सब शोर ॥ शरासन तोरि । लहौ सुख कोरि ६ रावण–दंडक ॥ वज्रको अखर्वगर्व गंज्यो ज्यहि पर्वतारि जीत्यो है सुपर्व सर्व भाजे लै लै अंगना । खंडित अखंड आशु कीन्हों है जलेशपाशु चंदनसी चन्द्रिका सों कीन्हीं चंद वंदना ॥ दंडकमें कीन्हों कालदंडहूको मानखंड मानो कीन्हो कालहीं की कालखंडखंडना । केशव कोदंड विशदंड ऐसी खंडे अब मेरे भुजदंडनकी बड़ी है विडंबना १०॥

अतिगर्व सों बाणकी वाणी कान में ना करयो अर्थ ना सुन्यो फेरि विमति सों कह्यो कि रे कानीन, क्षुद्रबन्दि ! अद्यापि राजपुत्री को ना ल्यायो ८ अर्थ राजपुत्री मासरूपी सुख शरासन तोरे विना न पैहै ६ जिन भुजदंडन वज्र को जो अखर्व बड़ो गर्व है ताको गंज्यो विदारयो अर्थ इंद्रकी रक्षा औ शत्रुवध करिवे में वज्र के अमोघताको गर्व रह्यो सो इनमें निष्फल भयो पर्वतारि इंद्रको इन जीत्यो तब सर्व सुपर्व देवता अपनी अपनी स्त्री लैलै भागत भये फेरि अखंड काहूके खांडिवे योग्य नहीं ऐसो जो जलेश वरुण को पाशु फांस है ताको आशु जल्दी जिन खंडन कियो तोरयो औ जिनकी वंदना पूजा चंदनसी चन्द्रिका सों चन्द्र करयो अर्थ अतिभय मानि चन्द्रमा

ने जिनको सुखद चांदनीसों सुख दियो युद्ध ना कियो औ कालदंड यमराज को आयुध ताके यमराजरक्षा शत्रुवध करिबे को मान गर्व रह्यो ताको खंडन कियो औ काल जे यमराज हैं तिनहीं को खंड खंडना इन ऐसी कियो मानो काल कहे यमके काल ईश्वर कीन्हों अर्थ जैसे यमको काल निर्भय है यमके खंडन करत है तैसे करयो यासों या जनायो कि मैं इन भुजदंडनसों इनको सबको जीत्यों है केशवऋषि कोदंड धनुष विश जो नारी विडंबना निंदा १० ॥

बाण-तुरंगमछंद ॥ बहुत वदन जाके । विविध वचन ताके ॥ रावण ॥ बहुभुजयुत जोई । सबल कहिय सोई ११ दोहा ॥ अति असार भुजभारहीं बली होहुगे बान ॥ बाण ॥ मम बाहुन को जगत में सुनु दशकंठ विधान १२ सवैया ॥ हौं जबहीं जब पूजन जात पितापद पावन पापप्रनासी । देखि फिरौं तबहीं तब रावण सातौ रसातलके जे विलासी ॥ लै अपने भुजदंड अखंड करौं क्षितिमंडल छत्रप्रभासी । जानै को केशव केतिक बार मैं शेशके शीशन दीन उसासी १३ रावण-कमलछंद ॥ तुम प्रबल जो हुते । भुजबलनि संयुते ॥ पितहि भुव ल्यावते । जगत यश पावते १४ बाण-तोमरछंद ॥ पितु आनिये किहि ओक । दिय दक्षिणा सब लोक ॥ यह जानिये वन दीन । पितु ब्रह्मके रसलीन १५ ॥

रावण के वचन में काकूक्ति है ११ असार बलरहित १२ अखंड संपूर्ण १३।१४ हे रावण! दीन हमारो पिता ब्रह्म परब्रह्म के रस स्वाद में लीन है तू यह जानि कहे जानु १५ ॥

सवैया ॥ कैटभ सो नरकासुरसो पल में मधु सो मुर सो ज्यहि मारयो । लोक चतुर्दश रक्षक केशव पूरण वेद पुराण विचारयो ॥ श्रीकमलाकुचकुंकुममंडित पंडित देव अदेव निहारयो । सो कर माँगन को बलि पै करतारहु ने करतार पसारयो १६ रावण-दोहा ॥ हमैं तुम्हैं नहिं बूझिये विक्रम वाद

अखंड ॥ अब जो यह कहि देहिगो मदनकदन कोदंड १७ संयुतछंद ॥ अब बाण रावणकी सुन्यो । शिर राजमंडल में धुन्यो ॥ विमति ॥ जगदीश अब रक्षा करौ । विपरीत बात सबै हरौ १८ दोहा ॥ रावण बाण महाबली जानत सब संसार ॥ जो दोऊ धनु कर्षिहैं ताको कहा विचार १९ बाण- सवैया ॥ केशव औरते और भई गति जानि न जाइ कछू करतारी । शूरनके मिलिबे कहँ आय मिल्यो दशकंठ सदा अविचारी ॥ बाढ़िगयो बकवाद वृथा यह भूलि न भाट सुनावहिं गारी । चाप चढ़ाइहौं कीरतिको यह राजकरै तेरी राजकुमारी २० ॥

जा कर ने कैटभादि बली दैत्यनको मारयो फेरि चौदहो लोककी रक्षा करत हैं यों कहिकर कि बड़ी शक्ति जनायो फेरि श्रीकमला लक्ष्मी के कुचनमें कुंकुम केशर के मंडित में भूपित करै में अर्थ मकरिकापत्र बनावै सो पंडित है यासों या जनायो कि जिन विष्णु की लक्ष्मी स्त्री हैं तासों सब सब पदार्थ सों पूरण जानो यामें येती शक्ति है शारदकर हाथ करतार जे ब्रह्माहैं तिनहुँनके करतार जे विष्णु हैं तिन बलिपै मांगिबेको पसारयो ऐसे बली विष्णु बलि पै भिक्षाही मांगिपायो जीतिकै न पाई तासों विष्णुहूसों अधिक बली औ दाता जानो इति भावार्थः १६।१७ अत धनुष उठाइबे की प्रतिज्ञा १८।१९ विमतिके ऐसे विकल वचन सुनि बाण कह्यो कि हे भाट ! सीताके व्याहिबे को बाण धनुष उठावत है ऐसी जो गारी है ताको भूलिहू ना सुनाउ सीता हमारी माताहैं उनतिसयें दोहा में कह्यो है कि सीता मेरी माइ २० ॥

रावण–मधुछंद ॥ मोकहँ रोंकि सकै कहि को रे । युद्ध जुरे यमहूं कर जोरे ॥ राजसभा तिनुका करि लेखौं । देखिकै राजसुता धनु देखौं २१ सवैया ॥ बाण कह्यो तब रावणसों अब बेगि चढ़ाउ शरासनको । बातैं बनाइ बनाइ कहा कहै छोड़िदे आसन वासनको ॥ जानतहै किधौं जानत नाहिंन

तू अपने मदनासनको। ऐसेहि कैसे मनोरथ पूजत पूजे विना नृपशासनको २२ रावण—बंधुछंद ॥ बाण न बात तुम्हैं कहि आवै। बाण ॥ सोई कहौं जिय तोहिं जो भावै ॥ रावण ॥ का करिहौ हम योंही बरैंगे। बाण ॥ हैहयराज करी सो करैंगे२३ रावण—दंडक॥ भौंर ज्यों भँवत भूत वासुकी गणेश-युत मानो मकरंदबुंद माल गंगाजलकी। उड़त पराग पटनाउसी विशालबाहु कहा कहौं केशौदास शोभा पलपल की ॥ आयुध सघन सर्वमङ्गलासमेत शर्व पर्वत उठाइ गति कीन्हीं है कमलकी। जानत सकल लोक लोकपाल दिक-पाल जानत न बाण बात मेरे बाहुबलकी २४ ॥

२१ आसन विछावने औ वासन वस्त्रनको छोड़िदे अर्थ मल्लरूप काढ़ि धनुप उठावो आइ अथवा सीताके लीवेकी जे आशा हैं तिनकी वासना स्मरण छोड़िदे अपने मदनाशनको मोको तू जानत है कि नहीं जानत जो ऐसी बात कहत है कि सीता को विना धनुष तोरेही बरिहैं अथवा अपने मदनाशनको धनुषको अर्थ यह धनुष तुम्हारे मदको नाश करि है नृपशा-सन धनुप उठाइवो २२ हैहयराज सहस्त्रार्जुन २३ वासुकी सर्प औ गणेश सहित भूतगण जा पर्वत में कमल के भौंरसम भँवत भये औ महादेव के शीश को जो गंगाजल गिर्‍यो ताकी माल मकरंद पुष्परस भयो औ उ-ड़त जे पार्वती आदिके पट वस्त्र हैं तेई पराग पुष्पधूलि औ मेरो बाहु जो है सो नाल कमलदंड भयो एते में या जनायो कि जब मैं कैलास उठायो तब अतिभयसों गणेशादि भ्रमत भये औ अतिशीघ्र उठायो तासों शंभु शीशको गंगाजल गिर्‍यो औ वस्त्र उड़त भये औ आयुध सघन कहि या जनायो कि तुम एक शंभु धनुष उठाइवो कठिन मानतहौ वा पर्वत में ऐसे अनेक आयुध रहे सर्वमंगला पार्वती २४ ॥

मधुभारछंद ॥ तजिकै सुरारि। रिस चित्तमारि ॥ दश कंठ आनि। धनु छुयो पानि २५ विमति ॥ तुम बलनिधान। धन अतिपरान ॥ पीसजद्द अंग। नहिं होहि भंग २६ सवैया॥

खंडित मान भयो सबको नृपमंडल हारि रह्यो जगतीको। व्याकुल बाहु निराकुल बुद्धि थक्यो बल विक्रम लंकपती को ॥ कोटि उपाय किये कहि केशव केहूं न छांड़त भूमि रतीको। भूरि विभूति प्रभाव सुभावहि ज्यों न चलै चित योग यतीको २७ पद्धटिका ॥ धनु अतिपुरान लंकेश जानि। यह बात बाणसों कही आनि ॥ हौं पलकमाहँ लैहौं चढ़ाइ। कछु तुमहूं तौ देखो उठाइ २८ ॥

सु कहे सो रारि वाग्विवाद अथवा सुरारि बाणासुर २५।२६ निराकुल शिथिल बल देहबल विक्रम उपाय विभूति ऐश्वर्य सुवर्ण रत्न गजादियोग यती योगी २७ धनुष मोसों उठनलायक नहीं है यह जानिकै लंकेश रावण अपना भरम राखि धनुप छोड़ि आइ बाणसों यह बात कह्यो कि धनुप अतिपुरान है २८ ॥

बाण–दोहा ॥ मेरे गुरु को धनुष यह सीता मेरी माइ ॥ दुहूँ भांति असमंजसै बाण चले सुखपाइ २९ रावण–तोटक छंद ॥ अब सीय लिये विन हौं न टरौं। कहुँ जाहुँ न तौलगि नेम धरौं ॥ जबलौं न सुनौं अपने जनको। अतिआरत शब्द हते तनको ३० ब्राह्मण–मोदकछंद ॥ काहू कहूं शर आसर मारिय। आरत शब्द अकाश पुकारिय ॥ रावण के वह कान पर्‍यो जब। छोड़ि स्वयंवर जात भयो तब ३१ दोहा ॥ जब जान्यो सबको भयो सबही बिधि व्रतभंग ॥ धनुष धर्‍यो लै भवनमें राजाजनक अनंग ३२ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांबाणरावणयोर्वाग्विवादवर्णनंनाम चतुर्थःप्रकाशः ॥ ४ ॥

२९ हते कहे बाणादिसों बंधे अर्थ मेरे दास यहां उहां यज्ञादि विघ्नकरत फिरत हैं तिनको जो कोऊ सताइ है तौ तिनकी रक्षाको जैहौं ३० जब

मारीचादिको रामचन्द्र मारचोहै तब तिनको आरत पीड़ित दुःखितेति शब्द सुनि रावण स्वर्णनर सभाते गयो सो भेद कछू ब्राह्मण तौ जानत नहीं तासों संदेहविशिष्ट है कहत है कि काहू बली कहूं कौन्यो स्थानमें शर बाण सों आसर कहे काहू राक्षस को मारचो "क्रव्यादोऽस्र आसर इत्यमरः" सुदभासुर मारिय कहूं यह पाठ है तौ सुदनामा राक्षस ते भा कहे उत्पन्न जो असुर राक्षस है मारीच ताको सुदनाम राक्षसकी स्त्री ताड़का है ताको पुत्र मारीच है औ कहूं शरमारिच मारिय पाठ है तौ शरसों मारीच नाम राक्षसको मारचो ३१ अनंग विदेह ३२ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादायजनजानकीप्रसाद-
निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां चतुर्थःप्रकाशः ॥ ४ ॥

दोहा ॥ यह प्रकाश पंचम कथा रामगवन मिथिलाहि ॥ उद्धारण गौतमघरणि स्तुति अरुणोदय आहि १ मिथिलापतिके वचन अरु धनुभंजन उरधार ॥ जैमाला दुंदुभि अमर वर्षन फूल अपार २ ब्राह्मण–तारकछंद ॥ जब आनि भई सबको दुचिताई । कहि केशव काहुपै मेटि न जाई ॥ सिय संगलिये ऋषिकी तिय आई । इक राजकुमार महा सुखदाई ३ मोहनछंद ॥ सुंदरवपु अतिश्यामल सोहै । देखत सुर नर को मन मोहै ॥ आनिय लिखि सियको बरु ऐसो । रामकुमारहि देखिय जैसो ४ तोटकछंद ॥ ऋषिराज सुनी यह बात जहीं । सुखपाय चले मिथिलाहि तहीं ॥ वन राम शिला दरशी जबहीं । तिय सुंदररूप भई तबहीं ५ विश्वामित्र–सोरठा ॥ गौतमकी यह नारि इंद्रदोष दुर्गति गई ॥ देखि तुम्हैं नरकारि परमपतित पावन भई ६ कुसुमविचित्रा छंद ॥ तेहि अतिरूरे रघुपति देख्यो । सब गुण पूरे तनमन लेख्यो ॥ यह वर माँग्यो दियो न काहू । तुम मम मनते कहूं न जाहू ७ कलहंसछंद ॥ तहँ ताहिदै वरको चले रघुनाथजू । अतिशूर सुंदर यों लसैं ऋषिसाथजू ॥ जनु सिंहके सुत दोउ

सिद्धी श्रीरये । वनजीव देखत यों सबै मिथिला गये ८ ॥

१ । २ जब धनुष काहूसों न उठ्यो तब सबके जनकादि के मनमें दुचिताई भई कि सीताको ब्याह अब ना है है ता दुचिताई मेटिबेके लिये त्रिकालदर्शिनी काहू ऋषिकी स्त्री एक राजकुमार सीताके संग चित्रमें लिखिकै ल्याई कि सीताको या प्रकार को वरु मिलिहै आशय कि जब यह प्रकारको राजकुमार आवै तब शंभुधनुष चढ़ाइकै सीताको ब्याहै ३ सो हे ऋषि ! जैसो इन राजकुमारको देखियतहै तैसोई वरु ऋषिकी स्त्री सीताको लिखिल्याई ४ । ५ दुर्गति दुर्दशाको गई कहे प्राप्त भई ६ रूरे सुंदर ७ अतिशूर औ सुन्दर दुवौ राम लक्ष्मण ऋषिके साथ में ऐसे शोभित भये मानो सिद्धि जो तप सिद्धि है ताकी श्री शोभामें रमे कहे अनुरागे सिंह के सुत पुत्र हैं सिंहादि वनजीव तपस्विन के वश्य होत हैं यह प्रसिद्ध है औ सिद्ध है श्रीरये पाठ होइ तौ सिद्ध स्वाभाविक श्री शोभासों रये युक्त ८ ॥

दोहा ॥ काहूको न भयो कहूँ ऐसो सगुन न होत ॥ पुर पैठत श्रीरामके भयो मित्र उद्दोत ९ राम–चौपाई ॥ कछु राजत सूरज अरुण खरे । जनु लक्ष्मणके अनुराग भरे ॥ चितवत चित्त कुमुदनी त्रसै । चोर चकोर चितासी लसै १० लक्ष्मण–षट्पद ॥ अरुणगात अति प्रात पद्मिनीप्राणनाथ भय । मानहुँ केशवदास कोकनद कोकप्रेममय ॥ परिपूरण सिंदूर पूर कैधौं मंगलघट । किधौं शक्रको छत्र मढ़्यो माणिक मयूखपट ॥ कै शोणितकलित कपाल यह किल कपालिका कालको । यह ललित लाल कैधौं लसत दिग्भामिनिके भालको ११ ॥

९ अति अनुराग करि पुरमें पैठतही लक्ष्मणके सगुनार्थ उदित भये ताही अनुराग प्रेमसों मानो भरे कहे पूरित हैं अथवा लक्ष्मणको व्याजकरि सगुन समय उदयसों आपने ऊपर सूर्य को प्रेम जनायो यह कहनूति लोकरीति है १० पद्मिनीप्राणनाथ सूर्य अरुणतामें तर्क है कोकनद कमलनको फुलावत हैं कोक चकवानको संयोगी करतहैं तासों मानो तिनके प्रेममयी हैं अर्थ तिनप्रति जो प्रेम है सो ऊपर छाइ रह्यो है सिंदूरकी पूर प्रवाह

जलेति अर्थ सिंदूरमिश्रित जलसों भरयो अथवा परिपूर्ण सिंदूरसों पूर कहे पूरित अर्थ सिंदूरही सों भरयो अथवा सिंदूरसों रँग्यो कै मंगल विवाहादि को घटपूजन कलश हैं माणिक रत्नकी मयूख किरण तिनको बीन्यो पट वस्त्र औ कित कहे निश्चय करि यह कपालिका काली पै शोणित रुधिर कलित कालको कपाल शीश है अथवा कपालिकाको व काल को शोणित कलित कपाल हैं काली को रुधिर मांसभक्षक तासों कालको सर्वभक्षक तासों "कालो जगद्भक्षक इति प्रमाणात्" ११ ॥

तोटकछंद ॥ पसरे कर कुमुदिनिकाज मनो । किधौं पद्मिनिको सुखदेन घनो ॥ जनु ऋक्ष सबै यहि त्रास भगे । जिय जानि चकोर फँदान ठगे १२ रामचन्द्र—चंचरीकछंद ॥ व्योम में मुनि देखिये अतिलाल श्रीमुखसाजहीं । सिंधु में बड़वाग्निकी जनु ज्वालमाल विराजहीं ॥ पद्मरागनिको किधौं दिवि धूरि पूरित शोभई । शूरवाजिनकी खुरी अतितीक्ष्णता तिनकी हई १३ विश्वामित्र—सोरठा ॥ चढ़यो गगन तरु धाय दिनकर वानर अरुणमुख ॥ कीन्हो झुकि झहराय सकलतारका कुसुम बिन १४ ॥

कुमुदिनि कोईके काज कहे गहिबेको कुमुदिनी भय सो संकोचको प्राप्त होती है तासों ऋक्ष नक्षत्र यदि त्रास कहे फंदा भ्रमके त्रास १२ यामें आकाश में सूर्यकी लाली छाइरही है ताको वर्णन है मुनि विश्वामित्रको संबोधन है १३ सूर्योदय सों नक्षत्र अस्तभये तामें विश्वामित्र ने तर्क करयो दिनकर सूर्यरूपी जो अरुणमुख वानर है सो गगन आकाशरूपी तरु वृक्षमें धायकै चढ़यो है सो झुकि कहे रिसायकै झहराय कहे हलायकै सकल तारका नक्षत्ररूपी जे कुसुम फूले हैं तिन बिन कीन्हीं सकल नक्षत्र अस्त भयो तासों झुकि पद कह्यो १४ ॥

लक्ष्मण—दोहा ॥ जहीं वारुणीकी करी रंचक रुचि द्विज राज ॥ तहीं कियो भगवन्त बिन संपतिशोभासाज १५ तोमरछंद ॥ चहुँभाग बाग तड़ाग । अब देखिये बड़भाग ॥

फलफूलसों संयुक्त। अखि यों रमैं जनमुक्त १६ राम–

दोहा॥ तिन नगरी तिन नागरी प्रतिपद हंसकहीन॥ जलजहारशोभित जहाँ प्रकट पयोधरपीन १७॥

वारुणी पश्चिमदिशा औ मदिरा द्विजराज चन्द्रमा औ ब्राह्मण भगवंत सूर्य औ ईश्वर संपत्ति चांदनी औ द्रव्य शोभा अंगछवि दुवौ में जानौ सूर्योदय सों पश्चिमदिशा में शोभारहित चन्द्रबिंब देखि श्लेषोक्ति सों वर्णन करचो जो ब्राह्मण मदिरा की रुचि इच्छा करत है ताको ईश्वर संपत्त्यादि सों हीन करत है १५ चहुँभाग चारौ वीर मुक्त साधुजन १६ जो जनकदेश मे ते नगरी पुरी औ ते नागरी स्त्री नहीं हैं जे प्रतिपद स्थान स्थान प्रति औ चरण चरण प्रति हंसपक्षी औ क कहे जल औ हंसक बिछु-वनसों हीन हैं औ जहां कहे जिनमें पीन बड़े पयोधर वापी तड़ागादि औ कुचन में जलज कमल औ मोतिन के हारसमूह औ माला नहीं शोभित अर्थ सब नगरिनमें जलाशय जलयुक्त हैं तिनमें कमल फूले हैं औ हंस बसत हैं स्त्री मोतिन के माला औ बिछुवा पहिरे हैं यासों या जनायो कि विधवा नहीं हैं और अर्थ जो देश तिन नगरिन औ तिन नागरिनसों युक्तहै युक्तेति शेषः। जिनके प्रतिपद कहे मगराज मार्गेति औ पग चिह्न जे धूरि में अंकित होत हैं तेई हंसपक्षी औ क जल औ बिछुवन करि हीन हैं अर्थ नगरिन में राजमार्ग छोड़ि अन्यत्र हंसयुक्त जल शोभित है औ तिनके पगचिह्नही में बिछुवा नहीं हैं औ पगन में सब बिछुवा पहिरे हैं औ जहँ कहे जिन नगरिन में औ तिनमें शोभित न जलजहार न कमल समूह न औ मोती मालन सों युक्त पीन बड़े पयोधर तड़ागादि औ कुच हैं १७॥

सवैया॥ सातहु द्वीपनके अवनीपति हारि रहे जियमें जब जाने। बीसबिसे ब्रतभंग भयो सो कहौ अब केशव को धनुताने॥ शोककि आगिलगी परिपूरण आइगये घनश्याम बिहाने। जानकि के जनकादिक के सब फूलि उठे तरु पुण्य पुराने १८ दोधकछंद॥ आइगये ऋषि राजहि लीने। मुख्यसतानँद विप्रप्रवीने॥ देखि दुवौ भये पाँयन लीने।

आशिष सो ऋषि बासुलै दीने १६ विश्वामित्र–सवैया ॥
केशव ये मिथिलाधिप हैं जगमें जिन कीरतिबेलि बई है।
दान कृपान विधातनसों सिगरी वसुधा जिन हाथ लई है ॥
अंग छ सातक आठकसों भव तीनिहुँ लोकमें सिद्धि भई है।
वेदत्रयी अरु राजशिरी परिपूरणता शुभ योगमईहै २० ॥

घनश्याम रामचन्द्र औ सजलमेघ जैसे सज्जनमनके आगमनसों वृक्षन की दावाग्नि बुझाति है औ हरित ह्वैजात हैं तैसे धनुष काहूसों न उठ्यो अब सीता को ब्याह ना ह्वैहै ऐसे गाढ़ समयमों हम कछू सहाय ना कियो यह जासों कहै ताको आगि जनकादिके पुण्य वृक्षनमों लगीरहै सो रामागमनसों धनुष उठिबो निश्चय करि बुझानी और फूलि उठे प्रफुल्लित ह्वै उठे हरित ह्वै उठे १८ मुख्य जे सतानंद महोने दिम ऋषि हैं ते राजाजनक को लीन्हें विश्वामित्रको आगे ह्वै लेबे को आइके विश्वामित्रको देखि दुवौ सतानंद औ जनक पांयन में लीन भये विश्वामित्र शीश सूंघि आशिष दियो १६ विश्वामित्र रामादिसों जनककी बड़ाई करत हैं वेदत्रयी कहे तीनोंवेद ऋग्वेद सामवेद यजुर्वेद तिनके छः अंगसों औ राजश्री के सात अंगसों औ योगके आठ अंगसों भव जो संसार है तामें तीनिहुँ लोक में जनककी सिद्धि कार्यसिद्धि भई है यासों या जनायो षडंगयुक्त वेद सप्तांगयुक्त राज्य अष्टांगयुक्त योगसाधन करतहैं वेदांगानि यथा–शिक्षा १ कल्प२ व्याकरण ३ निरुक्ति ४ ज्योतिष ५ छन्द ६ 'यथोक्तं षड्दर्शशिकायां भट्टोत्पलटीकायां–शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषमिति" राज्यांगानि यथा–राजा १ मन्त्री २ मित्र ३ खजाना ४ देश ५ कोट ६ सैन्य ७ "स्वाम्यमात्यसुहृत् कोशं राष्ट्रदुर्गबलानि च। राज्यांगानीत्यमरः"। योगांगानि यथा–यम १ नियम २ आसन ३ प्राणायाम ४ प्रत्याहार ५ ध्यान ६ धारणा ७ समाधि ८ "यथोक्तं प्रबोधचन्द्रोदये–यमनियमासन प्राणायामप्रत्याहारध्यानधारणासमाधयः" २० ॥

जनक–सोरठा ॥ जिन अपनो तन स्वर्ण मेलि तापमय अग्निमें ॥ कीन्हो उत्तमवर्ण तेई विश्वामित्र ये २१ लक्ष्मण–मोहनछंद ॥ जन राजवंत। जग योगवंत। तिनको उदोत।

केहि भांति होत २२ श्रीराम–विजय ॥ सब क्षत्रिन आदिदै काहू छुई न छुये बिजनादिक वात डगै। न घटै न बढ़ै निशि-वासर केशव लोकनको तमतेज भगै। भवभूषण भूषित होत नहीं मदमत्तगजादि मषी न लगै। जलहू थलहू परिपूरण श्रीनिमिके कुल अद्भुतज्योति जगै २३ ॥

जब विश्वामित्र जनककी स्तुति करचुके तब जनक अपने मंत्री आदिसों विश्वामित्र की बड़ाई करत हैं उत्तमवर्ण ब्राह्मण औ अरुणरंग अर्थ तपस्या करि क्षत्रियसों ब्राह्मण भये २१ जब विश्वामित्र जनकके राज्य औ योगकी स्तुति कियो तब संदेहयुक्त है लक्ष्मण पूंछ्यो कि जे जन जगत् में राज्य औ योग दुवौ साधत हैं ते कैसे उदयको प्राप्त होत हैं काहेते राज्य औ योग परस्पर कर्म विरुद्ध हैं २२ लक्ष्मण पूंछ्यो कि जे जन राजवंत योगवंतहैं तिनको उदोत कैसे होत हैं सो सुनिकै कहिबे की अद्भुत युक्ति मनमें प्राप्तभई तासों विश्वामित्रसों प्रथमही रामचन्द्रही उदोत के हेतु कहन लगे उदोत ज्योति को होत है तालिये ज्योतिरूप करि कहत हैं कि निमि जे जनक के पुरिखा हैं तिनके कुलकी जो ज्योति प्रकाशकी शिखा है सो अद्भुत जगै कहे जगति है दीपित है इति अर्थ और दीपज्योतिके सम नहीं है सो अद्भुतता कहत हैं कि दीपज्योतिको और दीपज्योति छ्वैसकति है अर्थ समता करि सकति है अर्थ जैसे एक दीपकी ज्योति होति है तैसी सजातीय औरहू दीप की होति है औ या निमि कुलकी ज्योतिको आदि दै कहे आदिहीसों जबसों प्रकटभई है अर्थ जबसों निमि वंशभयो तबसों काहू क्षत्रिन नहीं छुयो अर्थ समता करचो फेरि कैसी है कि और ज्योति व्यजनादि वातसों डगमगाति है यह ज्योति व्यजनादि वातसों नहीं डगति आदि पदते चामरादि जानो अर्थ व्यजनादि वात भोगादिको सुख जामें लिप्त नहीं है सकत फेरि कैसी है कि और दीपज्योति दिनमें घटति है औ यह निशिवासर कहे रातिउ दिन घटति बढ़ति नहीं है अर्थ सब प्राणी जा वंश में बराबर होतजात हैं तासों घटति नहीं औ पूर्णताको प्राप्तहै तासों बढ़ति नहीं और दीपज्योतिसों थल-मात्रही को तम अंधकार दूरि होत है यासों कनकोत्तम तेज कहे अज्ञानको तेज दूरि होत है अर्थ जिनके उपदेश सों अथवा गानकरे सों अथवा कथा सुनिकै लोकनके प्राणिनको अज्ञान दूरि होत है ज्ञानी होत हैं फेरि कैसी

है कि दीपज्योति भवभूषण जो भस्म है तासों अर्थ गुनसों भूषित होति है औ यह भव जो संसार है ताके जे भूषण कुंडलादि हैं तिनसों नहीं भूषित होति अर्थ कुंडलादि धारण सुखमें नहीं लिप्त होति औ दीपज्योति में मषी जो मसि है कज्जलतिसों लगति है अरु यामें गजादिरूपी जो महिषी है सो नहीं लागति अर्थ गजादि आरोहन सुख भोगमें लिप्त नहीं होति आदि पदते रथाश्वादि जानो औ दीपज्योति थलही में पूरण रहाति है औ यह जलहू थल में परिपूरण है अर्थ जल थल में प्रसिद्ध हैं योगसों जीवन्मुक्त हैं तासों राज्यसुखमें लिप्त नहीं होत इति भावार्थः २३ ॥

जनक-तारक ॥ यह कीरति और नरेशन सोहै। सुनि देव अदेवन को मन मोहै ॥ हमको बपुरा सुनिये ऋषिराई। सब गाउँ छसातककी ठकुराई २४ विश्वामित्र-विजय ॥ आपने आपने ठौरनि तौ भुवपाल सबै भुवपालैं सदाई। केवल नामहींके भुवपाल कहावत हैं भुवपालि न जाई। भूपनिकी तुमहीं धरि देह विदेहन में कलकीरति गाई। केशव भूषणकी भवभूषण भूतन में तनया उपजाई २५ ॥

जा प्रकार तुम बरण्यो यह कीरति और बड़े राजन में सोहति है या लायक हम नहीं हैं २४ पतिको धर्म है स्त्रीसों पुत्र कन्या उपजाइबो सो भूमिरूपी स्त्री है तासों और काहू भूपति नहीं उपजायो तासों केवल नामहीं के भूपाल हैं भूपनि की देह कोऊ नहीं धरे औ तुम भवसंसार में भूषणहू को भूषण अर्थ जाते भूषण शोभा पावत हैं अतिसुंदरीति ऐसी तनया पुत्री भूतन पृथ्वी के तन देहते उपजायो तासों भूपनकी देह केवल तुमहीं धरेहौ औ ताहूपर तुम्हारी कल कहे निर्दोष कीरति विदेहनमें गाई है कहावत विदेह हौ यासों या जनायो कि भोगराज को करत हौ यश जीवन्मुक्त तपस्विन में गायो है याते तुमसम कोऊ राजा नहीं है २५ ॥

जनक-दोहा ॥ इहि विधिकी चित चातुरी तितको कहा अकत्थ ॥ लोकनकी रचना रुचिर रचिबेको समरत्थ २६ सवैया ॥ लोकनकी रचना रचिबेको जहीं परिपूरण बुद्धि

विचारी। ह्वैगइ केशवदास तहीं सब भूमि अकाश प्रकाशित भारी । शुद्ध शलाकसमान लसी अतिरोषमयी दृग दीठि तिहारी। होत भये तब सूर सुधाधर पावक शुभ्र सुधा रँगधारी २७ ॥ दोहा ॥ केशव विश्वामित्र के रोषमयी दृग जानि ॥ संध्यासी तिहुँलोक में किहिनि उपासी आनि २८ जनक–दोधकछंद ॥ ये सुत कौनके शोभहिं साजे। सुंदर श्यामलगौर विराजे। जानत हौं जिय सोदर दोऊ। कै कमला विमलापति कोऊ २९ ॥

जिनके लोक रचना रचिवेकी सामर्थ्य है तिनको वचन रचना करिबो कहा है २६ परिपूरण बुद्धि कहे निश्चय बुद्धिसों बुद्धि भूमि औ आकाशमें प्रकाशित भई अर्थ फैलत भई अथवा भूमि आकाशसहित प्रकाशितभई प्रकट भई अर्थ सब विषय हस्तामलकवत् देखि परचो तासमय शुद्ध कहे तीक्ष्ण शलाका बाण समान तिहारी रोषमयी दृष्टि लसी तासों सूर सूर्य सुधाधर चन्द्रमा सरिस भयो औ अग्नि अमृतके रंग भये अर्थ अतिभयसों तेजहीन श्वेत भये "शलाका शल्यमदनशारिका शल्यकीषु च छत्रादिकाष्ठीशरयोरिति मेदिनी " २७ संध्यासम अरुणनेत्र भये तब जैसे तीनोंलोक में सब दोष निवारणार्थ संध्याकी उपासना करत हैं तैसे रोषनिवारणार्थ ब्रह्मादि सब उपासना करत भये अर्थ सब आधीन ह्वै स्तुति करत भये२८ दुहुँनको सम सौंदर्यादि देखि यह मैं जी में जानत हौं कि ये दूनों सहोदर सगेभाई हैं औ कै कोऊ कहे कौनो रूपधारी कमलापति विष्णु विमलापति ब्रह्मा हैं आशय यह कि इनमें विष्णु ब्रह्मासम सौंदर्यादि गुण हैं २९॥

विश्वामित्र ॥ सुंदर श्यामल राम सुजानो। गौर सु लक्ष्मणनाम बखानो ॥ आशिष देहु इन्हैं सब कोऊ। सूरजके कुलमंडन दोऊ ३० दोहा ॥ नृपमणि दशरथ नृपतिके प्रकटे चारि कुमार ॥ राम भरत लक्ष्मण ललित अरु शत्रुघ्न उदार ३१ घनाक्षरी ॥ दानिनके शीलपर दानके प्रहारी दीन दानवारि ज्यों निदान देखिये सुभायके। दीपदीपहूके

अवनीपनके अवनीप पृथुसम केशवदास दास द्विज गाय के ॥ आनँद के कंद सुरपालक से बालक ये परदारप्रिय साधु मन बच कायके। देह धर्मधारी पै विदेहराजजू से राज राजत कुमार ऐसे दशरथरायके ३२ ॥

३०। ३१ यामें विरोधाभास है दानी जे हरिश्चन्द्रादि राजाहैं तिनके ऐसे शील स्वभाव हैं जिनके अपर जे शत्रु हैं तिनसों दान दंडके महारी लेवैया हैं औ दिनप्रति दानवारि विष्णुके जैसे सुभाय हैं ऐसे सुभायनके निदान कहे आदि कारण हैं अर्थ विष्णुके ऐसे सौंदर्यादि सुभायनको प्रकट करत हैं औ दीपक हैं प्रकाश कहँ दीपकहूके अर्थ अति कान्तियुक्त हैं औ अवनीपनके अवनीप राजा हैं अथवा दीप दीपके अवनीपनके अवनीप राजा हैं अर्थ सातोदीपनके राजनके राजा हैं औ राजा पृथुके समान हैं औ गो ब्राह्मणके दासहैं तौ एते बड़े राजाको अतिदीन गोब्राह्मणकी सेवा विरोध है अविरोध यह गोब्राह्मणकी सेवा क्षत्री को उचितहै परदार लक्ष्मी अथवा पृथ्वी विदेहराज काम अथवा जन व राजाजनक को संबोधन है दानवारि सम सुभाव कहि औ लक्ष्मीप्रिय कहि जनकको जनायो कि ये विष्णु अवतार हैं अथवा ऐसे जे दशरथराय हैं तिनके ये कुमार राजत हैं सुरपाल कैसे हैं बालकही ते ये दशरथराय जिनको वर्णन करियत हैं ३२ ॥

सोरठा ॥ जबते बैठे राज राजादशरथ भूमिमें ॥ सुख सोयो सुरराज तादिनते सुरलोकमें ३३ स्वागताछंद ॥ राजराज दशरत्थतनैजू। रामचंद्र भुवचंद्र बनैजू ॥ त्यों विदेह तुमहूं अरु सीता। ज्यों चकोरतनया शुभगीता ३४ तारकछंद ॥ रघुनाथ शरासन चाहत देख्यो। अतिदुष्कर राजसमाजनि लेख्यो ॥ जनक ॥ ऋषिहै वह मन्दिर मांझ मँगाऊं। गहि ल्यावहिं हौं जनयूथ बुलाऊं ३५ पद्धटिकाछंद॥ अब लोग कहाकरिबे अपार। ऋषिराज कही यह बारबार। इन राजकुमारहि देहु जान। सब जानतहैं बलके निधान ३६ जनक-दंडक ॥ वज्रते कठोर है कैलासते विशाल

कालदंडते कराल सब कालकालगावई । केशव त्रिलोक के विलोकि हारे भूप सब छोड़ि एक चंद्रचूड़ औरको चढ़ावई ॥ पन्नगप्रचंडपति प्रभुकी पनच पीन पर्वतारि पर्वतप्रभा न मान पावई ॥ विनायक एकहू पै आवै न पिनाक ताहि कोमल कमलपाणि राम कैसे ल्यावई ३७ ॥

यासों या जनायो कि इंद्रकी सहाय करत हैं ३३ राजनके राजा दशरथ के तनय पुत्र रामचन्द्र जैसे भूतलके चन्द्रमा बनेहैं अर्थ राजनको राजा ऐसो तौ जाको पिता है आपु चन्द्रमा सरिस सबको सुखद हैं औ चांदनीसम यशप्रकाशक हैं याते बड़े भाग्यवान् हैं इति भावार्थः तैसे हे विदेह ! तुमहूं औ सीता हौ अर्थ तुम राजन के राजा हौ औ सीता चकोरतनया सरिस शुभगीता हैं तौ जाको तुमसों पिता है आप ऐसे यशको प्राप्त हैं तैसे सीताहू बड़ी भाग्यवती है इतिभावार्थः औ चकोरी को औ चन्द्रही को प्रेम उचित हैं तैसे सीताको औ रामचन्द्रको है है इति व्यंग्यार्थः ३४ । ३५ इनको बल के निधान अर्थ बड़ेबलवान् सब जानत हैं औ विधान पाठ होइ तौ विधान कहे विधि जहां जा प्रकार चाहिये तहां ता प्रकार बल करबी ३६ या प्रकार जाको सबप्राणी काल काल में कहे समय समयमों गावत हैं अथवा काल जे यम हैं तिनहूं को काल नाशकर्ता चन्द्रचूड़ महादेव प्रचंड जे पन्नग सर्पन के पतिहैं बड़े सर्प तिनहुँनके जे प्रभु वासुकी हैं तिनहीं की पीन कहे मोटी पनच रोदा है अथवा पन्नगप्रचंडपति जे वासुकी हैं तेई प्रभुकी महादेव की पनच हैं आशय यह और रोदा जाको बल नहीं सहिसकत औ पर्वतारि इंद्र और जे पर्वतनके प्रभा सदृश हैं दैत्यादि ते जाके गरुआई के मानप्रमान को नहीं पावत औ एक कहे अकेले जो विनायक गणेशहू ल्यायो चहैं तौ नाहीं आइसकत ३७ ॥

मुनि–दोहा ॥ राम हत्यो मारीच ज्यहि अरु ताड़का सुबाहु ॥ लक्ष्मणको वह धनुषदै तुम पिनाकको जाहु ३८ जनक–त्रिभंगीछंद ॥ सिगरे नरनायक असुर विनायक राक्षसपति हिय हारिगये । काहू न उठायो थल न छुड़ायो

टस्यो न टास्यो भीत भये ॥ इन राजकुमारनि अतिसुकुमारनि लै आयो है पैज करे । व्रतभंग हमारो भयो तुम्हारो ऋषि तपतेज न जानिपरे ३६ विश्वामित्र–तोमर ॥ सुनि रामचन्द्रकुमार । धनु आनिये यहि बार ॥ पुनि बेगि ताहि चढ़ाव । यश लोकलोक बढ़ाव ४० ॥

जनक कोमल पाणि कह्यो ता लिये मारीचादि को वध सुनाइ कठोरपाणि जनायो ३८ असुर बाणासुरादि विनायक गणेश अथवा असुरनमें विनायक श्रेष्ठ बाणासुर औ राक्षसपति रावण पैज कहे धनुष उठाइबे में पराक्रम करिबे को लै आये हैं अथवा पैज कहे श्रमको करिकै तुम इन्हैं ल्याये हौ अथवा पैज प्रतिज्ञा ३६ । ४० ॥

दोहा ॥ ऋषिहि देखि हरषै हियो राम देखि कुम्हिलाइ ॥ धनुष देखि डरपै महा चिंताचित्त डोलाइ ४१ स्वागताछंद ॥ रामचन्द्र कटिसों पटु बांध्यो । लीलयैव हरको धनु साध्यो ॥ नेकु ताहि करपल्लव सों छ्वै । फूलमूलजिमि टूक कस्यो द्वै ४२ सवैया ॥ उत्तमगाथ सनाथ जबै धनु श्रीरघुनाथजु हाथकै लीनो । निर्गुणते गुणवंत कियो सुख केशव संत अनंतन दीनो ॥ ऐंचो जहीं तबहीं कियो संयुत तीक्ष्णकटाक्ष नराच नवीनो । राजकुमार निहारि सनेह सों शंभुको सांचो शरासन कीनो ४३ प्रथम टंकोर झुकि झारि संसारमद चंड कोदंड रह्यो मंडि नवखंड को । चालि अचला अचल घालि दिगपालबल पालि ऋषिराजके वचन परचंड को ॥ शोधुदै ईशको बोधु जगदीशको क्रोध उपजाइ भृगुनंद बरिबंडको । बांधि वर स्वर्गको साधि अपवर्ग धनुभंगको शब्दगयो भेदि अझंड को ४४ ॥

४१ कटिसों कहे कटिमें फूलमूल पौनारी लीलाहिसों हरको धनु साध्यो

यहौ पाठ है ४२ उत्तमगाथ कहे गान जिनको औ सनाथ विश्वामित्र सहित गुणवंत रोदायुक्त औ धनुप खैंचत में तिरछी दृष्टिपरति है सोई नाराच बाण हैं तासों संयुत कियो राजकुमार जे रामचन्द्र हैं ते स्नेह सहित निहारिकै शम्भुको शरासन सांचो कीन्हों " शरान् अस्यति क्षिपतीति शरासनः" अर्थ धन्वी शरन को चलावत है जासों तासों शरासन कहावत है सो कटाक्षरूपी शर युक्तकरि सत्य कियो ४३ धनुभंग को जो शब्द है सो चंड कहे प्रचंड जो कोदंड धनुष है ताको जो प्रथम टंकोर खैंचिबेको शब्द है ताके साथही इतिशेषः यामों प्रथम टंकोरहीके संग धनुष टूटिबो जनायो झुंकि कहे क्रुद्ध है अर्थ क्रूरताको प्राप्त हैकै संसार को मद झारिकै अर्थ संसार के सबप्राणिन को कादर करिकै नवहू खंडमें मंडि कहे छाय रह्यो औ फेरि अचला जो पृथ्वी है औ अचल पर्वतनको चालि कहे चलाइकै औ दिक्पाल इंद्रादिकनके बलको घालिकै अर्थ विकल करिकै औ रामचन्द्र धनुष उठाइहैं यह वचन विश्वामित्र को जनकप्रति कह्यो ताको पालिकै औ ईश महादेव को शोध कहे खोज संदेश इति दैकै औ क्षीरसागर में सोवत जे जगदीश विष्णु हैं तिन्हैं बोधि कहे जगाइकै औ भृगुनंदन परशुराम के क्रोध उपजाइकै औ स्वर्ग को बांधिकै कहे स्वर्गभरे में व्याप्त हैकै औ बाधि पाठ होइ तो स्वर्गको बाधा करिकै अर्थ बेधिकै अथवा स्वर्ग के प्राणिन को विह्वल करिकै या प्रकार ब्रह्मांड को बेधि कै मुक्ति को साधि साधन करिकै गयो अर्थ ब्रह्मांड फोरि विष्णुलोकको प्राप्तभयो ऐसो उच्चशब्दभयो इति भावार्थः औ रामचन्द्र के करस्पर्शसों याही विधि सबको मुक्ति मिलति है इति व्यंग्यार्थः ४४ ॥

जनक–दोहा ॥ शतानंद आनंद मति तुमजु हुते उन साथ ॥ बरज्यो काहेन धनुष जब तोरयो श्रीरघुनाथ ४५ शतानंद–तोमर ॥ सुनि राजराज विदेह । जबहीं गयो वहि गेह ॥ कछु मैं न जानी बात । कब तोरियो धनु तात ४६ दोहा ॥ सीताजू रघुनाथ को अमलकमलकी माल ॥ पहिराई जनु सबनकी हृदयावलि भूपाल ४७ चित्रपदा छंद ॥ सीय जहीं पहिराई । रामहिं माल सुहाई ॥ दुंदुभि देव बजाये । फूल तहीं बरसाये ४८ ॥

इति धनुर्भङ्गवर्णनं नाम पञ्चमः प्रकाशः ॥ ५ ॥

४५ । ४६ सीता में भूपालन के हृदय लगे रहैं तिनको बेधि माल बनाई मानो रामचन्द्रको पहिराये हृदयको कमलसदृश वर्णन है तासों ४७।४८ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद-निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां पञ्चमः प्रकाशः ॥ ५ ॥

दोहा ॥ छठैं प्रकाश कथा रुचिर दशरथ आगम जानि ॥ लगनोत्सव श्रीरामकी ब्याहविधान बखानि १ शतानंद-तोटकछंद ॥ विनती ऋषिराजकि चित्त धरौ । चहुँभैयन के अब ब्याह करौ ॥ अब बोलहु बेगि बरात सबै । दुहिता समदौ सुत पाइ अबै २ दोहा ॥ पठई तबहीं लगन लिखि अवधपुरी सब बात ॥ राजादशरथ सुनतही चाल्यो चली बरात ३ मोटकछंद ॥ आये दशरत्थ बरात सजे । दिकपाल गयंदनि देखि लजे ॥ चाल्यो दल दूलह चारु बने । मोहे सुर औरनि कौन गने ४ ॥

१ दशरथकी प्रभुता सुनि औ रामचन्द्र को पराक्रम देखि जनक चारों सुतनकें ब्याह करिबेको विश्वामित्रसों बिनती कीन्हीं सो शतानंद विश्वामित्र को समुझावत हैं कि हे ऋषिराज ! जनककी बिनती चित्तमें धरौ समदौ विवाहौ २ राजादशरथ के लग्नपत्री सुनतही चारों बरातैं चलीं अर्थ चारों बरातैं साजि राजादशरथ ब्याहिबे को चले ३ । ४ ॥

तारकछंद ॥ बनि चारि बरात चहूंदिशि आईं । नृप चारि चमू अगवान पठाईं ॥ जनु सागर को सरिता पगु-धारी । तिनके मिलबे कहँ बाँह पसारी ५ दोहा ॥ बारोठे को चारु करि कहिकै सब अनुरूप ॥ द्विज दूलह पहिराइयो पहिराये सब भूप ६ त्रिभंगीछंद ॥ दशरत्थसँघाती सकल बराती बनिबनि मंडपमाँह गये । आकाशविलासी प्रभा-प्रकाशी जलजगुच्छ जनु नखत नये ॥ अति सुंदर नारी सब सुखकारी मंगलगारी देनलगीं । बाजे बहुबाजत जनु

घनगाजत जहां तहां शुभशोभजगीं ७ दोहा ॥ रामचन्द्र सीतासहित शोभत हैं त्यहि ठौर ॥ सुबरणमय मणिमय खचित शुभ सुंदर शिरमौर ८ ॥

जो एकही दिशासों चारों बरातैं आवतीं तो एकएक बरातकी अगवानी में बेर होती ब्याहकी लग्न टरिजाती तासों एकहीबार अगवानी होवे के लिये चारों बरातैं चारों दिशा है आई सागर सरिस राजाजनक हैं सरिता सरिस चारों बरातैं हैं बाँढ़ सरिता अगवानी की चारों चमू हैं ५ बारौठेको चारु कहे द्वारपूजा अनुरूप यथोचित पहिराइयो पदते भूषण वस्त्र पहिराइयो जानो ६ बारौठेको चारु करि जनवास मंदिरको गये इति कथाशेष जन वास मंदिरते भांवरि करिबेके लिये मंडप कहे माड़यमें गये सो मंडप कैसो है आकाशविलासी कहे आकाशको ऐसो है विलास कौतुक जाको अर्थ अतिदीर्घ अतिउच्च है औ आकाशमें नक्षत्र हैं इहां झालरन में लगे प्रभाप्रकाशी कहे अतिशोभायुक्त जे जलज मोतिन के गुच्छ हैं तेई नये नवीन नखत हैं, ७ खचित कहे चित्रित ८ ॥

षट्पद ॥ बैठे मागध सूत विविध विद्याधर चारण । केशवदास प्रसिद्ध सिद्ध शुभ अशुभ निवारण ॥ भरद्वाज जाबालि अत्रि गौतम कश्यप मुनि । विश्वामित्र पवित्र चित्रमति वामदेव पुनि ॥ सबभांति प्रतिष्ठित निष्ठमति तहँ वसिष्ठ पूजत कलस । शुभ शतानंद मिलि उच्चरत शाखोच्चार सबै सरस ९ अनुकूलछंद ॥ पावक पूज्यो समिध सुधारी । आहुति दीनी सब सुखकारी ॥ दै तब कन्या बहुधन दीन्हो । भांवरि पारि जगत यश लीन्हो १० स्वागताछंद ॥ राजपुत्र-कनिसों छवि छाये । राजराज सब डेरहि आये ॥ हीर चीर गज बाजि लुटाये । सुंदरीन बहुमंगल गाये ११ सोरठा ॥ वासर चौथे याम शतानंद आगू दिये ॥ दशरथ नृपके धाम आये सकल विदेह बनि १२ भुजगप्रयातछंद ॥ कहूं शोभना दुंदुभी दीह बाजैं । कहूं भीमभंकार कर्नाल साजैं ॥ कहूं

सुदरी बेनु बीना बजावैं । कहू किन्नरी किन्नरी लै सुगावैं १३ कहूं नृत्यकारी नचैं शोभ साजैं । कहू भांड़ बोलैं कहू मल्ल गाजैं ॥ कहू भाट भाट्यो करैं मान पावैं । कहू लोलिनी बेड़िनी गीत गावैं १४ कहू बैल भैंसा भिरैं भीमभारे । कहू एन एनीनके हेतकारे ॥ कहू बोकबांके कहू मेष शूरे । कहू मत्तदन्ती लरैं लोहपूरे १५ ॥

मागध वंशावली वर्णन करैया सूत स्तुति करैया चारण प्रेष्य ये भाटकी जाति हैं शुभ अशुभ निवारण कहे शुभ में अशुभ के निवारण मेटनहार निष्ठमति कहे उत्तममति ६ समिध होमकी लकरी १० । ११ वासर के चौथे याम कहे तीनपहर दिन बीते के उपरांत दशरथ के धाम कहे जनवास मंदिर में विदेह कहे जनकके गोष्ठी १२ तीनि छंदको अन्वय एक है राजा दशरथकी फौजमें ऐसो कौतुक देखत भये किन्नरी सारंगी, एनी हरिणीनसों हेतकारि एन हरिण परस्पर भिरत हैं भिरत पदको अनुषंग एतहू में है मेष भेड़ा लोहपूरे जजीरहूको पहिरे अथवा वीरतासों युक्त १३।१४।१५ ॥

दोहा ॥ आगे ह्वै दशरथ लियो भूपति आवत देखि ॥ राजराज मिलि बैठियो ब्रह्म ब्रह्मऋषि लेखि १६ शतानंद-शोभनाछंद ॥ मुनि भरद्वाज वसिष्ठ अरु जाबालि विश्वामित्र । सबै हो तुम ब्रह्मऋषि संसारशुद्धचरित्र ॥ कीन्हो जो तुम या वंशपै कहि एक अंश न जाइ । स्वाद कहिबे को समर्थ न गूंग ज्यों गुरखाइ १७ अन्यच्च-सुखदाछंद ॥ ज्यों अतिप्यासो पावै मगमें गंगजल । प्यास न एक बुझाइ बुझै त्रैतापबल ॥ त्यों तुमते हमको न भयो अब एक सुख । पूजे मनके काम जो देख्यो राममुख १८ ॥

राजर्षि दशरथादि राजर्षि जनकादिकनसों मिलिकै बैठे ब्रह्मर्षि वसिष्ठादि ब्रह्मर्षि शतानंदादिकनसों मिलिकै जैसे ऋषिपदको अनुसंग राजपदमहूँ है १६ संसार में शुद्ध है चरित्र जिनको अथवा संसारको शुद्धकर्ता है चरित्र

जिनको अर्थ जिनके चरित्र कहि सुनि संसार के प्राणी शुद्ध होत हैं १७ जैसे मगमें अतिप्यासो प्राणी जलमात्रको चाहत है औ वह भाग्ययोग ते गंगाजल पावै तौ वाकी एक प्यासही नहीं बुझाति दैहिक दैविक भौतिक जे तीनों ताप हैं तिनको बल बुझात है अर्थ त्रयताप दूरि होत हैं तैसे केवल धनुष चढ़ावै ताही को ब्याह करिये हमारी इतनीही प्रतिज्ञापूर्वक इच्छा रही सो तुमते हमको केवल ब्याह इच्छापूर्णरूपही सुख नहीं भयो रामचन्द्र को मुख देखि रूप बल विद्या कुलादि के काम अभिलाष पूजे पूर्ण भये १८ ॥

जनक–सवैया ॥ सिद्धसमाज सजैं अजहू न कहू जग योगिन देखन पाई। रुद्रके चित्त समुद्र बसैं नित ब्रह्महु पै बरणी जो न जाई॥ रूप न रंग न रेख विशेख न आदि अनंत जो वेदन गाई। केशव गाधिके नंद हमैं वह ज्योति सो मूरतिवंत दिखाई १९ अन्यच्च–तारकछंद ॥ जिनके पुरिखा भुव गंगहि ल्याये। नगरी शुभस्वर्ग सदेह सिधाये॥ जिनके सुत पाहनते तिय कीनी। हरको धनुभंग भ्रमे पुर तीनी २० जिन आपु अदेव अनेक सँहारे। सबकाल पुरंदरके रखवारे॥ जिनकी महिमाहिको अंत न पायो। हमको बपुरा यश वेदनि गायो २१ बिनती करिये जन ज्यों जिय लेखो। दुख देख्यो ज्यों काल्हि त्यों आजहु देखो॥ यह जानि हिये ढिठई मुखभाषी। हम हैं चरणोदकके अभिलाषी २२॥

रुद्र महादेव के चित्तरूपी समुद्रमें जो बसत हैं अर्थ जाको महादेव आराधन करत हैं १९ तीनि छंदको अन्वय एक है भगीरथ सगर के सुतन के तारिबेको गंगाको ल्याये हैं औ हरिश्चन्द्र नगरी अयोध्यासहित स्वर्ग को गये हुवौ कथा प्रसिद्ध हैं औ जिनके सुत रामचन्द्र गौतमीको पाहनसों स्त्री कीन्हीं और हरको धनुषभंग कीन्हो जा धनुष में तीनिपुर कहे तीनि लोक भ्रमे अर्थ जा धनुषको तीनो लोकके प्राणिन उठायो ना उठ्यो तब भ्रमे कहे संदेहको प्राप्त भये अथवा ऐसी अवस्था में एगो धनुष तोर्यो यामों तीनिहु लोक भ्रमे औ आपु कैसे हैं कि जिन आपु अदेव दैत्यन

को मास्यो है औ सदा पुरदर इन्द्रकी रक्षा करतहौ यासों या जनायो कि ऐसे उद्धतकर्म करिबेको तुम्हार घरकी परपराकी रीति है अनन्त शेष औ जिनकी महिमा महि अन्त न पायो पाठ होइ तौ मही भरे के प्राणिन की महिमा को अत नहीं पायो यह विनती करियत है कि हमको अपने जन सेवक के समान जियमें लेखो कहे जानौ औ जैसे काल्हि हमारे इहा वास करि दुःख देख्योहै तैसे आजहू देखो अर्थ आजहु वास करौ हम चरणो-दक कहे चरणजल के अभिलाषी हैं तासों एती ढिठाई मुखसों भाष्यो है यह तुम जीमें जानि कहे जानौ चरणोदक के अभिलाषी कहि या जनायो कि हमारे घर में चलि भोजन करौ जाते हम चरण धोइ चरणोदक लेइँ जाते हमारे गृहादि पवित्र होइँ या भांति निमन्त्रण दियो २०।२१।२२॥

तामरसछंद ॥ जब ऋषिराज बिनयकरि लीनो । सुनि सबके करुणारस भीनो ॥ दशरथराय यहै जिय जानी । यह वह एक भई रजधानी २३ दशरथ–दोहा ॥ हमको तुमसे नृपतिकी दासी दुर्लभ राज ॥ पुनि तुम दीनी कन्यका त्रिभुवनकी शिरताज २४ भारद्वाज–तामरसछंद ॥ सुख दुख आदि सबै तुम जीते । सुरनरको बपुरा बलरीते ॥ कुलमा होहि बड़ो लघु कोई । प्रतिपुरुषान बड़ो सो बडोई २५॥

ऋषि शतानद राजा जनक २३ । २४ अतिवली जे दुःख सुखादि हैं आदि पद ते काम क्रोधादिहू जानौ तिनहीं को तुम जीते हौ अर्थ दुःख सुखादि के वश्य नहीं हौ तौ बलकरिकै रीते कहे खाली बपुरा कहे दीन जे सुर औ नर हैं ते तुमको जीतिबेको कहे कहां हैं औ कुल में चाहे प्रतापादि करि बड़ो होइ चाहे छोटोई जो प्रतिपुरुषन बड़ो होत है सो ब-ड़ोई रहत है यासों या जनायो कि जो प्रतिपुरुष बड़ो है ताके कुल में लघुहू होइ तौ बड़ो है औ तुम प्रतिपुरुषान हूं बड़े हौ औ तुम्हारे दुःख सुखादि जीतिबे की सामर्थ्य है तासों तुम समान कोऊ नहीं है अथवा और कोई अपने कुलमें बड़ो लघु होत है अर्थ कोऊ प्राणी बड़ो भयो कोऊ छोटो भयो औ ई कहे जनक प्रतिपुरुषान बडो सो बड़ो कहे बड़े ते बड़े हैं अर्थ इनके कुल में क्रमसों एक से एक बड़े होत आवत हैं २५ ॥

वसिष्ठ–विजयछंद ॥ एक सुखी यहि लोक बिलोकिये हैं वहि लोक निरै पगुधारी । एक इहां दुख देखत केशव होत उहां सुरलोकविहारी ॥ एक इहांऊ उहां अतिदीन सो देत दुहूं दिशिके जन गारी । एकहि भांति सदा सबलोकनि है प्रभुता मिथिलेश तिहारी २६ जाबालि–विजयछद ॥ ज्यों मणिमय अतिज्योतिहुती रविते कछु और महाछविछाई । चंद्रहि बदत हैं सब केशव ईशते वन्दनता अति पाई ॥ भागीरथीहुति पै अतिपावन बावन ते अति पावनताई । त्यों निमिवंश बडोई हतो भइ सीय सॅयोग बड़ीयबडाई २७ विश्वामित्र–मालिनीछद ॥ गुणगणमणिमाला । चित्तचा- तुर्य शाला ॥ जनक सुखद गीता । पुत्रिका पाइ सीता ॥ अखिलभुवनभर्ता । ब्रह्मरुद्रादिकर्ता ॥ थिरचरअभिरामी । कीय जामातु नामी २८ दोहा ॥ पूजि राजऋषि ब्रह्मऋषि दुंदुभि दीन्हि बजाइ ॥ जनक कनक मंदिर गये गुरुसमेत सुख पाइ २९ ॥

२६ ईश महादेव २७ जनक संबोधन है गुणगणरूपी जे मणि मुक्तादि हैं तिनकी माला है अर्थ अनेक गुणनसों युक्त है औ चित्त को जो चातुर्य चातुरी है ताकी शाला घर है अथवा चित्त है चातुर्य को शाला जाको अथवा चित्त की चातुर्य से शाला कहे शुहि रक्षो है औ सुखद है गीता गान ज्ञाको अर्थ जाको गान करे सुने सबको सुख होत है ऐसी सीतानाम्नी पुत्रिका को पाइकै अथवा ये तीनों लक्ष्मी के विशेषण हैं विशेषणनहीं सो लक्ष्मी जनायो कि ऐसी जो लक्ष्मी हैं ताको सीतानाम पुत्रिका पाइकै अ- खिल सम्पूर्ण [illegible] चौदहो भुवन के भर्ता पोषक औ ब्रह्मरुद्रादिके कर्ता औ थिर वृक्षादि चर मनुष्यादि तामें अभिरामी [illegible] अथवा शोभाकर्ता औ नामी [illegible] यशी ऐसो जामातु तुम [illegible] कहे कस्यो जैसे तीना विशेषण सा लक्ष्मी जनायो तैसे चारा विशेषणन सों [illegible] जानो

तौ लक्ष्मी जाकी पुत्रिका भई औ विष्णु जामातु भये तासों अति भाग्यवान् हौ इति भावार्थ. अथवा बिश्वामित्र कहत हैं कि जनकसुखद जे ईश्वर हैं जिन करिकै गीता कहे गाई अर्थ जाको विष्णुहू गान करत हैं यासों लक्ष्मी जनायो और अर्थ एकई है ऐसी जो सीतानाम्नी तुम्हारी पुत्रिका है ताको हम पायो औ सो जामातु तुम कीय कहे करयो यासों या जनायो कि दूनों तरफ बड़ा लाभ भयो २८। २९॥

चामरछंद॥ आसमुद्रके क्षितीश और जाति को गनै। राजभौन भोजको सबै जने गये बनै॥ भांतिभांति अन्नपान व्यञ्जनादि जेवहीं। देत नारि गारि पूरि भूरि भूरि भेवहीं३०

हरिगीतछंद॥ अब गारि तुम कहँ देहिं हम कहि कहा दूलह रामजू। कछु बापप्रिय परदार सुनियत करी कहत कुवामजू॥ को गनै कितने पुरुष कीन्हें कहत सब संसारजू। सुनि कुँवर चितदै बरणि ताको कहिय सब ब्योहारजू ३१॥

आसमुद्र के कहे समुद्रपर्यंत अर्थ पृथ्वी भरे के भूरि भूरि भेवहीं कहे अनेक भेद सों ३० सात हरिगीतछंद को अन्वय एकहै यामें श्लेषसों आशीर्वादात्मक व्याजस्तुति है परदार कहे परस्त्री उत्कृष्टदार कुवाम कुत्सित वाम औ कु कहे पृथ्वीरूप वाम ब्योहार कहे संबंध मित्रता इति कुवाम पक्षरत्नाकर कहे अनेक रत्नयुक्त पृथ्वी यह समुद्र शीश पश्चिम करिकै औ पाँय पूरब करिकै प्रलयकालके उपरांत जब शेषके फणि कहे फणानि की मणिमाला मणिसमूह की पालिका अथवा शेष जे फणि कहे सर्प हैं तिनकी मणिमाला की पालिका में परति पौढ़ति है तब अनेक पुरुषन को युद्धादि कराइ ग्रहण त्यागरूप भवध कियो कराति है गातहैं सहजेही सुगंध युक्त जाके गंधवती पृथ्वीति न्यायशास्त्रोक्तत्वात् जा प्रबंधसों हिरण्याक्षादि जो पुरुष करयो सो क्रमही गनायो सरबस कहे सब सार कहे रसस्यादेति औ द्रव्य भ्रमि कहे भूलिहू कै ज्यों कहे जासे और पति को मुख न निरखै त्यों कहे ता प्रकारसों तुम ताको राखियो जा स्त्रीको दशरथ राख्यो ताको तुम राखियो यह परिहासहै औ ताही पृथ्वीकी रक्षा तुम करियो यह आशीर्वादहै ३१॥

बहुरूप सों नवयौवना बहुरत्नमय वपु मानिये। पुनि वसन

रत्नाकर बन्यो अति चित्त चचल जानिये ॥ शुभ शेषफणि मणिमाल पलिका परति कराति प्रबन्धजू । करि शीश पश्चिम पांय पूरब गात सहज सुगन्धजू २२ वह हरी हठि हिरण्याक्ष दैयत देखि सुदँर देह सों । वर वीर यज्ञ वराह बरही लई छीनि सनेह सों ॥ ह्वै गई विह्वल अग पृथु फिर सजे सकल शृँगारजू । पुनि कछुक दिन वशभई ताके लियो सरबस सारजू २३ वह गयो प्रभु परलोक कीन्हो हिरणकश्यप नाथजू । तेहि भांति भांतिन भोगयो भ्रमि पल न छोड्यो साथजू ॥ वह असुर श्रीनरसिंह माख्यो लई प्रबल छड़ाइकै । लैदई हरि हरिचन्द्र राजहिं बहुत जो सुख पाइकै २४ हरिचन्द्र विश्वामित्र को दइ दुष्टता जिय जानिकै । तेहिं बरो बरिबडबरहीं विप्र तपसी जानिकै ॥ बलिबांधि छल बल लई बावन दई इंद्रहि आनिकै । तेहि इंद्र तजि पति कख्यो अर्जुन सहसभुजको जानिकै २५ तब तासु मद छवि छक्यो अर्जुन हत्यो ऋषि जमदग्निजू । परशुराम सो सकुल जाख्यो प्रबल बलकी अग्निजू ॥ तेहि बेर तबहीं सकल क्षत्रिन मारि मारि बनाइकैं । यकईस बेरा दई विप्रन रुधिरजल अन्हवाइकैं २६ वह रावरे पितु करी पत्नी तजी विप्रन थूकिकै । अरु कहत हैं सब रावणादिक रहे ताकहँ ढूंढ़िकै ॥ यहि लाज मरियत ताहि तुमसों भयो नातो नाथजू ॥ अब और मुख निरखैं न ज्यों त्यों राखियो रघुनाथजू २७ सोरठा ॥ प्रातभये सब भूप बनि बनि मंडप में गये ॥ जहां रूप अनुरूप ठौर ठौर सब शोभिजैं २८ नाराचछंद ॥ रची विरंचि वाससी नियंभराजिका भली । जहा तहा विछायने वने घने थली

थली। वितान श्वेत श्याम पीत लाल नीलका रँगे। मनो दुहू दिशान के समान बिंब से जगे ३६॥

३२। ३३। ३४। ३५। ३६। ३७ रूप जो सौंदर्य है ताके अनुरूप सदृश अर्थ अतिसुंदर ३८ जा मंडप में विरचि जे ब्रह्मा हैं तिनके वासगृह की ऐसी नियम कहे थंभन की राजिका पंगति रची है अर्थ ब्रह्मा के मंदिर सदृश मंडप बन्यो है विचित्र वाससीनि पाठ होइ तौ विचित्र वाससीनि कहे विचित्र वस्त्रन करिकै अर्थ परदान करिकै थंभराजिका रची है बनीहै अर्थ अनेक रंग के परदा लगे हैं वितान चँदोवा श्याम कहे बैंजनी नीलिका जो नील है तासों रँगे हरित जानो मानो भू आकाश जे दूनों दिशा हैं तिनके परस्पर समान बिंब कहे प्रतिबिंब से जगे हैं अर्थ भूमें जे बिछावने हैं तिनके प्रतिबिंब आकाश में जगे हैं और आकाश में वितानहैं तिनके प्रतिबिंब भूमें जगे हैं यासों या जानो जहां जा रंग को वितान तन्यो है तहां ताही रंगके बिछावने हैं "बिम्बन्तु प्रतिबिम्बेपीति मेदिनी" ३६॥

पद्धटिकाछंद॥ गजमोतिन की अवली अपार। तहँ कलशन पर उरमति सुढार॥ शुभपूरित रति जनु रुचिरधार। जहँ तहँ अकाशगंगा उदार ४० गजदंतनकी अवली सुदेश। तहँ कुसुमराजि राजित सुवेश॥ शुभ नृपकुमारिका करति गान। जनु देविन के पुष्पकविमान ४१ तामरसछंद॥ इत उत शोभित सुंदरि डोलैं। अर्थ अनेकनि बोलनि बोलैं॥ सुखसुखमंडल चित्तनिमोहैं। मनहुँ अनेक कलानिधि सोहैं ४२ भृकुटी विलास प्रकाशित देखे। धनुष मनोज मनोमय लेखे॥ चरचितहासचन्द्रिकनि मानो। सुखमुख वासनि वासित जानो ४३॥

मंडप की रति कहे प्रीतिसों पूरित मानो रुचिरधार कहे प्रवाहन करिकै मंडप में जहां तहां उदार सुंदर आकाशगंगा हैं अर्थ गजमोतिन की मालाहैं ते मानों अनेक धारा है मंडप में आकाशगंगा राजती हैं ४० गजदंत जे टोड़ाहैं तिनकी अवली सुदेश कहे सुंदर रौसगुरु बनीहै पुष्पगुरु आकाश

में वर्तमान विमान सदृश गजदत के रौसहैं देवीसरिसैं नृपकुमारिका हैं॥ "नागदंतो हस्तिदन्त गेहाभिःसृतदारुणीत्यभिधानचिन्तामणिः" ४१ कलानिधि कहे चन्द्रमा ४२ मानो मनोजमय कहे मनोजप्रधान मनोज जो कंदर्पहै सोई है प्रधान देवता जिनके ऐसे धनुष हैं अर्थ मानो कामके धनुष हैं यह लेख कहे ठहरायो है अथवा मनोमय कहे अनेक मनन करिकै युक्त अर्थ सुंदरता सों जिनमें अनेक मन बसे हैं ऐसे मनोजके धनुषहैं चर्चित पूजित युक्तेति सुख कहे स्वाभाविक ४३॥

दोहा॥ अमल कपोलै आरसी बाहू चंपकमार॥ अवलोकनै विलोकिये मृगमदमय घनसार ४४ गतिको भार महावरै अंगअंगको भार॥ केशव नखशिख शोभिजै शोभाई शृंगार ४५ सवैया॥ बैठे जरायजरे पलिकापर राम सिया सबको मनमोहैं। ज्योतिसमूहरहे मढिकै सुर भूलिरहे बपुरो नरको हैं॥ केशव तीनिहुँ लोकनकी अवलोकि वृथा उपमा कवि टोहैं। शोभनसूरजमंडलमांझ मनो कमला कमलापति सोहैं ४६ दोहा॥ गंगाजीकी पाग शिर सोहत श्रीरघुनाथ॥ शिव शिरगंगाजल किधौं चन्द्र चन्द्रिका साथ ४७ तोमर छंद॥ कछु भृकुटि कुटिल सुवेश। अति अमल सुमिलसुदेश॥ विधि लिख्यो शोभिसुतंत्र। जनु जयाजयके मंत्र ४८॥

४४। ४५ टोहैं कहे खोजत हैं ४६ गंगाजल कपरा पश्चिम में प्रसिद्ध है तो बड़ेलोग ब्याह समयही में पीतपाग बांधत हैं औ यह बिदा के रोज का वर्णन है तासों श्वेतपाग कह्यो अथवा चौदहें प्रकाश में कह्यो है कि "समुझै न सूरप्रकाश। आकाश वालित विलास॥ पुनिऋक्षलक्षनि संग। जनुजलधि गंगतरंग" औ पन्द्रहें प्रकाश में कह्यो है कि "बीच बीच हैं कपीस बीचबीच ऋक्षजाल। लंक कन्यका गरे कि पीत नील कंठमाल" [illegible] कह्यो तेरो छोड़ पीनपाग को गंगाजल [illegible] कहू समता करत हैं यह कवि नियम है ४७ सुमिल [illegible] सुदेश सुंदर सुतंत्र कहे स्वच्छंद

जे विधि हैं तिन लिख्यो है अथवा सुष्ठु जो तन्त्रशास्त्र है तासों शोधिकै ढूढ़िकै अथवा शुद्ध करिकै मानो त्रिपुरारि जाके पास होइ ताके जयको शत्रु के अजय को मंत्र लिख्यो है अथवा जयके अर्थ अजय कहे काहूके जीतवे योग्य नहीं ऐसे जे रामचन्द्र हैं तिनको जय कहे जीति को मंत्र विधि लिखिदियो है जासों रामचन्द्र सब को जीततहैं वश्य करतहैं अथवा जया जो पार्वती हैं तिनहू के जयको जीतिवे को मंत्र लिख्यो है यासों या जनायो पतिव्रतन में अग्रगणनीय जो पार्वती हैं तेऊ जिनको देखि वश्य होयँ तो और स्त्री पुरुषकी कहा बातहै आशय कि अतिसुंदर हैं "जया जयन्ती तिथिभित्पथोमातत्सखीपु च इति मेदिनी" ४८ ॥

दोहा॥ यदपि भृकुटि रघुनाथकी कुटिल देखियत ज्योति॥ तदपि सुरासुर नरनकी निरखि शुद्धगति होति ४९ श्रवण मकर कुण्डल लसत मुख सुखमा एकत्र ॥ शशिसमीप सोहत मनो श्रवणमकर नक्षत्र ५० पद्धटिकाछंद ॥ अतिवदन सोभ सरसी सुरंग । तहँ कमलनयन नासातरंग ॥ जनु युवतिचित्तविभ्रमविलास । त्यइ भ्रमरभँवत रसरूपआस ५१ ॥

मानो शशि के समीप कहे दोनों ओर निकट उदित है श्रवण नक्षत्र में है मकर राशि शोभित हैं नक्षत्रपदको सबंध श्रवणमों है अथवा श्रवण मों मकरराशिस्वरूपके नक्षत्र कहे तारा मकरराशि स्वरूपेति शोभित हैं युक्ति यह कि उत्तराषाढ़ श्रवण धनिष्ठा तीनि नक्षत्रन में मकरराशि को वासहै सो मानो श्रवणही में वर्तमान है शशिके दुवौ ओर शोभित हैं श्रवण नक्षत्र की औ कर्ण की शब्दसाम्य है औ मकरराशिकी औ कुंडलकी रूपसाम्य है शशिसदृश मुख है ४९। ५० सरसी तड़ाग सुरंग निर्मल रामचन्द्र के नेत्र शोभा में भ्रमते हैं विलास कौतुक जिनको ऐसे जे युवतिनके चित्त हैं तेई भ्रमर भँवत हैं रस मकरंदरूपी जो रूप शोभा है ताकी आशासों अर्थ जैसे मकरंद की आश करि तड़ाग में भँवर भँवत हैं तैसे रूपकी आशकरि रामचन्द्र के मुखपर तिनके चित्त भ्रमतहैं ५१ ॥

निशिपालिकाछंद ॥ शोभिजति दन्तरुचि शुभ्र उर आनिये । सत्य जनुरूप अनु रूपक बखानिये॥ ओठ रुचि रेख

सविशेख शुभ श्रीरये। शोधि जनु ईश शुभलक्षण सबै दये ५२ दोहा॥ ग्रीवा श्रीरघुनाथ की लसत कंबुवर बेख॥ साधु मनो वच कायकी मानो लिखी त्रिरेख ५३ सुंदरीछंद॥ शोभन दीरघ बाहु विराजत। देवसिहात अदेवते लाजत॥ वैरिनको अहिराज बखानहु। है हितकारिन की ध्वज मानहु ५४ यों उर में भृगु लात बखानहु। श्रीकरको सरसीरुह मानहु॥ सोहति है उर में मणि यों जनु। जानकी को अनुरागि रह्यो मनु ५५ दोहा॥ सोहत जन रतराम उर देखत जिनको भाग॥ आइगयो ऊपर मनो अंतर को अनुराग ५६॥

शुभ्र श्वेत सत्य कहे निश्चय जानों रूप सुदरताके अनुरूपक कहे प्रतिमा बखानियतहै अथवा जानो सत्य जो पदार्थहै ताके रूपके अनुरूपक प्रतिमा है सत्यको रूप श्वेत है ५२ कंबु शख मनसा वाचा कर्मणा करिकै जो रामचन्द्र साधु हैं तिन तीनों की मानों विधातैं तीनि रेखा लिखिदियो है निश्चय बातको रेखाखांचि कहिबेकी रीति लोक में प्रसिद्ध है ५३। ५४ रामचन्द्र के उरमें लक्ष्मी बास किये हैं ताके करको मानो कमल हैं मणि कौस्तुभ मणि अनुरागी मन सदृश कह्यो तासों अरुण जानो ५५ वाही मणि की फेरि उत्प्रेक्षा करत हैं जन जे दास हैं तिनमें रत कहे संलग्न जो अनुराग रामचन्द्र के उरमें शोभित है सो वाढिकै उर अंतरते मानो ऊपर आइगयो है ताको जे देखत हैं तिनके बड़भाग हैं ५६॥

पद्धटिकाछंद॥ शुभमोतिन की दुलरी सुदेश। जनु वेदनके अक्षर सुवेश॥ गजमोतिनकी माला विशाल। मनमानहु संतनके मराल ५७ विशेषकछंद॥ श्याम दुवौ पग लाल लसै द्युति यों तलकी। मानहु सेवति ज्योति गिरा यमुना जलकी॥ पाटजटी अतिश्वेत सो हीरनकी अवली। देवनदीकन मानहु सेवत भांति भली ५८ दोहा॥ को वरणै रघुनाथ

छवि केशव बुद्धि उदार ॥ जाकी किरणा शोभिजति शोभा सब ससार ५९ दडक॥ को है दमयंती इदुमती रति राति दिन होहि न छबीली छबि इन जो शृंगारिये। केशव लजात जलजात जातवेद ओपजात रूप बापुरे विरूपसो निहारिये। मदन निरूपमा निरूपण निरूप भयो चद बहुरूप अनुरूप के विचारिये। सीताजू के रूपपर देवता कुरूप को हैं रूपही के रूपक तौ वारि वारि डारिये ६० ॥

मरालहस ५७ या प्रकार मानो त्रिवेणी रामचन्द्रके चरण सेवतिहै पाठ पदश्लेष है रेशम औ दुवौ कूलको अतर ५८ बुद्धि तुषार पाठ होइ तौ बुद्धि है तुषार हिवारसम क्षणभगुर जाकी ५९ दमयती नलकी स्त्री इंदुमती अजकी स्त्री रति काम की स्त्री इनको राति दिन शृगारिये तौ सीताकी छबिसमान इनकी छवि न होय जातवेद अग्नि जातरूप सुवर्ण निरूपम कहे जाके उपमा कोऊ नहीं अर्थ अतिसुंदर जो मदन है सो सीताजूके रूप समता के निरूपण के निर्णय में लाजसों निरूप कहे निःस्वरूप निर्देहेति भयो औ घटि बढ़िकै अनेक रूपको धर्ता जो चन्द्र है ताको अनुरूप कै कहे असदृशै विचारियत है रूप जो सौंदर्य है ताही के रूपक कहे साम्य को वारि वारि डारियत है ६० ॥

गीतिकाछद ॥ सीशोभिजै सखि सुंदरी जनु दामिनी वपुमडिकै। घनश्यामको जनु सेवहीं जड मेघ ओघन छांडिकै॥ यक अग चर्चित चारु चंदन चन्द्रिका तजि चंद को। जनु राहुके भयसे वहीं रघुनाथ आनँद कन्दको ६१ मुख एक है नतलोक लोचन लोललोचन को हरे। जनु जानकी सँग शोभिजै शुभ लाज देहनको धरे॥ तहँ एक फूलनके विभूषण एक मोतिनके किये। जनु क्षीरसागरदेवतातन क्षीर छींटनिको छिये ६२ सोरठा ॥ पहिरे वसन सुरङ्ग पावक युत स्वाहा मनो ॥ सहज सुगंधित अग मानो देवी मलयकी ६३

चामरछंद ॥ मत्तदंति राज राजि वाजि राज राजि कै। हेम हीर मुक्तचीर चारु साज साजिकै ॥ वेषवेष वाहिनी अशेष वस्तु शोधियो। दाइजो विदेहराज भांति भांतिको दियो ६४ वस्त्र भौन स्यो वितान आसने बिछावने। अस्त्र शस्त्र अंग-त्रान भाजनादि को गने ॥ दासि दास वासि वास रोमपाट को कियो। दाइजो विदेहराज भांति भांतिको दियो ६५ ॥

चपुपडिकै यह चन्द्रिकाहू में जानो ६१ एक्रनके मुख नतकहे लाजसों नीचे को नये हैं ते लोललोचन करिकै लोकलोचननको हरती हैं ६२ स्वाहा अग्नि की स्त्री पावकसम वर्त्र है स्वाहासम स्त्री है ६३ मत्त जे दंतिराज गजराज हैं तिनकी राजि कहे समूह औ वाजिराज घोड़ेन की राजिका कहे समूह औ जे दीबेके उचित वस्तु हैं तिन्हैं शोधियो कहे दीबेके लिये ढूढ़ि २ मँगायो ६४ वितान कहे चँदोवा सामियानेति आसन भूषासन गद्दीति बिछावने फरश स्या कहे सहित वस्त्रभौन कहे पाल डेरा इति दियो अंगत्राण बख्तर भाजन सुवर्णादि के पात्र वासि सुगंधसों युक्त करिकै रोमवास उत्तम कंबलादि पाटवास पीतांबरादि दियो ६५ ॥

दोहा ॥ जनकराज पहिराइयो राजा दशरथ साथ ॥ छत्र चमर गज वाजिदै आसमुद्र क्षितिनाथ ६६ निशिपालिका छंद ॥ दान दिय राज दशरत्थ सुखपाइकै। शोधि ऋषि ब्रह्म-ऋषिराजनि बुलाइकै ॥ तोषि याचक सकल दादुर मयूरसे। मेघ जिमि वर्षि गज वाजिय मयूर से ६७ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीराम-चन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांसीताराम विवाहवर्णनंनाम षष्ठप्रकाशः ॥ ६ ॥

राजा दशरथके साथ जे आसमुद्र के क्षितिनाथ रहे तिन्हैं राजादशरथ के साथ जनकराज बरातीनी पहिराया बिदा समय की पहिरावनि बरातीनी साथ करि पश्चिमभों प्रसिद्ध है ६६ बराती ॥ श्री पहिरावनि के बादि जनकपुर

बासिन को राजादशरथ यथोचित दान दियो ऋषिराज तपस्वी ब्रह्मऋषिराज ब्राह्मण राजपद को अनुषग ऋषिहूमों है ६७ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां सीतारामविवाहवर्णनं नाम षष्ठ प्रकाशः ६ ॥

दोहा ॥ या प्रकाश सप्तम कथा परशुराम संवाद ॥ रघुवर सों अरु रोष त्यहि भजनमान विषाद १ विश्वामित्र विदा भये जनक फिरे पहुँचाय ॥ मिले आगिली फौज को परशुराम अकुलाइ २ चचरीकछन्द ॥ मत्तदंति अमत्त होइगये देखि देखि न गज्जहीं। ठौर ठौर सुदेश केशव दुंदुभी नहिं बज्जहीं॥ डारि डारि हथ्यार शूरज जीव लैलै भज्जहीं। काटिकै तन त्राण इक तिन नारि वेषन सज्जहीं ३ दोहा ॥ वामदेव ऋषि सों कह्यो परशुराम रणधीर ॥ महादेवको धनुष यह को तोरेउ बलवीर ४ वामदेव ॥ महादेवको धनुष यह परशुराम ऋषिराज॥ तोरेउ राजा कहतहीं समझेउ रावणराज ५ परशुराम॥ अति कोमल नृपसुतनकी ग्रीवादली अपार॥ अब कठोर दशकंठ के काटहुँ कठ कुठार ६ परशुराम–विजय छद ॥ बांधिकै बाँध्यो जो बालि बली पलनापर लै सुतको हितठाढे। हैहयराज लियो गहि केशव आयोहो क्षुद्र जो छिद्रनि डाढे॥ बाहिर काढ़िदियो बलिदासिन जाइपरेउ जो पतालको बाढ़े। तोको कुठार बड़ाई कहा कहि ता दशकंठके कंठ न काढ़े ७॥

या प्रकाश में परशुराम सों औ रघुवर सों सवाद है औ ताही रघुवर के रोष करिकै परशुराम के मान को औ आपने सैन्य के विषाद के दुःख को भंजन है १। २ यामें परशुराम के तेज को वर्णन है कि जिन परशुराम को देखि भयसों दशरथ चमूमें या दशा भई, शूरज कहे शूरन के पुत्र अर्थ

परपराके शूर अथवा सूरज सूर्यवशी ३ । ४ । ५ । ६ बांध्यो कहे मारयो सुत जो अगद है ताको पलना परसों अंक में लैकै ताको हित कौतुक रावण में ठाढ्यो अर्थ रावण को बालखेल बनायो सो कथा प्रसिद्ध है बालको अंक में लैकै कौतुक देखाइबो लोकरीति है छिद्रनि को डाढ़े कहे देखे अर्थ समय विचारि कै हैहयराज सहस्रार्जुन पै युद्ध करिबे को आयो हो आयो रहै अथवा जाको हैहयराज गहिलियो सो क्षुद्र छिद्रनि को डाढ़े अर्थ या समय जनकपुर में परशुराम नहीं हैं ऐसे अवसर को विचारि कै आयो रहै ताके कंठ जो तू न काटै तौ तोको कहा बड़ाईहै अथवा ताके कंठन को जो तू काटै तौ तोको कहा बड़ाईहै जाकी बालि आदि ऐसी दुर्दशाकरी ताको कंठ काटिबो सहज है इति भावार्थः ७ ॥

सोरठा ॥ यद्यपि है अति दीन मोहि तऊ खल मारने ॥ गुरुअपराधहि लीन केशव क्योंकरि छांड़िये ८ चन्द्रकला छंद ॥ वरबाण शिखीन अशेषसमुद्रहि सोखि सखा सुख हम तरिहौं। पुनि लंकहि औटि कलंकितकै फिर पंककलंकहिकी भरिहौं ॥ भल भूजिकै राक्स खाक सकै दुख दीरघ देवन को हरिहौं । सितकंठके कंठनको कठुला दशकंठके कंठनका करिहौं ९ परशुराम–संयुताछंद ॥ यह कौनको दल देखिये । वामदेव ॥ यह रामको प्रभु लेखिबे ॥ परशुराम ॥ कहि कौन राम न जानियो । वामदेव ॥ शरताड़ुका जिन मारियो १० परशुराम–विनय छंद ॥ ताड़ुकासँहारी तिय न विचारी कौन बड़ाई ताहि हने । वामदेव ॥ मारीचहु ते संग प्रबल सकलखल अरु सुबाहु काहू न गने ॥ करि क्रतु रखवारी गुरु सुखकारी गौतम की तिय शुद्ध करी । जिन रघुकुल मंड्यो हर धनु खंड्यो सीय स्वयंवर मांझ वरी ११ ॥

जो ऐसो दीन है ताको मारिबो अनुचित है मो जिये कहत हैं ८ शिखीन कहे अग्निसों सखा सुग्रारको सम्भाषन है सुखगी कहे सहजही ९ । १०

गुरु जे विश्वामित्र हैं तिनको सुखकारी क्रतु जो यज्ञ है ताको रखवारी करिकै ११ ॥

दोहा ॥ हरहू होतो दड द्वै धनुष चढ़ावत कष्ट ॥ देखो महिमा काल की कियो सो नरशिशु नष्ट १२ विजय छंद ॥
बोरौं सबै रघुवंश कुठार कि धारमें वारन वाजि सरत्थहि।
बाण कि वायु उड़ाइकै लक्षन लक्ष करौं अरिहा समरत्थहि॥
रामहि वाम समेत पठै वन कोपके भार में भूजौं भरत्थहि।
जो धनु हाथ लियो रघुनाथ तो आजु अनाथ करौं दशरत्थहि १३ ॥

१२ सरस्वती उक्तार्थ से कहे सहित वै कहे निश्चय अर्थ निश्चय करि रघुवंश के जे कुठार शत्रु हैं तिन्हैं वारन वाजि रथ सहित की कहे समुद्रादि जलाशय की धार प्रवाहमें बोरौं कंजलमस्मिन्नस्तीति की अर्थ जामें जल रहै सो की कहावै वशपदश्लेष है बांसहू को नाम है ताकुठार पद कह्यो वारन वाजि रथ कहि या जनायो कि जामें उनको चिह्नऊ न रहै औ लक्षन कहे लाखन जे रघुवंशके शत्रु हैं तिन्हैं बाणकी वायुसों उड़ाइकै हा कहे हाइ हाइ जो शब्द है ताही में समरत्थ लक्ष कहे निशाना करौं अर्थ ऐसी बाणवृष्टि करौं जामें केवल हाइ हाइ करै और पराक्रम करिबे लायक ना रहै औ जय रामहि कहे केवल रामचन्द्रहीसों वाम कहे कुटिलतासमेति हैं अर्थ जे रामही के शत्रु हैं तिन्हैं वनको पठैदेउँ औ जे भरत्थहि वाम समेति हैं अर्थ भरतके शत्रु हैं तिन्हैं शोकके भारमें भूजौं औ जो धनुषको रघुनाथ हाथ में लियो कहे उठायो तौ आजु दशरथको अनाथ कहे जाको नाथ कोऊ नहीं अर्थ सबको नाथ करौं कहे करि मानौं तौ सबके नाथ जे विष्णु हैं तिनहीं के शम्भुधनुष तोरिबे की सामर्थ्य है ताते तेई विष्णु रामरूप ह्वै दशरथ के पुत्र भये यह निश्चयकरि दशरथ को सर्वोपरि मानौं इति भावार्थः १३ ॥

सोरठा ॥ राम देखि रघुनाथ रथते उतरे बेगिदै ॥ गहे भरतको हाथ आवत राम विलोकियो १४ परशुराम–दंडक॥

प्रणाम ॥ भृगुनंद आशिषदीन । रण होहु अजय प्रवीन १८ परशुराम ॥ सुनि रामचन्द्र कुमार । मनवचन कीर्त्ति उदार ॥ राम ॥ भृगुवंसके अवतंस । मनवृत्ति है क्यहि अंस १९ परशुराम-मदिराछंद ॥ तोरि शरासन शंकरको शुभ सीय स्वयंवर मांझ वरी । ताते बढ्यो अभिमान महा मन मेरियो नेक न शंक करी ॥ राम ॥ सो अपराध परो हमसों अब क्यों सुधरै तुमहू धों कहो । परशुराम ॥ बाहु दै दोऊ कुठार हि केशव आपने धामको पंथ गहो २० ॥

अजय कहे जाको कोऊ न जीति सकै १८ हमारे वचन सुनो औ उदारकीर्ति सुनो अथवा कीर्ति है उदार जिनकी ऐसे हमारे वचन सुनो अथवा कीर्तिउदार रामचन्द्र को सबोधन है तुम्हारो मन वृत्तिके केहि अंश कहे भागमों है अर्थ मनोभिलाष कहा है जो होइ सो कहौ १९ सरस्वती उक्तार्थः अनेक राजा जामें हारिगये ता शरासन को तोरयो स्वयंवर के मध्य में सीताको वरयो तासों तुम्हारे बड़ो अभिमान बढ्यो है सो उचितही है जो एतो पराक्रम करै ताके अभिमान बढ्योई चाहै औ सकल क्षत्रिनको नाशकर्ता जो मैं हौं ताहूकी शंका तुम ना करी तासों तुम्हारे बलको समुझि हमारे भय भयो है तासों सकल क्षत्रिन के नाशको हमारो दोष क्षमाकरि हमारे दोऊ बाहु औ हमारो कुठार आपनो करि हमको दैकै आपने घरको जाउ इनहीं करनसों याही कुठारसों क्षत्रियनको क्षय करयो है तासों तुम करिकै बाहु कुठार खंडिबे की शंका है सो तुम वचन करि हमको दैकै निर्भय करौ इति भावार्थः अथवा या कुठारको दोऊ बांह दैकै आपने धामको जाउ बांह वीर देवेकी रीति लोक में प्रसिद्ध है कुठार को बड़ो दोष है तासों दोऊ बांह देबे कह्यो २० ॥

राम-कुंडलिया ॥ टूटै टूटनहार तरु वायुहि दीजत दोष । त्यों अब हरके धनुषको हमपर कीजत रोष ॥ हमपर कीजत रोष कालगति जानि न जाई । होनहार ह्वैरहै मिटै मेटे न

मिटाई ॥ होनहार ह्वैरहै मोह मद सबको छूटै। होइ तिनूका वज्र वज्र तिनुका ह्वै टूटै २१ परशुराम-विजयछंद ॥ केशव हैहयराजको मांस हलाहलकौरन खाइलियोरे। तालगि मेद महीपनको घृत घोरि दियो न सिरानो हियोरे ॥ खीर षडाननको मद केशव सो पलमें करि पानलियोरे। तौलौं नहीं सुख जौलहुँ तू रघुवंशको शोनु सुधान पियोरे २२ ॥

२१ हैहयराज को मांसरूपी जो हलाहल विष है मेद चरबी खीर दूध षडानन स्वामिकार्त्तिक या युक्तिसों आपनो सकल बलकृत सुनाय भाव दिखायो सरस्वती वक्त्रार्थः हे कुठार ! यद्यपि तू ऐसे कतु कस्यो है परंतु जबलग स्ववश जे रामचन्द्र हैं तिनको सों कहे तिनको ऐसो न कहे स्तुत्य मधुर इति सुधासरिस बचन नहीं पियो तौलौं तोको सुख नहीं है इहां सुधा जो उपमान है ताके उच्चार सों मधुरवचन उपमेय को ग्रहण कियो तू सकल क्षत्रिन को क्षय करयो है औ ये अतिबलवान् क्षत्रवंशमें उत्पन्न भये सो वैर समुझि तेरो नाश करिबे को समर्थ हैं ताते ये जबलौं मधुरवचन सों तेरो दोष क्षमा नहीं करत तौलौं तोको सुख नहीं है इति भावार्थ "न पुण्यान्सुगते बन्धे छ्रिरयडे मस्तुतेऽपि चेति मेदिनी" २२ ॥

भरत-तन्त्रीछंद ॥ बोलत कैसे भृगुपति सुनिये सों कहिये तनबनिआवै। आदि बड़ेहो बड़प्पन राखौ जाते सब जग यश पावै ॥ चंदनहूं में अतितन घरिये आगि उठै यह गुण सब लीजै। हैहयमारे नृपतिसँहारे सो यश लै किन युग जीजै २३ परशुराम-नाराचछंद ॥ भलीकही भरत्थ तैं उठाय आगि अंगतैं। चढ़ाउ चोपिचाप आप बाणले निषंग तैं ॥ प्रभाउ आपनो दिखाउ छोड़ि बाल भाइकै। रिझाउ राजपुत्र मोहिं राम ले छडाइकै २४ सोरठा ॥ लियो चाप जब हाथ तीनिहुँ भैयन रोप करि ॥ बरज्यो श्रीरघुनाथ

तुम बालक जानत कहा २५ राम-दोहा॥ भगवतनसों जीतिये कबहुँ न कीने शक्ति॥ जीतिय एकै बातमें केवल कीने भक्ति २६ हरिगीतछंद॥ जब हन्यो हैहयराज इन बिन क्षत्र क्षितिमंडल करेउ। गिरिबेध षण्मुख जीति तारक नदको जब ज्यों हरेउ॥ सुत मैं न जायो रामसों यह कह्यो पर्वतनंदिनी। वह रेणुका तिय धन्य धरणीमें भई जग वंदिनी २७॥

सो बात कहौ जो तनसों बनिआवै अर्थ करत बनिपरै यासों या जनायो कि जो कहत हौ सो तुम का हमहूं सों करिबेको दुर्लभ है २३ भरत कह्यो है कि घसत घसत चदनहू में आगि उठति है तासों परशुराम कह्यो कि अंग सों आगि उठाओ सरस्वती उक्तार्थः कि हमारे संग परशुराम सों रामचन्द्र लरिहैं, यह जो रामचन्द्र प्रति तुम्हारो लौ कहे चोप है ताको छुड़ाइ कहे त्यागिकै तुम हमका आपनी कृत देखायकै रिझाउ कहे प्रसन्न करो अर्थ रामचन्द्रको भरोसो छोड़ि हमसों तुम लरौ तौ हम लरैं रामचन्द्र सों लरिबे लायक हम नहीं हैं २४। २५। २६ क्रौंचनाम जे गिरि हैं ताके बेधनहार जे षण्मुख कहै स्वामिकार्तिक हैं तिनको जीतिकै तारकासुर को जो नद पुत्र है ताको ज्यों हत्यो मार्यो ऐसे २ इनके कृत देखिकै पार्वती कह्यो कि ऐसो पुत्र हमारे न भयो तब रेणुका परशुरामकी माता जगवंदिनी भई औ धन्य भई ऐसे पराक्रम परशुराम के देखिकै रेणुका को सब जगवंदना करिकै कह्यो धन्य है रेणुका जाके ऐसो पुत्र भयो या प्रकार रामचन्द्र परशुराम की स्तुति कियो २७॥

परशुराम- तोमर छंद॥ सुनु राम शीलसमुद्र। तव बंधुहै अतिक्षुद्र॥ मम वाडवानलकोप। अबकियो चाहत लोप २८ शत्रुघ्न- दोधक॥ हो भृगुनन्द बली जगमाहीं। राम बिदाकरिये घर जाहीं॥ हौं तुमसों फिर युद्धहि मांड़ौं। क्षत्रियवंशको वैर लै छांड़ौं २९ तोटकछंद॥ यह बात सुनी

भृगुनाथ जबै । कहि रामहिं लै घर जाहु अबै ॥ इनपै जग जीवत जो बचिहौं । रणहौं तुमसों फिरिकै रचिहौं ३० दोहा ॥ निजअपराधी क्यों हतौं गुरुअपराधी छाँड़ि । ताते कठिन कुठार अब रामहिं सो रणमाँड़ि ३१ ॥

बड़वानलरूपी जो हमारो कोप है सो इनको लोप भस्म कियो चाहत है २८ । २६ शत्रुघ्न की यह बात सुनि भरत सों कह्यो कि तुम रामचन्द्र को लैकै घर जाहु इन पै शत्रुघ्न पै युद्धकरि जो जीवत बचिहौं तब तुम सों रण करिहौं ३० गुरु अपराधी रामचन्द्र निज अपराधी शत्रुघ्न सरस्वती उक्तार्थः निजते अपनातें हमते इति है अपराध कहे अन्य अधिक इति है धी बुद्धि जिनकी इहां बुद्धि उपलक्षणमात्र है बुद्धिपद ते बुद्धिबल विद्यादि जानो ऐसे जे रामचन्द्र हैं तिनको कैसे मारौं अर्थ इनके मारिबे को समर्थ नहीं हौं फेरि कैसे हैं ये गुरु जे शिव हैं तिनहुँन ते अपराधी कहे बल विद्यादि करि अधिक हैं जिनको शिवहू ध्यान करत हैं तासे मारिबे की आशा करि छाँड़िकै हे कठिनकुठार । रामचन्द्रहीको सोरण कहे स्तुति सों रणसों माँड़ि कहे युद्ध करौ अर्थ रामचन्द्रकी स्तुति करौ जो कहौ कुठार तौ बोलत नहीं कैसे स्तुति करि है तो सब में अभिमानी देवता रहत हैं ता करिकै स्तुति करिबे को समर्थ है जैसे समुद्र को अभिमानी देवता रामचन्द्र की स्तुति करयो है औ लंका हनुमान् को रोंक्यो है ३१ ॥

परशुराम—विजयछंद ॥ भूतलके सब भूपनको मद भोजन तौ बहुभांति कियोई । मोदसों तारकनन्दको मेद पछ्यावरि पान सिरायो हियोई ॥ खीर षडाननको मद केशव सो पलमें करि पान लियोई । राम तिहारेइ कंठको शोणित पानको चाहै कुठार कियोई ३२ लक्ष्मण—तोटक ॥ जिनको शुभअनुग्रह वृद्धि करै । तिनको किमि निग्रह चित्त परै ॥ जिनके जग अक्षत शीश धरै । तिनको तन सक्षत कौन करै ३३ राम—मदिराछंद ॥ कण्ठकुठार परै अनहार

कि फूलो अशोक सशोकसमूरो । कै चित्रसारी चढै कि चिता तन चदन चित्र कि पावकपूरो ॥ लोकमें लोक बडो अपलोक सुकेशवदास जो होउ सो होऊ । विप्रनके कुलको भृगुनन्दन सूरजके कुल शूर न कोऊ ३४ ॥

पद्मावतरि शिखरनि को भेद है खीर दूध सरस्वती उक्तार्थः हे राम! तिहारे कठ को कहे शब्द को अर्थ मधुर वचन पानि को सो कुठार ति नहीं पियो पानकस्यो चाहत है अर्थ सुन्यो चाहत है "कठो गले सन्निधाने ध्वानौ मदनपादपे इति मेदिनी" ३२ जिन ब्राह्मणनकी अनुग्रह कृपा सबको वृद्धि करत है तिनको निग्रह दड हमारे चित्त में कैसे परे कहे आवै औ जिनके शीश में जग अक्षत धरत है अर्थ पूजन करत है तिनको तन सक्षत कहे खंडित को करै या जनायो ब्राह्मण अवध्य हैं तासों तुमको नहीं मारत ३३-चढ़ै अशोक सुख चढ़ै शोक दुःख फूलो कहे होइ लोक यश अपलोक अयश ३४ ॥

परशुराम-विशेषकछद ॥ हाथ धरे हथियार सबै तुम शोभत हौ । मारनहारहि देखि कहा मन क्षोभत हौ ॥ क्षत्रिय के कुल ह्वै किमि बैनन दीन रचौ । कोरि करौ उपचार न कैसेहु मीच बचौ ३५ लक्ष्मण ॥ क्षत्रिय ह्वै गुरु लोगन के प्रतिपाल करै । भूलिहु तौ तिनके गुण औगुण जी न धरै ॥ तौ हमको गुरु दोष नहीं अब एकरती । जो अपनी जननी तुमहीं सुखपाइ हती ३६ ॥

लक्ष्मण औ रामचन्द्र के नम्र वचन सुनिकै भययुक्त जानि परशुराम कह्यो कि मारनहार जो मैं हू ताको देखिकै कहा क्षोभत डरात हौ सरस्वती उक्तार्थ. सबै कहे चारो भाई तुम हाथन में हथियार धरे ऐसे शोभत हौ कि मारनहार जे यमराज हैं तिनहुँन को देखिकै कहा क्षोभत डरात हौ अर्थ तुम यमराजहू को नहीं डरात हौ औ क्षत्रियके कुल में ह्वै कै किमि कहे काहे दीनबैन हमसों न रचो ब्राह्मण सों क्षत्रिय को आधीन रहिबोई उचित धर्म है कछू भयसों तुम दीन बचन नहीं कहत काहे से

कि कोरि उपचार यत्न करौ काहे करै अर्थ ब्रह्मादिहू की शरणमें जाइ औ तुम मींचको मारौ चाहौ तो कैसेहू न बचो कहे बचें ३५ जो तुमहीं अपनी जननी माता को सुख पाइकै मारयो तुमको कुछ गुरुदोष ना भयो तौ तुम्हारे मारे सों हमहूं को रंचिहू भरि गुरुदोष नहीं है जननी को वध जनाइ या जनायो कि तुम ऐसेई स्त्रीवधादि पराक्रम करयो है अथवा गुरुदोषी जनायो ३६ ॥

परशुराम–विजयछंद ॥ लक्ष्मणके पुरिखान कियो पुरुषारथ सो न कह्यो परई । वेष बनाइ कियो वनितान को देखत केशव ह्योहरई ॥ क्रूरकुठार निहारि तजै फल ताकी यहै जो हियो जरई । आजु ते केवल तोको महाधिक क्षत्रिन पै जो दया करई ३७ गीतिकाछंद ॥ तव एकविंशति बेर मैं बिन क्षत्रकी पृथवीरची । बहु कुंड शोणितसों भरे पितृतर्पणादि क्रिया सची ॥ उबरे जो क्षत्रियक्षुद्र भूतल शोधि शोधि सँहारिहौं । अब बाल वृद्ध न ज्वान छांड़हुँ धर्मनिर्दय पारिहौं ३८ ॥

सरस्वती उक्तार्थः लक्ष्मण के पुरिखान बड़ेन जो पुरुषार्थ कियो है सो कह्यो नहीं परत कहा पुरुषारथ करयो जिन वनितन को वेष बनायो अर्थ वनिता रच्यो गौतम की स्त्रीको पाथर सों स्त्री बनायो जाको देखत हियो हरिजात है अर्थ अतिसुंदरी बनायो तौ या जनायो सृष्टि करिबेको समर्थ हैं याही विधि दशरथ भगीरथादि के कृत गंगा ल्याइबो आदि जानौ सो हे क्रूर कुठार ! तिनको निहारिकै तजै कहे छोड़ै अर्थ इनके समीप ते अन्यत्र जाइ तौ ताको इनके वियोगको यहै फल है जो हृदय जरई कहे जरत है अर्थ अतिसुंदर रूप जे ये हैं तिनके वियोग सों हृदय जरत है इनके योग को यहै फल है तासों जो तेरो इनको वियोग हैहै तौ तैसे हियो जरि है सो आज केवल कहे एक तोको महाअधिक कहे महाउत्तम है जो क्षत्रिन के ऊपर दया कर आजुतक क्षत्रिन को वध करयो ना क्षत्रवर्णन में ये ऐसे रूप गुण बलादि पूरित भये तासो अब क्षत्रियवर्णकी रक्षा करिबो योग्य

उचित है तिनके निकट रहि सहायता करि क्षत्रियवर्ण तोको रक्षणीय है ३७ सची कहे करी ३८ ॥

राम–दोहा ॥ भृगुकुल कमल दिनेश सुनि जीति सकल संसार ॥ क्योंचलिहै इन शिशुनपथ डारत हौ यशभार ३९ परशुराम–सोरठा ॥ राम सबधु सँभारि छोडतहौं शर प्राण हर ॥ देहु हथ्यारन डारि हाथसमेति न वेगिदै ४० राम–पद्धटिकाछंद ॥ सुनि सकललोकगुरु जामदग्नि । तप विशिख अशेषनकी जो अग्नि ॥ सब विशिखछांड़ि सहिहौं अखंड । हरधनुष कख्यो जिन खंड खंड ४१ परशुराम–सवैया ॥ बाण हमारेनके तनत्राण विचारि विचारि विरंचि करे हैं । गोकुल ब्राह्मण नारि नपुंसक जे जगदीन सुभावभरे हैं ॥ राम कहा करिहौ तिनको तुम बालक देव अदेव डरेहैं । गाधिकेनंद तिहारे गुरू जिनते ऋषि वेष किये उबरेहैं ४२ ॥

सकल ससार को जीतिकै जो यश एकत्र कस्यो है सो इनसों लरिकै हारिकै ता यशको बोझ इन बालनपै डारतहौ इनसों कैसे चलिहै इनसों लरिहौ तौ हारि जैहौ इति भावार्थः ३९ रामचन्द्र के सतर्क वचन सुनि परशुराम कोपकरि बोले सो अर्थ खुलो है सरस्वती उक्तार्थ हे हर महादेव ! इनके शरकरिकै मैं प्राण छोड़त हौं अर्थ ये बाण सों मेरेप्राण हस्योचाहत हैं तासों बधु सहित जो कोपयुत रामचन्द्र हैं तिनको तुम सँभारि कहे सँभारौ ये अब तुम्हारेई सँभारन लायक हैं जासों ये हाथनसों समेतिन कहे सबन हथ्यारनको डारिदेहिं जबतक ये हाथ में हथ्यार धरे रहि हैं तबतक हमारे भय बन्यो है तासों तुम इनको कोप शांतकरि हथ्यार उत-रावो आगे महादेव आयबेऊ भये हैं ४० तपके जे अशेष विशिख बाण हैं विशिख पद ते शाप जानौ तिनकी अग्नि औ और सब बाणनको छोड़ौ ते अखड कहे निर्विघ्न सहिहौं अर्थ हमारे ऊपर शाप औ बाण दुवौ चलाओ हम सहि हैं ४१ सरस्वती उक्तार्थ हे राम ! तिन बाणन को तुम

कहा करिहौ अर्थ कहा कियो चाहत हौ अर्थ इनको प्रभाव लोप कियो चाहत हौ तुम कैसे हौ बालकताही में देव औ अदेव तुमको डरे हैं ४२ ॥

श्रीराम—षट्पद ॥ भगन भयो हरधनुषशाल तुमको अब शालै । वृथा होइ विधि सृष्टि ईश आसन तेचालै ॥ सकल लोक सहरहु शेष शिरते धरडारो । सप्त सिंधु मिलि जाहिं होहि सबहीं तम भारो ॥ अतिअमलज्योति नारायणी कहि केशव बुड़िजाहि बरु । भृगुनंद सँभारु कुठार मैं कियो शरासन युक्त शरु ४३ स्वागता छंद ॥ राम राम जब कोप कस्यो जू । लोकलोक भयभूरि भस्यो जू ॥ वामदेव तब आपुन आये । राम देव दोऊ समुझाए ४४ दोहा ॥ महादेव को देखि कै दोऊ राम विशेष ॥ कीन्हों परमप्रणाम उन आशिषदियो अशेष ४५ महादेव—चतुष्पदी ॥ भृगुनंदन सुनिये मन महँ गुनिये रघुनंदन निर्दोषी । जनिये अविकारी सबसुखकारी सबही विधि संतोषी ॥ एकै तुम दोऊ और न कोऊ एकै नाम कहायो । आयुर्बल खूट्यो धनुष जो टूट्यो मैं तन मन सुख पायो ४६ पद्धटिकाछंद ॥ तुम अमल अनन्त अनादि देव । नहिं वेद बखानत सकलभेव ॥ सबको समान नहिं वैर नेह । सब भक्तन कारण धरत देह ४७ ॥

जब गुरु जे विश्वामित्र हैं तिनकी निंदा करयो तब रामचन्द्र क्रोप करिकै बोले ईश महादेव आसन योगासन ते चालै कहे चले सबही कहे सर्वत्र अर्थ चौदहों लोक मैं ४३ । ४४ । ४५ निर्दोषी हैं अर्थ धनुष तूरने में इनको कछू दोष नहीं है और [illegible] ह यासों या जनायो कछु [illegible] जनायो कि इनके कछू [illegible] हैं ४६ छन्द का अन्वय एक [illegible]

तुम अमल कहे माया विकार रहित औ अनत जाका अत नहीं है कि ये तो हैं औ अनादि कहे जाकी आदि नहीं कोऊ जानत कि कबसों हैं ऐसे देवहौ अर्थ परब्रह्म हौ औ तुम्हारो सबे भेव कहे भेद वेद नहीं बखानि सकत अर्थ वेदहू नहीं जाको प्रमाण पावत सब प्राणिन को समान हौ काहूको स्वाभाविक वैर औ स्नेह तुम्हारे नहीं है केवल प्रह्लादादि जे भक्त हैं तिनके हेतु देह धरि दुःख दूरि करत हौ या सों भक्तवत्सलता जनायो अपनपौ को पहिंचानि कै कि हम औ ये एकई हैं यह जानि कै इनके हाथ सों होनहार जो रावणादिवध आगिलो काज है ताको करौ तब महादेव के वचन सों जानि कहे ये नारायण हैं यह जानि कै नारायण को धनुष परशुराम पै रह्यो सो रामचन्द्र को दियो ४७ ॥

अब आपनपौ पहिंचानि विप्र। सब करहु आगिलो काज क्षिप्र ॥ तब नारायणको धनुष जानि। भृगुनाथ दियो रघुनाथपानि ४८ मोटनकछंद ॥ नारायणको धनुबाण लियो। ऐंच्यो हँसि देवन मोद कियो ॥ रघुनाथ कहेउ अब काहि हनो। त्रैलोक्य कँप्यो भय मानि घनो ४९ दिग्देव दहे बहुवात बहे। भूकंप भये गिरिराज ढहे ॥ आकाश विमान अमान छये। हाहा सबही यह शब्दरये ५० परशुराम—शशिवदनाछंद ॥ जगगुरु जान्यो। त्रिभुवन मान्यो ॥ मम गति मारो। हृदय विचारो ५१ ॥

४८ द्वै छदको अन्वय एक है ४९। ५० त्रिभुवन में मान्यो अर्थ जाको तीनों भुवन मानत हैं पूजत हैं औ जगत् के गुरु जो ईश्वर हैं सो हम तुम को जान्यो अर्थ तुम ईश्वरहौ ताते और सबको निर्दोष हमको सदोष विचारि हमारी सुरपुर की गति मारो ५१ ॥

दोहा ॥ विषयीको ज्यों पुष्पशर गतिको हनत अनंग ॥ रामदेव त्योंही कियो परशुरामगतिभग ५२ चतुष्पदी छंद ॥ सुरपुरगतिभानी शासनमानी भृगुपतिको सुख मारो।

आशिषरस भीने सब सुख दीने अब दशकंठहि मारो ५३ दोहा॥ सोवत सीतानाथके भृगुमुनि दीन्हीं लात॥ भृगुकुल पतिकी गति हरी मनो सुमिरि वह बात ५४ मधुभारछंद॥ दशरथ जगाइ। सभ्रम भगाइ॥ चले रामराइ। दुंदुभि बजाइ ५५ ताड़कातारि सुबाहुसँहारिकै गौतमनारिके पातक टारे। चाप हत्यो हरको हँसिकै सब देव अदेवहुते सब हारे॥ सीतहि ब्याहि अभीत चल्यो गिरिगर्वचढ़े भृगुनंद उतारे। श्रीगरुड़ध्वजको धनु लै रघुनंदन औधपुरी पगु धारे ५६॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्री-
रामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां परशु-
रामसंवादवर्णनंनाम सप्तमः प्रकाश॥७॥

५२ सब जे देव ऋषि आदि हैं तिनको सुख दीने अब दशकंठको मारो ऐसी जो परशुरामकृत आशिष है ताके रसमें भीने ५३। ५४ परशुरामके भयसों मूर्च्छा को प्राप्त जे दशरथ हैं तिनको जगाइ कै औ परशुराम हारि कै गये यह कहि सभ्रम भगाइकै ५५॥ गर्वके गिरिपर चढ़ेरहे तासों उतारयो अथवा गर्वका गिरि सोई परशुराम पर चढ़ो रहै सो उतारयो॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां सप्तमः प्रकाशः॥७॥

दोहा॥ यह प्रकाश अष्टम कथा अवधप्रवेश बखानि। सीता बरण्यो दशरथहि और बंधुजन मानि १ सुमुखीछंद॥ सब नगरी बहु शोभरये। जहँ तहँ मंगलचार ठये॥ बरणत हैं कविराज बने। तनमनबुद्धिविवेकसने २ मोटनकछंद॥ ऊंची बहुवर्ण पताक लसैं। मानो पुरदीपतिसी दरसैं॥ देवी गण व्योम विमान लसैं॥ शोभै तिनकै शुभ अचलसैं ३

दोहा ॥ कलभनलीने कोटपर खेलत शिशु चहुँ ओर ॥ अमल कमल ऊपर मनो चंचरीक चित चोर ४ कलहंस छंद ॥ पुर आठ आठ दरबार विराजैं। युतआठ आठ सेनापति राजैं॥ रहैं चारि चारि घटिका परिमानैं। घरजाहिं और जब आवत जानैं ५॥

मंगलचार वंदनवारादि १।२।३ कलभ छोटे हाथी कमल सदृश कह्यो तासों पद्माख्य कोट जानो ताको भेद आगे कहिहैं ४ पुर कहे अग्रभाग जे पुरी के आठहैं तिनमें आठ दरबार कहे सभा विराजत हैं अर्थ आठ प्रकारके कोट होत हैं यथा नरपतौ " अतिदुर्गं कालवर्म चक्रावर्तं च डिंकुरम्। तटावर्त्त च पद्माख्यं यक्षभेदं च शार्वरम् ॥ कोटचक्रं प्रवक्ष्यामि विशेषादष्टधा च तत्" सो जैसे एक ओर पद्माख्यकोट देख्यो तैसे पुरीके आठहू ओर शहरपनाह में आठहू प्रकारके कोट बने हैं तिनमें राजा के आठ मंत्री हैं। यथा वाल्मीकीये "धृष्टिर्जयन्तो विजयः सिद्धार्थोत्यर्थसाधकः। अशोको मन्त्रपालश्च सुमन्त्रश्चाष्टमो महान्" ते मंत्री तिन कोटन में आठहू दिशन के प्रजान संग सभा करत हैं अर्थ तिन में बैठि आठहू दिशन को मामिलो करत हैं अथवा दरबार कहे मुख्यद्वार पुरद्वार इति अर्थ पुरीके शहरपनाह में आठहू दिशनमें आठद्वार बने हैं। यथा कविप्रियायां "नीके कै केवार दैहौं द्वार द्वार दरबार केशवदास आस पास सूर जौन आवैगो" ५॥

दोहा ॥ आठौदिशिके शीलगुण भाषा वेष विचार ॥ वाहन वसन विलोकिये केशव एकहि बार ६ कुसुमविचित्रा छंद ॥ अतिशुभवीथी रज परिहरे। चंदनलीपी पुष्पनिधरे ॥ दुहुँदिशि दीसत सुवरणमये। कलशविराजत मणिमय नये ७ तामरस छंद ॥ घर घर घंटनके रव बाजैं। बिच बिच शंख जु झालरि साजैं ॥ पटह पखाउज आउज सोहैं। मिलि सहनाइन सों मनमोहैं ८ हीरकछंद ॥ सुंदरि

सब सुंदर प्रतिमंदिर पर यों बनी । मोहनगिरि शृंगन पर मानहुँ महिमोहनी ॥ भूषणगण भूषिततन भूरि चितन चोरहीं । देखति जनु रेखति तनु बाण नयन कोरहीं ६ सुंदरीछंद ॥ शंकरशैल चढ़ी मनमोहति । सिद्धन की तनया जनु सोहति ॥ पद्मनऊपर पद्मिनि मानहु । रूपन ऊपर दीपति जानहु १० ॥

६ यामें चौकीदार सेनापतिन की रीति कहत हैं कि आठौ दिशिके चौकीदारन के शील कहे स्वभाव गुण शूरता आदि औ भाषा कहे बोली चौकी समयकी चौकीदारन की बोली भिन्न है औ बेष कहे देहकी उच्चता स्थूलता आदि औ विचार औ वाहन गज अश्व रथादि वसन श्याम, श्वेत पीतादि एकहिबार कहे एकही तरह विलोकियत है जा वेषसों जा पहरकी चौकी जैसे सेनापति की है तैसी आठहू ओरकी है इतिभावार्थः अथवा जा पुरी में आठौ दिशिके शील आदि एकही बार एकही समय विलोकियत है यासों या जनायो कि आठौ दिशिके राजा जापुर में हाजिर रहत हैं औ आठौ दिशिके प्राणी जापुर में बसत हैं वीथी गली ७ । ८ प्रतिमंदिर कहे आपने आपने मंदिरनपर बरातको कौतुक देखिबे को सुंदरी कहे स्त्री चढ़ी हैं मोहनगिरि सदृश काहे अतिसुंदर मंदिर जनायो जब देखती हैं तब बाणसम जे नयनकोर हैं तिनसों मानों तनको देखती हैं कहे बेधती हैं ६ सिद्धदेव योनि विशेष हैं पद्मिनि कमलिनीरूप सौंदर्य कैलास औ पद्म औ रूपसम गेह है सिद्धतनया कमलिनी दीपतिसम स्त्री हैं १० ॥

कीरति श्रीजयसंयुत सोहति । श्रीपतिमंदिरको मन मोहति ॥ ऊपर मेरु मनो मनरोचन । स्वर्णलता जनु रोचति लोचन ११ विशेषकछंद ॥ एक लिये कर दर्पण चन्दन चित्र करे । मोहनि है मन मानहु चाँदनि चन्दधरे ॥ नैन विशालनि अंबरलालनि ज्योति जगी । मानहु रागनि

राजति है अनुरागरँगी १२ नीलनिलोचन को पहिरे यक चित्तहरे। मेघनकी द्युति मानहु दामिनि देहधरे ॥ एकनके तन सूक्षम सारिजरायजरी। सूरकरावलिसी जनु पद्मिनि देहधरी १३ तोटकछंद ॥ बरषै कुसुमावलि एक घनी। शुभ शोभन कामलतासि बनी ॥ बरषैं फल फूलन लायक की। जनु हैं तरुणी रतिनायककी १४ ॥

की जयसंयुत कीर्ति है जय सम गेह है कीर्तिसम स्त्री है की पतिके विष्णु के मंदिर में श्रीलक्ष्मी है की मनरोचन कहें सुंदर अनेक मेरु सुमेरुपर स्वर्णलता हैं रोचति कहे नीकी लागति हैं लोचननकी ११ मानों चन्द्रमा के मनको चाँदनी मोहती है चन्द्रसरिस दर्पण है चादनीसरिस चंदनचर्चित स्त्री हैं नयन हैं विशाल जिनके ऐसी जे स्त्री हैं तिनके अधर वस्त्र लालनकी शोभा जगी है रागिनी सम स्त्री हैं अनुराग प्रेमसम वस्त्र हैं प्रेमका रंग अरुण है १२ मेघद्युतिसम श्याम वस्त्र हैं दामिनी सम स्त्री हैं पद्मिनी कमलिनीसम स्त्री हैं सूरकरावलि सम जरायजरी सारी हैं १३ फल पूगीफलादि १४ ॥

दोहा ॥ भोरभये गजपर चढे श्रीरघुनाथ बिचारि ॥ तिनहिं देखि बरणत सबै नगरनागरी नारि १५ तोटक छंद ॥ तमपुंज लियो गहि भानु मनो। गिरिअंजन ऊपर सोम भनो ॥ मनमत्थ विराजत शोभतरे। जनु भासत लोभहिं दान करे १६ मरहट्टाछंद ॥ आनद प्रकासी सब पुरवासी करते दौरा दौरि। आरती उतारैं सरबसवारैं अपनी अपनी पौरि ॥ पढिमंत्र अशेषनि करि अभिषेकनि आशिषदे सविशेष। कुंकुमकर्पूरनि मृगमदचूरनि वर्षतिवर्षा वेश १७ आभीरछंद ॥ यहि विधि श्रीरघुनाथ। गहे भरतको हाथ ॥ पूजत लोग अपार। गये राजदरबार १८ गये एकही बार। चारौ राजकुमार ॥ सहित बधूनि सनेह। कौशल्या

के गेह १६ त्रिभंगीछंद ॥ बाजे बहुबाजैं तारनि साजैं सुनि सुरलाजैं दुख भाजैं । नाचैं नवनारी सुमन शृँगारी गति मनुहारी सुख साजैं ॥ बीणानि बजावैं गीतनि गावैं मुनिन रिझावैं मन भावैं । भूषण पट दीजै सब रसभीजै देखत जीजै छवि छावैं २०सोरठा॥ रघुपति पूरणचंद देखि देखि सब सुखमढ़ैं ॥ दिनदूने आनंद तादिनते तेहिपुरबढ़ैं २१ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-
चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांरामस्यायोध्या-
नगरप्रवेशोनामाष्टमः प्रकाश· ॥ ८ ॥

ताही क्षण गजपर चढ़े राम ऐसे शोभित भये तमपुंज मानों भानु सूर्य को गहि लियो अथवा तमपुंजही को मानों भानु गहि लियो जानो लोभहि तरेकरे दान भासत है तरें पदको संबंध याहू सें है औ कहूं यह पाठ है जनुराजत काम शृँगार तरे सौं शृगार तरे जाके ऐसो मानों काम राजतहै भानु औ चन्द्रमा औ शोभा औ दान सम रामचन्द्र हैं तमपुज औ अजन गिरि औ मन्मथ औ लोभ सम गज है १५ । १६ । १७ । १८ । १६ तार कहे उच्च स्वर को साजत हैं "तारो निर्मलमौक्तिके मुक्ता शुद्धावुच्चनादे इति अभिधानचिन्तामणिः" रस कहे प्रेम में भीजे जे सब पुरवासी हैं तिन करिकै भूपण पट दीजै कहे दीजियत हैं अर्थ प्रेम सों युक्त सब भूषण पट दान करत हैं २० । २१ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद
निर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायामष्टमः प्रकाशः ॥ ८ ॥

दोहा ॥ यह प्रकाश नवमैं कथा रामगवन वन जानि ॥ जनकनंदिनीको सुकृत वर्णन रूप बखानि १ रामचन्द्र लक्ष्मणसहित घर राखे दशरत्थ ॥ विदा कियो ननसार को सँग शत्रुघ्न भरत्थ २ तोटकछंद ॥ दशरत्थ महामन मोदरये । तिन बोलि वशिष्ठहिं मंत्र लये ॥ दिन एक कहोशुभशोभ

रयो। हम चाहत रामहिं राज दयो ३ यह बात भरत्थकि मात सुनी। पठऊ वन रामहिं बुद्धि गुनी॥ तेहि मंदिर में नृपसों बिनयो। बरु देहु हतो हमको जो दयो ४ नृप बात कही हँसि हेरि हियो। वर मांगु सुलोचनि मैं जो दियो॥ केकयी॥ नृपता सुविशेषि भरत्थ लहैं। वरषैं वन चौदह राम रहैं ५॥

१।२ शोभरयो राजा को विशेषण है ३।४।५॥

पद्धटिकाछंद॥ यह बात लगी उर वज्रतूल। हिय फाट्यो ज्यों जीरण दुकूल॥ उठि चले विपिन कहँ सुनत राम। तजि तात माततिय बन्धु धाम ६ हरिलीलाछंद॥ छूटे सबै सबनिके सुख क्षुत्पिपास। विद्वद्विनोद गुण गीतविधान वास॥ ब्रह्मादि अन्त्यजन अंत अनत लोग। भूले अशेष सविशेषनि राग भोग ७ मौक्तिकदामछंद॥ गये तहँ राम जहां निजमात। कही यह बात कि हौं वनजात॥ कछू जनि जो दुख पावहु माइ। सो देहु अशीष मिलौं फिरि आइ ८ कौशल्या॥ रहौ चुपह्वै सुत क्यों वन जाहु। न देखि सकैं तिनके उरदाहु॥ लगी अब बाप तुम्हारेहि वाइ। करैं उलटी विधि क्यों कहि जाइ ९ राम—ब्रह्मरूपकछंद॥ अन्नदेइ सीख देइ राखि लेइ प्राण जात। राज बाप मोललै करैं जो दीह्र पोषि गात॥ दासहोइ पुत्रहोइ शिष्यहोइ कोइ माइ। शासना न मानई तौ कोटि जन्म नर्क जाइ १०॥

जीर्ण कहे पुरानी तजि चले पद ते इहां मानसिक त्याग जानो ६ क्षुत् कहे क्षुधा विद्वद्विनोद कहे शास्त्रार्थ गुणशास्त्र विद्यादि गीत विधान गाइबो वास घर अथवा वस्त्र ब्रह्महिआदि दै औ अंत्यज जे चांडाल हैं तिन पर्यंत जे अनंत लोग हैं तिनको अशेष राग प्रेम औ भोग सविशेषण भूले अर्थ

अत्यत भूले यद्यपि रामवनगमन सों ब्रह्मादि देवन को रावणवधादि हितकार्य ह्वै है परतु अवसर विलोकि तिनहू को दुःख भयो ७। ८। ९ अन्नदाता औ सिखदाता औ कहू प्राणजात होइँ ता भयसों रक्षक औ राजा औ बाप औ जो मोल लैकै पोषिकै गात कहे बड़ो करै अर्थ जो मोल लै पालन करै ई जे छ हैं तिनकेदास औ पुत्र औ शिष्य औ कोहू कहे और कोऊ ह्वाइ अर्थ अन्नग्राहक प्राणरक्षित औ प्रजा जे छः हैं ते आज्ञाका न मानैं तौ कोटि जन्मतक नरकजाइँ या जनायो कि एक तो राजा हैं दूसरे पिता हैं तासों विशेषिकै आज्ञा मानि हमको वनजैबो उचित है १० ॥

कौशल्या–हरनीछद ॥ मोहिं चलौ वन संग लियैं। पुत्र तुम्हैं हम देखि जियैं ॥ अवधपुरीमहँ गाज परै। कै अब राज भरत्थ करै ११ राम–तोमरछद ॥ तुम क्यों चलौ वन आजु। जिन शीशराजत राजु ॥ जिय जानिये पतिदेव। करि सर्वभांतिन सेव १२ पति देइजो अतिदु ख। मन मानि लीजै सु ख ॥ सब जक्त जानि अमित्र। पति जानि केवल मित्र १३ अमृतगतिछद ॥ नित प्रति पन्थहि चलिये। दुख सुखको दल दलिये ॥ तन मन सेवहु पतिको। तब लहिये शुभगतिको १४ स्वागताछंद ॥ योगयागव्रत आदि जो कीजै। न्हानगानगन दान जो दीजै ॥ धर्मकर्म सब निष्फल देवा। होहिं एक फल कै पति सेवा १५ ॥

११ तुम क्यों चलौ वन इत्यादि दश छदन में पातिव्रतधर्म सुनाइ रामचन्द्र माताको बोध करत हैं राजु कहे राजादशरथ अथवा राजश्रिन करिकै केवल पतिही को देव जानिये कहे जानो चाहिये १२। १३ पतिही श्रिन करिकै नित्यप्रति पथ कहे सुराह शास्त्रोक्त पतिव्रतनकी रीति इति नाम चलिये या प्रकार सुख औ दु खको दल कहे समूह को दलिये कहे [illegible] औ तन [illegible] करिये [illegible] सेवा

करिबो उचित है और उपाय करिबो उचित नहीं है इति भावार्थ १४ देव कहे देवता अर्थ देवपूजा १५ ॥

तात मात जन सादर जानो । देवरजेठ सगे सो बखानो ॥ पुत्र पुत्र सुत श्रीछविछाई । है विहीन भरता दुखदाई १६ कुडलिया ॥ नारी तजै न आपनो सपनेहू भरतार । पंगु गुगु बौरा बधिर अन्ध अनाथ अपार ॥ अन्ध अनाथ अपार वृद्ध बावन अति रोगी । बालक पंडु कुरूप सदा कुवचन जड़योगी ॥ कलही कोढी भीरु चोर ज्वारी व्यभिचारी । अधम अभागी कुटिल कुपति पति तजै न नारी १७ पंकज-वाटिकाछद ॥ नारि तजै न मरे भरतारहि । तासँग सहित धनंजय झारहि ॥ जो केहुं करतार जिआवत । तौ ताको यह बात सुनावत १८ निशिपालिकाछद ॥ गान बिन मान बिन हास बिन जीवही । तप्त नहिं खाइ जल शीतल न पीवही ॥ तेलतजि खेलतजि खाटतजि सोवही । शीतल जल न्हाइ नहिं उष्णजल जोवही १९ ॥

पुत्रसुत पौत्र १६ पङ्गु पिंडरोगी योगी विरक्त भीरु कादर कुपति निर्लज्ज अथवा नपुसक १७ धनजय कहे अग्निकी झार सहति है अर्थ सती होति हैं जो काहूप्रकार कर्तार जिआवै अर्थ पतिके संग ना जरयो जाइ तौ तिन तिन के लिये यह बात है सो हम तुमको सुनावत हैं सो गान बिन इत्यादि द्वै छदमें आगे कहत हैं १८ द्वैछंद को अन्वय एक है जल शीतल न पीवही अर्थ सीरो करिकै जल न पीवै जैसो होइ तैसो पीवै शील जल में न्हाइ या जनायो कि गरम जल करि स्नान न करै जा समय जैसो पावै तैसे में स्नान करै काय मन वाच सब धर्म करिबो करै अर्थ ये जे सब धर्म हैं तिनको मनसा वाचा कर्मणा करै अथवा और जे सब धर्म दानादि हैं तिनहूँन को करै कृच्छ्र उपवास कृच्छ्र चान्द्रायणादि सों जबलौं तनको अतीतै कहे छोड़ै अर्थ मरै तबलौं पुत्रकी सिख में लीन रहै पुत्रकी आज्ञामों

रहे यामें त्रिकालदर्शी जे रामचन्द्र हैं तिन अपने वियोगसों पिताको मरण निश्चय करि पतिव्रत को धर्म सुनाय माताको बोधकारि युक्तसों विधवा स्त्रीको उचित धर्म सिखायो १६ ॥

खायँ मधुरान्न नहिं पायँ पनहीं धरैं । काय मन वाच सब धर्म करिबो करैं ॥ कृच्छ्र उपवास सब इंद्रियनि जीतहीं । पुत्र सिखलीन तन जौलगि अतीतहीं २० दोहा ॥ पति हित पितुपर तन तज्यो सती साखिदै देव ॥ लोकलोक पूजित भई तुलसी पतिकी सेव २१ मनसा वाचा कर्मणा हमसों छांड़ो नेहु ॥ राजाको विपदा परी तुम तिनकी सुधिलेहु २२ पद्धटिकाछंद ॥ उठि रामचन्द्र लक्ष्मण समेत । तब गये जनकतनयानिकेत ॥ सुनु राजपुत्रि कै एक बात । हम बन पठये हैं नृपति तात २३ तुम जननिसेवकहँ रहहु वाम । कै जाहु आजुही जनकधाम ॥ सुनि चन्द्रवदनि गजगमनि ऐनि । मन रुचै सो कीजै जलजनैनि २४ सीताजू–नाराचछंद ॥ न हौं रहौं न जाहुँजू विदेहधामको अबै । कही जो बात मातु पै सो आजु मैं सुनी सबै ॥ लगै क्षुधाहि मा भली विपत्ति मांझ नारिये । पियास त्रास नीर वीर युद्ध में सम्हारिये २५ ॥

२० सती की औ तुलसी की कथा प्रसिद्ध है २१ । २२ । २३ जननि कौशल्या ऐनि कहे हे सुंदरि ! २४ कि स्त्री को पतिही की सेवा उचित है यह बात जो माता सों तुम कह्यो है सो हम सब सुन्यो है यासों या जनायो कि तुम्हारा सेवा छांडि हम कैसे घर में रहैं क्षुधा में माता भली लगति है पोषण करिबा मुख्यधर्म माता को है तासों । यथा कविप्रियायां 'माता जिमि पोषति पिता जिमि प्रतिपाल करै' औ विपत्ति में नारिये कहे स्त्री ही भली लागति है जो अनेक प्रकार सों शुश्रूषा करि मनको बहरावति है औ पियास की त्रास समय नीर भलो लागत है औ युद्धम

वीर जो योधा हैं तिनको सँभारिये यहै भलो लागत है अर्थ अनेक वीरन को सँभारिबो एकत्र करिबो अथवा सावधान करिबोई भलो लागतहै यह कहि या जनायो कि यह तुम्हारो विपत्ति को समय है तासों तुम्हारे संग हमको चलिबो विशेष है २५ ॥

लक्ष्मण-सुप्रियाछंद ॥ वनमहँ विकट विविध दुख सुनिये। गिरिगह्वर मग अगम के गुनिये ॥ कहुँ अहि हरि कहुँ निशिचरचरहीं। कहुँ दवदहन दुसहदुख दहहीं २६ सीताजू-दंडक ॥ केशवदास नींद भूख प्यास उपहास त्रास दुखको निवास विष मुखही गह्यो परै। वायु को बहन दिन दावाको दहन बड़ी वाड़वा अनलज्वाल जाल में रह्यो परै ॥ जीरनजनम जात जोर ज्वर घोर परिपूरण प्रकट परिताप क्यों कह्यो परै। सहिहौं तपन ताप पति के प्रताप रघुवीर को विरह वीर मोसों न सह्यो परै २७ ॥

दवदहन कहे दावाग्नि २६ दुःखको निवास जो विष है सो मुख में गह्यो परत है अर्थ विष खायो जात है जीर्ण कहे जर्जर अर्थ थोड़ी है मर्यादा जाकी ऐसो जो जन्म है सो जातु कहे जाव अर्थ कि मृत्यु होय औ घोर जो ज्वर है औ परिपूर्ण कहे दैहिक दैविक भौतिक तीनों प्रकार की जो परिताप है कैसी परिताप कि क्यों कह्यो परै अर्थ जो काहू विधि सों नहीं कह्योजात अति बड़ो इति ये सब पतिके प्रतापसों सहिहौं जो पर के प्रताप पाद होय तौ पर जे शत्रु हैं तिनके प्रताप सहिहौं अर्थ शत्रुकृत दुःख सहिहौं २७ ॥

राम-विशेषकछंद ॥ धाम रहौ तुम लक्ष्मण राजकि सेव करौ। मातनि के सुनि तात सो दीरघ दुःख हरौ ॥ आइ भरत्थ कहाधौं करैं जिय भाय गुनौ। जो दुख देइँ तौ लै उरगौ यह बात सुनौ २८ लक्ष्मण-दोहा ॥ शासन मेटी जाय क्यों जीवन मेरे हाथ ॥ ऐसी कैसे बूझिये घर सेवक

वननाथ २६ द्रुतविलंबितछंद ॥ विपिनमारग राम विराजहीं । सुखद सुंदरि सोदर भ्राजहीं ॥ विविध श्रीफल सिद्धि मनो फल्यो । सकल साधन सिद्धिही लै चल्यो ३० दोहा ॥ राम चलत सबपुर चल्यो जहँ तहँ सहित उछाह ॥ मनो भगीरथ पथ चल्यो भागीरथी प्रवाह ३१ चंचलाछंद॥ रामचन्द्र धातेचले सुने जबै नृपाल । बात को कहै सुनै सो ह्वैगये महाबिहाल ॥ ब्रह्मरंध्र फोरि जीव यों मिल्यो विलोकि जाइ । गेह चूरि ज्यों चकोर चन्द्रमै मिलै उड़ाइ ३२ ॥

उरगौ कहे बितारो अथवा हे भाई ! जो भरत तुमको दुःख देहिं तौ लै कहे अंगीकार करिकै उरमें गुनौ अर्थ समय पाय ताको फल देवेके लिये समुझिराखौ गौ यह बात सुनौ अर्थ गौकी जो यह बात है सो सुनो २८ यामें या जनायो कि जो मैं इहां रहिवोऊकरों तौ जीव तुम्हारे संग जैहै २९ विपिन कहे वन भ्राजहीं कहे शोभहीं विविध कहे अनेकप्रकारकी श्रीफल कहे शोभाफलकी जो सिद्धि कहे वृद्धि है "सिद्धिःस्त्री योगनिष्पत्तिपादुका तर्द्धिवृद्धिषु इति मेदिनी" तासों फल्यो जो सिद्धि है सिद्धाति शेष सकल साधन कहे ध्यानादि औ सकलसिद्धिहि कहे अणिमादिकनको लैकै चल्यो है तौ जप योगते बड़ी शोभा को प्राप्त सिद्धरूप रामचन्द्र हैं सकलसाधक रूप लक्ष्मण हैं अष्टसिद्धिरूप सीता हैं औ कहूं सिद्धि मनो फल्यो पाठहै सो अर्थ खुल्यो है ३० उछाह जो आनद है तेहिते सब पुर चल्यो कहे सब पुरवासी चले तौ या जानो पुरी में उछाहहू रामही के साथ चलो गयो ३१ गेहु कहे पिंजरा ३२ ॥

चित्रपदाछंद ॥ रूपहि देखत मोहैं । ईश कहौ नर कोहैं॥ संभ्रमचित्त अरूझै । रामहिं यों सब बूझै ३३ चंचरीछंद ॥ कौन हौ कितते चले कित जातहौ केहि कामजू । कौन की दुहिता बहू कहि कौनकी यह वामजू ॥ एक गाउँ रहौ कि साजन मित्र बंधु बखानिये । देशके परदेशके किधौं पथकी

पहिंचानिये ३४ जगमोहनदडक ॥ किधौं यह राजपुत्री बरहीं बयो है किधौं उपधि बस्यो है यहि शोभा अभिरत हौ । किधौं रति रतिनाथ यश साथ केशौदास जात तपो- वन शिववैर सुमिरत हौ ॥ किधौं मुनि शापहत किधौं ब्रह्मदोषरत किधौं सिद्धियुत सिद्ध परमविरत हौ । किधौं कोऊ ठग हौ ठगोरी लीन्हें किधौं तुम हरिहर श्रीहौ शिवा चाहत फिरत हौ ३५ ॥

सब मगके प्राणी तिहुँनकी सुन्दरता देखिकै मोहत हैं सो मनमें कहत हैं कि हे ईश ! हे भगवन् ! ये को हैं या प्रकार संभ्रम में सबके चित्त अरुझत हैं तब रामही सों या प्रकार सब बूझैं कहे पूछत हैं सो आगे कहत हैं ३३ बहू पुत्रवधू साजन कहे स्वामी ३४ कि यह जो स्त्री है सो राजपुत्री है ताको बरहीं कहे जबरईसों बरयो है कहे बिवाह्यो है अथवा यह जो राजपुत्री है तेहीं माता पिता की आज्ञा मेटिकै अपनी इच्छासों तुमको जबरई बरयो है कि तुम याको उपधि कहे छलसों बरयो है "कपटोऽस्त्री व्याजदम्भोपधयः छद्मकैतवे इत्यमरः" ऐसी शोभासों अभिरत कहे युक्त हौ काहेतें कि जो तुमको तपस्वी जानि राजा अपनी इच्छासों विवाह देतो तौ तुम्हारे आश्रमपर्यंत आपने लोग सग करिदेतो सो नहीं है तासों यह जानि परत है कि ताही राजाके भयसों वनको भागे जात हौ इति भावार्थ यश संसार जीत्यो है ताको यशरूप लक्ष्मण हैं शिवजी नयन की आगिसों जारयो ता वैरको सुमिरत शिवके तपोवन को शिवसे लरिबको जातहौ अथवा शिवके वैरको सुमिरत हौ तासों तपोवन में तप करिबे को जातहौ जासों बड़ो तपकरि तपोबलसों शिवको जीतै कि सिद्धि तप सिद्धि अथवा मुक्ति तासों युक्त तुम परमविरत सिद्धहौ परमविरत कहि या जनायो कि संसारसों अतिविरक्त है अति बड़ो तप करयो है यासों देहधरि सिद्धि तुम्हारे संग संग फिरति है "सिद्धिस्तु मोक्षे निष्पत्तियोगयोरित्यभिधान- चिन्तामणिः" कि हरि औ हर औ श्रीलक्ष्मी हौ शिवा जी पार्वती हैं तिन्है चाहत कहे ढूंढ़त फिरत हौ ३५ ॥

मत्तमातगलीलाकरनदडक ॥ मेघ मंदाकिनी चारु सौदा-

मिनी रूपरूरे लसैं देहधारी मनो। भूरि भागीरथी भारती हंसजा अंशके हैं मनो भागभारे भनो॥ देवराजा लिये देवराती मनो पुत्रसयुक्त भूलोक में सोहिये। पक्षदूसंधि सध्या सधी है मनो लक्षिये स्वच्छ प्रत्यक्षही मोहिये ३६॥

मेघ औ मंदाकिनी आकाशगंगा औ सौदामिनी कहे बिजुली ये तीनों देहधारी मानो रूरेकहे सुदर रूप कहे वेषसों लसतहै अथवा रूरे कहे विमल जो रूपसौंदर्य है तेहि करिकै देहधारी लसै कहे शोभितहैं यासों या जनायो कि मेघादिक तीनों जब सुदरतासों मिलि कै रूप धरैं तब रामादिकन के रूपसम होइँ कि मानो भागीरथी गगा औ भारती सरस्वती जो हसजा यमुना तिनके जे हैं भूरि कहे सपूर्ण अश कहे भाग तिनहिन के भारे भाग कहे भाग्यभनो कहे कहियतहै अर्थ भागीरथी भारती हसजाके अंशनके बड़े भाग हैं जिन ऐसे सुंदररूप पाये हैं भागीरथी के पूर्णांशावतारूप लक्ष्मण हैं भारती के पूर्णांशावतारूप सीता हैं यमुनाके पूर्णांशावतारूप रामचन्द्र हैं देवराजको पुत्र जयंत औ की दूकहे दूना कृष्णपक्ष तिनकी सधि में स्वच्छ सध्या सधी है स्थित है जाको प्रत्यक्षही लक्षिये कहे दखियत है औ शोभासों मोहियत है कृष्ण पक्षरूप राम हैं शुक्लपक्षरूप लक्ष्मण हैं सध्यारूप सीता हैं अथवा दूनों जे पक्ष हैं तिनमें संधि कहे मध्य है तो शुक्लादि गणनासों दुवौपक्षन को मध्य पूर्णिमा है तो सधिपदते पूर्णिमा जानो याहू में पूर्णिमारूप सीता हैं दुवौ पक्षरूप राम लक्ष्मण हैं औ की तीनों सध्या परस्पर सधी हैं अर्थ कि एकत्र हैं प्रात सध्या रक्त है मध्याह्नसध्या शुक्ल है सायसध्या श्याम है यथा सायसध्यायां "पूर्वसध्या तु गायत्री रक्ताङ्गी रक्तवाससा॥ मध्याह्ने तु या सध्या श्वेताङ्गी श्वेतवाससा १ अपराह्णे तु या सध्या कृष्णाङ्गी कृष्ण वाससा" कतहू सगसध्यासधी या पाठ है तो दुवौ पक्षन के सग कहे साथ संध्यासधी है सो जानो ३६॥

अनगशेखरदंडक॥ तड़ाग नीरहीन ते सनीर होत केशौदास पुडरीक भुड भौंरमडलीन मडहीं। तमाल वल्लरी समेत सूखिसूखिकै रहे ते बाग फूलिफूलि कै समूल शूल खडहीं॥ चिते चकोरनी चकोर मोर मोरनी समेत हस ह-

सिनी समेत शारिका सबै पढ़ैं। जहीं जहीं विरामलेत रामजू तहीं तहीं अनेकभांति के अनेकभोग भागरों बढ़ै ३७ ॥

पुंडरीक कमल भागसों कहे भाग्यसों अथवा द्विगुण चतुर्गुणादि भाग कहे हींसा सों ३७ ॥

सुंदरीछंद ॥ घामको रामसमीप महाबल। सीतहि लागत है अति शीतल ॥ ज्यों घनसयुत दामिनि के तन। होत हैं पूषनके कर भूषन ३८ मारगकी रज तापित है अति। केशव सीतहि शीतल लागति ॥ प्योपद्पंकज ऊपर पांयनि। दै जो चलै तेहिते सुखदायनि ३९ दोहा ॥ प्रतिपुर औ प्रतिग्रामकी प्रतिनगरनकी नारि ॥ सीताजूको देखिकै वर्णन है सुखकारि ४० जगमोहनदंडक ॥ वासों मृगअंक कहैं तोसों मृगनयनी सब वह सुधाधर तुहू सुधाधर मानिये। वह द्विजराज तेरे द्विजराजिराजैं वह कलानिधि तुहू कलाकलित बखानिये ॥ रत्नाकरके हैं दोऊ केशव प्रकाशकर अंबर विलास कुवलयहित मानिये। वाके अतिशीत कर तुहूं सीता शीतकर चन्द्रमासी चन्द्रमुखी सब जग जानिये ४१ ॥

घामको जो महाबल कहे अति तेज है सो रामके समीप में सीता को अति शीतल लागत है जैसे घन जे मेघ हैं तिनते युक्त जो दामिनी बिजुली है ताके तन में पूषण जे सूर्य हैं तिनके कर किरण भूषण होत हैं सूर्यकी किरणें मेघनमें परती हैं तब इन्द्रधनुष होत है सोई दामिनी को भूषण सम है ३८ हेतु यह कि पृथ्वी की सीता पुत्री हैं रामचन्द्र जामातु हैं तासों पृथ्वी की रज तिनको सुख दियोई चहै तामें युक्ति यह कि पकऊपर पांउ धारिकै चलै तौ शीतलई लागत है ३९ । ४० या प्रकार कोऊ स्त्री सीता सों कहत हैं कि वह जो चन्द्रमा है जाको मृगअंक सब कहत हैं मृगा जो शशा है सो है अंकमें गोद में, मध्य इति जाके अथवा मृगको अंक कहे

चिह्न है जाके औ तोहूँको मृगनयनी कहत हैं औ वह सुधाधर है सुधा अमृतको धरे है औ तुहूँ सुधाधर है सुधासम हैं अधर ओष्ठ जाके औ वह द्विजराज कहावत है तरे द्विज जे दंत हैं तिनकी राजि कहे पंगति राजति है औ वह षोडशकलन को निधि है औ तुहूं अनेक जे नेत्र विक्षेपादि कला हैं अथवा चौसठिकला तिनसों कलित है औ वह रत्नाकर जो समुद्र है ताको प्रकाशकर कहे बढ़ावनहार है पूर्णमासी के चन्द्रमा के उदय सों समुद्र बाढ़त है प्रसिद्ध है औ तू भूषणन के रत्ननको जो आकर समूह है ताको प्रकाश शोभा करती है अर्थ तेरी छविसों भूषणन के रत्न शोभा पावत हैं औ चन्द्र को अबर आकाश में विलास है सीता को अबर वस्त्र में औ चन्द्रमा कुवलयको हित है औ सीता कुवलय कहे पृथ्वीमंडलको हित करे अतिप्रिय लागति है अर्थ सौंदर्यादिक गुण सो तामें ऐसे हैं जासों सबको प्रिय है औ वाके चन्द्रमा के अति शीत हैं कर कहे किरण औ हे सीता ! तुहूं शीतकर है जो तो को देखत हैं ताके लोचन शीतल होत हैं तौ जौन जौन चिह्न गुण चन्द्रमामों हैं ते तोहूं में हैं याते हे चन्द्रमुखी ! सब जग करिकै तोको चन्द्रमा सम जानियत है अर्थ सब जग तोको चन्द्रमासम जानत है ४१ ॥

अन्यच्च ॥ कलितकलङ्ककेतु केतुअरि सेतु गात भोग योग को अयोग रोगही को थलसों । पून्योई को पूरन पै प्रतिदिन दूनो दूनो क्षणक्षण क्षीण होत छीलरकी जल सों । चन्द्र सों जो बरणत रामचन्द्रकी दोहाई सोई मतिमन्द कविकेशव कुशलसों । सुंदर सुवास अरु कोमल अमलअति सीताजूको मुख सखि केवल कमलसों ४२ ॥

दूसरी सखी ताको मत खंडिकै आपनो मत कहति है कलंक को जो केतु कहे पताका है अर्थ पताका सम जाको कलङ्क प्रसिद्ध है औ केतुको अरि [illegible]
[illegible]
[illegible]

अथवा अंजलि को जल है तासम प्रतिदिन दूनों क्षीण होत हैं ४२ ॥

अन्यच्च ॥ एक कहैं अमल कमलमुख सीताजूको एक कहैं चन्द्रसम आनँद को कदरी । होइ जो कमल तौ रयनि में न सकुचैरी चन्द्र जो तौ बासर न होइ द्युति मदरी ॥ वासरही कमल रजनिहीमें चन्द्रमुख वासहू रजनि रवि राजै जग बदरी । देखे मुख भावै अनदेखेई कमल चंद तात मुख मुखै सखी कमलै न चदरी ४३ दोहा ॥ सीतानयन-चकोर सखि रविवंशी रघुनाथ ॥ रामचन्द्र सियकमलमुख भलो बन्यो है साथ ४४ विजयछंद ॥ बहु बाग तड़ाग तरंगानि तीर तमालकि छांह विलोकि भली । घटिका यक बैठतहैं सुखपाय बिछाय तहां कुशकाश थली ॥ मगको श्रम श्रीपति दूरि करैं सियको शुभवाकल अंचल सों । श्रम तेऊ हरैं तिनको कहि केशव चंचल चारु दृगंचल सों ४५ सोरठा ॥ श्रीरघुवर के इष्ट अश्रुवलित सीतानयन ॥ सांची करी अदृष्ट झूठी उपमा मीनकी ४६ ॥

तीसरी स्त्री दुवौको मत खंडि आपनो कहति हैं कमलचन्द्रकें देखेहू पर मुख भावत है औ कमलचन्द्र मुखके अनदेखेही भावत है जब या मुखको देखो तब कमलचन्द्रके देखिबेकी इच्छा नहीं होति जब उत्तम वस्तु देखो तब अनुत्तमवस्तु देखें अच्छी नहीं लागति है ४३ सूर्य को औ चकोर को औ चन्द्रको औ कमल को स्वाभाविक विरोध है सो इहां भलो कहे अद्भुत साथ बन्यो है ४४ दृगचल दृगकोर ४५ श्रीरघुवरके इष्ट कहे प्रिय अश्रु आनंदाश्रु करिकै वलित युक्त जे सीता के नयन हैं तिन मीनकी जो झूठी उपमा अदृष्ट रही है ताको सांचीकरी अर्थ मीन जलमें रहते हैं नयन जल में नहीं रहत समता में यह भेद रह्यो है सो आनदाश्रु जल में बूड़िकै सीता के नयन सांची करी ४६ ॥

दोहा ॥ मारग यों रघुनाथजू दुख सुख सबही देत ॥

चित्रकूट पर्वत गये सोदर सिया समेत ४७ ॥
इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्री-
रामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांरामस्य
चित्रकूटगमनन्नाम नवमःप्रकाशः ॥ ९ ॥

दर्शनसों सुख देत वियोग सों सुख देत ४७ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकी
प्रसादनिर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायां नवम प्रकाशः ॥ ९ ॥

दोहा ॥ यह प्रकाश दशमें कथा आवन भरत सुनाम ॥
राजमरण अरु तासु को बसिबो नंदीग्राम १ दोधकछंद ॥
आनी भरतपुरी अवलोकी । स्थावर जंगम जीव सशोकी ॥
भाट नहीं विरदावलि साजैं । कुंजर गाजैं दुंदुभि बाजैं २
राजसभा न विलोकिय कोऊ । शोक गहे तब सोदर दोऊ ॥
मंदिर मातु विलोकि अकेली । ज्यों बिन वृक्ष विराजत बेली ३
तोटकछंद ॥ तब दीरघ देखि प्रणाम कियो । उठि के उन
कंठ लगाइ लियो ॥ न पियो जल संभ्रम भूलि रहे । तब मातु
सों बात भरत्थ कहे ४ ॥

नाम कहि प्रसिद्ध १ । २ राजसभा मे कोऊ न देख्यो तब शोक को गहे
औ माता के मंदिर में जाइकै माता को अकेली देख्यो तब शोक गहे ३।४ ॥

विजयाछंद ॥ मातु कहां नृप तात गये सुरलोकहिं क्यों
सुत शोक लये । सुत कौन सुराम कहां हैं अबै वन लक्ष्मण
सीय समेत गये ॥ वन काज कहा कहि केवल मो सुख तोको
कहा सुख यामें भये । तुमको प्रभुता धिक तोको कहा अप-
राध विना सिगरेईहये ५ दोहा ॥ भर्तासुतविद्वेषिणी सबही
को दुखदाइ ॥ यह कहि देखे भरत तब कौशल्याके पाइ ६

तोटकछंद ॥ तब पांयन जाय भरत्थ परे । उन भेंटि उठाइ के अंक भरे ॥ शिरसूघि विलोकि बलाइ लई । सुत तोबिन या विपरीत भई ७ भरत—तारकछद ॥ सुनु मात भई यह बात अनैसी । जुकरी सुतभर्तृविनाशिनि जैसी ॥ यह बात भई अब जानत जाके । द्विजदोष परे सिगरे शिर ताके ८ जिनके रघुनाथ विरोध बसैजू । मठधारिन के तिन पाप असैजू ॥ रस राम रस्यो मन नाहिंन जाको । रण में नित होइ पराजय ताको ९ कौशल्या ॥ जाने सौंह करो तुम पुत्र सयाने । अति साधुचरित्र तुम्हैं हम जाने ॥ सबको सब काल सदा सुखदाई । जिय जानति हौं सुत ज्यों रघुराई १० चंचरी छंद ॥ हाइ हाइ जहां तहां सब ह्वैरही सिगरी पुरी । धाम धामनि सुंदरी प्रकटीं सबै जे हुतीं दुरी ॥ लैगये नृपनाथ को सब लोग श्रीसरयूतटी । राजपत्नि समेति पुत्रिनि विप्र लष्य गद्दीरटी ११ ॥

५ । ६ लघुको शिर सुंघिबो बड़ेनकी प्रीति रीति है रोग बलाइ लीबो स्त्रीनको प्रसिद्ध है ७ । ८ शिव आदि देवनके मठकी जे पूजा लेत हैं ते मठधारी कहावत हैं रस कहे प्रेम "शृङ्गारादौ विषे वीर्ये द्रवे रागे गुणे रसः इत्यमरः" रस्यो भीज्यो युक्त इति ९ । १० विप्रलाप जे हैं अनर्थ वचन अथवा कैकेयीप्रति विरोधवचन तिनकी गद्दी कहे समूह रटी कहत भये कि कैकेयिहीं के करत ऐसो विघ्न भयो तासों याको मुख देखिबो उचित नहीं है इत्यादि वचन सब कहत हैं "विप्रलापो विरोधोक्तावनर्थकवचस्यपि इत्यभिधानचिन्तामणिः" ११ ॥

सोमराजीछंद ॥ करी अग्नि अर्चा । मिटी प्रेतचर्चा ॥ सबै राजधानी । भई दीनबानी १२ कुमारललिताछंद ॥ क्रिया भरत कीनी । वियोगरसभीनी ॥ सजी गति नवीनी । मुकुंदपदलीनी १३ तोटकछंद ॥ पहिरे बकला सुजटा धरिकै ।

निज पांयनि पथ चले अरिकै॥ तरि गंग गये गुहसंगलिये। चित्रकूट विलोकत छॉडि दिये १४॥

जब भरत अग्नि सों अर्चा पूजा करी अर्थ चिता में अग्नि दियो तब प्रेतचर्चा मिटी अर्थ सब अयोध्यावासी परस्पर अनेक प्रेतवार्ता करत रहे ताको छोड़ि दीनवाणी भये अर्थ करुणास्वर करिकै रोये मरण समयमों औ दाहभूमि में लैजातमों औ दाह होतमों अधिक अधिकतर वियोग मानि रोइबे की रीति प्रसिद्ध है अथवा अग्नि करी कहे चिता में अग्नि दियो तबते अशुद्धिसों अर्चा कहे देवपूजा मिटी औ प्रेतचर्चा भई इतिशेषः १२ क्रिया षोडशी आदि भरत नीकी करत भये ताके बादि मुकुंद रामचन्द्रके वियोग-रसमें भीनी नवीनी गति कहे दशा वल्कल वसनादि सजी औ मुकुंदपद-लीनी कहे ज्ञान बुद्धि इति सजी अर्थ पिता की क्रिया पूर्ण करि रामचन्द्रके चरणन में मन लगायो गतिपद श्लेष है एकपक्ष दशा जानौ एकपक्ष बुद्धि जानौ "गति स्त्री मार्गदशायोर्ज्ञाने यात्राऽभ्युपाययोरितिमेदिनी" १३ अरिकै कहे हठ करिकै गंगा उतरिकै गुहको संग कहे ज्ञातिसमूह सूधी मार्ग बताइबे के लिये गये जब चित्रकूट देख्यो तब तिन्हैं छोड़ि दियो १४॥

मदनमोदकछंद॥ सबसारस हंस भये खग खेचर वारिद ज्यों बहु बारन गाजे। वनके नर वानर किन्नर बालक लैमृग ज्यों मृगनायक भाजे॥ तजि सिद्ध समाधिन केशव दीरघ दौरि दरीन में आसन साजे। भूतल भूधर हाले अचानक आइ भरत्तके दुंदुभि बाजे १५ दोहा॥ रामचन्द्र लक्ष्मण सहित शोभित सीतासंग॥ केशवदास सहास उठि चढे धरणिधर शृंग १६ लक्ष्मण—मोहनछंद॥ देखहु भरत्त चमूसजि आये। जानि अकेल हमको उठिधाये॥ हींसत हय बहुवारण गाजे। जहँ तहँ दीरघ दुंदुभि बाजे १७ तारकछंद॥ गजराजनि ऊपर पाखर सोहैं। अतिसुंदर शीशशिरो मन मोहैं॥ मनि घूंघुर घंटन के रव बाजैं। तड़िता युत मानहुँ वारिद गाजैं १८ विजयछंद॥ युद्धको आजु भरत्त चढे धुनि

दुदुभिकी दशहू दिशि धाई । प्रात चली चतुरग चमू बरणी सो न केशव कैसेहुँ जाई ॥ यों सबके तनत्राननिमें झलकी अरुणोदयकी अरुणाई । अन्तरते जनु रजनको रजपूतन की रज ऊपर आई १९ ॥

सारस हस औ और जे खग पक्षी हैं ते खेचर कहे आकाशगामी भये जैसे मृगनायक सिंह जौन ग्रीवादि अग पकरि पायो सोई अग गहि मृगको ले भाग्यो ताही प्रकार अति भयसों आपने आपने बालकन को लै किन्नरादि भागे १५ किन्नरादि की या दशा देखि हास्यपूर्वक कारण देखिबे को धरणिधर शृग में चढ़े १६ हींसत बोलत १७ पाखर झूल १८ रजनको क्षत्रधर्म में रञ्जित करिबे को मानौ रजपूतनकी रज रजोगुण रजपूती इति ऊपर कढ़िआये हैं १९ ॥

तोटकछंद ॥ उठिकै धरधूरि अकाश चली । बहु चंचल बाजि खुरीन दली ॥ भुव हालति जानि अकाशहिये । जनु थंभित ठौरनि ठौर किये २० तारकछद ॥ रण राजकुमार अरूझहिंगे जू । अतिसंमुख घायनि जूझहिंगे जू ॥ जनु ठौरनि ठौरनि भूमि नवीने। तिनके चढ़िबे कहँ मारग कीने २१ सीताजू–तोटकछद ॥ रहि पूरि विमाननि व्योमथली । तिन के जनु टारन धूरि चली ॥ परिपूरि अकाशहिं धूरि रही । सुगयो मिटि शूरप्रकाश सही २२ दोहा ॥ अपने कुलको कलह क्यों देखहिं रवि भगवंत ॥ यहै जानि अंतर कियो मानो मही अनत २३ तोटकछंद ॥ बहुतामहँ दीह पताक लसै। जनु धूममें अग्निकी ज्वाल बसै ॥ रसना किधौं काल करालघनी । किधौं मीचु नचै चहुँ ओर बनी २४ दोहा ॥ देखि भरतकी चलध्वजा धूरिन में सुख देत ॥ युद्धजुरन को मनहुँ प्रति योधन बोले लेत २५ लक्ष्मण–दंडकछंद ॥ मारि

डारौं अनुजसमेत यहि खेत आजु मेटि परौं दीरघवचन निज मुरको । सीतानाथ सीतासाथ बैठे देखि छत्रतर यहि सुख शोषों शोक सबहीके उरको ॥ केशवदास सविलास बीसबिस्वे वास होइ कैकेयी के अंगअग शोक पुत्रज्वर को । रघुराजजू को साज सकल छिड़ाइलेउँ भरतहिं आज राज देउँ यमपुरको २६ ॥

सै यक्के भयसों अथवा बालसों हालत जानिकै थंभित कहे थांभ खम्भा इति २० सन्मुख घाव जूझिकै वीर स्वर्गको जात हैं सो मानो राजकुमारन के स्वर्ग जाइवे को भूमिमाग कहे राह कीन्हे हैं २१ विमान आकाशगामी रथ "व्योमयान विमानोऽस्त्रीत्यमरः" २२ मही जो पृथ्वी है तेहि अनंत कहे अनेक अंतर कियो अनेक धूरिके तुग उठत हैं तेई अंतर व्यवधान हैं अथवा अनंत लक्ष्मण को सबोधन है २३ रसना जिह्वा २४ । २५ पुत्रज्वर कहे पुत्रमरण चौबीसयें प्रकाश में कह्यो है कि जरा जब आवै ज्वराकी सहेली तहां ज्वरा शब्द मृत्युको वाची है रघुराजजू की साज अर्थ गजरथादि राजसाज राज्य रामचन्द्रको है जाको लै ताके सब साज भरत सज हैं तिन्हें छड़ाइ रामचन्द्र में साजिकै राज्य में बैठारिये इत्यर्थः पिताने भरत को राजा कियो है तासों भरतको राज्यपद भ्रष्ट होइ तौ पिता को वचन निष्फल होइ या हेतु भरतको यमपुरको राज्य देउँ जामें रामचन्द्र सुचित्त है अयोध्या में राज्य करैं इति भावार्थः २६ ॥

दोहा ॥ एकराज में प्रकट जहँ द्वै प्रभु केशवदास ॥ तहां बसतहै रैनादिन मूरतिवत विनास २७ कुसुमविचित्राछंद ॥ तब सब सैना वहि थल राखी । मुनिजन लीन्हे संग अभिलाखी ॥ रघुपति के चरणन शिर नाये । उन हँसिकै गहि कंठ लगाये २८ भरत—दोधकछंद ॥ मातु सबै मिलिबे कहँ आईं । ज्यों सुतको सुरभी सुलवाईं ॥ लक्ष्मण सह उठिकै रघुराई । पांयन जायपरे दोउ भाई २९ मातनि कंठ उठाइ

लगाये । प्राण मनो मृत देहनि पाये ॥ आइमिलीं तब सीय सभागी । देवर सासुन के पगलागी ३० ॥

अभिलाषी जे मुनिजन हैं अथवा मुनिजन सग लीन्हें औ और रामदर्शन के अभिलाषी हैं तिन्हें लीन्हें रामचन्द्र के हँसिबेको हेतु लक्ष्मण के वचन हैं २७ । २८ थोरे दिनकी बियानी गाय लवाय कहावति है २९ भरत के वचन सुनिकै भरत शत्रुघ्न को सीताके पास राखि लक्ष्मण मातन के मिलिबे को आये ताके पीछे सीता जो सभागी हैं सोऊ देवर जे भरत शत्रुघ्न हैं तिनसहित सासुन को आइ मिलीं प्राप्त भईं औ सासुन के पद्लागीं ३० ॥

तोमरछंद ॥ तब पूछि यों रघुराइ । सुखहैं पिता तनमाइ ॥ तब पुत्रको मुख जोइ । क्रमते उठीं सब रोइ ३१ दोधकछंद ॥ आंसुन सों सब पर्वत धोये । जगम को जड़ जीव न रोये ॥ सिद्धवधू सिगरी सुनि आईं । राजवधू सबई समुझाईं ३२ मोहनछंद ॥ धरि चित्तधीर । गये गग तीर ॥ शुचि ह्वै शरीर । पितृ तर्पि नीर ३३ भरत—तारकछंद ॥ घरको चलिये अब श्रीरघुराई । जनहौ तुम राज सदा सुखदाई ॥ यह बात कही जलसों गलभीन्यो । उठि सोदर पाइँ परे तब तीन्यो ३४ श्रीराम—दोधकछंद ॥ राज दियो हमको वनरूरो । राज दियो तुमको अब पूरो ॥ सो हमहूं तुमहूं मिलि कीजे । बाप को बोलु न नेकहु छीजे ३५ दोहा ॥ राजाको अरु बापको वचन न मेटै कोइ ॥ जो न मानिये भरत तौ मारे को फल होइ ३६ भरत—स्वागताछंद ॥ मद्यपान रत स्त्रीजित होई । सन्निपातयुत बातुल जोई ॥ देखि देखि तिनको सब भागे । तासु बात हति पायन लागे ३७ ॥

रामवनगमन दशरथमरण भरतागमनादि कथा क्रमसों कहत सब रोवत भईं ३१ सिद्ध तपस्वी अथवा देवयोनि विशेष ३२ । ३३ भरत लक्ष्मण शत्रुघ्न तीनों पांयन परे कि घरको चलिबो उचित है ३४ रूरो

सुदर ३५ । ३६ स्त्रीजित कहे जो स्त्री करिकै जीतो गयो है अर्थ स्त्रीके वश्य है औ बातुल जो बहुत बातैं कहै ३७ ॥

ईशाईश जगदीश बखान्यो । वेदवाक्य बलते पहिंचान्यो॥ ताहि मेटि हठिकै रहिहौं तौ । गगतीर तनको तजिहौं तौ३८ दोहा ॥ मौन गही यह बात कहि छोंड़ो सबै विकल्प ॥ भरत जाइ भागीरथीनीर कस्यो संकल्प ३९ इंद्रवज्राछंद ॥ भागीरथीरूप अनूपकारी चंद्राननी लोचनकंजधारी ॥ बानी बखानी मुख तत्त्वशोध्यौं । रामानुजै आनि प्रबोधबोध्यो४० उपेंद्रवज्राछंद ॥ अनेक ब्रह्मादि न अंत पायो । अनेकधा वेदन गीत गायो ॥ तिन्हैं न रामानुज बंधु जानौ । सुनो सुधी केवल ब्रह्म मानौ ४१ निजेच्छया भूतल देहधारी । अधर्मसंहारक धर्मचारी ॥ चले दशग्रीवहिं मारिबेको । तपी व्रती केवल पारिबेको ४२ उठो हठी होहु न काज कीजे । कहैं कछू राम सो मानि लीजे ॥ अदोष तेरी सुत मातु सोहै । शोकौ न माया इनको न मोहै ४३ ॥

ईश जे विष्णु हैं और ईश जो महादेव हैं औ जगदीश जे ब्रह्मा हैं तिन यह बात बखान्यो है कि स्त्री जितादिकन के वचन मेटे सो पातक नहीं होत सो हम वेदवाक्य बलसों पहिंचान्यो है अर्थ वेद में लीन्यो देवके ऐसे वचन हैं ते हम सुन्यो है अथवा तीनों देवन बखान्यो है औ वेदवाक्य बलहूसों पहिचान्यो अर्थ वेदहू यहै कहत हैं ३८ विकल्प विचार भागीरथी मंदाकिनी ३९ तत्त्व कहे सारांश शोध्यो कहे ढूंढ्यो ता सारांशयुक्त मुखसों बाणी बखानी अथवा ऐसी बाणी बखानी जामें तत्त्व जो राम कथा तत्त्व है ताकरिकै अपने मुखको [illegible] रामानुज जे भरत हैं तिनको प्रबोध कहे उत्तमज्ञान आनि [illegible] बोध्यो बोध करयो बोध्योपद कहि या जनायो कि रामचन्द्र भ्रातिवधु [illegible]रूपी निशामें सोवत रहैं तामें जगायो४० । ४१ । ४२ सुन भरतको सबोधन दै शास्त्रों या

जनायो कि इनकी मायामें मैं मोहिकै तुम्हारी मातै इनको वनगमन चाह्यो ४३॥

दोहा ॥ यह कहिकै भागीरथी केशव भई अदृष्ट ॥ भरत कह्यो तब रामसों देहु पादुका इष्ट ४४ उपेंद्रवज्राछंद ॥ चले बली पावन पादुका लै । प्रदक्षिणा रामसियाहु को दै ॥ गये ते नदीपुर वास कीनो । सबंधु श्रीरामहिं चित्त दीनो ४५ दोहा ॥ केशव भरतहिं आदिदै सकल नगरके लोग ॥ वन समान घरघर बसे सकल विगत सभोग ४६ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्री-
रामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांभरतस्य
चित्रकूटागमनंनाम दशमः प्रकाशः ॥ १० ॥

पादुकारूपी इष्ट कहे स्वामी देहु आशय यह कि राज्य पर स्वामी चाहिये ४४ । ४५ । ४६ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद
निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकाया दशमःप्रकाशः ॥ १० ॥

दोहा ॥ एकादशै प्रकाशमें पंचवटीको वास ॥ सूर्पणखा के रूपको रघुपति करिहैं नास १ भरतोद्धताछंद ॥ चित्र-कूट तब रामजू तज्यो । जाइ यज्ञथल अत्रिको भज्यो ॥ राम लक्ष्मण समेत देखियो । आपनो सफल जन्म लेखियो २ चन्द्रवर्त्मछंद ॥ स्नान दान तप जाप जो करियो । शोधि शोधि मन जो उरधरियो ॥ योग याग हम जालगि गहियो । रामचन्द्र सबको फल लहियो ३ वंशस्थाछंद ॥ अनेकधा पूजन अत्रिजू कस्यो । कृपालु ह्वै श्रीरघुनाथजू धस्यो ॥ पति-व्रता देवि महर्षिकी जहां । सुबुद्धि सीता सुखदा गई तहां ४ दोहा ॥ पतिव्रतनकी देवजा अनसूया शुभगाथ ॥ सीताजू अवलोकियो जरा सखीके साथ ५ चतुष्पदीछंद ॥ शिर श्वेत

विराजैं कीरति राजैं जनु केशव तपबलकी। तनबलितपलित जनु सकल वासना निकरिगई थलथलकी॥ कांपति शुभग्रीवा सब अँग सीवा देखत चित्त भुलाहीं। जनु अपने मन प्रति यह उपदेशति या जगमें कछु नाहीं ६ प्रमिताक्षरा छंद॥ हरवाइ जाइ सिय पॉयपरी। ऋषिनारि सूंघि शिर गोद धरी॥ बहुअग राग अँग अगरये। बहुभांति ताहि उपदेश दये ७ स्रग्विणीछंद॥ राम आगे चले मध्य सीता चली। बधु पाछे भये सामसोमे भली॥ देखि देही सबै कोटिधाके भनो। जीव जीवेश के बीच माया मनौं ८॥

१ भज्यो कहे प्राप्त भये २ मनको शोधि शोधि शुद्ध करि करि गुनकी जो उर बिषे धरयो है अर्थ तुम्हारो ध्यान करया है अथवा मनहीको शुद्ध करिकै जो उरमें धारण करयो अर्थ मन की जो चचलता है ताहि छोड़ाइ अपने वश्य करयो है सो हे रामचन्द्र! ताको सब को फल जो तुम्हारो दर्शन है ताको पायो ३। ४ जरा कहे बुढ़ाईरूपी जो सखी है ताके साथ देख्यो ५ तन बलित कहे युक्त है पालित कहे ढिलाईसों अर्थ दृद्धता सों त्वचामें सिकुरा परिगये हैं सो मानों थलथलकी अंग अंगकी वासना विषयवासना निकलगई है ताहीते अग सिकुरिगये हैं सीवा मर्यादा६ हरवाइ कहे हरबराइ के ७ भनो कह्या जीवेश ईश्वर ८॥

मालतीछंद॥ विपिन विराध बलिष्ठ देखियो। नृपतनया भयभीत लेखियो॥ तब रघुनाथ बाणकै हयो। निज निर्वाण पथको ठयो ९ दोहा॥ रघुनायक शायक धरे सकललोक शिरमौर॥ गये कृपाकरि भक्तिवश ऋषि अगस्त्यके ठौर १० वसंततिलकाछंद॥ श्रीराम लक्ष्मण अगस्त्य सनारि देख्यो। स्वाहासमेत शुभ पावकरूप लेख्यो॥ साष्टांग क्षिप्र अभिनंदन जाइ कीन्हो। सानद आशिष अशेष ऋषीश दीन्हो ११ बैठारि आसन सबै अभिलाप पूजे। सीतासमेत

रघुनाथ सबधु पूजे ॥ जाके निमित्त हम यज्ञयज्यो सो पायो। ब्रह्मांडमडनस्वरूप जो वेद गायो १२ ॥

निर्वाण जो मोक्ष है ताके पथ कहे राहमें ठयो कहे युक्त करचा अर्थ मुक्ति दियाः९ सकललोकशिरमौर जे रघुनाथ हैं ते शायक जे बाण हैं तिनको धरे अगस्त्य के ठौरमें गये अथवा रघुनायक भक्तिके वश कृपा करिकै अगस्त्यके ठौर गये तहा सकललोकशिरमौर ज अपने शायक हैं तिन्हैं धरे धारण करचा विष्णु के धनुर्बाण अगस्त्यके यहा धरेरहे हैं ते रामचन्द्र को अगस्त्य दियो है यह कथा वाल्मीकीय रामायण में है अथवा सकललोकशिरमौर जो विष्णु हैं तिन के शायक धरे धारण करचो अथवा रघुनायकके सकललोकशिरमौर शायक अगस्त्यके ठौर धरे हैं ता लिये औ भक्तिवश कृपाकरि अगस्त्यके ठौर गये १० स्वाहा अग्निकी स्त्री ११ सबै आपने अभिलाष पूजे पूरण करे ब्रह्मांडको मडन भूषण जो यह रावरो स्वरूप है ताहीके मिलिवेके लिये हम यज्ञ यज्या होम्यो करचो इति सो यह स्वरूप पायो १२ ॥

पद्धटिकाछद ॥ ब्रह्मादिदेव जब विनय कीन। तट क्षीरसिंधुके परमदीन ॥ तुम कह्यो देव अवतरहु जाइ। सुत हौं दशरथको होतु आइ १३ हम तबते मन आनद मानि। मन चितवत तव आगमन जानि ॥ ह्यां रहिजे करिजे देवकाज। मम फूलि फल्यो तपवृक्ष आज १४ श्रीराम–पृथ्वीछद ॥ अगस्त्य ऋषिराजजू वचन एक मेरो सुनौ। प्रशस्त सब भांति भूतल सुदेश जीमें गुनौ ॥ सनीरतरुषडमंडित समृद्धशोभा धरैं। तहां हम निवासको विमलपर्णशाला करैं१५ अगस्त्य–पद्मावतीछद ॥ यद्यपि जगकर्ता पालक हर्ता परिपूरण वेदन गाये। अति तदपि कृपाकरि मानुषवपु धरि थल पूंछन हमसों आये ॥ सुनि सुरवरनायक राक्षसघायक रक्षहु मुनिजन यश लीजे। शुभ गोदावरितट विशद पच-

वट पर्णकुटी तहँ प्रभु कीजै १६ दोहा ॥ केशव कहे अगस्त्यके पंचवटीके तीर ॥ पर्णकुटी पावन करी रामचन्द्र रणधीर १७ त्रिभंगीछंद ॥ फलफूलनपूरे तरुवररूरे कोकिलकुल कलरव बोलैं। अतिमत्तमयूरी पियरसपूरी वनवनप्रति नाचति डोलैं॥ सारो शुक पंडित गुणगणमंडित भावनि में निज अरथ बखानैं । देखहु रघुनायक सीयसहायक मनहुँ मदन रति मधु जानैं १८ ॥

१३ तव कहे तुम्हारो १४ प्रशस्त नीको सुदेश सम उच्चनीचरहितेति सनीर सजल औ तरु जे वृक्ष हैं तिनको जो षंड समूह है तासों मंडित युक्त औ समृद्ध कहे वर्धमान अधिक इति शोभाको धरैं धारण करे होहँ निवासको कहे बसिवेको १५ । १६ । १७ रामचन्द्रके आगमनसों दंडकारण्यमें रूरे कहे सुंदर जे तरु वृक्ष हैं ते फल औ फूलनसों पूरे युक्त भये अथवा रूरे जे फल औ फूल हैं तिन सों तरुवर पूरे औ कोकिलके जे कुलजाति समूह हैं त कल कहे अव्यक्त मधुररव शब्दको बोलत हैं "काकली तु कले सूक्ष्मे ध्वनौ तु मधुरास्फुटे ॥ कलो मन्द्रस्तु गंभीरे तारोत्युच्चैस्त्रय स्त्रिषु इत्यमरः" औ अतिमत्त जे मयूरी हैं ते पिय जे मयूर हैं तिनके रसमें प्रेममें पूरी वन वन प्रति नाचत डोलती हैं अर्थ जहां जहां मोर नाचत हैं तहां तहां संग मयूरी डोलती हैं औ सारो सारिका औ शुक जे गुण गणसों मंडित पंडित प्रवीण हैं अर्थ अनेक गुणनमें पंडित हैं ते भावनिमें कहे अनेक भाव अभिप्राययुक्त गानके अर्थको बखानत हैं अथवा नृत्यके जे अनेक भाव चेष्टा हैं तिनमें अर्थको बखानत हैं जब जैसी चेष्टा देखत हैं तब तैसो अर्थ के प्रयोजनको बखान करत हैं तामें तर्क करत हैं कि रघुनायक रामचन्द्र औ सीता औ सहायक जे लक्ष्मण हैं तिनको इन वृक्षादिकन देख्यो है सो मानों मदन काम और रति सहित मधु वसंत जानत हैं तौ

[illegible]

हैं औ गिरे जे पुष्प हैं तेई पुष्प बिछावने हैं कोकिल गावत हैं मोर नाचत हैं सारो शुक बखान करत हैं वेश्यादि नृत्यकारिनहू में बखानकर्ता एक रहत है १८॥

लक्ष्मण–सवैया॥ सब जाति फटी दुखकी दुपटी कपटी न रहै जहँ एक घटी। निघटी रुचि मीचघटी हु घटी जग जीव यतीनकी छूटी तटी॥ अघओघकी बेरी कटी बिकटी निकटी प्रगटी गुरुज्ञानगटी। चहुँओरन नाचति मुक्ति नटी गुण धूरजटी वनपंचवटी १६॥

दुपटी द्वैपाटके ओढ़िबेको वस्त्र सो जहाँ जा पंचवटीके निकट सब फाटि-जाति है नेकहू नहीं रहति अर्थ सब दुःख जहाँ नशिजात हैं औ कपटी जीव जहाँ एक घड़ी नहीं रहत यासों या जनायो कि जहाँ जातही कपटी को कपट दूरि होत है औ जाकी शोभा निरखि जगके जे यती तपस्वी जीव हैं तिनकी तटी कहे ध्यान स्थिति सो छुटी औ मीचकी रुचि घटीहू घटी कहे घरीघरी में निघटी घटतभई अर्थ यती जीवनको मरेते मुक्ति होति है परंतु जा स्थानकी शोभा निरखि मुक्तिहूकी इच्छा नहीं करत अघ पाप ओघ समूह बेरी बंधन जंजीर सो ऐसी जो पचवटी है सो धूर्जटी जो महादेव हैं तिनके गुणनसों जटी कहे युक्त है येई दुःखनाशनादिगुण महादेवहू मों हैं अथवा ये जे दुःखनाशनादि गुण हैं तिनसों औ धूर्जटी जे महादेव हैं तिनसों जटी कहे युक्त है पचवटी १६॥

हाकलिकाछंद। शोभित दंडककी रुचि बनी। भांतिन भांतिन सुंदर घनी॥ सेव बड़े नृपकी जनु लसै। श्रीफल भूरिभाव जहँ बसै २० बेरभयानकसी अतिलगै। अर्क समूह जहाँ जगमगै॥ नैननको बहुरूपन ग्रसै। श्रीहरिकी जनु मूरतिलसै २१॥

दंडकनाम राजा रहे हैं तिनको राज्य शुक्रके शापसों वन ह्वैगयो है तासों दंडकारण्य कहावत है रुचि शोभा श्रीफल बेल औ लक्ष्मीको फल बड़े राजा की सेवा में बहुत द्रव्य पाइयत है २० भयानक बेर प्रलयकाल अर्क मदार

जे तरंग हैं तिनके जे तुंग समूह हैं तिनकी जे अवली पांती हैं तिनकी चारु कहे अच्छी भाति संचारिणी चलावनहारी है अर्थ अनेक तरगैं उठायो करति है अथवा तरग तुंगावलिन करिकै चारु सचारिणी चलनहारी है अलि भ्रमरयुक्त जे कमल हैं तिनके सौगंध सुगंध करिकै लीला है मनो हारिणी जाकी औ अलियुक्त कमलन करिकै बहुनयन जे देवेश इंद्र हैं तिनकी शोभा की मानों धारिणी धारणकर्त्री है इन्द्रके सहस्र नेत्र हैं इहां नेत्रसदृश अलियुक्त कमल हैं २४ ॥

दोधकछंद ॥ रीति मनों अविवेक कि थापी। साधुन की गति पावत पापी ॥ कजजकी मति सी बड़भागी। श्रीहरि मंदिर सों अनुरागी २५ अमृतगतिछंद ॥ निपट पतिव्रत धरणी। जगजनके दुखहरणी ॥ निगम सदा गति सुनिये। अगति महापति गुनिये २६ ॥

कजज ब्रह्माकी मतिहूको अनुराग हरिमंदिर वैकुंठ में है औ गोदावरीहू को है काहेतें जो कोऊ स्नान करत हैं ताको आपनो जानि वैकुंठ पठावति है २५ यामें विरोधाभास है सदापति जो समुद्र है तामें लीन रहति है तासों निपट पतिव्रत धरणी कह्यो विरोध पक्ष में दुःख काम पीड़ा अवरोध में पापजनित दुःखदरिद्रादि निगम जो वेद हैं तिनमें सदागति कहे सदा है गति मुक्ति जासों ऐसी सुनियत है अर्थ जो कोऊ स्नान करत हैं ताको मुक्ति देति है औ पति जो समुद्र है ताहीको अगति सुनियत है अर्थ ताको गति मुक्ति नहीं देति यह विरोधार्थ है अविरोधहूकी अगति गमनरहित समुद्रको जल बहत नहीं २६ ॥

दोहा ॥ विषमै यह गोदावरी अमृतन को फल देति ॥ केशवजीवनहार को दुख अशेष हरिलेति २७ त्रिभंगीछंद ॥ जब जब धरि बीना प्रकट प्रवीना बहुगुणलीना सुखसीता। पिय जियहि रिझावै दुखनि भजावै विविध बजावै गुण-गीता ॥ तजि मति संसारी विपिन विहारी दुख सुखकारी

घिरि आवै । तब तब जगभूषण रिपुकुलदूषण सबको भूषण पहिरावै २८ तोटकछंद ॥ कबरी कुसुमालि शिखीन दई । गजकुम्भनि हारनि शोभमई ॥ मुकुता शुकसारिकनाक रचे । कटिकेहरि किंकिणि शोभसचे २९ दुलरी कलकोकिल कंठ बनी । मृगखंजन अंजनभांति ठनी ॥ नृपहंसनि नूपुर शोभभिरी । कलहंसनि कंठनि कंठसिरी ॥ ३० ॥

याहू में विरोधाभास है विषमै कहे जलमय "विष तु गरले तोये इति मेदिनी" औ जैसे अमृत अमर करत है तैसे याहू पुरुषै अमर करति है विरोधपक्ष में जीवन जीव अविरोधमें जल दुःख प्यास दुःख अथवा विषमै कहे टेढ़ी है अमृत जे देवता हैं तिनके फलको देति है अर्थ शुद्धगतिको देति है औ जीवनहार जे यमराज हैं तिनकी दुख कहे तिनकृत दुख यमयातना इति ताको अशेष कहे संपूर्ण हरिलेति हैं २७ सुख कहे सुखसों गुणगीता रामचन्द्रकी गुणगीता दुःखकारी व्याघ्रादि सुखकारी कोकिलादि जे विपिन-विहारी कहे वनविहारी हैं ते ससारी मति कहे भेदमय मतिको तजिकै मनुष्य के समीप में वन जीवन को आपही सों आइबो आश्चर्य है सो आवत हैं याही संसारी मतिको त्याग जानो २८ तीनि छंदन में एक वाक्यता है शिखी मोर कबरी कहे केशपाश २९ नृपहंस राजहंस ३० ॥

मुखवासनिवासित कीन तबै । तृण गुल्म लता तरु शूल सबै ॥ जलहू थलहू यहि रीति रमैं । वनजीव जहाँ तहँ संग भ्रमैं ३१ दोहा ॥ सहज सुगंध शरीरकी दिशि विदिशन अव-गाहि ॥ दूती ज्यों आई लिये केशव शूर्पणखाहि ३२ मर-हट्टाछंद ॥ एकदिन रघुनायक सीयसहायक रतिनायक अनु-हारि । शुभ गोदावरितट विमलपंचवटि बैठेहुते मुरारि ॥ छवि देखतहीं मन मदन मथ्यो तन शूर्पणखा तेहि काल । अतिसुंदर तन करि कछु धीरज धरि बोली वचनरसाल ३३॥

मुखवास न कहे मुखके सुगंधनसों तृण कुशादि गुल्मगुलाब आदि लता

लवंगादि तरु आम्रादि औ याही रीतिसों अर्थ जैसे सीताजूके गावतमें रमत हैं तैसे ही सौंदर्यादिहूके वश है रामचन्द्र के समीपमें जलजीव हसादि औ जलजीव मयूरादि जे वनजीव कहे दण्डकारण्य के जीव हैं ते रमत हैं औ जहां तहां रामचन्द्रके सग भ्रमत हैं अर्थ जहां रामचन्द्र जात हैं तहा सग सग भ्रमत फिरत हैं तीनहूं छदनमें युक्ति यह कि जा जीवको जो अग बरयों है ताके ही अपने पहिरायो अथवा जाके जा अंग में रामचन्द्र जो भूषण पहिरायो ताको तौन अग सुंदरताको भास है वर्णभयो औ काहू काहू जीव के अब पर्यंत ताको चिह्न बन्यो है ३१ जैसे दूती ढूंढ़िकै स्त्री को पुरुष के पास लैजाति है तैसे रामचन्द्रके शरीर की जो सहजस्वाभाविक सुगंध है सो दिशि विदिशन में अवगाहिकै ढूंढ़िकै शूर्पणखा को रामचन्द्र के पास ल्याई रामचन्द्र के अगन को सहज सुगध जो वनमें वायु योग सों फैलि रह्यो है ताको आघ्राणकै ताके अनुसार शूर्पणखा रामचन्द्र के पास आई इति भावार्थ ३२ । ३३ ॥

शूर्पणखा—सवैया ॥ किन्नर हौ नररूप विचक्षण पच्छ कि स्वच्छशरीरनि सोहौ । चित्त चकोरके चंद किधौं मृगलोचन चारु विमाननि रोहौ ॥ अंग धरे कि अनंगहौ केशव अंगी अनेकनके मन मोहौ ॥ वीर जटान धरे धनु बान लिये वनिता वनमें तुम कोहौ ३४ राम—मनोरमाछंद ॥ हम हैं दशरत्थ महीपतिके सुत । शुभ राम सुलक्ष्मण नामन संयुत ॥ यह शासनदै पठये नृप कानन । मुनि पालहु मारहु राक्षसके गन ३५ शूर्पणखा ॥ नृप रावणकी भगिनी गनि मोकह । जिनकी ठकुराइति तीनहु लोकह ॥ सुनियै दुखमोचन पंकजलोचन । अब मोहिं करौ पतनी मनरोचन ३६ तोमरछंद ॥ तब यों कह्यो हँसि राम । अब मोहिं जानि सवाम ॥ तिय जाय लक्ष्मण देखि । समरूपयौवन लेखि ३७ शूर्पणखा—दोधकछंद ॥ रामसहोदर मोतन देखो । रावणकी भगिनी जिय लेखो ॥ राजकुमार रमौ सँग मेरे । होहिं सबै

सुखसंपति तेरे ३८ लक्ष्मण ॥ वै प्रभु हौं जन जानि सदाई । दास भये, महँ कौनि बड़ाई ॥ जो भजिये प्रभु तो प्रभुताई । दास भये उपहास सदाई ३९ ॥

विचक्षण प्रवीण चित्तरूपी जो चकोर है ताके चन्द्रमाही जैसे चन्द्रमा चकोर को सुख देत है तैसे तुम चित्तको सुख देतहौ चन्द्रमा मृगनके विमान रथको रोहत है अर्थ चढ़त है तुम मृगरूपी जे लोचन हैं तिनहीं के विमाननको रोहतहौ अर्थ जो तुमको कोऊ देखत है ताके नयननमें ऐसे बसिजात हौ कि उतरत नहीं ३४ शासन आज्ञा ३५ हे मनरोचन ! अर्थ मेरे मनको तुम अति रुचतहौ ३६ अपने रूप औ यौवनके संग इन्हैं लेखि कहे जानु अर्थ जैसो रूप यौवन तेरो है तैसो इनहूंको है ३७ । ३८ सदाई जनहौं कहि या जनायो कि कबहू प्रभुता हैबेकी आशा नहीं है ३९ ॥

मल्लिकाछद ॥ हासके विलास जानि । दीह मान खंड मानि ॥ भक्षिबेको चित्त चाहि । सामुहे भई सियाहि ४० तोमरछंद ॥ तब रामचन्द्र प्रबीन । हँसि बंधु त्यों हगदीन ॥ गुनि दुष्टता सहलीन । श्रुतिनासिका बिनु कीन ४१ दोहा ॥ शोणछिंछि छूटत वदन भीम भई तिहि काल ॥ मानो कृत्या कुटिलयुत पावकज्वाल कराल ४२ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां शूर्पणखाश्रवणनासिकाछेदननामैकादश प्रकाश ॥ ११ ॥

जब जान्यो कि ये मोसों रमिहैं नहीं केवल मोसों हासके विलास उपहास करत हैं तब दीह कहे बड़ो आपनो मानखण्ड कहे अपमान मानि कै ४० । ४१ कराल पावकज्वाल सों युत है वदन जाको ऐसी मानों कृत्यानामा देवी है " कृत्या क्रियादेवतयोरिति मेदिनी " ४२ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायारामभक्तिप्रकाशिकायामेकादश प्रकाश ॥ ११ ॥

दोहा ॥ या द्वादशे प्रकाश खरदूषण त्रिशिरा नास ॥
सीताहरण विलाप सुग्रीवमिलन हरित्रास १ ॥

त्रास जो भय है ताको हरिकै सुग्रीवको मिलन है अर्थ बालिको वध निश्चय करि सुग्रीवको त्रास हरि रामचन्द्र मित्रता करिहैं १ ॥

तोटकछंद ॥ गइ शूर्पणखा खरदूषण पै । सजि ल्याइ तिन्हैं जगभूषण पै ॥ शर एक अनेकते दूरि किये । रविके कर ज्यों तमपुंज पिये २ मनोरमाछद ॥ वृषके खरदूषण ज्यों खरदूषण । तब दूरि किये रविके कुलपूषण ॥ गदशत्रु त्रिदोष ज्यों दूरि करै वर । त्रिशिराशिर त्यों रघुनंदनके शर ३ भजि शूर्पणखा गइ रावण पै तब । त्रिशिराखरदूषणनाश कहे सब ॥ तब शूर्पणखा मुखबात सबै सुनि । उठि रावणगो जहँ मारिच हो मुनि ४ दोधकछद ॥ रावण बात कही सिगरी त्यों । शूर्पणखाहिं विरूप करी ज्यों ॥ एक सुराम अनेक सँ-हारे । दूषण स्यो त्रिशिराखर मारे ५ तू अब होहि सहायक मेरो । हौं बहुतै गुण मानहुँ तेरो ॥ जो हरि सीतहि ल्यावन पैहे । वै भ्रमि शोकनही मरिजैहे ६ मारीच ॥ रामहिं मानुषकै जनि जानो । पूरण चौदहलोक बखानो ॥ जाहु जहां तियलै सुन देखो । हौं हरिको जलहूं थल लेखो ७ ॥

रामचन्द्र की आज्ञा सों लक्ष्मण सीता को लैके गुफामें राख्योहै यह कथा शेष जानों २ वृषराशि के रवि सूर्य खर कहे तृण के दूषण होत हैं सुखाइ डारत हैं तैसे ,रविके कुलके पूषण जे रामचन्द्र हैं तिन खर औ दूषणनाम राक्षसन को दूरि कियो कहे मास्यो औ गदशत्रु जो वैद्य है सो जैसे त्रिदोष कहे कफ पित्त वात तीनोंको दोष एकही बार दूरि करत है तैसे रघुनदन केशर त्रिशिरा शिरको एकहीबार दूरिकर्‌यो ३ । ४ स्यो कहे सहित ५ सीताको रुदन भूतलग भ्रमि कहे घूमिकै अथवा संदेह को प्राप्त हैकै ६ चौदहौं लोक में पूर्ण कहे व्याप्त ७ ॥

रावण–सुंदरीछंद ॥ तू अब मोहिं सिखावत है शठ। मैं वश जग्त कियो हठही हठ ॥ वेगि चलै अब देहि न ऊतर। देव सबै जन एक नहीं हर ८ दोहा ॥ याचि चल्यो मारीच मन रणमहँ दुहँविधि आसु ॥ रावणके कर नरकहैं हरिकर हरिपुरबासु ९ राम–सुंदरीछंद ॥ राजसुता इक मंत्र सुनो अब। चाहतहौं भुवभार हस्यो सब ॥ पावकमें निज देहहिं राखहु। छाय शरीर मृगै अभिलाषहु १० चामरछंद ॥ आइयो कुरंग एक चारु हेमहीरको। जानकी समेत चित्त मोह्यो रामवीरको ॥ राजपुत्रिका समीप साधु बंधु राखिकै। हाथ चाप बाण लै गये गिरीश नांघिकै ११ दोहा ॥ रघुनायक जबहीं हन्यो शायक शठ मारीच ॥ हा लक्ष्मण यह कहि गिरेउ श्रीपतिके स्वर नीच १२ निशिपालिकाछंद ॥ राजतनया तबहिं बोल सुनि यों कह्यो। जाहु चलि देवर न जात हम पै रह्यो ॥ हेममृग होहि नहिं रैनिचर जानिये। दीनस्वर राम केहिभांति मुख आनिये १३ ॥

एक हर महादेवको छोड़िकै और सब देवता मेरे जनकहे सेवक हैं ८ आशु कहे जल्दी ९ छाया शरीरसों मृगै कहे चलिबे को अभिलाष करौ अर्थ छाया शरीर आलम्ब्य रहौ अथवा छायाशरीर सों या सुवर्णमृगको अभिलाषौ १० हेमसुवर्ण औ हीरनको कुरंग हरिण बनि मारीच आयो ११ जैसो रामचन्द्रको स्वर कहे शब्द है ताही स्वरसों हा लक्ष्मण ! यह कहिकै गिस्यो नीच मारीच को विशेषण है १२ यह कोऊ राक्षस है हरिणको रूप धरिकै आयो है ताने रामचन्द्र को मारचो तासों हा लक्ष्मण ऐसो दीनस्वर रामचन्द्र कह्यो इति भावः १३ ॥

लक्ष्मण ॥ शोच अतिपोच उर मोच दुखदानिये। मात बात अवदात मम मानिये ॥ रैनिचर छद्म बहुभांति

अभिलाषहीं । दीनस्वर राम कबहू न मुखभाषहीं १४ चचलाछंद ॥ पक्षिराज यक्षराज प्रेतराज यातुधान । देवता अदेवता नृदेवता जितेजहान ॥ पर्वतारि अर्बखर्बशर्ब सर्वथा बखानि । कोटि कोटि सूर चन्द्र रामचन्द्रदास मानि १५ चामरछंद ॥ राजपुत्रिका कह्यो सो औरको कहै सुनै । कान मूंदि बारबार शीश बीसधा धुनै ॥ चापकीर रेखखांचि देव साखिदै चले । नांघिहैं ते भस्म होहिं जीव जे बुरे भले १६ ॥

अतिपोच कहे निषिद्ध जो दुखदानि शोच है ताको उरसों मोच कहे त्याग करो छल कपट १४ पक्षिराज गरुड़ यक्षराज कुबेर प्रेतराज यमराज यातुधान राक्षस देवता औ अदेवता दैत्य नृदेवता राजा औ पर्वतारि इन्द्र ते ये सब अर्ब खर्ब सख्या परिमित औ अर्ब खर्ब शर्ब कहे महादेव अर्ब खर्बको संबध शर्ब पदहू मोहै तिन्हैं सर्वथा कहे सब प्रकार बखानि कहे कहौ औ कोटि सूर्य औ चन्द्रमा हैं तिन सब को रामचन्द्र के दास कहे सेवक मानो रामचन्द्रके मारिबे लायक ये कोऊ नहीं हैं इति भावार्थः १५ लक्ष्मण को राजपुत्रिका ने जे कटुवचन कहे तिन्हैं और कौन कहै औ कौन सुनै अर्थ अति कटुवचन कहे जे काहू के कहिबे सुनिबे लायक नहीं हैं औ जो थोरो सुनिबोहू करै तौ जामें आगे और ना सुनि परै तालिये कान मूँदि के बिनसुने वचनन के शोक सों बीसधा अर्थ अनेक प्रकार सों शीशधुनै अथवा सीताही कान मूँदिकै शीश धुनतभई कान मूँदिबे को हेतु यह जामें लक्ष्मण के ये बोधवचन न सुनिपरैं तौ लक्ष्मण बातैं ना कहैं रामचन्द्र के पास जाइँ अथवा जामें कटुवचन ना सुनिपरैं तालिये लक्ष्मणाही कानन को मूँदिकै बार बार शीश धुनत भये १६ ॥

छिद्रताकि क्षुद्रराज लङ्कनाथ आइयो । भिक्षु जानि जान कीसि भीखको बुलाइयो ॥ शोचपोच मोचकै सकोच भीम वेखको । अतरिक्षही करी ज्यों राहु चंद्ररेखको १७ दंडक ॥ धूमपुरके निकेत मानों धूमकेतुकी शिखा की धूम योनिमध्य रेखा सुधाधामकी । चित्रकीसी पुत्रिका की रूरे बयरूरे माहँ

शबर छोड़ाइ लई कामिनि की कामकी ॥ पाखडकी श्रद्धा की मठेशवश एकादशी लीन्हीकै श्वपचराज शाखा शुद्ध सामकी। केशव अदृष्ट साथ जीवजीति जैसी तैसी लंकनाथ हाथपरी छाया जायारामकी १८ ॥

क्षुद्रनको राज जो लंकनाथ है सो छिद्र कहे अवसर ताकि भिक्षु कहे दंडीरूप धरिकै सीतापै आयो शूर्पणखाकी नासिका काटेको जो पोच कहे बुरो शोच है सीताहरण निश्चय करि ताको मोचकै छोड़िकै अथवा रावण को विशेषण है औ भीमवेषको जो संकोच सिकोरनो रह्यो ताको मोचिकै अर्थ जो लघु शरीर कस्यो रहै ताको बढ़ाइकै अंतरिक्ष आकाश १७ धूम पुरके निकेत कहे घरमें अर्थ धूमसमूहमें धूमकेतु जो अग्नि है ताकी शिखा ज्योतिहै कि धूमयोनि जे मेघहैं तिनके मध्य में सुधाधाम जो चन्द्रमा है ताकी रेखाकहे कला है कि रूरे कहे बड़े बयरूरें कहे बौंडर वायुग्रन्थि करिकै प्रसिद्धहै तामें चित्रपुत्रिका है कि शंबरनामा जो दैत्यहै सो कामको शत्रुहै तेहि कामकी कामिनी रतिको छँड़ाइलीन्ही है कि पाखंड के वशमों श्रद्धा परी है यह कथा विज्ञानगीतामें प्रसिद्ध है कि मठपतिके वश एका दशी परी कि श्वपचराज चांडालनको राजा शुद्ध सामवेदकी शाखा लीन्हों है अदृष्ट कर्म के साथ में जैसी जीवज्योति परी है तैसी छायाकृत जो राम की जाया सीता है सो लंकनाथ के हाथ में परी १८ ॥

सीताजू–हरिलीलाछंद ॥ हाराम हारमण हारघुनाथ धीर। लंकाधिनाथवश जानहु मोहिं वीर ॥ हापुत्र लक्ष्मण छोड़ावहु वेगि मोहिं। मार्तंडवंशयशकी सब लाज तोहिं १९ पक्षी जटायु यह बात सुनंत धाइ। रोक्यो तुरंत बल रावण दुष्ट जाइ ॥ कीन्हों प्रचंड रथछत्रध्वजाविहीन। छोड्यो विपक्ष तब भो जब पक्षहीन २० संयुताछंद ॥ दशकंठ सीतहिं लै चल्यो। अतिवृद्ध गीधहियो दल्यो ॥ चित जानकी अधरी कियो। हरि तीनि दै अवलोकियो २१ पदपद्मकी शुभ घूघरी। मणिनीलहाटकसों जरी ॥ जनु उत्तरीय निवारिकै।

शुभ डारिदी पगढारिकै २२ दोहा ॥ सीताके पदपद्मको नूपुर-
पटजनि जानु ॥ मनहुँ कस्यो सुग्रीव घर राज श्री प्रस्थान २३
यद्यपि श्रीरघुनाथ जू सम सर्वग सर्वज्ञ ॥ नरकैसी लीला
करत जिहि मोहत सब अज्ञ २४ राम–सवैया ॥ निज देखौ
न हौं शुभगीतहि सीतहि कारण कौन कहौ अवहीं । अति
मोहितके वन मांझ गई सुरमारगमें मृग मास्यो जहीं ॥
कटुबात कछू तुमसों कहि आई किधौं तेहि त्रास डेराइ
रहीं । अबहैं यह पर्णकुटी किधौं और किधौं वह लक्ष्मण
होइ नहीं २५ ॥

१६ प्रचंडपद जटायु रावण रथ तीनों को विशेषण है सकत है बिपक्ष
शत्रु रावण २० तीनि औ द्वै कहे पांच अथवा द्वै तीनि कहिबेकी रीति
स्वभावोक्ति है हरि बानर २१ उत्तरीय ओढ़िबेको वस्त्र २२ जब प्रस्थान
भयो तब आप आयोई चाहै २३ सम कहे सदा एकरस रहत हैं औ सर्वग
कहे सर्वत्र व्याप्त हैं औ सर्वज्ञ कहे सब जानत हैं २४ जो हमारे स्वरसों
हा लक्ष्मण ! यह कहिके मृग मास्यो है सो हमारो शब्द जानि ताही स्वर
के मार्ग है हमारे बड़े हितसों वनके मध्यमें गई है कि हे लक्ष्मण ! यह
पर्णकुटी है कि कछू औरई वस्तु है औ कि वह पर्णकुटी नहीं है औरई
पर्णकुटी है २५ ॥

दोधकछंद ॥ धीरजसों अपनो मन रोंक्यो । गीधजटायु
पस्यो अवलोक्यो ॥ छत्र ध्वजा रथ देखिके बूझ्यो । गीध
कहो रण कौनसों जूझ्यो २६ जटायु ॥ रावण लैगयो राघव
सीता । हारघुनाथ रटै शुभगीता ॥ मैं बिन छत्र ध्वजा
रथ कीनो । ह्वैगयो हौं बल पक्षविहीनो २७ मैं जगमें सब
ते बड़भागी । देहदशा तव कारण लागी ॥ जो बहुभां-
तिन वेदन गायो । रूप सो मैं अवलोकन पायो २८ राम ॥

साधु जटायु सदा बड़भागी । तो मन मो वपुसों अनुरागी ॥ छूट्यो शरीर सुनी यह बानी । रामहिं में तपज्योति समानी २८ तोटकछंद ॥ दिशि दक्षिणको करि दाहु चले । सरिता गिरि देखत वृक्ष भले ॥ वन अंध कबंध विलोकतहीं । दोउ सोदर खैंचलिये तबहीं ३० जब खैंबेहिको जिय बुद्धि गुनी । दुहुँ बाणनि लै दोउ बांह हनी ॥ वह छांड़िके देह चल्यो जबहीं । यह व्योम में बात कह्यो तबहीं ३१ मोटनक छंद ॥ पीछे मघवा मोहिं शाप दई । गंधर्वते राक्षसदेह भई ॥ फिरिकै मघवा सहयुद्ध भयो । उन क्रोधके शीशमें वज्र हयो ३२ ॥

२६ । २७ दशा अवस्था अर्थ यह कि यह देह वृद्धकी औ यह वृद्धावस्था तुम्हारे कछू उपकारके लायक नहीं रही तासों तुम्हारो उपकार भयो औ ऐसो जो तुम्हारो रूप है ताको देख्यो तासों जगमें मैं सबसों बड़भागी हौं २८ अर्थ सायुज्य मुक्ति पायो २६ । ३० । ३१ बाहुदई पर्यंत तीनि छंदके क्षेपक हैं पीछे कहे पूर्वहीं ३२ ॥

दोहा ॥ गयो शीश गड़िपेटमें पस्यो धरणिपर आय ॥ कछु करुणा जियमों भई दीन्हीं बाहु बढ़ाय ३३ बाहुदई द्वैकोसकी आवै तेहि गहि खाउ ॥ रामरूप सीताहरण उधरहु गहन उपाउ ३४ सुरसरिके आगे चले मिलिहैं कपि सुग्रीव ॥ देहैं सीताकी खबरि बांढ़े सुख अतिजीव ३५ तोटकछंद ॥ सरिता यक केशव शोभरई । अवलोकि तहां चकवा चकई ॥ उरमें सियप्रीति समाइ रही । तिनसों रघुनायक बात कही ३६ अवलोकतहौ जनहीं जबहीं । दुख होत तुम्हैं तबहीं तबहीं ॥ वह वैर न चित्त कछू धरिये । सिय देहु बताय कृपा करिये ३७ शशिके अवलोकन दूरि

किये। जिनके मुखकी छवि देखि जिये॥ कृतचित्त चकोर कछूक धरौ। सिय देहु बताय सहाय करौ ३८॥

३३ करुणा करिके द्वैकोसकी बाहुदई औ यह वर दियो कि जो इन बाहुनके मध्य में आवै ताको खाहु जब सीताहरण हैहै तब रामचन्द्र या मग है ऐहैं तिनके गहन उपायसों उद्धरहुकहे तुम्हारो उद्धार होई अर्थ जब रामचन्द्रको इन बाहुन सों गहिहौं तब तेरो उद्धार हैहै ३४ सुरसरि गोदावरी ३५।३६ जब सीताको तुम अवलोकत रहे कहे देखत रहौ तब अपनासों अधिक सुंदर सीता के कुच देखि तुम्हारे दुःख होतरहै अथवा हमको संयोगी देखत रहे तासों तुम्हारे दुःख होत रह्यो ३७ शशि जो अति सुंदर जिनके मुखको देखि शशिकी ओर विलोकिबो छोड़ि केवल जिनके मुखकी छवि देखिकै जियत रहे हौ अथवा शशिके अवलोकन दर्शन दूरि किये पर अर्थ जब कृष्णपक्षमें चन्द्रमा आपनो दर्शन दृष्टिसों दूरि कियो न देखि पर्यो तब चन्द्रसम केवल जिनके मुखकी छविको देखि जियत रहे हौ वह कृत कहे उपकार कछु चित्तमें धरिकै सीताको बताइ देउ ३८॥

सवैया॥ कहि केशव याचकके अरि चंपक शोक अशोक लिये हरिकै। लखि केतक केतकि जाति गुलाबते तीक्षण जानि तजे डरिकै॥ सुनि साधु तुम्हैं हम बूझन आये रहे मन मौन कहा धरिकै। सियको कछु सोधु कहौ करुणामय सो करुणाकरि नाकरिकै ३९ नाराचछंद॥ हिमांशु सूरसों लगै सो बात वज्रसी बहै। दिशा लगैं कृशानु ज्यों विलेप अंग को दहै॥ विशेषि कालराति सों करालराति मानिये। वियोग सीयको न काल लोकहार जानिये ४०॥

रामचन्द्र करुणवृक्ष सों कहत हैं कि चंपक जे हैं ते याचक के अरि शत्रु हैं पुष्पनको याचक जो भ्रमर है ताको निकट नहीं आवनदेत चंपकमें भ्रमर नहीं बैठत यह प्रसिद्ध है ता भयसों चंपकसों सीताको सोधु नहीं जांचे अशोक जे वृक्षहैं तिन शोकको हरिकै छोड़िकै अशोक यह जो नाम है ताको लीन्हो है तासों जिनहूंको तज्यो है कि जिनके शोक है ही नहीं ते हमारो

दुःख देखि दुःखी है कृपा करि सीताको सोधु कहे बताइ हैं केतकि केवरा औ केतकी औ गुलाब इनकी जाति जे और कंटकवृक्ष हैं कमलादि तिन्हैं तीक्ष्ण कहे कंटकित जानिकै डरिकै तज्यो है सो हे करुणा कहे करुणवृक्ष ! करुणा कहे दीनतामय जे हम हैं तिनसों सीताको कछू सोधु कहौ ३९ रामचन्द्र लक्ष्मणसों कहत हैं कि हिमांशु जो चंद्रमा है सो हम को सूर्यसम तप्त लागत है औ वायु वज्रसम बहतिहै औ दशौ दिशा अग्निके समान तप्त लागती हैं औ तुम जो शीतलताके अर्थ हमारे अंगन में विलेप करत हौ सो अगनको जारत है औ राति कालरातिसम कराल लागति है औ सीता को वियोग लोकहार काल कहे संहारकालसम लागत है ४० ॥

पद्धटिकाछंद ॥ यहिभांति विलोके सकल ठौर । गये शबरीपै दोउ देवमौर ॥ लियो पादोदक त्यहि पदपखारि । पुनि अर्घ्यादिक दीन्हे सुधारि ४१ हर देत मंत्र जिनको विशाल । शुभकाशीमें पुनि मरणकाल ॥ ते आये मेरे धाम आज । सब सफल करन जपतपसमाज ४२ फल भोजनको लेहि धरे आनि । भयेयज्ञपुरुषअतिप्रीतिमानि ॥ तिन रामचन्द्र लक्ष्मणस्वरूप । तब धरे चित्त जगज्योतिरूप ४३ दोहा ॥ शबरी पावक पंथ तब हरषि गई हरिलोक ॥ वनन विलोकत हरि गये पंपातीर सशोक ४४ तोटकछंद ॥ अतिसुंदर शीतल शोभ बसै । जहँ रूप अनेकनि लोभ लसै ॥ बहुपंकज पक्षि विराजत हैं । रघुनाथ विलोकत लाजत हैं ४५ सिगरी ऋतु शोभित शुभ्रजही । लहै ग्रीषमपै न प्रवेश सही ॥ नव नीरजनीरत हासरसैं । सियके शुभलोचनसे दरसैं ४६ ॥

४१ मंत्र रामतारक तप औ जपसमाजके सफल करन कहे सफलकर्ता औ जो शोड जप तप करत है [illegible] हैं ४२ । ४३ शबरी अग्निमों जरिकै ४४ कैसा है पंपासर अतिसुंदर है औ अतिशीतल है जहां शोभा बसै है सो जहां अनेक रूप [illegible] है औ जल कहे नीर [illegible]

में जातही माणिनके अनेकरूपसों लोभ बसत है अर्थ जहा जातही माणिन के रहिबे को लोभ बाढ़त है औ बहुत पकज कमल औ हसादि पक्षी विराजत हैं ते रामचन्द्रको देखिकै लज्जित होत हैं जा अगको जो उपमान है ता अगको निरखि अपनासों अधिक जानि लजात हैं ४५ । ४६ ॥

विजयछंद ॥ सुंदर श्वेत सरोरुहमें करहाटक हाटककी द्युतिकोहै । तापर भौंर भले मनरोचन लोकविलोचनकी रुचिरोहै ॥ देखि दई उपमा जलदेविन दीरघ देवनके मन मोहै । केशव केशवराय मनो कमलासनके शिर ऊपर सोहै ४७ ॥ लक्ष्मण–सवैया ॥ मिलि चक्रित चंदन वात बहै अति मोहत न्याय नहीं मतिको । मृगमित्र विलोकत चित्त जरै लिये चंद निशाचरपद्धतिको ॥ प्रतिकूल शुकादिक होहिं सबै जिय जानै नहीं इनकी गतिको । दुख देत तड़ाग तुम्हें न बनै कमलाकर ह्वै कमलापतिको ४८ ॥

सरोरुह कमल करहाटक सिफाकन्द हाटक सुवर्ण लोकके लोचनकी रुचि कहे इच्छाको रोहै कहे धारण करत है अर्थ जिनको देखि सबके लोचननमें सदा देखिबेकी इच्छा होति है अथवा लोकके लोचनकी रुचि शोभा रोहत है अर्थ लोचन सम शोभत है केशवराय विष्णु कमलासम ब्रह्मा श्वेतकमल सोई ब्रह्माको आसन कमलसम है करहाटक ब्रह्मासम पीतवर्ण है भ्रमर विष्णुसम है ४७ पपासर सों लक्ष्मण कहत हैं कि चदनवात जो इनकी मतिको मोहत है मूर्च्छित करत है सो न्यायही सों काहेते चदनवृक्ष में लपटे जे अनेक चक्री सर्प हैं तिनसों मिलिकै स्पर्श करिकै बहत है सो सर्पनके संगको फल है सर्पहू जाको काटत हैं ताको मूर्च्छित करत हैं अतिपति सों मृगकी अक में धरे हैं तासों मृगमित्रपद कह्यो सो मृग मित्र जो चन्द्र है ताको गिलोइनको चित्त जरत है सोऊ न्यायही है काहेते निशाचरनकी पद्धति परिपाटीको लिये है निशाचर राक्षसहू हैं चन्द्रहू हैं सो निशाचरनकी राक्षसनकी परिपाटीको लिये है राक्षसनहूको देखतही चित्त जरत है औ मृगमित्र कहि या जनायो कि पशुनको मित्र

हैं प्रतिकूल दुःखद जो शुकादिक होत हैं सोऊ न्यायही है काहते वे पक्षी पशु हैं इनकी गतिको नहीं जानत कि ये ईश्वर हैं कमलाकर पद श्लेष है कमलनके आकर समूहसों युक्त औ कमला लक्ष्मीके उत्पन्नकर्ता युक्ति यह कि वे तुम्हारे जामाता हैं इनको दुःख देना तुम्हैं न चाहिये ४८ ॥

दोहा ॥ ऋष्यमूक पर्वत गये केशव श्रीरघुनाथ ॥ देखे वानर पंचविभु मानो दक्षिण हाथ ४९ कुसुमविचित्राछंद ॥ तब कपिराजा रघुपति देखे । मनु नरनारायणसम लेखे ॥ द्विजवपु धरि तहँ हनुमत आये । बहुविधि आशिषदै मन भाये ५० हनुमान् ॥ सब विधि रूरे वनमहँ कोहौ । तन मन शूरे मनमथ मोहौ ॥ शिरसि जटा बकलावपुधारी । हरिहर मानहु विपिनविहारी ५१ परमवियोगी समरसभीने । तनमन एकै युगतन कीने ॥ तुम को हौ कालगि वन आये । क्यहि कुलहौ कौने पुनि जाये ५२ राम—चंचरीछंद ॥ पुत्र श्री दशरत्थके वनराजशासन आइयो । सीय सुंदरि संगही बिछुरी सो सोध न पाइयो ॥ राम लक्ष्मणनामसंयुत सूरवंश बखानिये । रावरे वन कौन हौ क्यहि काज क्यों पहिचानिये ५३॥

सुग्रीव हनुमान् नल नील सुषेण ये पांच जे वानर हैं विभु कहे प्रतापी तिनसहित ऋष्यमूकको देख्यो मानो सो पृथ्वी को दक्षिणहाथहै पृथ्वी इति शेषः अथवा मानों अपनो दक्षिण हाथही देख्यो है मित्रको औ भ्राताको दक्षिण बाहु सम कहिबे की रीति है ४९ नरनारायणके द्वैरूप हैं ५० रूरे सुंदर ५१ परमवियोगी हौ अर्थ तुम्हारी चेष्टाते जानिपरत है कि काहू बड़े हितको वियोग भयो है औ जटा वल्कलादि सों शांतरस में भीने जानि परत हौ ५२ शासन आज्ञा ५३ ॥

हनुमान्—दोहा ॥ या गिरिधर सुग्रीव नृप तासँग मंत्री चारि ॥ वानर लई छड़ाइ तिय दीन्हा बालि निकारि ५४ दोधकछंद ॥ वाकहँ जो अपनो करि जानो । मारहु बालि

बिनै यह मानो॥ राज देहु जो वाकि तियाको। तो हम देहिं बताय सियाको ५५ लक्ष्मण॥ आरतकी प्रभु आरति टारौ। दीन अनाथनको प्रतिपारौ॥ थावर जगम जीव जो कोऊ। सन्मुख होत कृतारथ सोऊ ५६ वानरह्वै हनुमान सिधारेउ। सूरजको सुत पांयनि पारेउ॥ राम कह्यो उठि वानरराई। राजसिरी सखिस्यो तिय पाई ५७ दोहा॥ उठे राज सुग्रीव तब तन मन अति सुखपाइ॥ सीताजूके पट-सहित नूपुर दीन्हे आइ ५८ तारकछंद॥ रघुनाथ जबै पट नूपुर देखे। कहि केशव प्राणसमानहिं लेखे॥ अवलोकत लक्ष्मणके कर दीन्हे। उन आदरसों शिरमानिकै लीन्हे ५९ राम— दडक॥ पजर कि खजरीट नैननको किधौं मीन मानसको केशौदास जलुहै कि जालु है। अंगको कि अग-राग गेडुआ कि गलसुई किधौं कटिजेव हीको, उरको कि हारुहै॥ बंधन हमारो कामकेलिको कि ताड़िबेको ताजनो विचार कोकि चमर विचारु है। मानकी जमनिका कि कजमुख मूदिबे को सीताजू को उत्तरीय सब सुखसारु है ६०॥

वानर बालिको विशेषण है ५४। ५५ कृतार्थ कहे कृत है अर्थ प्रयोजन जाको ५६ अर्थ बालिको मारिकै राज्य श्रीसहित तुम्हारी स्त्री हम तुमको देहैं ऐसो निश्चय वचन रामचन्द्र सुग्रीव को दियो ५७। ५८ शिर मानिकै कहे शिरपर राखिकै ५९ रामचन्द्र कहत हैं कि हमारे खजरीट कहे खंडरिचरूपी जे नयन हैं तिनको पंजर पिंजरा है जामें परि नयनकै कढ़न नहीं पावत औ कि मीनरूपी जो मानस मन है ताको जल है कि जालु है जैसे मीन जलसों नहीं कढ़ति तैसे मन यासों नहीं कढ़त औ जालको औ पजर को हेतु एकई है अगनको कि अगराग कहे चन्दनादिको लेप है कि गेडुआ तकिया है कि गलसुई लोगी तकिया है अर्थ स्पर्शने अगनको अगरागादि सम सुखद है औ कि कटिजेव कहे क्षुद्रघंटिका है औ कि हीको जेव कहे

धुकधुकी है जेवपद्को सबध याहूमें है औ कि उरको हार है औ कि काम केलि समयको हमारो बंधन फांस है औ कि कामकेलि समयको हमारे ताड़िबेको ताजनो कशाहै कोड़ा इति अर्थ कामकेलिमें अतिचंचल कर्त्ता है औ कि कामकेलिको जो विचार कहे विगत चालचलन है रतांत इति ताको रत भ्रमहर चमर कहे बालव्यजन है यह चमरपदते व्यजन जानौ अथवा हमारे विचार को चमर है अर्थ विचारको शोभा कर्ता है अर्थ प्रकाश कर्ता है ऐसो हमारो विचार अनुमान है औ कि सीताजूके मानकी जमनिका कनात है अर्थ याहीकी आड़में सीताजूको मानरहत रह्यौ औ कि सीताजू को कजमुख मूँदिबेको सब सुखसार उत्तरीय है याही विधि उत्तरीयको वर्णन हनुमन्नाटकमें है "द्यूते पणः प्रणयकेलिषु कण्ठपाशः क्रीडापरिश्रम-हर व्यजन रतान्ते । शय्यानिशीथसमये जनकात्मजाया प्राप्त मया विधि-वशादिह चोत्तरीयम् ६० ॥

स्वागताछंद ॥ वानरेन्द्र तब यों हँसि बोल्यो । भीत भेद जियको सब खोल्यो ॥ आगिबारि परतक्ष करीजू । रामचन्द्र हँसि बाँह धरीजू ६१ ॥

जब निश्चय मित्र जान्यो तब आपनो भीत भेद कहे बालिकृत भयको सब भेद खोल्यो कहे कह्यो मित्रसों अंतःकरणको सब भेद कह्यो चाहिये ६१ ॥

सूरपुत्र तब जीवन जान्यो । बालि जोर बहुभाति ब-खान्यो ॥ नारि छीनि जेहि भाति लईजू । सो अशेष विनती विनयीजू ६२ एकबार शर एक हनो जो । सातताल बल-वन गनौ तो ॥ रामचन्द्र हँसि बाण चलायो । तालबेधि फिरि कै कर आयो ६३ सुग्रीव–तारकछंद ॥ यह अद्भुतकर्म न औरपै होई । सुरसिद्ध प्रसिद्धनमें तुम कोई ॥ निसरी मनते सिगरी दुचिताई । तुमसों प्रभु पाय सदा सुखदाई ६४ विजय छंद ॥ बामनको पद लोकन मापि ज्यों बावनके वपुमाहँ सिधायो । केशव सूरसुता जलसिंधुहिं पूरिकै सूरहिंको पद पायो ॥ कामके बाण त्वचा सब बेधिकै कामपै आवत ज्यों

जग गायो । रामको शायक सातहु तालनि बेधिकै रामहिंके कर आयो ६५ सोरठा ॥ जिनके नामविलास अखिललोक बेधत पतित ॥ तिनको केशवदास साततास बेधत कहा ६६ राम–तारकछंद ॥ अतिसगति वानरकी लघुताई । अपराध विना वध कौनि बडाई ॥ हति बालिहिं देउँ तुम्हैं नृप शिच्छा । अबहै कछु मोमन ऐसिय इच्छा ६७ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांसीताहरणरामसुग्रीवमैत्रीवर्णनन्नाम द्वादश. प्रकाशः ॥ १२ ॥

६२ । ६३ । ६४ । ६५ । ६६ बालिके शीघ्र वधमें आपने अंतर निश्चय को प्रकट करत मित्रताधिक्यको दिखावत रामचन्द्र परिहासपूर्वक सुग्रीवसों कहते हैं कि हे सुग्रीव ! वानरकी संगति अतिलघुता है काहेते अपराध विना वधमें कछू बड़ाई नहीं है लघुताइही है परन्तु हमारे मनमें अब यहै इच्छा है कि बालिको मारि तुमको नृपशिक्षा दीजै अर्थात् राजा कीजिये यह केवल वानरसंगतिको प्रभाव है बिन काज अकाज करिबो सब वानरन को स्वभाव होत है तिनकी सगतिते तैसो स्वभाव भयो चाहै ६७ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद निर्मितायारामभक्तिप्रकाशिकाया द्वादशः प्रकाशः ॥ १२ ॥

दोहा ॥ या तेरहें प्रकाशमें बालिवध्यो कपिराज ॥ वर्णन वर्षा शरदको उदधिउलघनसाज १ पद्धटिकाछंद ॥ रविपुत्र बालिसों होत युद्ध । रघुनाथ भये मनमाहँ क्रुद्ध ॥ शर एक हन्यो उर मित्र काम । तब भूमि गिर्यो कहि रामराम २ कछु चेत भये तेहि बलनिधान । रघुनाथ विलोके हाथ बान ॥ शुभ चीर जटाशिर श्यामगात । वनमाल हिये उरविप्रलात ३ बालि ॥ तुम आदि मध्य अवसान एक । जग मोहतहौ

वपुधरि अनेक ॥ तुम सदा शुद्ध सबको समान। केहि हेत हत्यो करुणानिधान ४ राम ॥ सुनि वासवसुत बुधिबल विधान। मैं शरणागतहित हते प्राण ॥ यह सांटो लै कृष्णावतार। तब ह्वैहौ तुम संसारपार ५ ॥

१ मित्र जे सुग्रीव हैं तिनके काम कहे अर्थ बालिके वधमें केवल सुग्रीव ही को हित है रामचन्द्रको कछु हित नहीं है २। ३ जगको आदि कहे उत्पत्ति मध्य कहे प्रतिपाल अवसान कहे संहार एक तुमहीं हौ अर्थ ब्रह्मारूप ह्वै तुमहीं सृष्टि करत हौ विष्णुरूप ह्वै प्रतिपाल करत हौ रुद्ररूप ह्वै संहारकरतहौ सो अनेक वपु शरीर धरिकै जगको मोहत हौ अर्थ दशरथके पुत्र रामचन्द्र हैं इत्यादि मोह बढ़ावत हौ ४ सांटो कहे बदलो ५ ॥

रघुवीर रंकते राज कीन। युवराज विरत अङ्गदहिं दीन ॥ तब किष्किंधा तारासमेत। सुग्रीव गये अपने निकेत ६ दोहा ॥ कियो नृपति सुग्रीव हति बालि बली रणधीर ॥ गये प्रवर्षणअद्रिको लक्ष्मण श्रीरघुवीर ७ त्रिभंगीछंद ॥ देख्यो शुभ गिरिवर सकलशोभधर फूल बरन बहुफलन फरे। सँग शरभऋक्षजन केशरिके गन मनहुँ धरणि सुग्रीव धरे ॥ सँग शिवा विराजै गजमुखगाजै परभृत बोलै चित्त हरे। शिर शुभ चन्द्रकधर परम दिगंबर मानों हर अहिराज धरे ८ ॥

रामचन्द्र सुग्रीवको रंक कहे दरिद्री तें राजा कीन्हो सुग्रीवपक्षको संबंध रक राजपदहु मों है विरद पदवी ६ प्रवर्षण नाम जो अद्रि पर्वत है ताम जाइ वास करयो ७ रामचन्द्र कैसो पर्वत देखतभये कि फूल हैं बरनबहु फूल अनेक रंगके औ बहुत फलन सों फरे बहुपदको संबंध फलनहू मों है आगे श्लेषो रक्षाकारि वर्णन है शरभ वानर नाम विशेष है औ पशुजाति विशेष " शरभस्तु पशौ भिन्दिकरभे वानरे भिदि इति मेदिनी " ऋक्ष पर्वतहू में है सुग्रीवहू के संग जाम्बवतादि हैं केशरी कहे सिंह ताके गण

समूह औ केशरी नाम वानर हनुमान्‌के पिता तिनके गण सैन्य समूह शिवा पार्वती औ शृगाली गजमुख गणेश औ हस्ती आदि और वनजीव आदि पदते गैंड़ा आदि जानो पर कहे बड़े जे भूत सेवक हैं नंदिकेश्व-रादि औ कोकिल चन्द्रके चन्द्रमा औ कपूर अर्थ कदली वृक्षनमें कपूर होत है ते कदली जामें बहुत हैं अथवा जल अनेक वाप्यादिकनमों भरयो है अर्थ चन्द्रकधरमोर "चन्द्रः कर्पूरकांपिल्यसुधांशुस्वर्णवारिषु इति मेदिनी" दिगंबर नग्न दुवौ पक्ष में एकै है अहिराज वासुकी औ बड़े सर्प ८ ॥

तोमरछंद ॥ शिशु सो लसै सँगधाइ । वनमाल ज्यों सुर-राइ ॥ अहिराज शोषहि काल । बहुशीश शोभनि माल ६ ॥ स्वागताछंद ॥ चंद्र मंदद्युति वासर देखो । भूमिहीन भुवपाल विशेखो ॥ मित्र देखि यह शोभतहै यों । राजसाज बिनु सीतहिं हों ज्यों १० दोहा ॥ पतिनी पति बिनु दीन अति पति पतिनीं बिनु मंद ॥ चन्द्र विना ज्यों यामिनी ज्यों बिन यामिनि चंद ११ स्वागताछंद ॥ देखि राम वरषा ऋतु आई । रोमरोम बहुधा दुखदाई ॥ आस पास तमकी छवि छाई । राति दिवस कछु जानि न जाई १२ मंदमंद धुनिसों घन गाजैं । तूरतार जनु आवझ बाजैं ॥ ठौरठौर चपला चमकैं यों । इद्र लोक तिय नाचति हैं ज्यों १२ मोटनकछंद ॥ सोहैं घन श्यामल घोर घनैं । मोहैं तिनमे बकपांतिन मैं ॥ शखा-वलिपी बहुधा जलसों । मानी तिनको उगिलै बलसों १४ शोभा अति शक्रशरासन में । नानाद्युति दीसति है घनमें ॥ रत्नावलिसी दिविद्वार भनो । वर्षागम बांधिय देव मनो १५ ॥

शिशु बालक धाय जो माता ते अन्य आपनो स्तन दूध पियावति है औ [illegible] सुरराइ कहे विष्णु ते वनमाल पहिरे हैं पर्वत में वनकी [illegible] है अर्थ बड़ो वन है बहुशीश सहस्रशिर और बहुत [illegible] ९ दिन में द्युतिहीन चन्द्रमाको देखि रामचन्द्र लक्ष्मण

सो कहत हैं मित्र सूर्य अथवा मित्र लक्ष्मणको संबोधन है १० । ११ एकादश छंदनमों जैसो वर्णन कर्यो है ऐसी वर्षाऋतु आई देखिके रामचन्द्र कलहंस कलानिधि खजन कज या तेईसयें छद में जे वचन हैं ते कहत भये इति शेषः १२ तूर नगारे तार उच्चस्वर १३ । १४ दिवि द्वार कहे आकाश के द्वार में रत्नावलिपद ते रत्नन के बन्दनवार जानो बड़ेकी अवाई में बदनवार बाँधिबे की रीति प्रसिद्ध है १५ ॥

तारकछंद ॥ घनघोर घने दशहू दिशि छाये । मघवा जनु सूरजपै चढ़ि आये ॥ अपराध बिना क्षितिके तन ताये । तिन पीड़न पीड़ितह्वै उठिधाये १६ ॥

तीनि छदको अन्वय एक है ग्रीष्मऋतु में अतितेजसों सूर्य क्षिति पृथ्वी के तन ताये तप्त करयो है जा कोऊ काहूको विन दोष दुखदई ताको दड करिबो राजनको उचित है सो इन्द्र देवन के राजा हैं तासा सूर्य को उचित दीघदड किया जासों ऐसो अत्र न करें उत्प्रेक्षा करि यह राजनीति प्रगट देखायो अथवा पृथ्वीका अशरण जानिके अशरण को सहाय करिबो बडन को उचित है तासों अथवा पृथ्वी को स्त्री जानिके स्त्री की रक्षा करिबो बडेनको उचित है तासों दुदभि कहे जे गजादि वाहनपर चमूके आगे नगारे बाजत हैं निर्घात कहे जाको वज्र शब्द सब कहत है सो नहीं है सबै कहे जेते निर्घात होते हैं तने पात कहे वज्र के पात गिरिबा बखानो कहे कहत हैं अर्थ जे बार निर्घात हात है सो निर्घात नहीं है बारबार इन्द्र सूरज को वज्र चलावत हैं ताही को शब्द होत है सम कहे बराबरि अर्थ जैसे अत्रि की स्त्रीके उरमें देख्यो तैसे याके उरमें देख्यो है गोरमगाइनि कहे इन्द्रधनुष नहीं है प्रत्यक्ष धनुष है गोरमगाइनि इन्द्रधनुष को नाम पश्चिम मों प्रसिद्ध है औ [illegible] प्रकट होत है कहू गोरसदायन नाहीं पाठ है तौ [illegible] कहे मेघनके अजन कहे घरमें मध्य में इति नहीं है प्रत्यक्ष धनुष है सूर की किरणें मेघन में परि इन्द्रधनुष होत हैं यह प्रसिद्ध है खड्ग कहे तरवारि द्युतिने चन्द्र शुक्रादि तौ एककी चूक सों जातिमात्र को दड बड़े कोपको जनावत हैं चन्द्रवधू बीरबहूटी रसराज में कह्यो है " नवलवधू उरलाजे इन्द्रवधूसी होइ " १६ ॥

अतिगाजत बाजत दुदुभि मानो । निरघात सबै पवि-

पात बखानो ॥ धनुहै यह गोरमदाइनि नाहीं। शरजाल बहै जलधार वृथाहीं १७ भट चातक दादुर मोर न बोलै। चपला चमकैं न फिरैं खग खोलै॥ द्युतिवतन को विपदा बहु कीन्हीं। धरनी कहँ चंद्रवधू धरि दीन्हीं १८ तरुनी यह आत्रे ऋषीश्वरकीसी। उरमें हम चद्रकलासम दीसी ॥ बरषा न सुनै किलकै किल काली। सब जानत हैं महिमा अहिमाली १९ घनाक्षरी ॥ भौहैं सुरचाप चारु प्रमुदित पयोधर भूषण जरायज्योति तड़ित रलाई है। दूरि करी सुख मुखसुखमा शशीकी नैन अमल कमलदल दलित निकाई है॥ केशवदास प्रबल करेणुका गमन हर मुकुत सुहंसक शबद सुखदाई है। अंबरबलित मति मोहै नीलकठजूकी कालिका कि बरषा हरषि हिय आई है २० ॥

१७। १८ सम कहे बराबरि अर्थ जैसे आत्रिकी स्त्री के उरमें देख्यो है तैसे याके उरमें देख्यो है अनसूयाको पातिव्रत देखि ब्रह्मा विष्णु महेश पुत्र होवे की इच्छा करि गर्भ में आय चन्द्रमा दत्तात्रेय दुर्वासारूप यथाक्रम अवतार लिया है कथा पुराणनमें प्रसिद्ध है अहिमाली महादेव औ सर्पनकी माला वर्षागमन में सर्प अति प्रसन्न होत हैं १९ कैसी है वर्षा कि जामें अनेक गृह पतन चौरादि के भौ कहे डर हैं और सुरचाप कहे इंद्र धनुष है चारु सुंदर औ प्रमुदित कहे प्रसन्न हैं पयोधर मेघ जामें औ भू कहे पृथ्वी औ ख कहे आकाशमें न जराइ कहे देखि परति है ज्योति जाकी ऐसी तड़ित जो बिजुली है ताकी तरलता है औ दूरि कीन्हों है सुख कहे सहजही मुखकी सुखमा शोभा शशी कहे चन्द्रमाकी अर्थ चन्द्रप्रकाश नहीं होन पावत औ नै जे नदी हैं ते न कहे नहीं हैं अमल निर्मल अर्थ नदिन को जल म्लान है जात है औ कमलन को दल समूह दलित होत है औ निकाई कहे काई सों रहित है अथवा कमलदलकी दलिन है निकाई जामें केशवदास कहत है कि रेणुका जो धूरि है ताको गमन हर प्रबल है क कहे जल जामें अर्थ ऐसो जल चारोंओर भयो है जामों धूलि नहीं उड़ति

औ मुकुत कहे त्यक्त हैं हंसक जे हंस हैं तिनको सुखदायी शब्द जामें वर्षा में हंस उड़िजात हैं यह प्रसिद्ध है औ अंबर जो आकाश है तामें ललित कहे युक्त नीलकंठ जे मोर हैं तिनकी मतिको मोहै कहे प्रसन्न करति है कालिका कैसी है कि भौहैं हैं सुरचाप इंद्रधनुषहू ते चारु जाकी औ प्रमुदित कहे उन्नत हैं पयोधर स्तन जाके भूषणनमें जराइ कहे जराऊ जो ज्योति है तामें तड़ित जो बिजुली है ताकी तरलाई चंचलताहै अथवा भूषणमें जड़ाऊ की जो ज्योति है सो जटित समरलाई कहे योजित है अर्थ भूषणन् में रत्नकी ज्योति बिजुलीसम दमकति है रत्नजटित भूषण जड़ाऊ कहावत हैं औ दूरि कीनी है सुख सुख कहे सहज मुखही सों शशी जो चन्द्र है ताकी सुखमा शोभा अर्थ सहजमुख एसो छविमान् है जामें चन्द्र द्युति मद हानि है औ अमल कहे स्वच्छ जे नयन हैं तिनकरिकै कमल दलकी निकाई नलित है अर्थ तिनके नयननके आगे कमलनकी छवि दलि जाति है औ केशवदास कहत हैं कि गवन कहे नीको जो करणुका हस्तिनी का गमन है ताकी हरणहारीहै औ मुकुत कहे त्यक्त अथ उच्चारित जो हंसक घड़ [illegible] शब्द है सो है सुखदायी जाको अर्थ जाके चलन में सुखदायक [illegible] [illegible] जिनके भूषणनसों शब्द होत है औ अंबर जो वस्त्र है तामें ललित नीलकंठ जे महादेव हैं तिनकी मतिको मोहन है यही कालीपक्ष ते पार्वती जानो २० ॥

तारक छंद ॥ अभिसारिनिसी समुझैं परनारी । सतमारग मेटनको अधिकारी ॥ मति लोभ महामद मोहछयी है । द्विजराज सुमित्र प्रदोषमयी है २१ दोहा ॥ बरणत केशव सकल कवि विषम गाढ़तम सृष्टि ॥ कुपुरुषसेवा ज्यों भई सतत मिथ्या दृष्टि २२ चन्द्रकलाछंद ॥ कलहंस कलानिधि खंजनकंज कछू दिन केशव देखि जिये । गति आनन लोचन पायनके अनरूपकसे मन मानि लिये ॥ यहि कालकरालते शोधि सबै हठिकै वरषामिस दूरि किये । अब धौं विन प्राण पियारहि हैं कहि कौन हितू अवलंबि हिये २३ ॥

सत कहे उत्तममार्ग यथोचित कुलागमन की रीति औ राजमार्गादि ग्रामते ग्रामांतर की राह इति कि लोभ औ महामद औ मोहसों छयी मति बुद्धि है वर्षा द्विजराज चन्द्रमा औ सुमित्र सूर्य तिनके दोषमयी है अर्थ चन्द्र सूर्यको उदय नहीं होन पावत औ मति द्विजराज ब्राह्मण औ सुष्ठुमित्र इनके दोषमयी है यासों या जानो लोभ मद मोहयुक्त प्राणी मित्रदोष द्विज दोष करत नहीं डरत २१ विषम कहे भयानक जो गाढ़तम अंधकार है ताकी सृष्टि कहे बुद्धिमें मिथ्या दृष्टि भई जैसें कुपुरुष की सेवा में होति है तैसी सकल कवि वर्णत हैं अर्थ जब कुपुरुष सेवा कोऊ करत है तब वाहि यह देखि परत है कि कछू पाय हैं जब कछू ना पायो तब पूर्णदृष्टि मिथ्या होतभई तैसे जा दृष्टिसों सब विषय पदार्थ देखि परत हैं ताही दृष्टिसों वर्षांधकार में निकट गत वस्तु नहीं देखियत पूर्णदृष्टि मिथ्या होति है २२ अनरूपक कहे प्रतिमा जा वस्तुके वियोगसों विकलता होति है ताकी प्रतिमा देखि कछू बोध होत है यह जो हमारो कराल कहे भयानक काल कहे समय है जामें सीयवियोगादि दुःख भये ताही काल वर्षाको व्याजकरि हमको दुःख देबेको तिनहुन कलहसादिकन को दूरि कीन्ह्यो २३ ॥

दोहा ॥ बीते बरषाकाल यों आई शरद सुजाति ॥ गये अँध्यारी होति ज्यों चारु चाँदनी राति २४ मोटनकछंद ॥ दंतावलि कुंदसमान गनो । चंद्रानन कुंतल चौंर घनो ॥ भौंहैं धनु खंजन नैन मनो । राजीवनि ज्यों पद पानि भनो २५ हारावलि नीरज हीपर में । हैं लीनपयोधर अंबर में ॥ पाटीर जोन्हाइहि अंग धरे । हंसीगति केशव चित्त हरे २६ श्रीनारद की दरशै मतिसी । लोपै तमताप अकीरतिसी ॥ मानौ पतिदेवनकी रतिको । सतमारगकी समुझै गति को २७ ॥

सुजाति कहे उत्तम २४ द्वैछंद को अन्वय एक है शरदको स्त्रीरूपकरि कहत हैं कुंदके जे पुष्प हैं तेई दंतनकी अवली पंगति हैं कुंद शरत्काल में फूलत है यह कवि नियम है औ चन्द्रमा जो है सोई आनन मुख है चन्द्रमा वर्षा के मेघनमें मूँद्यो रहत है शरत्काल में प्रकाशित होत है औ सब राजा शरत्काल में पूजन करि धनुष चामरादि धारण करत हैं सो चौंर जे हैं तेई

कुंतल केशपाश हैं घनो कहे अति सघन औ धनुष जे हैं तेई भौंहैं हैं औ शरत्काल मे खजन आवत हैं तेई नयन हैं औ राजीव कहे कमल फूलत हैं तेई पद औ पाणि कहे कर हैं औ स्वाती नक्षत्र की वर्षा सों नीरज मोती होत हैं तिनकी हारावलि हृदय में है जाके औ पयोधर जे मेघ हैं ते अंबर कहे आकाश में लीन हैं मिले हैं स्त्री पक्ष पयोधर कुच अंबर वस्त्रमें लीन हैं औ जोन्हाई जो है सोई पाटीर कहे चदनलेप है शरत्पक्ष हसी गति कहे हसन की गति स्त्रीपक्ष हसनकी ऐसी गति इन सब करिकै सबके चित्त को हरे है वश्य करे है २५।२६ तमता अंधकार औ तमोगुण नारद सत्त्वगुणी हैं पतिदेव जे पतिव्रता हैं तिनकी रति प्रीति को मानो कहे जानौ अर्थ शरत्काल नहीं है पतिव्रतनकी प्रीति है प्रीति कैसी है पतिसेवा आदि जे सत कहे उत्तममार्ग हैं तिनकी गति कहे तिन विषे गमन समुझति कहे जानति है शरत् कैसी है सत कहे उत्तम जे मार्ग राह हैं तिनकी गति कहे प्रभावको समुझै कहे जानति है अर्थ वर्षा करिकै विदारति जे सतमार्ग हैं तिनको प्रकट करति है २७ ॥

दोहा ॥ लक्ष्मण दासी वृद्धसी आई शरद बजाति ॥ मनहुँ जगावनको हमहिं बीते वर्षाराति २८ कुंडलिया ॥ ताते नृप सुग्रीवपै जैये सत्वर तात । कहियो वचन बुझाइकै कुशल न चाहौ गात ॥ कुशल न चाहौ गात चहत हौ बालिहि देखो । करहु न सीतासोध कामवश राम न लेखो ॥ राम न लेखो चित्तचही सुखसम्पति जाते । मित्र कह्यो गहि बांह कानि कीजत है ताते २९ दोहा ॥ लक्ष्मण किष्किंधा गये वचन कहे करि क्रोध ॥ तारा तब समुझाइयो कीन्हों बहुत प्रबोध ३० दोधकछंद ॥ बोलि लये हनुमान तबैजू । ल्यावहु वानर बोलि सबैजू ॥ बार लगै न कहूं विरमाहीं । एक न कोउ रहै घरमाहीं ३१ त्रिभंगीछंद ॥ सुग्रीव सघाती मुखदुत राती केशव साथहि शूर नये । आकाश विलासी सूरप्रकासी तबहीं बानर आइगये ॥ दिशिदिशि

अवगाहन सीतहि चाहन यूथप यूथ सबै पठये। नल नील ऋक्षपति अंगदके सँग दक्षिणदिशि को बिदा भये ३२॥

जैसे वृद्धदासीके शुक्ल रोमनकरि सर्वांग शुक्ल होत हैं तैसे याहू शुक्ल है तासों वृद्धदासी सम कह्यो लक्ष्मण संबोधन है २८ सत्वर कहे शीघ्र चित्त चही कहे न मानी २९। ३०। ३१ साथहि कहे लक्ष्मण के साथहि रामचन्द्र के पास आइगये लक्ष्मण इतिशेष सूरप्रकाशी कहे सूर्यको ऐसो है प्रकाश जिनको ३२॥

दोहा॥ बुधिविक्रमव्यवसाययुत साधु समुझि रघुनाथ॥ बलअनंत हनुमंतके मुँदरी दीन्हीं हाथ ३३ हीरकछंद॥ चंडचरणछंडि धरणमंडि गगन धावहीं। तत्क्षण हूय दक्षिण दिशि लक्ष्य नहीं पावहीं॥ धीरधरन बीरबरन सिंधुतट सुभावहीं। नाम परमधाम धरम रामकरम गावहीं ३४॥

बुद्धिपद सों दान उपाय जानों काहेते बुद्धिमान् हठ नाहीं करत समय विचारि दान उपायसों कार्य साधत हैं औ विक्रम कहे अतिबल "विक्रमस्त्वतिशक्तिता इत्यमर." यासों दंड उपाय जाना बली अतिबलसों दंड करि कार्य साधत है व्यवसाय कहे यत्नसों भेद उपाय जानों यत्नी पुरुष अनेक यत्न करि मन्त्र्यादिकन मों भेद करिकै कार्य साधत हैं औ साधु पदते साम उपाय जानों साधु प्राणी मिलापही सों कार्य साधत हैं सो यासों समयोचित चारिहु उपाय करि कार्य साधिबे को लायक हनूमान् को समुझिकै बल कहे सैन्य अनंत है ताके मध्यमें हनुमंतके हाथ में रामचन्द्र मुँदरी दीन्हीं ३३, तत्क्षण कहे जब रामचन्द्रकी आज्ञा पायो ताही क्षण चंड कहे प्रचंड चरणनसों धरणि पृथ्वीको छंडिकै अर्थ अति जोरसों कूदिकै गगन कहे आकाश को मंडिकै भूषित करिकै अर्थ आकाशमार्ग ह्वैकै धावत हैं सीताको लक्ष्य कहे खोज नहीं पावत धीर के धरनहार जे बीरबरन वीरस्वरूप सब हैं ते सिंधुके तटमें सुभावही सों धरमको परम कहे बड़ो धाम जो राम नाम है औ कर्म बालिवधादि तिन्हैं गावत हैं धीरधरन कहि या जनायो कि यद्यपि खोज नहीं सीताको पायो परन्तु धीरको धरे हैं

अधीर नहीं भये तौ जहां ताईं खोज पाइहैं तहां ताईं ढूँढ़ि हैं औ सुभावही काहू या जनायो कि कछु भय मानिकै राम नाम को नहीं गावत ३४ ॥

अंगद–अनुकूलछंद ॥ सीय न पाई अवधि विनासी । होहु सबै सागरतटवासी ॥ जो घर जैये सकुच अनंता । मोहिं न छोड़ै जनकनिहंता ३५ हनुमान् ॥ अंगद रक्षा रघुपति कीन्हों । शोधन सीता जलथल लीन्हों ॥ आलस छांड़ो कृत उरआनो । होहु कृतघ्नी जानि सिख मानो ३६ अंगद– दडक ॥ जीरण जटायु गीध धन्य एक जिन रोंकि रावण विरथ कीन्हों सहि निज प्राणहानि । हुते हनुमंत बलवत तहां पांच जन दीनेहुते भूषण कछूक नररूप जानि ॥ आरत पुकारतही रामराम बारबार लीन्हों न छँड़ाय तुम सीता अति भीत मानि । गाय द्विज राजतियकाजन पुकार लागै भोगवै नरक घोर चोरको अभयदानि ३७ दोहा ॥ सुनि सपाति सपक्ष ह्वै रामचरित सुखपाय ॥ सीता लङ्का मांझ हैं खगपति दई बताय ३८ दडक ॥ हरिकैसो वाहन की विधिकैसो हेमहंस लीकसी लिखत नभ वाहनके अकको । तेजको निधान राममुद्रिका विमान कैधौं लक्ष्मणको बाण छूट्यो रावण निशंकको ॥ गिरि गजगंडते उड़ान्यो सुबरण अलि सीतापदपकज सदा कलकरकको । हवाईसी छूटी केशवदास आसमानमैं कमानकैसो गोला हनुमान चल्यो लकको ३९ ॥

मास दिवस की अवधि दिनो है यथा वाल्मीकीये "अधिगम्य तु वैदेही निलय रावणस्य च ॥ मासे पूर्णे निवर्तध्वमुदयं प्राप्य पर्वतम् १ ऊर्ध्वं मासान्न वस्तव्य वसन् वध्यो भवेन्मम" ३५ । ३६ जीरण वृद्ध ३७ चन्द्रमा ऋषिको आशीर्वाद रह्यो है कि सीताके खोजको वानर ऐहैं तिन्हैं मिले

पक्ष तेरे जामि हैं तुलसीकृत रामायण मों प्रसिद्ध है ३८ सदा कलङ्कहीको रङ्क कहे दरिद्र अर्थ कलङ्करहित जो सीतापदपंकज हैं कमान तोपको नाम पश्चिम मों प्रसिद्ध है औ गोलाके साहचर्य सों अतिनिश्चित है। यथा भूषणकवि "छूटत कमानन के गोली तीर बाननके मुशकिल जात मुरचान हूके ओटमें । ताही समय शिवराज दावकरी पैंड़ापर दै सुरगहलाको हुकुम करचो गोटमें ॥ भूषण भनत कहौं किम्मति कहालों देशी हिम्मति इहांलों शरजा के भट जोटमें । ताउ देदै मोछन कगूरनमें पांउ देदै घाउ देदै अरिमुख कूदे जाय कोटमें" ३९ ॥

दोहा ॥ उदधिनाकपतिशत्रुको उदित जानि बलवंत ॥ अंतरिक्षही लक्षिपद अच्छ छुयो हनुमंत ४० बीच गये सुरसा मिली और सिंहिकानारि ॥ लीलि लियो हनुमंत तिहि कढ़े उदरकहँ फारि ४१ ॥

उदधि जो समुद्रहै तामें नाकपति जे इन्द्र हैं तिनको शत्रु मैनाक ताको उदित कहे आपने विश्रामके लिये उठ्यो जानिकै अंतरिक्षही कहे आकाशहीसों लक्षि कहे देखिकै बलवंत जे हनुमंत हैं तिन ता मैनाकके बोधके लिये अच्छ कहे स्वच्छ जो पद हैं तासों छुयो स्पर्शमात्र करचो काहेते बाल्मीकीय रामायणमें लिख्यो है कि हनूमान् मैनाकसों आपनी प्रतिज्ञा कह्यो है कि मध्यमें विश्राम न करिहैं यथा "त्वरते कार्यकालो मे अहश्चाप्यनिवर्तते । प्रतिज्ञा च मया दत्ता न स्थातव्यमिहांतरा" अथवा पद के सदृश अच्छसों छुयो अर्थ जैसे पदसों स्पर्शकरि लघुविश्राम करनो रहै तैसे केवल दृष्टिसों स्पर्श करि विश्राम कियो ४० सिंहिकाने हनुमंतको लीलि लियो ४१ ॥

तारकछंद ॥ कछु राति गये करिदश दशासी । पुरमांझ चले वनराजिविलासी ॥ जबहीं हनुमंत चले तजि शंका । मग रोकिरही तिय ह्वै तब लंका ४२ लंका ॥ कहि मोहिं उलंघ्य चले तुम कोहौ । अति सूक्षमरूप धरे मन मोहौ ॥ पठये क्यहि कारण कौन चलेहौ । सुरहौ किधौं कोउ सुरेश भलेहौ ४३ हनुमान् ॥ हम वानर हैं रघुनाथ पठाये । तिनकी

तरुणी अवलोकन आये ॥ लंका ॥ हति मोहिं महामति भीतर जैये । हनुमान् ॥ तरुणीहिं हते कबलौं सुखपैये ४४ लंका ॥ तुम मारेहिपै पुरपैठन पैहौ । हठ कोटि करौ घरही फिरिजैहौ ॥ हनुमंत बली तेहि थापर मारी । तजि देह भई तबहीं वरनारी ४५ लंका-चौपाई ॥ धनदपुरी हौं रावण लीनी । बहुविधि पापनके रसभीनी ॥ चतुरानन चितचिंतन कीन्हो । अरु करुणा करि मोकहँ दीन्हो ४६ जब दशकंठ सिया हरि लैहैं । हरि हनुमंत विलोकन ऐहैं ॥ जब वह तोहिं हतै तजि शंका । तब प्रभु होइ विभीषण लंका ४७ चलन लगो जबहीं तब कीजो । मृतकशरीरहि पावक दीजो ॥ यह कहि जातभई वह नारी । सब नगरी हनुमत निहारी ४८ ॥

दंश कहे डांस यामें कोऊ कोऊ सदेह करत हैं कि दंशरूप धरिकै गये मुद्रिका कैसे लैगये तालिये और अर्थ करि दश कहे सिंह "करिणं हस्तिनं दशतीनि करिदंश" ताको रूप करि चले तौ सिंहको औ श्वानको रूप एक होत है ताही सों श्वानको नाम ग्रामसिंह है श्वानको ग्राम में जैबो साधारण रहत है तासों श्वानको रूप धरिकै गये ४२ सूक्ष्म कहे लघुश्वान के अर्थमें सूक्ष्म कहे तुच्छ ४३। ४४। ४५ धनद कुबेर ४६ हरि वानर ४७ मृतकशरी कहे पुरीरूप मृतकशरीर लंका ने या प्रकारको वर माग्यो है ताही लिये हनुमान् लंकापुरी को जारिहैं ४८ ॥

तब हरि रावण सोवत देख्यो । मणिमयपालिककी छवि लेख्यो ॥ तहँ तरुणी बहुभांतिन गावैं । बिचबिच आवझ बीन बजावैं ४९ मृतकचितापर मानहु सोहै । चहुँ दिशि प्रेतवधू मन मोहै ॥ जहँ जहँ जाइ तहां दुरा दूनो । सिय बिन है सिगरो पुर सूनो ५० भुजगप्रयातछंद ॥ कहूं किन्नरी किन्नरी लै बजावैं । सुरी आसुरी बांसुरी गीत गावैं ॥ कहूं यक्षिणी पक्षिणी लै पढावैं । नगीकन्यका पन्नगीको नचावैं ५१

पियैं एक हाला गुहैं एक माला। बनी एक बाला नचैं चित्रशाला॥ कहू कोकिला कोककी कारिकाको। पढावैं सुआले शुकी सारिकाको ५२ फिस्यो देखिकै राजशाला सभाको। रह्यो रीझिकै वाटिकाकी प्रभाको॥ फिस्यो बीर चौहूचितै शुद्धगीता। बिलोकी भली शिंशपामूलसीता ५३॥

४६। ५० किन्नरी सारगी बांसुरी में गीत गावती हैं अथवा बांसुरीसम गीत गावती हैं ५१ हाला मदिरा सुघु जे आलय घरहैं तिनमें शुकी और सारिका मैना कोकिला जे हैं ते कोकशास्त्र की कारिका पढ़ावती हैं अथवा स्त्री कोकिला सम पढ़ावती हैं ५२ या प्रकार सब स्थानन में फिस्यो सो ऐसी राजशाला सभा कहे राजभवनमें जिनकी सभाको देखिकै रीझि रह्यो अथवा या प्रकार राजशाला औ राजसभाको देखिकै रीझि रह्यो जब सीताको तहां न देख्यो तब वाटिकाकी प्रभाको फिस्यो अर्थ वाटिका को गमन करयो शुद्धगीता सीताको विशेषण है शिंशपा सीसौ अथवा अगुरु "पिच्छिलागुरु शिंशपा इति विश्व" ५३॥

धरे एक बेनी मिली मैलसारी। मृणाली मनो पंकसों काढि डारी॥ सदा रामनामै रटै दीनबानी। चहूंवीर हैं एकसी दुःखदानी ५४ असी बुद्धिसी चित्त चिंता न मानो। कियो जीभ दतावली में बखानो॥ किधौं घेरिकै राहु नारी नलीनी। कलाचन्द्रकी चारु पीयूषभीनी ५५ किधौं जीव को ज्योति माया न लीनी। अविद्यानके मध्य विद्या प्रवीनी॥ मनो संबरस्त्रीन में काम वामा। हनूमान ऐसी लखी रामरामा ५६ तहां देवद्वेषी दशग्रीव आयो। सुन्यो देवि सीता महादुःख पायो॥ सबै अंगलै अंगही में दुरायो। अधो दृष्टिकै अश्रुधारा बहायो ५७ रावण॥ सुनो देवि मोपै कछू दृष्टि दीजै। इतो शोच तो रामकाजै न कीजै॥ बसैं दंडकारण्य देखै न कोऊ। जो देखै महाबावरो होय सोऊ ५८॥

पङ्कसदृश मैल सारा है कहूं पंक शोकाधिकारी पाठ है तौ मानों पंकयुक्त मृणाली हैं शोकाधिकारी कहे अतिशोकयुक्त दुहुनको विशेषण है ५४ । ५५ ससारविवेकिनी बुद्धि अविद्या है ईश्वरविवेकिनी बुद्धि विद्या है रामा स्त्री ५६ अति लाज भयसों अग सिकोरिकै बैठी ५७ चारि छंदको अन्वय एक है रावण कहत है कि हे देवि ! ऐसे जे रामचन्द्र हैं तिनको शोच ना करो हम जे तुम्हारे सदा दास हैं तिनपै कृपा काहे नाहीं करियत जासों अदेवी दैत्यस्त्री देवागना तिनकी रानी होउ औ वाणी सरस्वती औ मघोनी इंद्राणी मृडानी पार्वती तुम्हारी सेवा करैं औ किन्नरी सारंगीलिये किन्नरी किन्नरकन्या तुम्हारे समीप गीत गावैं औ सुकेशी और उर्वशी नाचैं तुमसों मान कहे आदर पावैं यामें आपनो प्रभाव देखायो कि ये सब इंद्रादि मेरे आज्ञाकर हैं रामचन्द्र कैसे हैं दंडकारण्य में बसत हैं अर्थ बनवासी हैं औ ऐसे छपे रहत हैं जिनको कोऊ कबहू देखत नहीं औ जो देखत हैं सो महाबावरो आपने तनकी औ भवनादि की सुधि भूलि जात है यासों या जनायो कि बावरो होत है ताही को सग्रह कोऊ नाहीं करत औ वे ऐसे हैं जिनको देखत औरऊ बावरो होनहै तासों शोच करिबे लायक नहीं हैं अनाथ के अनुसारी कहे अनुगामी हैं अर्थ यह कि काहू बड़े के अनुगामी नहीं हैं "तुम्हैं देवि दूषै हितू ताहि मानैं" इत्यादि दुवौ वचन भेद उपायके हैं सरस्वती उक्तार्थः हे देवि, हे जगदम्ब ! हम पर कछु कृपादृष्टि दीजै अर्थ तुम्हारी नेक कृपादृष्टि सों हमारो भलो होत है औ रामचन्द्रके काज एतो शोच काहे को करती हो रामचन्द्र शोचनीय नहीं हैं काहे ते वे ऐसे प्रतापी हैं कि निर्जन दंडकारण्य में बसते हैं आशय कि अति निर्भय हैं औ देखै न कोऊ अर्थ अनेक ध्यानादि उपाय योगिजन जिनके देखिबेको करत हैं ताहू पर दर्शन नहीं पावत सो छठयें प्रकाश में कह्यो है कि "सिद्ध समाधि सजैं अजहूं न कहूं जग योगिन देखन पाई" औ जो देखत है अर्थ जाको दर्शन होत है सो महाबावरो होत है अर्थ बावरे सम संसार सुख को त्याग करि जीवन्मुक्त ह्वै जात है अथवा बावरेसम देहकी सुधि नहीं रहति जैसे सुतीक्ष्ण को भयो अथवा महाबावरो महादेव होइ अर्थ महादेव सम प्रभाव को प्राप्त होइ ५८ ॥

कृतघ्नी कुदाता कुकन्याहि चाहैं। हितू नग्न मुंडी नहीं को सदा हैं ॥ अनाथै सुन्यो मैं अनाथानुसारी । बसैं चित्त-

दडी जटी मुंडधारी ५९ तुम्हैं देवि दूषैं हितू ताहि मानैं। उदा-
सीन तोसों सदा ताहि जानैं॥ महानिर्गुणी नाम ताको न
लीजै। सदा दास मोपै कृपा क्यों न कीजै ६० अदेवी नृदेवीन
की होहु रानी। करैं सेव बानी मघोनी मृड़ानी॥ लिये कि-
न्नरी किन्नरी गीत गावैं। सुकेशी नचैं उर्वशी मान पावैं ६१॥

कृत जो कर्म हैं ताके हता नाशकर्ता हैं अर्थ शुभाशुभ कर्मबंधन तोरि
दासन को मुक्त करत हैं औ कु जो पृथ्वी है ताके दाता हैं अर्थ पूर्णपृथ्वी
के दाता हैं वामनरूप है बलिसों लै इंद्रको दियो औ कु जो पृथ्वी है ताकी
कन्या जे तुम हौ तिन्हैं चाहत हैं औ नग्न औ मुंडी जे तपस्वी हैं तिनके
हितू हैं औ अनाथ कहे जिनको नाथ स्वामी कोऊ नहीं है आशय कि
आपही सबके नाथ हैं औ अनाथ कहे अशरण जे मानी हैं तिनके अनु-
सारी अनुगामी हैं जाको रक्षक कोई नहीं है ताकी रक्षा करिबेको पाछे
पाछे आपु फिरत हैं जैसे गज प्रह्लाद की रक्षा कर्‍यो औ दडी औ जटी
औ मुंडधारी जे तपस्वी हैं तिनके चित्तमें बसत हैं अर्थ राजाको सदा
ध्यान करत हैं अथवा दडी औ जटी औ मुंडधारी ऐसे जे महादेव हैं तिन
के चित्त में बसत हैं औ द्रव्यरूप लक्ष्मीको जे दूषत हैं औ उदासीन रहत
हैं ते दास विष्णुको अति प्रिय हैं औ निर्गुणी कहे प्राकृतगुणन करि रहित
हैं अर्थ अतिउत्कृष्ट गुण हैं जिनके। यथा वायुपुराणे "सत्त्वादिगुणहीन
त्वान्निर्गुणो हरिरीश्वरः" औ ता नाम कहे ताको नाम ऐसो है जा
करिकै नहीं लीजियत अर्थ जाके नामको शिव आदि देव सब जपत है
अथवा महानिर्गुणी कहे रज सत्त्व तमोगुण करि रहित है औ ताको नाम
नहीं लीजियत है अर्थ जाके नाम का जप नहीं है ऐसी जो ब्रह्मज्योति है
सो है अथवा हे देवि! जे तुम्हैं दूषत हैं तिन्हैं कहा हितू मानत है अर्थ
हितू नहीं मानत जो तुम्हारो रंचकऊ विरोधी है ताहि रामचन्द्र परम वि
रोधी मानत हैं जयंतादि ते जानौ औ तोसों उदासीन है ताहूको कहा
हितू मानत हैं अर्थ ताहूको आपनो परम हितू होइ पै विरोधीही जानत हैं
सीय खोजको वानर पठाइबे में सुग्रीव उदासीनता कर्‍यो प्रेमकरि आपुही
सों वानरन पठायो तब कोपकरि लक्ष्मण-सों विरोधीसम वचन कहि पठा
वनादि सो जाना औ महानिर्गुणी कहे उत्कृष्टगुणन करि युक्त जे रामचन्द्र

हैं तिनको नाम कहा ना लीजै अर्थ की लीजै ताही के नामसों मुक्ति प्राप्ति होति है मैं तुम्हारो सदा दासहौं सोपै कृपा काहे नाहीं कीजत सेवकपर कृपा करिबो स्वामीको उचित है अदेवीन की रानी होहु इत्यादि वचन आशीर्वादात्मक हैं कि तुम ऐसे सुखको प्राप्त होहु ५९ । ६० । ६१ ॥

मालिनीछंद ॥ तृण बिच दै बोली सीय गंभीर बानी । दशमुख शठ को तू कौनकी राजधानी ॥ दशरथसुतद्वेषी रुद्र ब्रह्मा न भासै । निशिचर बपुरा तू क्यों नश्यो मूल नासै ६२ अतितनु धनुरेखा नेक नाकी न जाकी । खल शरखरधारा क्यों सहै तिच्छताकी ॥ बिडकनघनघूरे भक्षि क्यों बाज जीवै । शिवशिरशशिश्रीको राहु कैसे सो छीवै ६३ ॥

पतिव्रतनको परपुरुषसों संभाषण अनुचित है तासों तृण कहे खरको अंतर करयो यह लोक मर्यादा है अथवा तृण अंतर में करि या जनायो कि हम प्राणको तृणसमान समुझे हैं जो तू स्पर्श करिहै तौ प्राण तृणसमान छोड़िदैहैं अथवा रावणको जनायो कि तू तृणसमान है काहे ते गंभीर वाणी बोलीं याते कछू भय नहीं सूचित होत कोऊ कोऊ तृण अंच लहूको कहत हैं तो अचल ओट सों बोली या जानौ तेरो तो मूल तबहीं नाशिगयो रहै जब हमको हरिल्यायो रहै तामें कछू लग्यो है ताको अयशी बातैं कहि अब नीकी भातिसों काहेको नाशत है ६२ तनु कहे सूक्ष्म विट् पुरीष तेरो राज्यसुख बिडकनसदृश है हम बाजसदृश हैं औ हम शिवशिरशशिसदृश हैं तू राहुसदृश है ६३ ॥

उठि उठि शठ ह्यांते भागु तौलौं अभागे । मम वचनविसर्पी सर्प जौलौं न लागे ॥ विकल सकुल देखौं आशुही नाश तेरो । निपट मृतक तोको रोष मारै न मेरो ६४ दोहा ॥ अवधि दई द्वैमासकी कह्यो राकसिन बोलि ॥ ज्यों समुझै समुझाइयो युक्ति छुरीसों छोलि ६५ चामरछंद ॥ देखि देखिकै अशोक राजपुत्रिका कह्यो । देहि मोहिं आगि तैं जो अग आगि ह्वैरह्यो ॥ ठौर पाइ पौनपुत्र डारि मुद्रिका

दई। आस पास देखिकै उठाय हाथकै लई ६६ तोमरछंद॥ जब लगी सियरी हाथ। यह आगि कैसी नाथ॥ यह कह्यो लखि तब ताहि। मणिजटित मुँदरी आहि ६७ जब बांचि देख्यो नाउ। मन पर्‍यो संभ्रमभाउ॥ आबालते रघुनाथ। यह धरी अपने हाथ ६८ बिछुरी सो कौन उपाउँ। केहि आनियो यहिठाउँ॥ सुधि लहौं कौन उपाउँ। अब काहि बूझन जाउँ ६९ चहुँओर चितै सत्रास। अवलोकियो आकास॥ तहँ शाख बैठो नीठि। तब पर्‍यो वानर डीठि ७०॥

हमारे वचननमें विमसरणशील जे सर्प हैं इहां सर्पपद ते सर्पप शाप जानौ ते जबलौं तेरे अगनमें नहीं लागे अर्थ जैसे सर्पके काटतही प्राण छूटत हैं तैसे हमारे शापसों तेरो प्राण छूटजैहै अथवा हमारे वचनही जे विसर्पी कहे प्रसरणशील सर्प हैं ते जबलौं तेरे अंगनमें नहीं लागे ६४। ६५ अरुणपत्रयुक्त अशोक वृक्ष विरह सों दाहक अग्निसम देखिपरत हैं तासों सीताजू कह्यो कि तिहारो सर्वांग आगिसम ह्वैरह्यो है सो हमको आगि तू देहि जामें जरिकै दुसह रामवियोग ताप मिटाइये इति भावार्थ ६६ सियरी शीतल ६७ आबालते कह्यो लड़िकाइहीं सों ६८ सुधि कहे खबरि ६९ नीठि कहे मरूमरकै ७०॥

तब कह्यो को तू आहि। सुर असुर मो तन चाहि॥ कै पक्षपक्षविरूप। दशकंठ वानररूप ७१ कहि आपनो तू भेद। नतु चित्त उपजत खेद॥ कहि वेग वानर पाप। नतु तोहिं देहौं शाप॥ तब वृक्षशाखारूमि। कपि उतरि आयो भूमि ७२ पद्धटिकाछंद॥ करजोरि कह्यो हौं पवनपूत। जिय जननि जानु रघुनाथदूत॥ रघुनाथ कौन दशरत्थनंद। दशरत्थ कौन अजतनयचंद ७३ केहि कारण पठये यहि निकेत। निज देन लेन संदेश हेत॥ गुण रूप शील शोभा सुभाउ। कछु रघुपतिके लक्षण बताउ ७४ अतियदपि सुमित्रानंदभक्त।

अतिसेवक हैं अतिशूरशक्र ॥ अरु यदपि अनुज तीन्यो समान । पै तदपि भरत भावत निदान ७५ ज्यों नारायण उर श्रीबसति । त्यों रघुपति उर कछु द्युति लसति ॥ जग तितने हैं सब भूमिभूप । सुर असुरन पूजैं रामरूप ७६ सीताजू–निशिपालिकाछंद ॥ मोहिं परतीति यहि भांति नहिं आवई । प्रीति कहि धौं सुनर वानरनि क्यों भई ॥ बात सब वर्णि परतीति हरि त्यों दई । आंसु अन्हवाइ उरलाइ मुँदरी लई ७७ दोहा ॥ आंसु बरषि हियरे हरषि सीता सुखद सुभाइ । निरखि निरखि पियमुद्रिकहिं बरणति हैं बहुभाइ ७८ ॥

पक्ष जो है ज्ञातिवर्ग तासों विरूप कहे अन्यरूप ७१ खेद डर पाप इत्यादि यह छंद छः चरणको है तासों गाथा जानो यथा वृत्तरत्नाकरे "शेष गाथास्त्रिभिः षड्भिश्चरणैश्चोपलक्षिताः" माघको दूसरो छन्द छः चरणको है ७२ । ७३ कछु कहे गुणादिकनमों काहूको लक्षण कह्यौ ७४ शक्र समर्थ ७५ न पूजैं कहे समता नहीं करत ७६ । ७७ भाइ कहे अभिप्राय ७८ ॥

पद्धटिकाछंद ॥ यह सूरकिरण तमदुःखहारि । शशिकला किधौं उरशीतकारि ॥ कलकीरतिसी शुभ सहित नाम । कै राज्यशिरी यह तजी राम ७९ कै नारायण उर सम लसति । शुभ अंकन ऊपर श्रीबसति ॥ वरविद्यासी आनददानि । युत अष्टापद मन शिवा मानि ८० जनु माया अक्षर सहित देखि । कै पत्री निश्चय दानि लेखि ॥ प्रिय प्रतीहारिनी सी निहारि । श्रीरामो जय उच्चारकारि ८१ पिय पठई मानो सखि सुजान । जगभूषणको भूषणनिधान ॥ निज आइ हमको सीख देन । यहि किधौं हमारो मरम लेन ८२ ॥

हमारो तम अन्धकारसदृश जो दुःख है ताकी हरनहारी है ताते किधौं सूर्यकी किरण है कला कहे अग्निन मुद्रिकामें रामनाम लिख्यो है औ कीरतिहू जा प्राणी की होति है ताके नामके साथही रहति है प्रथम ताको

नाम कहि कीरति कही जाति है राज्यश्रीहूको रामचन्द्र छोड़्यो है औ याहूको छोड़्यो है ७९ नारायणके उरमें अक जो गोद है तापर श्री बसति है अथवा अक कहे श्रीवत्सादि चिह्नपर श्री बसति है मुद्रिका में श्रीरामो जयति लिख्यो है तहां रामो जयति इन अंकनके ऊपर श्रीअक लिख्यो है शिवा पार्वती पक्ष अष्टापद कहे पशु पशुपदते सिंह अथवा वृषभ जानो "अष्टापदः शारिफले सुवर्णे स्त्री पशौ पुमान् इत्यमरः" मुद्रिकापद सुवर्ण ८० अक्षर विष्णु औ अक पिय जे रामचन्द्र हैं तिनकी प्रतिहारिणी चोपदारिनी है यामें श्रीरामो जयति लिख्यो है प्रतिहारको नामोच्चार करिबो धर्म है ८१ सखी कैसी है जगके जितने भूषण गहने हैं तिनको जो भूषण कहे भूषिबो है ताको निधान भांड़ा है अर्थ अनेकप्रकारसों भूषण पहिराइबे में चतुर है औ मुद्रिका कैसी है जगभूषण जे रामचन्द्र हैं तिनके भूषण को निधान कहे भांड़ा है अर्थ जब याको रामचन्द्र पहिरहत हैं तब अनेक भूषण पहिरेसम अपनाको मानत हैं अथवा जब या मुद्रिकाको धारण करत हैं तब अनेकभूषण पहिरेसमान छबि होति है अथवा जगके जे भूषण गहने हैं तिनको जो भूषण है सो माता को निधान कहे भांड़ा है काहेते मोहर है सब राज्यको व्यवहार मोहर के अकनसों सही होत है ८२ ॥

दोहा ॥ सुखदा सिखदा अर्थदा यशदा रसदातारि ॥ रामचन्द्रकी मुद्रिका किधौं परमगुरुनारि ८३ बहुवरणा सहज प्रिया तमगुणहरा प्रमान ॥ जगमारग दरशावनी सूरजकिरण समान ८४ ॥

परमगुरुनारि कैसी है कोमल भाषणादि करिकै सुखदा है औ सिख दाता है कि कुलांगनन को ऐसो करिबो उचित है सो करौ औ अर्थ जो प्रयोजन है ताकी दाता है कि स्त्रिनको प्रतिव्रतसों देवलोकगमन होत है यह पतिव्रत में देवलोकगमनरूप जो प्रयोजन है ताको देति है औ पतिव्रत साधन कराय यश देति है औ अनेक वचन चातुर्यादिरस कहे गुण देति है औ मुद्रिका दर्शनसों सुखदा है औ सिखदाता है काहेते शिक्षा दियो कि धैर्य धरो औ अर्थ प्रयोजन की दाता है काहे ते रामचन्द्रको संदेशरूप हमारो प्रयोजन रह्यो ताको दियो अथवा अर्थ जो ज्ञान है ताको

दाता है औ अतिमूल्याधिक्य सो जाके पास रहै ताको यशदाता है औ रस कहे प्रेमकी दाता है अर्थ रामचन्द्र प्रति प्रेम बढ़ावनहारी है "शृंगारादौ विषे वीर्ये गुणे रागे द्रवे रसः इत्यमरः" ८३ बहुबरणा कहे बहुत हैं बरण रंग अक्षर जिनके औ सहज प्रिया दुवो हैं तमगुण अधकार औ अज्ञान सूरजकिरण जगके मारग राह देखावत हैं औ मुद्रिकाहू जगमारग दरशावनी है काहेते जहाँ रामचन्द्र हैं तहाँ की राह देखायो जा मारग है हमारो मन रामचन्द्रके निकट गयो दोहा क्षेपक है ८४ ॥

श्रीपुरमें वनमध्य हों तू मग करी अनीति। कहि मुँदरी अब तियनकी को करिहै परतीति ८५ पद्धटिकाछंद ॥ कहि कुशल मुद्रिके रामगात। पुनि लक्ष्मण सहित समान तात ॥ यह उत्तर देति न बुद्धिवंत। केहि कारण धौं हनुमंत संत ८६ हनुमान्–दोहा ॥ तुम पूंछत कहि मुद्रिके मौन होति यहि नाम ॥ कंकणकी पदवी दई तुम बिन याकहँ राम ८७ दंडक ॥ दीरघ दरीन बसैं केशौदास केशरी ज्यों केशरी को देखि वनकरी ज्यों कँपत हैं। वासरकी संपति उलूक ज्यों न चितवत चकवा ज्यों चंद चितै चौगुनो चपत हैं ॥ केका सुनि व्याल ज्यो बिलात जात घनश्याम घननके घोरन जवासो ज्यों तपत हैं। भौंर ज्यों भवँत वन योगी ज्यों जगत रैनि साकत ज्यों रामनाम तेरोइ जपत हैं ८८ ॥

श्री जो राज्यश्री है तेहि पुरमें अयोध्यामें रामचन्द्रको छोड़ि दियो औ वनके मध्यमें हम छांड्यो राम हमैं तू छांड्यो सो हे मुन्दरी कहौ तियन की अब को परतीति करि है अर्थ कोऊ ना करिहै ८५। ८६ तुम्हारे विरहसों रामचन्द्र ऐसे दुर्बल भये हैं जासों याको कंकण के स्थानमों पहिरत हैं इति भावार्थ ८७ सीताजूसों हनुमान् कहत हैं कि हे सीता! तुम्हारे विरहसों रामचन्द्र ऐसी दशाको प्राप्त हैं कि दीरघ दरीनमें केशरी जो सिंह है ताके समान बरात हैं जैसे सिंह भूमिही में सोवत बैठत है कछु शयनादि सुखकी इच्छा नहा करत तैसे रामचन्द्र हैं औ केशरी पदश्लेष है करी कहे हस्ती

पक्ष सिंह जानौ रामपक्ष केशरी केशरिउ दीप कहे तासों औ वासर जो दिन है ताकी संपति कहे लक्ष्मी शोभा इति ताको उलूक जो घूघूपक्षी विशेष है ताके समान नहीं देखत घूघूको दिनको देखि नहीं परत औ रामचन्द्रको अनेक वस्तु देखि विरह उद्दीपन होत है तासों दिनमें इत उत नहीं निरखत औ चन्द्रमाको देखि चक्रवाक समान चपत हैं चन्द्रमा विरह उद्दीपन है तासों औ केका जो मोरवाणी है ताको सुनि व्याल जो सर्प हैं ताके समान बिलातजात हैं सर्प भक्षण के भयसों रामचन्द्र विरहवर्धन भयसों "केका वाणी मयूरस्य इत्यमरः" औ घनश्याम कहे सजल जे घन मेघ हैं तिनको जो घोरशब्द है तासों जवासे समँतपत हैं जवासो जलवृष्टि सों निजजरिबो जानिकै औ रामचन्द्रके विरहाग्नि ज्वलित होति है तासों औ वन में ठौर ठौर भौंरसम भवँत रहत हैं औ जैसे योगी ध्यान धारणादि करत राति बितावत हैं तैसे तुम्हारे वियोगसों विकल जे रामचन्द्र हैं तिनको रात्रिहूमें निद्रा नहीं आवति औ जैसे शाक्त कहे देवी को उपासक देवी को नाम जपत है तैसे राम तिहारोई नाम रात्रि दिन जपत हैं ८८ ॥

हनुमान्-बारिधरछंद ॥ राजपुत्रि यक बात सुनौ पुनि। रामचन्द्र मनमाहँ कही गुनि ॥ राति दीह यमराजजनी जनु। यातनानि तनजानत कै मनु ८९ ॥

दीह कहे बड़ी जो राति है सो जानौ यमराजकी जनी कहे किंकरी है ता राति करिकै कृत जो यातना पीड़ा है ताको कि हमारो तन जानत है कि मन जानत है जापै बीतति है अर्थ कहिबे लायक नहीं है अति बड़ी है औ यम किंकरनहूं करिकै कृत यातना कहिबे लायक नहीं राति अति-कठोर होति है तासों यमकिंकरी सम कह्यो ८९ ॥

दोहा ॥ दुखदेखे सुख होहिगो सुःखन दुःख विहीन ॥ जैसे तपस्वी तपतपै होत परमपदलीन ९० बरषावैभव देखि कै देखी शरद सकाम ॥ जैसे रणमें कालभट भेंटिभेंटि यत-वाम ९१ दुःख देखिकै देखि हौं तव मुख आनँदकंद ॥ तपन तापतपि द्यौस निशि जैसे शीतल चंद ९२ अपनी दशा कहा

दोहा ॥ या चौदहें प्रकाशमें ह्वैहै लंकादाह ॥ सागरतीर मिलान पुनि करि हैं रघुकुल नाह १ रावण–विजयछंद ॥ रे कपि कौन तु अक्षको घातक दूत बली रघुनंदनजीको । को रघुनंदन रे त्रिशिराखरदूषण दूषण भूषणभूको ॥ सागर कैसे तस्यो जैसे गोपद काज कहा सियचोरहि देखो । कैसे बँधायो जो सुंदरि तेरी छुई दृग सोवत पातक लेखो २ रावण–चामर-छंद ॥ कोरि कोरि यातनानि फोरि फोरि मारिये । काटि काटि फारि माँसु बांटि बांटि डारिये ॥ खाल खैंचि खैंचि हाड़ भूजि भूजि खाहुरे । पौरि टांगि रुंडमुंड लैउमद्र जाहुरे ३ विभीषण ॥ दूत मारिये न राजराज छोडि दीजई । मंत्र मित्र पूंछिके सो और दंड कीजई ॥ एकरकमारि क्यों बडो कलंक लीजई । बुंद सो कि गो कहा महासमुद्र छीजई ४ ॥

मिलान कहे विश्राम १ हम तेरी स्त्रीको सोवतमें दृगसों छुयो अर्थ देख्या तापातकसों बांधे गये तू रामचन्द्रकी स्त्रीको हरिल्यायो है तेरी अति दुर्गति ह्वै है इति भावार्थः २ हनुमान् के कठोर वचन सुनि कोपकरि रावण राक्षसन सों कहत है कोरि कोरि कहे करोरि करोरिं कहे जे यातना बाधा हैं नख क्षत ताजन दंड घातादिसों फोरि २ कहे जामें चर्म फोरि रुधिर कढ़ि आवै या प्रकार सों मारिडारो कहू ताजनानि पाठ हैं तौ ताजन कहे चाबुक औ खाल खैंचै रोमांचिके कुठारादि सों हाड़नके स्थान में काटिकै औ छुरिकादि सों फारिकै ताको मांसु बांटि २ डारिय कहे आपनो आपनो हींसा करि लीजिये औ हाड़ खैंचि कै कहे निकारि कै भूजि भूजि के खाइ डारौ रुंड पदते रुंड की खाल जानो अर्थ यह कि रुंडकी खालमें तृणादि भरिकै सबके देखिबे के लिये पौरिमें कहे पुरद्वार में टांगि देहु औ मुंडको लैकै उड़ाइ कहे उड़िकै राम पास जाउ राम पास इतिशेष जासों मुंड चीन्हि रामचन्द्र दूतको मारयो जानि दुख पावैं इति भावार्थ. ३ । ४ ॥

तूल तेल बोरि बोरि जोरि जोरि वाससी । लै अपार

रारऊन दून सूतसों कसी ॥ पूछ पौनपूतकी सवॉरि वारिदी-जहीं । अंगको घटाइकै उडाइ जात भीतहीं ५ चचरीछंद ॥ धाम धामनि आगिकी बहुज्वालमाल विराजहीं । पवनके झकझोरते झॅझरी झरोखन आजहीं ॥ वाजि वारण शारिका शुक मोर जो रण भाजहीं । क्षुद्र ज्यों विपदाहि आवत छांडि जात न लाजहीं ६ भुजगप्रयातछंद ॥ जटी अग्निज्वाला अटा श्वेत हैं यों । शरत्कालके मेघ सध्यासमै ज्यों ॥ लगी ज्वाल धूमावली नील राजैं । मनो स्वर्णकी किंकिणी नाग साजैं ७ लसैं पीत क्षत्री मठीज्वाल मानो । ढके ओढ़नी लंकवक्षोज जानो ॥ जरेजूहनारी चढी चित्रसारी । मनो चेटका में सती सत्यधारी ८ कहूं रैनिचारी गहे ज्योति गाढ़े । मनो ईशरोषाग्नि में काम डाढे ॥ कहूं कामिनी ज्वालमालानिभौरैं । तजैं लालसारी अलंकारतोरैं ९ ॥

तूलरुई वाससी वस्त्र ५ झँझरीके जे झरोखा कहे छिद्र हैं तिनमें आ-जहीं कहे शोभित हैं जैसे क्षुद्र प्राणी जाके पास रहत हैं ताको कछु विपत्ति परै तो सहाय नहीं करत ताको छोड़िकै भागत हैं लजात नहीं हैं तैसे अग्नि दाहकी जो विपत्ति है तामें वरणादि सब भागत भये ६ नाग कहे हाथी, ७ वक्षोज कुचसम पीत क्षत्री हैं ओढ़नी सम अग्निज्वाल हैं ८ भौरे कहे भ्रमसों अलंकार, स्वर्णभूषण ९ ॥

कहूं भौन राते रचे धूम छाहीं । शशी सूर मानो लसैं मेघ माहीं ॥ जरे शस्त्रशाला मिली गधमाला । मिले अद्रि मानो लगी दावज्वाला १० चली भागि चौहूंदिशाराजधानी । मिली ज्वालमाला फिरैं दुःखदानी ॥ मनो ईशबाणावलीलाललोलैं । सबै दैत्यजायानके सग डोलैं ११ सवैया ॥ लंक लगाइदई हनूमत विमान बचे अतिउच्च रुची है । पात्रि फटैं उन्नटैं

बहुधामणि रानी रटैं पानी पानी दुखीह्वै ॥ कचनको पविल्यो पुर पूरपयोनिधि में पसरैति सुखी ह्वै । गगहजारमुखी गुनि केशौ गिरा मिली मानो अपार मुखी ह्वै १२ ॥

शशी कहे श्री जो प्रताप है त्यहिसहित प्रताप रहित सूर्यको रगश्वेत है प्रताप सहित अरुण है तासों शशी कह्यो अथवा कि शशी कहे चन्द्रमा सहित मानो सूर्य लसत हैं अर्थ चन्द्रयुक्त सूर्य होते हैं तब सूर्यग्रहण होतहै सो मानो ग्रहण समय में सूर्य शोभित हैं इत्यर्थ. औ कि मानो सूर्य मेघनमें शोभितहैं। यथा सिद्धांतरहस्ये "छादयन्त्यर्कमिन्दुरिति" सर्पसम शस्त्र हैं चदन गधसम गध है १० महादेव त्रिपुरके भस्म करिबेको बाण चलायो है ते बाण दैत्य जाया जे दैत्यस्त्री हैं तिनके भागतमें तनमें लागे भस्म कर्‍यो है मानो तेई हैं बाणावलीसम ज्वालामाला हैं दैत्यजाया सम राक्षसी हैं ११ पाचि कहे पद्मामणि अथवा पाचि कहे पाकिकै फटैं कहे फूटती हैं ते मणि बहुधा उचटती हैं कहे उछरती हैं गंगको सहस्रमुखी कहे सहस्रधारा है समुद्र को मिली गुणि के गिरा जो सरस्वती हैं सो मानो अतिसुखी हैकै अपार कहे अगण्यमुखी हैकै समुद्रको मिली हैं सुवर्ण द्रव सरस्वती के जल सम है १२ ॥

दोहा ॥ हनुमतलाई लक सब बच्यो विभीषणधाम ॥ ज्यों अरुणोदय बेरमें पंकज पूरबयाम १३ सयुताछद ॥ हनुमत लंकलगाइकै । पुनि पूछ सिंधु बुझाइकै ॥ शुभ देखि सीतहि पाँपरे । मणि पाय आनँदजीभरे १४ रघुनाथपै जबहीं गये । उठि अंकलावनको भये ॥ प्रभु मैं कहा करणी करी । शिर पायकी धरणी धरी १५ दोहा ॥ चिन्तामणिसी मणि दई रघुपतिकर हनुमंत ॥ सीताजी को मनरँग्यो जनु अनुराग अनत १६ ॥

हनुमान् करिकै लाई कहे जारी जो जरति सब लंका है तामें बच्यो जो विभीषण को धाम है सो ज्वालमध्य कैसो शोभित है जैसे पूर्वयाम कहे प्रथम पहर अरुण जे सूर्य हैं तिनके उदयके बेरमें कही समय में पंकज कमल शोभित हैं जैसे कमल रात्रि को मुकुलित रहत है प्रातही सूर्योदय

होत अति प्रफुल्लित है प्रकाशको प्राप्त होत है तैसे रावणको प्रभावरूपी जो रात्रि है तामें विभीषणको धामको उदासीन रह्यो सो ताक में रामप्रतापरूपी सूर्योदयसों घामसम जो अग्नितेज है तामें शोभित भयो पूर्वयाम कहि या जनायो कि ज्यों ज्यों सूरजसम प्रताप अधिक उदयको प्राप्त ह्वैहै त्यों त्यों कमलसम विभीषणको घर अधिक प्रकाशको प्राप्त ह्वैहै इति भावार्थः पूर्व याम यासों कह्यो कि मेघादि करिकै आच्छादित है मेघनसों कहि तृतीयादि पहरहू में उदित कहावत है १३ वाल्मीकीयरामायण में कह्यो है कि लंकदाहिकै हनुमान् पश्चात्ताप कर्‌यो है यामें सीताहू जरिगई ह्वैहैं तासों फेरि सीताके पास जाइ सीताको शुभ कहे सकुशल देखिकै मणिसम पाइकै आनद जी में भरत भये जैसे कछू मणि रत्न पाये आनद होत है तैसे भयो १४ । १५ । १६ ॥

दोधकछंद ॥ श्रीरघुनाथ जबै मणि देखी । जीमहँ भाग दशा समलेखी ॥ फूलि उठ्यो मनु ज्यों निधि पाई । मानहुँ अधसो दीठि सुहाई १७ तारकछद ॥ मणि होहि नहीं मनु आहिं सियाको । उरमें प्रगट्यो तन प्रेमदियाको ॥ सब भागि गयो जो हुतो तमछायो । अब मैं अपने मनको मनपायो १८ दरशै हमको बिनही दरशाये । उरलागति आइ बलाइ लगाये ॥ कुछ उत्तर देति नहीं चुप साधी । जिय जानति है हमको अपराधी १९ हनुमान् ॥ कछु सीयदशा कहि मोहिं न आवै । चर का जड़ बात सुने दुख पावै ॥ शरसों प्रति-वासर वासर लागै । तनघाव नहीं मन प्राण न खागै २० ॥

भाग्य की दशा कहे अवस्था १७ प्रिया प्रियकै मनसों मन मिले अति प्रेम प्रकट होत है यह प्रसिद्ध है सो रामचन्द्र कहत है कि तामणिको देखि प्रेमरूपी जो दिया कहे दीपक है ताको तनु कहे स्वरूप ज्योति इति हमारे उरमें प्रकट भयो तासों यह सीता को मन है जा दीप के प्रकट भये सों हमारे मन में जो तम अंधकार छाया रहै सो सब भागि गयो तो इहां तम पदते अज्ञान अथवा वियोग दुःख जानो ता तमसे हमारे मनको रावण

वचरूप अथवा कर्तव्य वस्तु विचाररूप जो मत हिरानो रहै ताको पायो १८ अब यह दरशायेहू कहे हमारी ओर निहारो यह कहेहू पर हमको नहीं दरशै कहे देखति अर्थ हमारी ओर नहीं निहारति औ जब बरयाइ कहे जबरई आपने हाथनसों उर में लगाइयत है तब लागति है आपनी ओर सों नहीं लागति १६ चर कहे जंगम मनुष्यादि जड़ वृक्षादि प्रतिवासर कहे रोज रोज अर्थ निरंतर वासर जो दिन है अथवा रागभेद जो रावण के मंदिरन में नित्य राग होत है सो सीता के शर कहे बाण सम लागत है सो शरके लागे तन में घाव होत है वा शरके लागे तन में घाव नहीं होत औ मन औ प्राणन में लागै कहे लपटात है अर्थ मन औ प्राणनको छेदत है "वासरो रागभेदेह्नीत्यभिधानचिन्तामणिः" २० ॥

प्रतिअंगनके सँगही दिन नासै। निशि सों मिलि बाढ़ति दीह उसासै ॥ निशि नेकहु नींद न आवति जानो। रवि की छवि ज्यों अधरात बखानो २१ घनाक्षरी॥ भौंरनी ज्यों भ्रमत रहति वनवीथिकानि हंसिनी ज्यों मृदुलमृणालिका चहति है। हरिणी ज्यों हेरति न केशरीके काननहिं केका सुनि व्याली ज्यों बिलानहीं चहति है॥ पीउपीउ रटत रहति चित चातकी ज्यों चंदचितै चकई ज्यों चुप ह्वै रहति है। सुनहु नृपति राम विरह तिहारे ऐसी सूरतिन सीताजूकी मूरति रहति है २२॥

शरदृऋतु सों शिशिर पर्यंत दिनमान घटत है रात्रिमान बाढ़त है सो हनुमान् शरदृऋतु में गये सो लंका जारिकै शरदमों अथवा हेमंतमों रामचन्द्रके पास आये हैं सो रामचन्द्रसों कहत हैं कि जैसे या समय के दिन मर्याद करिकै नाशै कहे घटत हैं तैसे सीता के सब अंग घटत हैं दूबरे होत हैं औ ज्यों ज्यों निशा बाढ़ति है त्यों त्यों दीह उसास बाढ़ति है दूसरो अर्थ खुलो है अधरातिमों जैसे रविकी छवि नेक नहीं रहति तैसे सीता की रातिकै नींद नहीं आवति अधरात कहे अति विनिद्रता जनायो जैसे तुलसी कृतमों कह्यो है कि "सिरस कुसुम कहुँ बेधत हीरा" २१

भौंरनी सम मन अशोक वाटिका की वीथिकानि में कहे गलीन में भ्रमत रहति है अथवा मन करिकै वनवीथिकानि में भ्रमत रहति है तुम्हारो वियोग वनहींमों भयो है तासों सीताको मन वन वन भ्रम्यो करत है हसिनी सुखभाव से सीता शीतलता के लिये केशरी सिंह औ कुंकुम हरिणी वध भयसों सीता विरहोद्दीपन भयसों २२ ॥

सीताजूसंदेश–दोहा ॥ श्रीनृसिंह प्रह्लादकी वेद जो गावत गाथ ॥ गये मास दिन आशुही झूठी ह्वैहै नाथ २३ आगम कनककुरंगके कही बात सुखपाइ ॥ कोपानल जरि जाय जनि शोक समुद्र बुड़ाइ २४ ॥

नृसिंहरूप ह्वै खंभको फारि निकसि प्रह्लाद की रक्षा करयो यह जो गाथा वेद गावत हैं सो हमप्रति रावण कृत जे अवधि मास के दिन हैं तिनके गये कहे बीते आशुही कहे थोरेही दिनमों झूठी ह्वै है अवधि दिन बीते रावण हमको मारिडारि है तब सब कहिहैं कि साक्षात् श्री सीता की रक्षा रावणसों न करयो तो असंबधी प्रह्लादकी रक्षा कहा करयो हैहै इति भावार्थ जे वनकृत अवधि दिन तेरहें प्रकाश में कह्यो है अवधि दई द्वैमास की सो जानो अथवा मास दिन कहे एक महीना गये कहे बीते अर्थ एक महीना के बाद हम प्राण छोड़ि देहैं बाल्मीकीय में कह्यो है "इदं ब्रूयाश्च मे नाथं शूरं रामं पुनः पुनः । जीवितं धारयिष्यामि मासं दशरथात्मज ॥ ऊर्ध्वं मासान्न जीवेयं सत्येनाहं ब्रवीमि ते" २३ "राज सुता यक मंत्र सुनौ । अब चाहतहौं भुवभार हनौं ॥ सब पावक में निज देहहिं राखहु । छाया शरीर मृगै अभिलाखहु" या प्रकार राक्षसन को मारि भुवभार हरिबो कह्यो रहै सो बात कोपानल में जरन न पावै औ शोकरूपी समुद्र में बूड़न न पावै ता बात की रक्षा तुमको नीके प्रकार सों करिबे है २४ ॥

राम–दंडक ॥ सांचो एक नाम हरि लीन्हे सब दुख हरि और नाम परिहरि नरहरि ठागेहो। वानर नहीं हो तुम मेरे बाणरोपसम वलीमुख शूर वली मुख निज गाये हो ॥ शाखामृग नाहीं बुद्धिबलनके शाखामृग कैधों वेद शाखा

मृग केशव को भायेहौ। साधु हनुमत बलवत यशवत तुम गये एक काजको अनेक करि आयेहौ २५ हनुमान्–तोमर छंद॥ गये मुद्रिकालै पार। मणि मोहिं ल्याईबार॥ कह कह्यो मैं बल एक। अतिमृतक जारीलक २६॥

सीताको सदेश दैकै हमारो सब दुःख तुम हरिलीन्हों ताते हरि यह जो तुम्हारो नाम है सो सांचो है। हरति दु खमिति हरिः। अर्थ जो दुःख को हरै सो हरि कहावै सो तुम नरहरि कहे नृसिंह हौ और नाम जो नर है ताको परिहर कहे छोंड़िकै हरि एतेनाम सों ठाये कहे युक्तहौ यासों या जनायो कि प्रह्लाद के समान तुम हमारो दु ख हरयो है अथवा और जे नाम हैं इन्द्रादिक तिनको परिहरि कहे छोड़िकै नरहरि कहे नृसिंह यह जो नाम है ताके सम ठाये हौ अर्थ इंद्रादिकन की समता करिबेलायक तुम नहीं हौ विक्रमादि करिकै तुम नृसिंह के समानहौ मेरे बाणको जो रोष क्रोध है ताके सम हौ अर्थ जैसे हमारे बाण को क्रोध निष्फल नहीं होत तैसे तुम निष्फल नहीं होत जो कार्य करिबो चाहौ सो करिही आवो अथवा मेरे बाण के समहौ औ मेरे रोष के समहौ कहूं बाण रस सम पाठ है तौ बाणका जो रस कहे बल है ताके समहौ अर्थ जैसे हमारे बाणमें बल है तैसे तुम्हारे बल है "शृङ्गारादौ विषे वीर्ये द्रवे रागे गुणो रसः इत्यमरः" हे बलीमुख, शूर। अर्थ बलीमुख जे वानर हैं तिनमें शूर कहे वीर बली जे बलवान् हैं तिनके मुखन करिकै निज कहे निश्चय करिकै गायेहौ अर्थ बड़े बड़े बलवान् तुम्हारो बखान करत हैं औ शाखा जे वृक्ष शाखा हैं तिनके मृग कहे गामी तुम नहींहौ बुद्धि बलनके जे शाखा हैं तिनके गामीहौ अर्थ अनेक बुद्धिबल करि कारज साधतहौ औ कि वेदकी जे कला आदि शाखा हैं तिनके मृग कहे गामीहौ अर्थ वेदाध्ययन मों प्रवीण हौ एक कार्य सीय खोज अनेक कार्य लंका दाहादि २५। २६॥

अति हत्यो बालक अक्ष। लैगयो बांधि विपक्ष॥ जड़ वृक्ष तोरे दीन। मैं कहा विक्रम कीन २७ तिथि विजय दशमी पाइ। उठि चले श्रीरघुराइ॥ हरियूथ यूथप संग। बिन पक्षकैतिपतंग २८॥

विपक्ष कहे शत्रु जो मेघनाद है सो म्वहिं बांधि लै गयो २७ शरत्काल में सीता के ढूँढ़िवेके लिये वानरनको रामचन्द्र पठायो है औ मास दिवस की अवधि दई है सो समुद्रतटमें अंगद कह्यो है कि " सीय न पाई अवधि बिताई " तौ शीतकाल के मास सों अधिक दिन बीते औ अमरकोश में कह्यो है कि " द्वौ द्वौ माघादि मासौ स्यादृतुः " या मतसों कार औ कार्त्तिक है मास शरत्काल जानो औ कारशुक्ल दशमी विजयदशमी कहावति है ताको रामचन्द्र चले यह विरोध है तहां और अर्थ दशमी तिथिमों विजय-नामा मुहूर्त्तको पाइकै श्रीरामचन्द्र चले यथा । बाल्मीकीये " अभिजिन्मुहूर्त्ते सुग्रीवप्रयाणमभिरोचय । युक्तो मुहूर्त्तो विजयः प्राप्तो मध्यं दिवाकरः " कैसे हैं हरियूथ विना पक्षके पतंग कहे पक्षी हैं अर्थ बिन पंख पक्षीसम उड़त हैं २८ ॥

समुझैं न सूरप्रकाश । आकाशवलितविलाश ॥ पुनि ऋक्ष लक्ष्मण संग । जनु जलधि गंगतरंग २९ सुग्रीव—दंडक ॥ केशवदास राजचन्द्र सुनो राजा रामचन्द्र रावरी जबहिं सैन उचकि चलति है । पूरति है भूरि धूरि रोदसिहि आस पास दिशि दिशि वरषा ज्यों वलनि वलति है ॥ पन्नग पतंग तरु गिरि गिरिराज गजराज मृग मृगराज राजनि दलति है । जहां तहां ऊपर पताल पय आइ जात पुरइनि कैसे पात पुहुमी हलति है ३० ॥

वानरनके संग में लक्ष्मन ऋक्ष हैं सो वानर औ ऋक्ष कैसे शोभित हैं जानो जलधि औ गंगके तरंग हैं जलधि तरंग राम ऋक्ष हैं गंगतरंग सम वानर हैं २९ रोदसी कहे भू आकाश " द्यावाभूमी च रोदसी इत्यमर " वलनि कहे वानर यूथनि औ मेघ समूहनि करि दिशि दिशि कहे दशौ दिशानिको वलित कहे आच्छादित करति है पन्नग सर्प पतंग पक्षी ३० ॥

लक्ष्मण ॥ भारके उतारबेको औतरेहो रामचन्द्र किधौं केशौदास भूरिभारत प्रवलदल । टूटतहैं तरुवर गिरे गण गिरिवर सूखे सब सरवर सरिता सकल जल ॥ उचकि

चलत हरि दचकनि दचकत मच ऐसे मचकत भूतलके थल थल। लचकि लचकि जात शेषके अशेष फण भागि गई भोगवती अतल वितलतल २१ गीतिकाछंद॥ रघुनाथजू हनुमंत ऊपर शोभिये तिहि कालजू। उदयाद्रिशोभन शृंग मानहुँ शुभ्रसूर विशालजू॥ शुभअंग अंगदसंग लक्ष्मण लक्षिये बहुभांतिजू। जनु मेरु मंदर संग अद्भुत चन्द्र राजत रातिजू २२ दोहा॥ बलसागर लक्ष्मण सहित कपिसागर रणधीर॥ यशसागर रघुनाथजू मेले सागरतीर २३॥

भोगवती कहे नागपुरी २१ अंगदके ऊपर शुभ अंग जे लक्ष्मण हैं तिन्हें रामचन्द्र के संग बहुभांति सों लक्षिये कहे देखियत है मेरु कहे सुमेरु के शृंग में कै मदर कहे मदराचल के शृंगमें रातिको चंद्र राजत है २२ कपिसागर कहे कपिनकी सागर सदृश सैन्य २३॥

विजयाछंद॥ भूति विभूति पियूषहुकी विष ईशशरीर कि पाय वियोहै। है किधौं केशव कश्यपको घर देव अदेवन के मन मोहै॥ सत हियो कि बसै हरि संतत शोभ अनत कहै कवि कोहै। चंदननीरतरंगतरंगित नागर कोउ कि सागर सोहै २४ गीतिकाछंद॥ जलजाल कालकरालमाल तिमिंगिलादिकसों बसै। उर लोग क्षोभ विमोह कोह सकाम ज्यों खलको लसै॥ बहु संपदायुत जानिये अतिपातकी सम लेखिये। कोउ मांगनो अरु पाहुनो नहिं नीर पीवत देखिये २५॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांसमुद्रतटरामसैन्यनिवेशनन्नामचतुर्दश॰ प्रकाशः॥ १४॥

ईश कहे महादेव केशरी पक्ष भूति कहे अधिक है विभूति कहे भस्मकी

औ पियूष कहे अमृतकी अमृत युक्त चन्द्रमा धारण करे हैं तासों औ विष को सागर पक्ष भूति कहे उत्पत्ति है विभूति कहे रत्नादि द्रव्य औ पियूष कहे अमृत औ विषकी जासों देव अदेव कश्यपके पुत्र हैं तासों पिताको घर पुत्रन को लाग्योई चाहै औ समुद्र की दीर्घता देखि देव अदेव मोहित कहे मूर्च्छित होत हैं नागर कहे नगर श्रेष्ठ सों चदन को जो नीर कहे उद्धर है ताके जे तरग हैं तासों तरंगित चित्रित है अर्थ अंगनमों नीकीविधि चदन लेपकरे हैं सागर पक्ष चदन वृक्ष करिकै नीरके तरग तरंगित हैं जाके अर्थ जाके तरगमें चंदन वृक्ष बहत है जो कहौ अमृतोत्पत्ति औ हरिशयन क्षीरसागरमों है तौ इहां समुद्रकी जातिमात्रको वर्णन है लवण क्षीरभेद सों नहीं है सो जानो २४ जा समुद्रको जलको जाल कहे समूह जो है सो कालहूते कराल जे तिमिंगिल मत्स्यभेद हैं तिन्हैं आदि जे जलजीव हैं तिनसों कहे तिन सहित बसत हैं अर्थ जा जलमें तिमिंगिलादि रहत हैं आदि पदते ग्राहादि जानो सो कैसो शोभित है जैसे लोभ औ क्षोभ कहे डर औ विमोह औ कोह कहे क्रोध औ काम सहित खलको दुष्टको उर लसत है औ बहुत संपत्ति रत्नादिसों युक्त है ताहूपर कोऊ मांगनो कहे याचक अर्थ जे रत्नादि लेने के लिये जात हैं पाहुनो कहे नातो विष्णु आदि तिनको नीर जल पीवत नहीं देखियत ताते बड़े पातकीसम लेखियत है गोवधादि पापयुक्त बड़े पातकीहू को जल अति संपत्तिहू के लोभसों कोऊ नहीं पीवत इति भावार्थः २५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकी-
प्रसादनिर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायां चतुर्दशःप्रकाशः ॥ १४ ॥

दोहा ॥ यह प्रकाश दशपंचमें दशशिर करै विचार ॥ मिलन विभीषण सेतु रचि रघुपति जैहैं पार १ ॥ रावण—गीतिकाछंद ॥ सुरपाल भूतलपालहो सब मूलमन्त्रते जानिये । बहुमन्त्र वेद पुराण उत्तम मध्यमाधम गानिये ॥ करिये जो कारज आदि उत्तम मध्यमाधम भानिये । उरमध्य आनि अनुत्तमै जे गये ते काज बखानिये २ स्वागताछंद ॥ आजु

मोहिं करने सो कहोजू। आपु मांह जनि रोष गहोजू॥ राजधर्म कहिये छवि छाये। रामचन्द्र नहिं जौलगि आये ३॥

सब महोदरादि जे राक्षस हैं तिनसों रावण कहत है कि तुम सब सुरपाल जे इंद्र हैं तिनको जो भूतल स्वर्ग है ताके पालनहार हौ अर्थ इद्रलोक में राज कस्यो है आशय यह कि मंत्रनहीं के जोरसों इद्रको जीति इद्रलोक अमल्यो अथवा सुरपाल इद्रसम भूतलपाल हौ इंद्रको ऐसो राज्य करतहौ सो मूलमंत्र कहे सिद्धांतमत्र अर्थ जिनसों शत्रुकी पराजय आपनो जय होय ऐसे मंत्र जानिये कहे जानत हौ वेद पुराणन में बहुत जे मत्र हैं तिन्हैं उत्तम औ मध्यम औ अधम तीनि प्रकारके वेद पुराणन करिकै गाइयत है अर्थ वेद पुराण कहत हैं यथा शास्त्रकी दृष्टिसों अर्थ जैसो शास्त्र कहत है ताही विधिसों एकमत ह्वैकै मत्र ठहरावै सो मंत्र उत्तम हैं औ जहां मंत्रीजन आपने मनको मत्र भिन्न २ कहैं फिरि राजभयादि कारण सों उदासीनता सों एकमत ठहरावैं सो मत्र मध्यमहै औ जो मंत्री अपनेही अपने मनको मत भिन्न भिन्न कहैं एकमत कैसेहू ना होइ सो मत्र अधम है। यथा वाल्मीकीये "ऐकमत्यमुपागम्य शास्त्रदृष्टेन चक्षुषा। मन्त्रिणो यत्र निरतास्तमाहुर्मन्त्रमुत्तमम् १ बह्वीरपि मतीर्गत्वा मन्त्रिणामर्थनिर्णयः॥ पुनर्यत्रैकतामाप्तः समन्त्रो मध्यमः स्मृतः २ अन्योन्यं मतिमास्थाय यत्र सम्प्रतिभाष्यते। न च कर्मण्यश्रेयोस्ति मन्त्रःसोधम उच्यते ३" तिन तीनहूं प्रकारके मंत्रन में आदि उत्तम जो कारज है ताको करिये अर्थ एकमत ह्वै कारज करिये औ मध्यम औ अधमको भानिये कहे दूरिकरो ऐसे समय में जे अनुत्तम काज व्यतीत ह्वै गये अर्थ आपनेही आपने मनकी सब मिलि कह्यो तिन बातन को उरमें आनिकै बखानिये कहे कहतहौ अर्थ ऐसे समय मों ऐसी बात कहिबो उचित नहीं है तासों एकमत ह्वै मत्र करौ १।२।३॥

प्रहस्त॥ वामदेव तुमको वर दीन्हो। लोकलोक सिगरे वश कीन्हो॥ इंद्रजीत सुत सो जग मोहै। रामदेव नर वानर को है ४ मृत्युपाश भुजजोरनि तोरे। कालदंड तुम सों कर जोरे॥ कुंभकरण सम सोदर जाके। और कौन मन आवत ताके ५ कुंभकर्ण—चतुष्पदी॥ आपुन सब जानत कह्यो न

मानत कीजै जो मनभावै । सीता तुम आनी मीचु न जानी आन कि मन्त्र बतावै ॥ जेहि बर जग जीत्यो सर्ब अतीत्यो तासों कहा बसाई । अतिभूल गई तब शोच करत अब जब शिर ऊपर आई ६ मंदोदरी-विजयछंद ॥ रामकि वाम जो आनी चोराइ सो लंकमें मीचु कि बेलि बईजू । क्यों रण जीतहुगे तिनसों जिनकी धनुरेख न नांघिगईजू ॥ बीस बिसे बलवत हुते जो हुती दृग केशव रूपरईजू । तोरि शरासन शंकरको पिय सीयस्वयबर क्यों न लईजू ७ ॥

वामदेव महादेव सरस्वती उक्तार्थः ॥ रामचन्द्र देव हैं नर औ वानरको हैं इहां देवपदते ईश्वर जानो अर्थ रामचन्द्र ईश्वर हैं औ सुग्रीवादि वानर सब देवसैन्य हैं ४ । ५ बर कहे बल अर्थ तपोबल अथवा शिवादि के वरसों सब अतीत्यो कहे बीतो तासों कहा बसाइ कहे जोर चलै अर्थ अब नाशको समय आयो सोई तुम सों ऐसे सीयहरणादि कार्य करायो है अथवा जेहि शिव औ ब्रह्मा के वरसों जग को जीत्यो सो वरदान सब बीतो काहेते कि यह वर दीन रह्यो कि नर वानर को छोड़िकै और सों तुमको भय न हैहै सो नर औ वानरही लरिबे को आवत हैं सो वानर को प्रभाव तौ कछु यामें चलि है नहीं सो तुमको तब कहे सीयहरणादि समयमों यह सुधि भूलगई कि हमको नर वानरसों भय है जब शिर ऊपर आई है तब शोच करत हौ सो तासों कहा बसाइ कहे जोर चलै अर्थ अब मृत्युते रक्षाको कछु उपाय नहीं है ६ जो तुम्हारे दृगनमों सीतारूप जो सौंदर्य है ता करिकै रई कहे बसी रहे ७ ॥

बालि बली न बच्यो चरखोरिह क्यों बचिहौ तुम आपनी खोरहि । जालगि क्षीरसमुद्र मथ्यो कहि कैसे न बांधि है बारिधि थोरहि ॥ श्रीरघुनाथ गनौ असमर्थ न देखि विना रथ हाथिन घोरहि । तोस्यो शरासन शंकरको जेहि सोव कहा तुव लंक न तोरहि ८ मेघनाद-दोहा ॥ मोको आगसु

होइ जो त्रिभुवनपाल प्रवीन । रामसहित सब जग करौं नर वानर करि हीन ९ विभीषण-मोटनकछंद ॥ कोहै अतिकाय जो देखिसकै । को कुंभ निकुभ वृथा जो बकै ॥ कोहै इद्रजीत जो भीर सहै । को कुभकर्ण हथ्यारु गहै १० ॥

जालगि कहे जालक्ष्मीरूप जे सीता हैं तिनके लिये ८ सरस्वती उक्तार्थ ॥ मेघनाद कहत है कि जो मत्र कहिबे को हमको आज्ञा होइ तौ हम कहियत हैं कि त्रिभुवनपाल कहे तीनों लोक के रक्षाकरणहार औ प्रवीण कहे विवेकी या सों या जनायो कि केवल समदृष्टिही सों नहीं प्रतिपाल करत भक्तनपर अति कृपा शरणागतरक्षण शत्रुनाशादि कर्म यथोचित करत हैं ऐसे जे रामचन्द्र हैं तिनहीं करिकै सहित सब जग है अर्थ रामचन्द्रही सर्वत्र व्याप्त हैं अर्थ कि विष्णु हैं यथा वृत्तरत्नाकरे " म्यरस्तज भ्नगैलान्तैरेभि र्दशभिरक्षरैः ॥ समस्त वाङ्मय व्याप्त त्रैलोक्यमिव विष्णुना " इनको नर औ वानर करिकै हीन करौ कहे करि मानतहौं अर्थ रामचन्द्र विष्णु हैं वानर सब देवता हैं अगदहू सोरहें प्रकाश में कह्यो है कि कौन इहां नर वानर कोरे ९ । १० ॥

देखे रघुनायक धीर रहै । जैसे तरुपल्लव वात वहै ॥ जौलौं हरि सिंधु तरैइतरै । तौलौं सिय लै किन पाइँ परै ११ जौलौं नलनील न सिंधु तरै । जौलौं हनुमंत न दृष्टि परै ॥ जौलौं नहिं अंगद लंकढही । तौलौं प्रभु मानहु बात कही १२ जौलौं नहिं लक्ष्मण बाण धरै । जौलौं सुग्रीव न क्रोध करै ॥ जौलौं रघुनाथ न शीश हरैं । तौलौं प्रभु मानहु पाइँ परैं १३ रावण-कलहसछंद ॥ अरिकाज लाज तजिकै उठि धायो । धिक तोहिं मोहिं समुझावन आयो ॥ तजि रामनाम यह बोल उचार्यो । शिरमांझ लात पग लागत मार्यो १४ ॥

अर्थ रघुनाथको देखि अतिकायादिकन के काहूके धीर न रहि है ११ । १२ । १३ रामनामको तजि कहे छोड़ यह बोलु रावण उचार्यो कहे

कह्यो सरस्वती उक्तार्थः अरि कहे शत्रुके काजसों लाज तजिकै उठिधायो है अर्थ रामचन्द्र के हाथ मृत्यु सो हमारी मुक्तिहैहै तामें चाहिये कि तू भाई है सहाय करै सो तू शत्रुता करत है जामें याकी मुक्ति न होइ यामें तोको लाज नहीं है भाई हैकै शत्रुको काम करत है तोको धिक् है जो मोहिं समुझावत है कि रामचन्द्रसों न लरौ अथवा मोहि कहे मोहवश ह्वैकै रामको नाम जो जपत रह्यो ताको तजिकै यह बोल उचार्‍यो कहे येती कथा कर्‍यो यह कहिकै पायँन में परत विभीषण के शिर में लात मार्‍यो १४ ॥

करि हायहाय उठि देह सँभारेउ । लिय अंगसंग सब मंत्रिय चारेउ ॥ तजि अघबंधु दशकध उड़ान्यो । उर रामचंद्र जगतीपति आन्यो १५ दोहा ॥ मन्त्रिन सहित विभीषण बाढी शोभ अकास । जनु अलि आवत भावतो प्रभुपद पद्मनिवास १६ चौपाई ॥ निकट विभीषण आवत जाने । कपिपतिसों तबहीं गुदराने ॥ रघुपतिसों तिन जाइ सुनायो । दशमुख सोदर सेवहि आयो १७ श्रीराम ॥ बुधिबलवत सबै तुम नीके । मत सुनलीजै मंत्रिनहीके ॥ तब जो विचार परै सोइ कीजे । सहसा शत्रु न आवन दीजे १८ अंगद–सुंदरी छंद ॥ रावणको यह सांचहु सोदरु । आपु बली बलवंत लिये अरु ॥ राकसवंश हमैं हतने सब । काज कहा तिनसों हम सों अब १९ वध्यविरोध हमैं इनसों अति । क्यों मिलि है हमसों तिनसों मति ॥ रावण क्यो न तजो तबहीं इन । सीय हरी जबहीं वह निर्घृन २० नल ॥ चार पठै इनको मत लीजिय । ऐसेहि कैसे विदा करिदीजिय ॥ राखिय जो अति जानिय उत्तम । नाहिं तो मारिय छोड़ि सबै भ्रम २१ ॥

१५ । १६ कपि जे वानर हैं तिनके पति जे सुग्रीव हैं तिनसों गुदराने कहे कहत भये १७ । १८ । १९ वध्य कहे वध करिबेलायक निर्घृन कहे [illegible] २० चार कहे दूत २१ ॥

नील ॥ सांचेहु जो यह है शरणागत। राखिय राजिव-लोचन मोमत ॥ भीत न राखिय तौ अतिपातक। होइ जो मातु पिताकुलघातक २२ हनूमान्–हरिलीलाछद ॥ जानों विभीषण न राकस रामराज। प्रह्लाद नारद विशारद बुद्धि-साज ॥ सुग्रीव नील नल अगद जामवत। राजाधिराज बलिराज समान सत २३ दोहा ॥ कहन न पाई बात सब हनूमंत गुणधाम ॥ कह्यो विभीषण आपुही सबन सुनाइ प्रणाम २४ सवैया ॥ दीनदयाल कहावत केशव हौं अतिदीन दशा गह्यो गाढो। रावणके अघओघमें केशव बूड़तहौं वरहीं गहि काढ़ो ॥ ज्यों गजकी प्रहलाद कि कीरति त्योंहीं विभीषणको यश बाढो। आरतबंधु पुकार सुनो किन आरत हौं तो पुकारत ठाढो २५ ॥

जो माता औ पिता औ कुलको घातकहू होय औ भीतह्वैकै आवै ताको न राखौ तौ बड़ो पातक है अथवा जो माता पिता औ कुलघातकको पातक होत है सोई पातक जो भीतको ना राखै ताको होत है २२ प्रह्लाद औ नारद के समानहैं विशारद कहे धृष्ट परिपक इति बुद्धिकी साज जिनकी अर्थ प्रह्लाद व नारद सम तुम्हारो भक्त है "विशारद पण्डिते च धृष्ट इति मेदिनी" २३। २४ बाढ़ो कहे बाढ़ो २५ ॥

केशव आपु सदा सह्यो दुःख पै दासन देखिसके न दुखारे। जाको भयो जेहि भांति जहां दुख त्योंहीं तहां तिहि भांति पधारे ॥ मेरिय बार अबार कहां कहुँ नाहिं नहूं के दोष विचारे। बूड़तहौं महामोहसमुद्र में राखत काहे न राखनहारे २६ हरिलीलाछंद ॥ श्रीरामचन्द्र अतिआरतवंत जानि। लीन्हों बोलाय शरणागत सुःखदानि ॥ लंकेश आउ चिरजीवहि लंकधाम। राजा कहाउ जग जौलगि

रामनाम २७ त्रोटकछंद ॥ जबहीं रघुनायक बाण लियो । सविशेष विशोषित सिन्धु हियो ॥ तबहीं द्विजरूप सो आइ गयो । नल सेतु रचै यह मंत्र दयो २८ दोहा ॥ जहँ तहँ वानर सिंधु मैं गिरिगण डारत आनि ॥ शब्द रह्यो भरि पूरि महि रावणको दुखदानि २९ त्रोटकछंद ॥ उछलै जल उच्च अकाश चढै । जल जोर दिशा विदिशान मढै ॥ जनु सिंधु अकाशनदी अरिकै । बहुभांति मनावत पांपरिकै ३० ॥

त्योंहीं कहे तत्काल ही मोह कहे दुःख २६ । २७ समुद्रतट में रामचन्द्र तीन दिन डेरा किये रहे जब समुद्र राह नहीं दियो तब समुद्रके शोषिबे के लिये कोप करि रामचन्द्र बाण लियो इति कथा शेषः २८ । २९ समुद्र को जल उछरि आकाश को चढ़त है सो मानहु समुद्र पांयन परिकै आकाश गंगाको मनावत है ३० ॥

बहु व्योम विमान ते भीजिगये । जल जोर भये अँग-रागमये ॥ सुरसागर मानहुँ युद्धजये । सिगरे पट भूषण लूटि लये ३१ अतिउच्छलिछिछि त्रिकूटछयो । पुर रावण के जल जोर भयो ॥ तब लंक हनूमत लाइदई । नल मानहुँ आइ बुझाइ लई ३२ लागिसेत जहां तहँ शोभगहे । सरितान के फेरि प्रवाह बहे ॥ पति देवनदी रति देखि भली । पितुके घर को जनु रूसिचली ३३ सब सागर नागरसेतु रची । बरणै बहुधा युत शक्र शची ॥ तिलकावलिरी शुभ शीशलसै । मणिमाल किधौं उरमें निलसै ३४ तारकछंद ॥ उरते शिवमूरति श्रीपति लीन्ही । शुभ सेतु के मूल अधिष्ठित कीन्ही ॥ इनके दरशै परशै पग जोई । भवसागर के तरि पार सो होई ३५ ॥

जल जोर भये सों बहुत व्योम आकाश में देवतन के विमान भीजि

गये राग कहे जो अगन में लग्यो कुंकुमादि लेप है तासों रये कहे युक्त पट औ भूषण बहिआये हैं सो मानो सुर जे देवता हैं तिनको सागर युद्ध में जीत्यो है सो मानो लूटिलीन्हों है इहां पट भूषणन को बहि आइबो विषय कहे उपमेय है सो अनुक्त है तासों अनुक्त विषय वस्तूत्प्रेक्षा है ३१। ३२ सेतु में लगिकै जहा तहां शोभ गहे ज सरितन के प्रवाह हैं त फरि कहे उलटिकै बहन लगे सो पाय परि परि मनावत हैं ऐसी भली कहे बड़ी रति प्रीति पतिकी समुद्र की दत्तनदी आकाशगंगा में देखिकै मानो आपने पिताके घरको रूसिचली हैं ३३ नागर श्रेष्ठ ३४ उरते अर्थ विचार ते जो वस्तु करिबो होत है ताको विचार प्रथम मनहीं मों आवत है ३५॥

दोहा॥ सेतुमूल शिव शोभिजै केशव परमप्रकास॥ सागर जगत जहाजको करिया केशवदास ३६ तारकछंद॥ शुक सारण रावण दूत पठायो। कपिराजसों एक सँदेश सुनायो॥ अपने घर जैयहु रे तुम भाई। यमहू पहँ लंक लई नहिं जाई ३७ सुग्रीव॥ भजि जैहौं कहा न कहू थल देखो। जलहू थलहू रघुनायक पेखो॥ तुम बालिसमान सहोदर मेरे। हतिहौं कुल स्यौतिन प्राणन तेरे ३८ सब रामचमू तरि सिंधुहि आई। छवि ऋक्षनकी धरअंबर छाई॥ बहुधा शुक सारण को जो बताई। फिर लंक मनों वर्षा ऋतु आई ३९॥

संसारसागर को जो जहाज रामनाम है ताके करिया कहे केवट जे शिव हैं जैसे केवट जहाज में चढ़ाइ समुद्र पार करत है तैसे शिव मरणकाल काशी में रामरूपी तारकमंत्र जहाजपर चढ़ाइ ससार पार करत हैं ते सेतु के मूलमें परमप्रकाश कहे प्रसन्नता सों शोभित हैं जो जहाजपर चढ़ाइ पार करत है सो आपने प्रभुनों सेतुपर चढ़ाइ पार करिब को अधिकार पाइ प्रसन्न भयोई चाहै इति भावार्थः ३६। ३७ ता यतके सदेश में सुग्रीव को भाई कह्यो ताको जवाब सुग्रीव दियो कि रावणसों कहियो कि तुम बालिके समान हमारे भाई हौ तासों तुम्हारो वध उचित है ३८ जा राम

चमूको काहू नीके प्रकारसों सुग्रीवादि वीरनको शुक सारण दूतसों बहुधा बहुत प्रकारसों बताई कहे बतायो रहै अर्थ वर्णन करयो है सो तुलसीकृत रामायण में रावणसों शुक सारण कह्यो है कि "अस मैं श्रवण सुना दशकंधर। पदुम अठारह यूथप बंदर" अथवा जा प्रकार शुक सारणको बतायो है सो आगे कवित्तमेंवर्णन है सो रामचमू सिंधुको तरि कहे उतरिकै लङ्कामें आई है सो भू आकाश में ऋक्ष मेघ सम श्याम शोभित हैं सो मानो फरि हेमतऋतु में वर्षाऋतु लंका में आई है ३९॥

दंडक॥ कुंतल ललित नील भृकुटी धनुष नैन कुमुद कटाक्ष बाण सबल सदाई है। सुग्रीव सहित तार अंगदादि भूषणन मध्यदेश केशरी सुगजगति भाई है॥ विग्रहानुकूल सब लक्षलक्ष ऋक्षबल ऋक्षराजमुखी मुख केशोदास गाई है। रामचन्द्रजू की चमूराज श्रीविभीषण की रावण की मीचु दरकूच चलि आई है ४०॥

रामचन्द्र की चमू कैसी है कि कुंतल औ ललित औ नील औ भृकुटी औ धनुष औ नयन औ कुमुद औ कटाक्ष औ बाण औ सबलयी जे वानर हैं ते सदा हैं जामें अथवा बाणपर्यंत इन नामन करिकै युक्त औ सदा सबल कहे बलवान् ऐसे जे वानर ऋक्ष हैं ते हैं जामें औ सुग्रीव सहित है औ तारनामा जे वानर हैं तिन सहित है औ अंगदादिक जे भूषण कहे सेनानायक हैं तिनसों युक्त है औ मध्यदेशनामा औ केशरीनामा औ सुगज नामा जे वानर हैं तिनकी गति भाई कहे नीकी है जामें औ विग्रहनामा औ अनुकूलनामा औ ऋक्षराजमुखी कहे ऋक्षराज जे जाम्बवन्त हैं ते हैं मुख कहे मुखिया जामें ऐसी लक्षलक्ष कहे अनेक लक्ष ऋक्षन ऋक्षबल [illegible] है [illegible] जामें विभीषणकी राज्यश्री कैसी है कि कुंतल जे केश हैं ते हैं ललित कहे सुन्दर औ नील कहे श्याम जाके औ भृकुटी धनुषसम जाकी औ नयन हैं कुमुद कहे कमलसम जाके औ कटाक्ष हैं बाणसम जाके औ सबल कहे सुंदरता सहित सदा हैं अथ जाकी करि काहू समयमों ग्लानि नहीं होति 'बल गन्धरसे रूप इति मेदिनी' औ सुग्रीव जो ग्रीवा है सो सहित है तार कहे निर्मल मुक्तन सों अथ मालिन

की माला पहिरे है " तारो निर्मलमौक्तिके मुक्ताशुद्धावुचनादे इत्यभिधान चिन्तामणिः " औ अगद जो बिजायठ है तेहि आदि दै जे भूषण है तिन सों युक्त है औ मध्यदेश जो कटि है सो है केशरी कहे सिंहको ऐसो जाको औ सुष्ठु जो गज है अर्थ जो अतिललित चाल चलत है ताकी ऐसी गति है भाई कहे नीकी जाकी औ विग्रह कहे शरीर है अनुकूल कहे यथोचित सब कहे पूर्ण अर्थ जैसो जौन अग चाहिये तौन अग तैसोई है अथवा अनुकूल कहे हित है सबको अर्थ जे देखत हैं ताको मन वश ह्वैजात है अथवा अनुकूल कहे व्याधिरहित " गात्र वपुः सहनन शरीरं वर्ष्म विग्रह इत्यमरः " औ लक्ष लक्ष जे ऋक्ष नक्षत्र हैं गन कहे जो बल सौंदर्य है तेहि सहित जो ऋक्षराज चन्द्रमा है ताके सदृश है मुख जाको अर्थ जब अनेक लक्ष नक्षत्रनकी शोभा लैकै चन्द्रमा आपु धारण करै तब जाके मुखके सम होय " ऋक्षस्तु स्यान्नक्षत्राक्षभल्लयोरित्यभिधानचिन्तामणिः " रावण की मीच कैसी है कि कुन्त जो बरछी है सो है ललित कहे लचकति जाकी अर्थ बरछी हाथमें लिये हैं अथवा कुतल जो भाला है सो है ललित कहे अतितीक्ष्ण जाको अर्थ हथियार को धरे हैं " कुंतलो भल्लकेशयोरित्यभिधानचिन्तामणिः " औ नील कहे श्यामवर्ण है औ भृकुटी भौंह हैं धनुपसम विकराल जाकी इहां कवि क्रूर स्त्री करि वर्णत हैं तासों भौंहनकी धनुषकी क्रूरता धर्म करि साम्य जानो औ नयन हैं कुमुद कहे कुत्सित है मुद आनंद जिनमें ऐसे हैं जाके अर्थ रावणके वधको आनद है विभीषणके राज्य लाभादि उत्सव को आनद नहीं है अथवा नयन हैं कुमुद कहे मुद जो आनद है प्रसन्नता इति तासों रहित अर्थ अतिकोपसों अरुण अतिविकराल हैं प्रशस्त नहीं हैं औ कटाक्ष हैं बाणसम कराल जाके औ सबल कहे बुद्धिबल सहित सदा हैं इहां बलपदते बुद्धि बल जानो अर्थ बुद्धिबल सों सीताहरणादि कार्य कराइ रामचन्द्रसों विरोध कराइ दियो तार कहे उच्चस्वर करिकै सहित है सुष्ठुग्रीवा जाकी सुष्ठुपदको अर्थ यह कि ऐसो उच्चस्वर करिबेकी शक्ति और काहूकी ग्रीव में नहीं है औ अगद जो बिजायठ हैं तेहि आदि भूषण कहे नहीं हैं अर्थ मुंडमालादि क्रूर भूषण पहिरे हैं औ मध्य कहे अधम अनुत्तमेति है देश कहे जाके अंग " मध्यं विलग्ने न स्त्री स्यादन्याय्येऽन्तरेऽधमेपि चेति मेदिनी " औ केशरी जो सिंह है ताको गजपर ऐसी गति भाई है जाको अर्थ जैसे गजके मारिबेको सिंह

चलत है तैसे रावणके मारिबेको चलीआवति है औ रामचन्द्रको जो विग्रह विरोध है सोई है अनुकूल हित जाको अर्थ रामचन्द्रके विरोधही सों है कार्यसिद्धि जाकी औ सब कहे पूर्ण अनेक लक्ष जे ऋक्ष भालु हैं तिनको है बल जाके औ ऋक्षराज जे जांबवंत हैं तिनको ऐसो है मुख जाको ४० ॥

हीरकछंद ॥ रावण शुभ श्यामलतन मंदिरपर सोहियो । मानहुँ दशशृंगयुत कलिंदगिरि विमोहियो ॥ राघवशर लाघवगति छत्र मुकुट यों हयो । हंस शबल अंश सहित मानहुँ उड़िके गयो ४१ लज्जित खल तज्जि सुथल भज्जि भवन में गयो । लक्ष्मण प्रभु तक्षण गिरि दक्षिणपर सो भयो ॥ लंक निरखि अंक हरषि मर्म सकल जो लह्यो । जाहु सुमति रावण वह अंगदसन यों कह्यो ४२ चचलाछंद ॥ रामचन्द्रजू कहंत स्वर्णलंक देखि देखि । ऋक्षवानरालि घोर ओर चारिहूँ विशेखि ॥ मंजु कंजगंधलुब्ध भौंरभीरसी विशाल । केशवदास आसपास शोभिजै मनो मराल ४३ ॥

शबल कहे अनेक रंग मिश्रित हैं अंशु कहे किरण जाके ऐसे जे सूर्य हैं तिन सहित मानो कलिंदगिरि शृंगते समूह उड़िगयो है यहां जाति विषे एक वचन है हंसनके सदृश श्वेत छत्र है औ सूर्य के सदृश अनेक रंग नगजटित मुकुट हैं ४१ दक्षिणगिरि कहे समुद्रके दक्षिण कूलको गिरि समुद्र पारको गिरि इति मर्मभेद ४२ भौंरभीरसम ऋक्ष हैं मराल हंससम वानर हैं ४३ ॥

ताम्रकोट लोहकोट स्वर्णकोट आसपास । देवकी पुरी घिरी कि पर्वतारिके विलास ॥ बीच बीच हैं कपीश बीच बीच ऋक्षजाल । लंककन्यका गरे कि पीतनीलकंठमाल ४४ ॥

इति श्रीसरसकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांरामसैन्यसमुद्रतरणन्नाम पञ्चदशः प्रकाशः ॥ १५ ॥

अर्थ इंद्रकी शत्रुतासों मानो पर्वतन देवपुरी को घेरिलियो है देवपुरी सदृश स्वर्णकोट है जाके मध्यमों पुरी है औ ताके आसपास ताम्रादि के कोट हैं ते पर्वत समान हैं यासों या जनायो कि लङ्का देवपुरीसम है ४४ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद निर्मितायारामभक्तिप्रकाशिकाया पञ्चदश प्रकाश ॥ १५ ॥

दोहा ॥ यह वरणन है षोड़शे केशवदास प्रकाश ॥ रावण अंगदसों विविध शोभित वचन विलाश १ अंगद कूदि गये जहां आसनगत लंकेश ॥ मनु मधुकर करहाटपर शोभित श्यामलवेश २ प्रतीहार–नराचछंद ॥ पढो विरंचि मौन वेद जीव शोर छंडिरे। कुबेर बेर के कही न यक्ष भीर मंडिरे ॥ दिनेश जाइ दूरि बैठि नारदादि संगहीं। न बोल चंद मंद बुद्धि इंद्रकी सभा नहीं ३ चित्रपदाछंद ॥ अंगद यों सुनि बानी। चित्त महारिस आनी ॥ ठेलिकै लोग अनैसे। जाइ सभामहँ वैसे ४ हरिगीतिका छंद ॥ कौन हौ पठये सो कौने ह्यां तुम्हें कह काम है। अंगद ॥ जाति वानर लंकनायकदूत अंगद नाम है ॥ रावण ॥ कौनहै वह बांधिकै हम देह पूंछ सबै दही। लंकजारि सँहारि अक्ष गयोसो बात वृथा कही ५॥

१ आसन में गत कहे बैठौ २ रावण के सभा भवन में जाइ अंगद ऐसे कौतुक देखत भये प्रतीहार या प्रकारके अनादरपूर्वक वचन ब्रह्मादिसों कहत है हे कुबेर ! तुमसों कैयोबार कह्यो कि तुम यक्षनकी भीरको न मंडौ अर्थ यक्षनकी भीरको संगलै इहां न आयो करो सो तुम आइबो करत हौ ३। ४ लंकनायक विभीषण ५ ॥

महोदर ॥ कौनभांति रहौ तहां तुम राजप्रेषक जानिये। लंक लाइगयो जो वानर कौन नाम बखानिये ॥ मेघनाद जो बांधियो वहि मारियो बहुधा तबै। लोकलाज दुरयो रहै

अति जानिजै न कहां अबै ६ रावण ॥ कौनके सुत बालिके वह कौन बालि न जानिये । कांखचापि तुम्हैं जो सागर सात न्हात बखानिये ॥ है कहां वह वीर अगद देवलोक बताइयो । क्यों गयो रघुनाथबाणविमान बैठि सिधाइयो ७ लकनायक को विभीषण देवदूषणको दहै । मोहिं जीवत होहि क्यों जग तोहिं जीवत को कहै ॥ मोहिं को जग मारिहै दुर्बुद्धि तेरिय जानिये । कौन बात पठाइयो कहि वीर वेगि बखानिये ८ अंगद–सवैया ॥ श्रीरघुनाथको वानर केशव आयोहो एकु न काहू हयोजू । सागरको मद झारि चिकारि त्रिकूट को देह विहार कयोजू ॥ सीय निहारि सँहारिकै राक्षस शोक अशोकवनीहि दयोजू । अक्षकुमारहि मारिकै लंकहि जारिकै नीकेहि जातभयोजू ९ ॥

महोदर पूँछो कि तुम तहा कौन भांतिसों रहत हौ अर्थ कौने कामके अधिकारी हौ तब अगद कह्यो है हम राजा के इहा प्रेषक कहे यथोचित स्थान में दूतन के पठावनहार हैं अर्थ दूतन के नायक हैं लाकलाज दुरयो रहै या कहि अगद या जनायो कि हमारे सैन्यमें ऐसो कोऊ नहीं है जाको कोहूँ बांध्यो मारयो होइ ६ । ७ पाछे अगद कह्यो है कि हम लकनायक के दूतहैं सो रावण पूछ्यो कि लक नायक को है जाके तुम दूतहौ तब अगद कह्यो है कि विभीषण लकनायक है कैसो है विभीषण जे देवतनके दूषण कहे पीड़ा करनहार हैं तिनको दहै कहे जारत है यामों या जनायो कि तुमहूँ देवदूषणहौ तुमहूँ को दहिहै ८ सागर के मद रह्यो कि हमको कोऊ न नाघिसकिहै सो नाघिकै ताके मदको झारिडारयो अर्थ दूरि करयो औ चिकारिकै गर्जिकै त्रिकूट नाम जो लकापुरी को पर्वत है ताके देह पै अर्थ सब पर्वत भरे मे विहार कहे नीकेप्रकार सों पुरीके सब भवनानि देखिकै रूपो कहे रहत भयो ९ ॥

गगोदकछद ॥ राम राजानके राज आये इहा धाम तेरे महाभाग जागे अबै । देवि मदोदरी कुभकर्णादि दै मित्र

मन्त्री जिते पूछि देखो सबै ॥ राखिजै जातिको भांतिको वश को साधिजै लोकमें लोक पर्लोकको । आनिकै पांपरो दै सुलै कोशलै आशुही ईश सीताहिलै ओकको १० रावण ॥ लोकलोकेश सों शोचि ब्रह्मा रचैं आपनी आपनी सींवसो सोरहै । चारि बाहैं धरे विष्णु रक्षा करैं बात सांची यहै वेदवाणी कहै ॥ ताहि भ्रूभंगही देवदेवेशसों विष्णुब्रह्मादिदै रुद्रजू संहरै । ताहिहौं छोडिकै पांय काके परौं आजु ससार तो पांय मेरे परै ११ मदिराछंद ॥ रामको काम कहा रिपु-जीतहिं कौन कबै रिपुजीत्यो कहा । बालिबली छलसों भृगुनंदन गर्व सहे द्विज दीन महा ॥ दीन सों क्यों क्षिति क्षत्र हत्यो बिन प्राणनि हैहयराज कियो । हैहय कौन वहै बिसर्यो जिन खेलतही तुम्हैं बाधिलियो १२ ॥

जा स्त्रीके सग राज्याभिषेक होइ सो देवी कहावै "देवी कृताभिषेका यामित्यभिधानचिन्तामणि" १० कल्पांतके अतमें ब्रह्मा सृष्टि रचत हैं विष्णु रक्षा करत हैं सो ताहि कहे लोक सृष्टिको औ देवेश इद्र औ विष्णु औ ब्रह्मादि दै जे देव हैं तिन्हैं रुद्र जे महादेव हैं ते भ्रू जो भौंह है ताके भगही टेढ़ी करनेही सों सहार कालमों संहार करिडारत हैं ११ क्षत्र कहे क्षत्रवर्ण १२ ॥

अंगद–विजयछद ॥ सिंधुतर्यो उनको बनरा तुमपै ध-नुरेख गई न तरी । बांध्योइ बांधत सो न बँध्यो उन बारिधि बांधिकै बाट करी ॥ अजहूं रघुनाथप्रताप की बात तुम्हैं दशकठ न जानिपरी । तेलनि तूलनि पूंछ जरी न जरी जरी लक जराइजरी १३ मेघनाद ॥ छांडिदियो हमहीं बनरा वह पूंछ कि आग न खक जरी । भीरमें अक्ष मर्यो चपि बालक बादिहिं जाइ प्रशसित करी ॥ ताल बिधे अरु सिंधुबँधे यह

चेटक विक्रम कौन कियो । बानरको नरको बपुरा पलमें सुरनायक बांधिलियो १४ ॥

बांध्योइ कहे हनुमान्को बंधन तुम काहू विधिसों करिबेहू कस्यो ताहू पर बांधत न बन्यो तेल औ तूल कहे रुई युक्त जो वस्तु होति है सो विशेष जरति है सो या प्रकारकी पूंछ तुम करी सो न जरी और केवल सुवर्ण औ रत्न में अग्नि ज्वलित नहीं होति परंतु तुम्हारी लंका तृणादि रहित केवल रत्नादि के जरायसों जरी जरत भई रामके प्रभावसों ऐसी अनहोनी बातैं होती हैं ताहूपर तुम्हैं नहीं जानि परतो इति भावार्थ १३ बादि कहे वृथा प्रशस्ति कहे स्तुति सप्ततालबेध्यो औ सिंधुबांध्यो यह चेटक कहे भगर विद्या है सरस्वती उक्तार्थः ॥ जो रामचन्द्र तालबधन सिंधुबंधन करयो सो तो चेटक कहे भगर विद्यासम है अर्थ खेलसम है यामें कौन विक्रम कहे अतिबल कियो है "विक्रमस्त्वतिशक्तिता इत्यमरः" अर्थ वे चाहें तो त्रैलोक्य को संहार करिडारैं सिंधुबधादि सदृश कर्मन में उनको कौन श्रम है ऐसे प्रबल वे न होते तो जिन हम पल में सुरनायकको बांध लियो ते बानर औ नर को बपुरा हैंजाते अर्थ हम इंद्रलोकादि में जाइकै इंद्रादिको जीत्यो औ वै हमपर चढ़ि आये हैं हम बपुरासम कछू करि नहीं सकत अथवा बपुरा समुझि हम पर चढ़ि आये हैं १४ ॥

अंगद ॥ चेटकसों धनुभंग कियो प्रभु रावरेको अतिजी रनहो। बाणसमेत रहे पचिकै तुम जासहँपै न तज्यो थलुहो ॥ बाण सु कौन बली बलिके सुत वै बलि बावन बांधिलियो । ओई सो तौ जिनकी चिरचेरिन नाच नचाइकै छांड़ि दियो १५ रावण ॥ नील सुखेन हनू उनके नल और सबै कपिपुंज तिहारे । आठहु आठ दिशा बलि दै अपनो पदुलै पितु जालगि मारे ॥ तोसे सपूतहि जाइकै बालि अपूतनकी पदवी पगु धारे । अंगद संगलै मेरो सबै दल आजुहि क्यों न हनै बपुमारे १६ दोहा ॥ जो सुत अपने बापको बैर न लेइ प्रकाम । तासों जीवतही मस्यो लोग कहैं तजि त्रास १७ ॥

कवित्वमें उक्ति मेघनाद की है औ जवाब रावणको अंगद दियो ता जवाबही सों या जानो कि रामचन्द्र सिंधुबंधनादि सम शम्भुधनुषभंग चेटक ही सों कियो है यह बात रावण कह्यो है अंगद कहत हैं कि प्रभु जे रामचन्द्र हैं तिन चेटकसों धनुषभंग कीन्हों औ तुम कहतहौ कि जीरण कहे पुरानो रहै परतु तुमको पुरानो तौ रहै पै बाणसमेत तुम पराक्रम करि पचिकै कहे थकिकै रहिगये ताहू पर थलहू न छोड़्यो अर्थ रंच न उठ्यो १५ नील सुखेन हनुमान् औ नल औ सुग्रीव औ राम लक्ष्मण औ विभीषण ये जे आठ हैं सरस्वती उक्तार्थः॥ नील सुखेनादि चारि वानर उनके सुग्रीव के हैं ते बालिके भयसों भागे रहैं तब तिनहीं के संग रहे यासों या जनायो कि जो रामचन्द्र आज्ञाहू करैं औ मोहसों वै तिहारो राज्य न दियो चाहैं तौ सब वानर तेरेई साथी है हैं तासों तू आठहू आठदिशा बलिद जे रामचन्द्र हैं आठ दिशनके आठौ जे इंद्रादि दिक्पाल हैं ते हैं बलिद कहे भेंदके दाता जिनको अर्थ इंद्रादि दिक्पाल जिनको भेंटदेत हैं तिनहीं सों आपनो पद जो राज्य है ताको ले जाके लिये सुग्रीव तिहारे पितुको मारि डारयो है काहेते राज्य तिहारे पिताको है रामचन्द्र मर्यादा पुरुषोत्तम हैं जो तू कहि है तौ तोको विशेष देहैं "बलिर्दैत्योपहारयोरित्यभिधानचिन्तामणि" बपमारे कहे जे तेरे बाप को मारयो है १६। १७॥

अंगद॥ इनको बिलगु न मानिये कहि केशव पल आधु॥ पानी पावक पवन प्रभु ज्यों असाधु त्यों साधु १८ रावण–द्रुतविलंबितछंद॥ उरसि अंगद लाज कछू गहो। जनकघातक बात वृथा कहो॥ सहित लक्ष्मण रामहिं संहरौं। सकलवानरराज तुम्हैं करौं १६॥

बिलगु कहे द्वेष साधु कहे भलो असाधु कहे बुरो १८ जनक पिता सरस्वती उक्तार्थः॥ हे अंगद! तुम राचमन्द्रसों मिलिबेको हमको कहत हौ यामें तुमको कछू लाज नहीं होति ऐसी बात कहि कछू लाज तौ उरमें गहौ काहेते कि तुम्हारे जनक बालि तिनके जे घातक रामचन्द्र हैं तिनकी बात वृथा है यह तुम कहौ अर्थ रामचन्द्रकी बात वृथा नहीं होति जो मनमें संकल्प करत हैं, सो करिबोई करत हैं यासों या जनायो कि अतिबली

बालिके वध करिबे को सकल्प कियो सो वध करिबोई कियो तैसे वे तो हमारे मारिबे को संकल्प करै हैं यह सकल्प वृथा काहू उपायसों न है है तासों मैं लक्ष्मण सहित रामहिंसों सहरौं कहे सहार नाशको प्राप्त होतहौं अर्थ लक्ष्मण सहित राम मोहिं मारतही हैं नाहीं तौ ऐसो हित सीख तुम को दियो है जासों सब वानरनको राजा तुमको करौं अर्थ सुग्रीव सों छोरि तुम्हारो राज्य तुम्हैं देउँ अथवा जनकघातक जे सुग्रीव हैं तिनकी बात वृथा कहतहौ अर्थ जो तुम्हारे पिताको मारचो ताकी बड़ाई वृथा करत हौ मैं लक्ष्मण सहित राम करिकै सहरौं कहे नाश को प्राप्त होतहौं नाहीं तौ सुग्रीव को मारि सब वानरनको राजा तुमको करौं १६॥

अंगद-निशिपालिकाछंद॥ शत्रु सब मित्र हम चित्त पहिंचानहीं। दूतविधि नूत कबहूं न उर आनहीं॥ आपु मुख देखि अभिलाष अभिलाखहू। राखि भुज शीश तब और कहँ राखहू २० रावण-इंद्रवज्राछंद॥ मेरी बड़ी भूल सो का कहौंरे। तेरो कह्यो दूत सबै सहौंरे॥ वै जो सबै चाहत तोहिं मारचो। मारों कहा तोहिं जो दैव मारचो २१ अंगद-उपेंद्रवज्राछंद॥ नराच श्रीराम जहीं धरैंगे। अशेष माथे कटि भू परैंगे॥ शिखा शिवा श्वान गहे तिहारी। फिरैं चहू ओर निरैविहारी २२॥

तुम्हारी जो यह नूत कहे नवीन दूतविधि कहे दूतता तोर फोर है ताको कबहू न उरमें आनिहैं पाइ है २०। २१ नराच बाण निरैविहारी रावणको सबोधन है अथवा शिवा औ श्वान औ और जे निरैविहारी काकादि हैं ते तिहारी शिखा गहे तिहार शिरको लिये फिरैंगे २२॥

रावण-भुजंगप्रयातछंद॥ महामीचु दासी सदा पाइँ धोवै। प्रतीहार ह्वैकै कृपा शूर सोवै॥ क्षपानाथ लीन्हें रहै छत्र जाको। करैगो कहा शत्रु सुग्रीव ताको २३ शका मेघमाला शिखी पाककारी। करै कोतवाली महादंडधारी॥ पढ़ै वेद ब्रह्मा सदा द्वार जाके। कहा बापुरो शत्रु सुग्रीव ताके २४॥

अंगद कह्यो कि श्रीराम बाण धरिकै तुमको मारिहैं ताको उत्तर रावण दियो कि महामीचु जो है सो मेरी सदा पाइँ धोइबे के अर्थ दासी है याते अतिन्यून दासी जनायो एकशत एकमीचु हैं तामें शत अकाल मीचु हैं एक महामीचु है शतमीचु उपायसों दूरि होती हैं एक महामीचु काहू उपाय सों नहीं मिटति। यथा भावप्रकाशे "एकोत्तर मृत्युशतमथर्वाण प्रचक्षते। तत्रैकः कालसंयुक्त शेषास्त्वागतवः स्मृता." यामों या जनायो कि युद्धादि में मारिबो तो अकालमृत्यु है सो मेरे समीप कैसे आइ है २३ शका कहे शका पाककारी रसोईदार २४॥

अंगद-विजयछंद॥ पेटचढ्यो पलना पलिका चढि पालकिहू चढि मोह मढ्योरे। चौकचढ्यो चित्रसारी चढ्यो गजवाजि चढ्यो गढ़ गर्व चढ्योरे॥ व्योमविमान चढ्योई रह्यो कहि केशव सो कबहू न पढ्योरे। चेतत नाहिं रह्यो चढ़ि चित्तसो चाहत मूढ़ चिताहू चढ्योरे २५॥

प्रथमहिं पेट में चढ्यो कहे गर्भ में आयो जब जन्म भयो तब पलना में चढ़िकै झूल्यो कछु और बड़ो भयो तब पलिका जो खद्वा है तामें चढ़िकै सोवन लाग्यो औ जब ब्याह भयो तब पालकी में चढ़ि ब्याहन चल्यो तब मोह जो माया है तामें मढ्यो कहे युक्त भयो फेरि पाणिग्रहण में चौक में चढ्यो फेरि स्त्री के संग चित्रसारी में चढ्यो फेरि राजा है कै गजवाजि में चढ्यो औ गढ़पर चढ्यो औ गर्वपर चढ्यो अर्थ राज्याभिमान भयो औ जेहि कहे जाते अर्थ जाकी कृपासों व्योम में विमानन पर चढ्योई रह्यो अर्थ पुष्पकादि विमाननपर चढ्यो आकाश २ फिरत रह्यो केशव कहत हैं कि सो जो वे प्रभु रामचन्द्र हैं ताको कबहूं न पढ्यो अर्थ राम नाम कबहूं न जप्यो सो हे मूढ़! अब चिताहू पर चढ्यो चाहत है ताहूपर तेरो चित्त चढ़ि रह्यो है कहे मत्त है रह्यो है तामें तू चेतत नहीं अर्थ चेत नहीं करतो चिताहू में चढ्यो चाहत है यह कहि या जनायो कि रामचन्द्र तोहिं शीघ्र ही मारि हैं तासों उनके शरणमों जाइकै आपनो भलो करु २५॥

रावण-भुजंगप्रयातछंद॥ निकाख्यो जो भैया लियो राज जाको। दियो काढ़िकै जू कहात्रास ताको॥ लिये

वानराली कहौं बात तोसों। सो कैसे लरैं राम संग्राम मोसों २६ अंगद-विजयछंद॥ हाथी न साथी न घोरे न चेरे न गाउँ न ठाउँ को ठाउँ बिलैहै। तात न मात न पुत्र न मित्र न वित्त न तीय कहीं सँगरैहै॥ केशव कामको राम बिसारत और निकाम न कामहिं ऐहै। चेतिरे चेति अजौं चित अंतर अंतकलोक अकेलोइ जैहै २७॥

रामचन्द्र के राज्याभिषेक को पतो बड़ो उत्सव तामें भरत घरमें नहीं रहे सो सुनिकै रावण याही समुझयो कि परस्पर स्वाभाविक बंधुविरोध समुझि भरतकृत अभिषेकोत्सव भंग भयसों भरत को दशरथ निकारि दियो है है सो कहत हैं कि निकारो जो भैया भरत है तानें पिता करिकै दियो राज जाको काढ़िकै कहे देश सों निकारिकै लै लीन्हों ताको कहा त्रास कहे रहै आशय यह कि जा भयसों दशरथ भरतको निकारिकै रामचन्द्रको राज्य दियो सोई आपने बलसों भरत रामचन्द्रसों छोरि लीन्हों औ देशसों निकारि दीन्हों तो जिनसों पिता को दियो राज्य न राखत बन्यो ते हमको मारिकै कहा हमारी राज्य छोरि हैं औ ताहू पर सैन्य वानर को लिये हैं औ वेष यती को धरे हैं यतिन को औ वानरन को काम लरिबे को नहीं है सरस्वती उक्तार्थः संकल्प करिकै जो रामचन्द्र हमारो राज्य लियो औ हम करिकै निकारो जो भाई विभीषण है ताको दियो है ता बातको कहा हमारे अत्रास है अर्थ बड़ो त्रास है यह हम निश्चय जानत हैं कि रामचन्द्र को सकल्प निष्फल न है है हमसों राज्य छोरि विभीषणको दे हैं और कहे अग्नि ताकी आली कहे समूह अर्थ जिनमों अति अग्नि है ऐसे बाण लिये हैं अथवा र कहे तीक्ष्ण जे बाण हैं तिनकी आली कहे पङ्क्ति समूह इनि तिनको लिये हैं सो रामचन्द्र के संग्राममों मोसों कैसे हम एतो भारी कैसे जुरें अर्थ हम उनके युद्ध करिबे लायक नहीं हैं "रस्तीक्ष्णे दहन इत्यभिधानचिन्तामणि ॥ पुस्यालिर्विंशदाशयें त्रिषु स्त्रियां वयस्यायां सेतौ पङ्क्तौ च कीर्तिता इत्यभिधानचिन्तामणि." २६ नित धन २७॥

रावण-भुजगप्रयातछंद॥ डरै गाइ विप्रै अनाथै जो

भाजैं। परद्रव्य छोड़ैं परस्त्रीहि लाजैं॥ परद्रोह जासों न होवै रतीको। सुकैसे लरैं वेष कीन्हें यतीको २८ दोहा॥ गेंद करेउ मैं खेलको हरगिरि केशवदास॥ शीश चढाये आपने कमल समान सहास २९॥

जे रामचन्द्र गाइ औ विप्रको डरात हैं अर्थ अतिदीन गाइ औ विप्र तिनहू को डरात हैं तासों अति कादर हैं औ अनाथ जे प्राणी हैं जिनको नाथ कोऊ नहीं है ताहीको भजैं कहे सेवन करत हैं अर्थ ताहीसों संग करत हैं यासों या जनायो कि भयसों रंचकहू परद्रव्य नहीं लै सकत हमारो राज्य कैसे ले हैं औ परस्त्री को लजात हैं यासों या जनायो कि जे स्त्री को लजात हैं ते वीरन सों कहा धृष्टता करिहैं औ जिनसों परद्रोह कबहू रतीहू भरि नाहीं हैसकत आशय कि शत्रुता करते डरात हैं औ ताहू पर वेष यती तपस्वी को धरे हैं अर्थ वेषहू वीरको नहीं है सो मोसों कैसे लरिहैं सरस्वती उक्तार्थ. मर्यादापुरुषोत्तम हैं तासों ब्रह्मशाप गोशाप को डरात हैं भृगुलातहू मारयो ताहू पर कछू नाकरयो अनाथ जे प्रह्लाद गजादि हैं तिनके निकटही रहे जा भांति कष्टभयो ताही विधि निकटवर्ती सम रक्षा कियो औ परद्रव्य परस्त्रीहरणमों पाप होत है तासों त्याग करत हैं औ परद्रोह जासों रतीहू भरि नाहीं होत यासों समदर्शी जानौ सबको समान जानत हैं तिनसों हम कैसे लरैं अर्थ वे ईश्वर हैं वेष कहे रूपमात्र यती को कीन्हें हैं २८। २९॥

अंगद-दंडक॥ जैसो तुम कहत उठायो एक गिरिवर ऐसे कोटि कपिनके बालक उठावहीं। काटे जो कहत शीशकाटत घनेरे घाघ मग्गारके खेले कहा भटपद पावहीं॥ जीत्यो जो सुरेशरण शाप ऋषिनारिही को समुझहु हम द्विज नाते समुझावहीं। गहौ रामपांय सुखपाय करैं तपी तप सीताजू को देहु देवदुन्दुभी बजावहीं ३० रावण-वंशस्थाछंद॥ तपी जपी विप्रनि छिप्रही हरौं। अदेवद्वेषी सब देव संहरौं॥ सिया न देहौं यह नेम जी धरौं। अमानुषी भूमि अवानरी

करौं ३१ अंगद-विजयछंद ॥ पाहनते पतिनी करि पावन टूक कियो हरको धनुकोरे । छत्रविहीन करेउ क्षणमें क्षिति गर्व हत्यो तिनके बलकोरे ॥ पर्वतपुंज पुरैनिके पात समान तरे अजहू धरकोरे । होइँ नरायणहू पै न ये गुण कौन इहां नर वानर कोरे ३२ रावण-चंचरीछंद ॥ देहिं अंगद राज तो कहँ मारि वानरराजको । बांधि देहिं विभीषणै अरु फोरि सेतु समाजको ॥ पूंछ जारहिं अक्षरिपुकी पाइँ लागहिं रुद्रके । सीयको तब देहुँ रामहि पारजाइँ समुद्रके ३३ ॥

घाघ कहे नटादि इंद्रजालिक ३० सरस्वती उक्तार्थः हे अंगद ! हौं केशव हौं कि तपी औ जपी जे विप्र हैं अथवा तपी औ जपी औ विप्रनको क्षिप्रही हरों कहौं कि तपी औ जपी जे विप्र हैं अथवा नाशैं कछू विचार नहीं करत औ अदेवजे दैत्य जे राक्षस हैं तिनके द्वेषी शत्रु देवता हैं तिन्है क्षिप्रही संहरत हौं कहे मारत हौं यासों हौं बड़ो पापी हौं सो सियाको न देहौं यह नेम जो जीभ धरत हौं सो अब कहे या समय मानुषी कहे नारी हैं मनुष्य जहां औ वानरी कहे नारी हैं काऊ काहू को अरि शत्रु जहां ऐसी जो भूमि कहे स्थान हैं विष्णुलोक ताका करौं कहे साधत हौं " भूमि क्षितौ स्थानपात्रे इत्यभिधानचिन्तामणिः " ब्रह्मद्रोप देवदापादि बडे पातकनसों छूटिबेको उपाय और नहीं है तासों सीताको नहीं देतो कि सीता के लिये आइकै रामचन्द्र मोहि मारिहैं तौ सब पातकन सों छूटिकै विष्णुलोक जैहौं इति भावार्थ. ३१ अजहू कहे अबहू अर्थ एतेहूपर तौ धरको कहर करौं ३२ सरस्वती उक्तार्थ याम प्रहस्तादि मन्त्रिन प्रति काकोक्ति है रावण कहत है कि हे अंगद 'तुम तौ नीकी सिख देतहौ परन्तु प्रहस्त आदि मन्त्रिन करिहौं कर्मवश मेरी ऐसी दुर्मति है कि जब रामचन्द्र एती बातैं करैं तब सीताको देहुँ सो ऐसो काहू ना करि हैं तासों दुर्गति कृत हमारी मृत्यु विशेष सों है सो गई निश्चय जान्यो ३३ ॥

अंगद-लंक लाय गयो बली हनुमन्त सन्त न गाइयो । सिंधुबांधत शोधिकै नल क्षीरछीट बहाइयो ॥ ताहि तोहिं

समेत अध उखारि हौं उलटी करौं। आजु राज कहां विभीषण बैठि हैं तेहिते डरौं ३४ दोहा॥ अंगद रावणको मुकुट लै करि उड़यो सुजान॥ मनो चलो यमलोकको दशशिर को प्रस्थान ३५॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायामङ्गदरावणसंवादवर्णनन्नामषोडशः प्रकाशः १६॥

क्षीर कहे जल "क्षीरं पानीयदुग्धयोरिति हैमः" ३४। ३५॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद निर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायामङ्गदसंवादवर्णनन्नाम षोडशः प्रकाशः॥ १६॥

दोहा॥ या सत्रहें प्रकाशमें लंकाको अवरोध॥ शत्रुचमूवर्णन समर लक्ष्मणको परबोध १ अंगद लै वा मुकुटको परे रामके पाइ॥ राम विभीषणके शिरसि भूषित कियो बनाइ २ पद्धटिकाछंद॥ दिशि दक्षिण अँगद पूर्व नील। पुनि हनूमत पश्चिम सुशील॥ दिशि उत्तर लक्ष्मणसहित राम। सुग्रीव मध्य कीन्हें विराम ३ सँग यूथप यूथपबल विलास। पुर फिरत विभीषण आसपास॥ निशि वासर सबको लेत शोध। यहि भांति भयो लंकानिरोध ४ तब रावण सुनि लंकानिरोध। गण उपजो तन मन परम क्रोध॥ राख्यो प्रहस्त हठि पूर्वपौरि। दक्षिणहि महोदर गयो दौरि ५ भयो इंद्रजीत पश्चिम दुवार। है उत्तर रावण बल उदार॥ कियो विरूपाक्ष थिति मध्यदेश। करै नारांतक चहुँधा प्रवेश ६ प्रमिताक्षराछंद॥ अति द्वार द्वारमहँ युद्ध

भये। बहुऋक्ष कँगूरन लागि गये॥ तब स्वर्णलंकमहँ शोभभई। जनु अग्निज्वाल महँ धूममई ७॥

अवरोध घेरनो औ विभीषण करि शत्रु जो रावण है ताके चमूको वर्णन है परमोधु मूर्च्छा १।२ रामचन्द्र के औ लंका के मध्य में सुग्रीव विश्राम कीन्हें हैं ३।४।५।६ छंद उपजाति है ७॥

दोहा॥ मरकतमणिके शोभिजै सबै कँगूरा चारु॥ आइगयो जनु घातको पातकको परिवारु ८ कुसुमविचित्रा छंद॥ तब निकसो रावणसुत शूरो। जेहि नर जीत्यो हरि बल पूरो॥ तपबल माया तम उपजायो। कपिदलके मन संभ्रम छायो ९ दोधकछंद॥ काहु न देखिपरै वह योधा। यद्यपि हैं सिगरे बुधिबोधा॥ शायकसो अहि नायक साध्यो। सोदरस्यो रघुनायक बांध्यो १० रामहिं बांधि गयो जब लंका। रावणकी सिगरी गइ शंका॥ देखि बँधे तब सोदर दोऊ। यूथप यूथ त्रसे सब कोऊ ११ स्वागताछंद॥ इंद्रजीत तेहि लै उरलायो। आजु काज सब भो मनभायो॥ कै विमान अधिरूढ़ति धाये। जानकीहि रघुनाथ देखाये १२ राजपुत्रयुत नागनि देख्यो। भूमियुक्त तरु चंदनलेख्यो॥ पन्नगारि प्रभु पन्नगशाई। काल चाल कछु जानि न जाई १३ दोहा॥ काल सर्प के कवलते छोरत जिनको नाम॥ बँधे ते ब्राह्मणवचनवश मायासर्पहि राम १४॥

कँगूरन में ऋक्ष लपटे हैं तासों मानों मरकतमणिही के कँगूरा शोभित हैं पातक देवद्रोह ब्रह्मदोषादि ८ हरि इन्द्र है बुद्धिबोधा कहे बुद्धियुक्त १०।११ तेहि रावण इन्द्रजीत को उर में लगायो १२ भूमि में युक्त कहे गिरे चंदनवृक्ष हू नागयुक्त रहत हैं द्वन्द्वयुक्त सीता यह कहत भई कि हे पन्नगारि प्रभु! हे पन्नगशायी! पन्नग जे सर्प हैं तिनके अरि कहे भक्षक

जे गरुड़ हैं तिनके तुम स्वामी हौ यासों या जनायो कि तुम्हारे वाहन जे गरुड़ हैं ते अनेक सर्प भक्षण करत हैं औ पन्नगशायी कहि या जनायो कि तुम सदा सर्पही पर सोयो करतहौ ते तुम नागपाश में बांधे हौ तौ काल जो समय है ताकी चाल कछू जानि नहीं परति बलाबल समयही नत उन्नत को उन्नत नत करत है इति भावार्थ १३ । १४ ॥

राम—स्वागताछंद ॥ पन्नगारि तबहीं तहँ आये । व्याल जाल सब मारि भगाये ॥ लंकमांझ तबहीं गइ सीता । शुभ्रदेह अवलोकि सुगीता १५ गरुड़—इंद्रवज्राछंद ॥ श्री रामनारायणे लोककर्ता । ब्रह्मादि रुद्रादिके दु खहर्ता ॥ सीतेश मोको कछू देहु शिच्छा । नान्ही बड़ी ईश जो होइ इच्छा १६ राम ॥ कीबे हुतो काज सबै सो कीन्हों । आये इहां मोकहँ सुक्ख दीन्हों ॥ पांलागि वैकुंठप्रभाविहारी । स्वर्लोकगो तत्क्षण विष्णुधारी १७ इंद्रवज्राछंद ॥ धूम्राक्ष आयो जनु दंडधारी । ताको हनुमंत भये प्रहारी ॥ जिते अ कपादि बलिष्ठ भारे । सग्राममें अंगद वीर मारे १८ उपेंद्रवज्रा छंद ॥ अकंप धूम्राक्षहि जानि जूझ्यो । महोदरै रावण मंत्र बूझ्यो ॥ सदा हमारे तुम मंत्रवादी । रहे कहो है अति ही विषादी १९ ॥

१५ । १६ । १७ छंद उपजाति है १८ विषादी कहे दुःखी उदासीन इति १९ ॥

महोदर ॥ कहै जो कोऊ हितवंत बानी । कहौ सो तासों अतिदु:खदानी ॥ गुनो न दांवै बहुधा कुदांवै ॥ सुखी तबै साधत मौन भावै २० कहो शुक्राचार्य सुहौं कहौंजू । सदा तुम्हारो हित संग्रहौंजू ॥ नृपाल भू में निधि चारि जानों । सुनो महाराज सबै बखानों २१ भुजगप्रयातछंद ॥ यहै लोक

एकै सदा साधि जानै। बली बेनु ज्यों आपुही ईश मानै॥ करै साधना एक परलोकही को। हरिश्चंद्र जैसे गये दै मही को २२ दुहूं लोकको एक साधै सयाने। विदेहीन ज्यों वेद-बानी बखाने॥ नठै लोक दोऊ हठी एक ऐसे। त्रिशंकै हँसै ज्यों भलेऊ अनैसे २३ दोहा॥ चहूंराजके मैं कहे तुमसों राज चरित्र॥ रुचै सो कीजै चित्तमें चिंतहु मित्र अमित्र २४ चारिभाति मत्री कहे चारिभांतिके मत्र॥ मोहिं सुनायो शङ्करजू शोधि शोधि सब तन्त्र २५॥

जो कोऊ तुम्हारे हितकी बात कहत है तासों कहे ता प्राणी को तुम दुखदा कहे दुःखदायक कहत हौ अथवा दुखदानी कहे कटुवाद कहत हौ औ दांव कुदांव कहे समय कुसमयको गुनत नहीं हौ अर्थ जा समयमों जो करिबो उचित है ताको विचार नहीं करत हौ आपने मनहीं की करत हौ तासों अथवा दांवको नहीं गुनत हौ बहुधा कुदांवही को गुनत हौ तासों सुधि जे सुबुद्धि हैं मत्रीजन ते मौनभाव को साधत हैं कहे चुप है रहत हैं २० । २१ । २२ । २३ मित्र कहे हित अमित्र कहे अहित की चिंता करो कि कौन चरित्र हमको हित है कौन अहित है अथवा सब मन्त्रिन मत्र कह्यो है तामें मित्र अमित्रकी चिंता करौ कि कौन हितकी कहत है औ कौन अहितकी कहत है २४ चारि भाति के मत्री हैं औ चारि भाति के मत्र होत हैं तन्त्र कहे सिद्धांत अथवा तन्त्रशास्त्र २५॥

छप्पै॥ एक राजके काज हतै निजकारज काजे। जैसे सुरथ निकारि सबै मत्री सुखसाजे॥ एक राजके काज आपने काज बिगारत। जैसे लोचन हानि सही कवि बलिहि निवारत॥ यक प्रभु समेत अपनो भलो करत दाशरथिदूत ज्यों। यक अपनो प्रभुको बुरो करत रावरो पूत ज्यों २६ दोहा॥ मंत्र जो चारिप्रकारके मन्त्रिन के जे प्रमान॥ विषसे दाडिम बीजसे गुडसे नींब समान २७ चद्रवर्त्मछद॥ राज-

नीतिमत तत्त्व समुझिये। देश काल गुणि युद्ध अरुझिये॥ मन्त्रि मित्र अरिको गुण गहिये। लोकलोक अपलोक न बहिये २८॥

दाशरथिदूत अंगद औ हनुमान् सीताको देहु तुमसों इत्यादि सधिकी बातैं कहि आपने प्रभुको काज साधत हैं औ युद्ध में आपनो मरण घातादि बचाइ आपनो हित करत हैं औ रावरो पूत युद्ध कराइ आपनी औ तुम्हारेउ मृत्यु कियो चाहत हैं २६ विषसे खातहू में कटु औ गुण जिनको मृत्युदायक है औ दाड़िम बीजसे खातहू में मधुर औ गुण जिनको पुष्टिकर्ता है औ गुड़से खातमें मधुर गुण दुःखद है औ नींबसे खातमें कटु गुण सुखद है २७ कहूं यह पाठ है कि और विचार तत्त्व सब लहिये तौ उपजाति चंद्रवर्मछंद जानो २८॥

रावण॥ चारिभांति नृपता तुम कहियो। चारि मंत्रिमत मैं मन गहियो॥ राम मारि सुर एक न बचि है। इंद्रलोक बसोवासहि रचिहैं २९ प्रमिताक्षराछंद॥ उठिकै प्रहस्त सजि सेन चले। बहुभांति जाइ कपिपुंजदले॥ तब दौरि नील उठि मुष्टि हन्यो। असुहीन गिरयो भुव मुंडसन्यो ३० वंशस्थाछंद॥ महाबली जूझतही प्रहस्तको। चल्यो तहीं रावण मिंडि हस्तको॥ अनेकभेरी बहुदुंदुभी बजें। गयंद क्रोधांध जहां तहां गजें ३१ सनीर जीमूतनिकाश शोभहीं। विलोकि जाको सुर सिद्ध क्षोभहीं॥ प्रचण्ड नैर्ऋत्यसमेत देखिये। सप्रेत मानो महकाल लेखिये ३२ विभीषण—वसंततिलकछंद॥ कोदंडमंडित महारथवंत जो है। सिंहध्वजा समरपंडितवृंदमोहै॥ महाबली प्रबल काल कराल नेता। समेघनाद सुरनायक युद्धजेता ३३॥

रामचन्द्रको मारिकै औ सुर देवता एकौ न मोसों बचिहैं अर्थ सब देवनहू को मारिकै इंद्रलोक में बसोवास रचि हैं सरस्वती वक्रार्थ

रामचन्द्र जे हैं ते हमैं मारिकै एकौ देवता न बचि हैं कहे बाकी रहिहैं सब देवतन को बसोवास इन्द्रलोक में रचि हैं अर्थ हमारे भयसों इन्द्रलोक सों भागिकै देवता कंदरादिकनमों जाइ बसे हैं तिन्हैं निर्भय करिकै इन्द्रलोक में बसाइ हैं २९ छंद उपजाति है ३० । ३१ सनीर कहे सजल जीमूत कहे मेघनके निकाश सदृश शोभित क्षोणदी कहे डरात हैं नैऋत्य राक्षस ३२ रामचन्द्र पूछ्यो है इति कथाशेषः नेता कहे दंडकर्ता ३३ ॥

जो व्याघ्रवेष रथ व्याघ्रनिकेतधारी । सरक्तलोचन कुबेर विपत्तिकारी ॥ लीन्हें त्रिशूल सुरशूल समूल मानो । श्री राघवेंद्र अतिकाय वहै सो जानो ३४ जो कांचनीय रथ भृगमयूरमाली । जाकी उदार उर षण्मुख शक्तिशाली ॥ स्वर्धाम धाम हरकीरतिकै न जानी । सोई महोदर वृकोदर बधुमानी ३५ जाके रथाग्रपर सर्पध्वजा विराजै । श्रीसूर्य-मंडलविडंबन ज्योति साजै ॥ आखंडलीय वपु जो तन त्राणधारी । देवांतकै सो सुरलोक विपत्तिकारी ३६ जो हस्त-केन भुजदंडविषगधारी । संग्रामसिंधु बहुधा अवगाहकारी ॥ लीन्हीं छँडाइ जेहि देव अदेवरामा । सोई रारात्मज जली मकराक्ष नामा ३७ ॥

त्रिशूल कैसो है सुर जे देवता हैं तिनको मानो समूल कहे पूर्ण शूल कहे मृत्यु है ' शूलोस्त्री रोगआयुधे सु धुकेतनयोगयोः ' इति मेदिनी ३४ कांच नीयरथ कहे सुवर्ण को रथ जाके भृंगमें अग्रभाग में मयूरनकी माला पगनि लगी है अर्थ मयूरध्वजी है जाकी शक्ति बरछी षण्मुख जे स्वामिकार्त्तिक हैं तिनके उदार कहे बड़े उरमें शाल्य करे लगी है ३२ जो स्वर्ग है ताके धाम धाम कहे घर घर को हर कहे हरणहार है अर्थ लूटनहार है ३५ श्रीसूर्यमंडल को विडंबन कहे निंदक ज्योति कहे तेज को साजत है रथ अथवा आप अथवा तनत्राण आखंडलीय कहे इन्द्र को ३६ । ३७ ॥

भुजंगप्रयातछंद ॥ लगे स्यंदनै बाजिराजी विराजैं । जिन्हैं वेगको पौनको वेग लाजै ॥ भले स्वर्णकी किंकिणीयूथ

बाजैं । मिले दामिनी सों मनो मेघ गाजैं ३८ पताका बन्यो शुभ्र शार्दूल शोभै । सुरेंद्रादि रुद्रादिको चित्त क्षोभै ॥ लसै छत्र माला हँसै सोमभाको । रमानाथ जानों दशग्रीव ताको ३९ पुरद्वार छांड्यो लडै आपु आयो । मनो द्वादशादित्यको राहु धायो ॥ गिरिग्राम लैलै हरिग्राम मारै । मनो पद्मिनीपत्र दती विहारै ४० ॥

दामिनी सम स्वर्ण किंकिणी के यूथ कहे समूह हैं मेघसम रावण के श्याम घोड़े हैं । यथा वाल्मीकीये "रथ राक्षसराजस्य नरराजो ददर्श ह ॥ कृष्णवाजिसमायुक्तं युक्तं रौद्रेण वर्चसा " ३८ शार्दूल कहे व्याघ्र ३९ पुररक्षा के लिये मेघनादादि को पुरद्वार में छाँड़िकै आप लरिबे को आयो है । यथा वाल्मीकीये रावणोक्तिः "ततस्स रक्षोधिपतिर्महात्मा रक्षांसि तान्याह महाबलानि । द्वारेषु चार्यागृहगोपुरेषु सुनिर्वृतास्तिष्ठति निर्विशंका ॥ इहागत मां सहित भवद्भिर्वनौकसश्छिद्रमिदं विदित्वा । शून्यां पुरीं दुष्प्रसहां प्रमथ्य प्रधर्षयेयुः सहसा समेताः ॥ विसर्जयित्वा सचिवांस्ततस्तान् गतेषु रक्षस्सु यथा नियोगे " सो गिरि जे पर्वत हैं तिनके ग्राम कहे समूह लैलै के हरिजे वानर हैं तिनको समूह मारत है तिन गिरिसमूहन में रावण पद्मिनी कमलिनीपत्रमें दंती सम विहार कौतुक करत है अर्थ गिरिग्राम रावणकी देहमें दतीकी देह में पद्मिनीपत्रसम लागत है ४० ॥

सवैया ॥ देखि विभीषणको रण रावण शक्ति गही कर रोषरई है । छूटतही हनुमंत सो बीचहि पूछलपेटिकै डारि दई है ॥ दूसरि ब्रह्म कि शक्ति अमोघ चलावतही हाइहाइ भई है । राख्यो भले शरणागत लक्ष्मण फूलिकै फूलसि ओढ़ि लई है ४१ स्रग्विनीछंद ॥ जोरहीं लक्ष्मणै लेन लाग्यो जहीं । मुष्टि छाती हनूमंत मार्यो तहीं ॥ आशुही प्राणको नाशसों ह्वै गयो । दंड द्वैतीनि में चेत ताको भयो ४२ मरहट्टाछंद ॥ आयो हरि प्राणनि लै धनुबाणनि कपिदल दियो भगाइ ।

चढ़ि हनुमतपर रामचन्द्र तब रावण रोंक्यो जाइ ॥ धरि एक बाण तब सूत छत्र ध्वज काटे मुकुट बनाइ । लागे दूजो शर छूटिगयो बरु लंक गयो अकुलाइ ४३ दोधकछंद ॥ यद्यपि है अतिनिर्गुणताई । मानुषदेह धरे रघुराई ॥ लक्ष्मण राम जहीं अवलोक्यो । नैनन ते न रह्यो जल रोंक्यो ४४ राम—बारक लक्ष्मण मोहिं विलोको । मो कहँ प्राण चले तजि रोंको ॥ हौं सुमिरौं गुण केतिक तेरे । सोदर पुत्र सहायक मेरे ४५ ॥

फूलिकै प्रसन्न ह्वैकै ४१ । ४२ हनुमान् सों प्राणनको डरिकै कपिदलको भगायो जाय तहां हनुमान् क्यों न गये तौ जब रावण वा ठौर सों भागो तब लक्ष्मण को लैकै हनुमान् रामचन्द्र के पास गये इति कथाशेषः ४३ । ४४ । ४५ ॥

लोचन बाहु तुहीं धनु मेरो । तू बल विक्रम बारक हेरो ॥ तू बिन हौं पल प्राण न राखौं । सत्य कहौं कछु झूठ न भाखौं ४६ मोहिं रही इतनी मन शंका । देन न पाइ विभीषण लंका ॥ बोलि उठौ प्रभुको प्रणपारो । नातरु होत है मो मुख कारो ४७ विभीषण—सुंदरीछंद ॥ मैं बिनऊ रघुनाथ करौ अब । देव तजो परिदेवन को सब ॥ औषधि लै निशि में फिरि आवहि । केशव सो सब साथ जियावहि ४८ सोदर सूरको देखतही मुख । रावणके पुरवैं सिगरे सुख ॥ बोल सुने हनुमन्त कस्यो मन । कूदिगयो जहँ औषधिको बन ४९ ॥

बल कहे सैन विक्रम पराक्रम ४६ प्रभु जो मैं हौं ताका विभीषण को लंकादानरूपी जो प्रण है ताको पारो कहे पूर्ण करौ ४७ हे रघुनाथ ! जो मैं बिनऊं कहे बिनती करत हौं सो तुम करो हे देव ! सब मिलिकै परिदेवन जो विलापहै ताको छोंडिदहु "विलाप परिदेवनमित्यमर" ४८ प्रथम कह्यो है कि औषधि लैकै निशिही में फिरि आवै ताको हेतु कहत

हैं सोदर जे लक्ष्मण हैं सूर जे सूर्य हैं तिनको मुख देखतही रावण के सिगरे सुख पुरवैं कहे पूरित करि हैं अर्थ सूर्योदय भये लक्ष्मण न जी हैं या प्रकारको विभीषण को बोल सुनिकै निशिही में हम औषधि ल्याइ हैं हनुमत यह प्रण करयो ४६ ॥

रागषट्पद ॥ करि आदित्य अदृष्ट नष्ट यम करौं अष्टवसु। रुद्रन बोरि समुद्र करौं गधर्व सर्वपसु ॥ बलित अबेर कुबेर बलिहि गहि देउ इंद्र अब । विद्याधरनि अविद्य करौं बिन सिद्ध सिद्ध सब ॥ निज होहि दासि दितिकी अदिति अनिल अनलमिटि जाइ जल । सुनि सूरज सूरज उवतहीकरौं असुर संसार बल ५० भुजंगप्रयातछंद ॥ हन्यो विघ्नकारी बली वीर वामैं । गयो शीघ्रगामी गये एकयामैं ॥ चल्यो लै सबै पर्वते कै प्रणामैं । न जान्यो विशल्यौषधी कौन तामैं ५१ ॥

रामचन्द्र सुग्रीव सों कहत हैं कि जो सूर्य उदयको प्राप्त होइँ तौ जेते देवता हैं तिनकी सबकी आयुर्दशा करौं औ देवतन के शत्रु जे असुर दैत्य हैं तिन को बल संसार भरे में करि देउँ अर्थ तीनों लोकमें दैत्यन को राज्य करि देउँ दिति दैत्यन की माता अदिति देवतन की माता ५० वाम कहे कुटिल ऐसा जो हनुमान् के सूर्योदय पर्यंत बिलँबाइबे के लिये कपट तपस्वी को रूप धरे मगमें बैठो कार्य को विघ्नकारी कालनेमि राक्षस है ताको मारिकै एकयामैं पहरैगये कहे बीते औषधि पास गयो विशल्यौषधी कहे विशल्यकरणी औषधी ५१ ॥

लसैं औषधी चारु भो व्योमचारी । कहैं देखि यों देवदेवाधिकारी ॥ पुरी भौमकीसी लिये शीशराजे । महामंगलार्थी हनूमत गाजे ५२ लगी शक्ति रामानुजे रामसाथी । जड़ै ह्वैगये ज्यों गिरे हैमहाथी ॥ तिन्हैं ज्याइबेको सुनो प्रेमपाली । चल्यो ज्वालमालीहि लै कीर्तिमाली ५३ किधौं प्रातही काल जीमें विचास्यो । चल्यो अंशुलै अंशुमाली सँहास्यो ॥ किधौंजानज्वालामुखी जोर लीन्हें । महामृत्यु जामें मिटै होमकीन्हें ५४ ॥

या पर्वत में ज्वलित औषधि सोहती हैं ताको लै हनुमान् व्योमचारी आकाशमगगामी भयो देव औ दवाधिकारी गंधर्वादि अथवा देवदेव जे इंद्र हैं तिनके अधिकारी जे देवता हैं अर्थ औषधिनकी रक्षामें जिन देवतन को इंद्र अधिकार दियो है अथवा देवदेव इद्र औ मंत्रादि में अधिकारी जे देवता हैं ते कहत हैं कि महामगल कल्याण के अर्थी जे हनुमान् हैं ते भौम जे मगल हैं तिनकी पुरीही को लिये जात हैं अनेक मंगल सम ज्वलित औषधीवृन्द हैं मंगलपद श्लेष है कल्याण औ भौमको नाम है ५२ तिन्हैं कहे तिन लक्ष्मणके ज्याइबेको औषधिन के ज्वालाकी माली कहे समूह हैं जामें सो ज्वालमाली कहावै ऐसा जो पर्वत है ताही को लैकै चल्यो है अर्थ ज्वलित हैं औषधीवृद जामें ऐसो जो औषधिपर्वत द्रोणाचल है ताहीको लियेजात हैं अथवा ज्वालकी है माली समूह जामें ऐसी जो विशल्यकरणी औषधी है ताहीको लै चल्यो है अथवा ज्वालमाली जे अग्नि है तिनको लै चल्यो है कीर्तिमाली हनुमान् को विशेषण है ५३ औ कि मानहि कहे सूर्योदय होतही लक्ष्मण को काल कहे मृत्यु जी में विचार्यो है सो अशुमाली जे सूर्य हैं तिनको संहारि कहे मारिकै सूर्य के अंशु कहे किरण अथवा प्रभाव लिये जात हैं जामें सूर्योदय न होइ "अशु प्रभाकिरणयोरितिमेदिनी" ५४ ॥

विना पत्र हैं यत्र पालाश फूले । रमैं कोकिलाली भ्रमैं भौंर भूले ॥ सदानद रामैं महानंदको लै । हनूमंत आये बसंतै मनो लै ५५ मोटकछंद ॥ ठाढेभये लक्ष्मण मूरि छिये । दूनी शुभशोभ शरीर लिये ॥ कोदंड लिये यह बातररै । लंकेश न जीवत जाइ घरै ५६ श्रीराम तहीं उरलाइ लियो । सूंघ्यो शिर आशिष कोरि दियो ॥ कोलाहल यूथपयूथ कियो । लंका हहली दशकंठ हियो ५७ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांलक्ष्मणमूर्च्छामोचन नाम सप्तदश प्रकाश ॥ १७ ॥

यत्र जा पर्वतमें औषधीवृन्द नहीं हैं विना पत्र फूले पलाशके वृक्ष हैं या प्रकार भूले कोकिलनकी आली पगती रमती हैं औ भँवर जामें भ्रमैं कहे घूमत हैं वसत कैसो है कि यत्र कहे जामें बिना पत्र पलाश फूलिरहे हैं औ जामें कोकिलाली रमती हैं औ भूले कहे उन्मत्तता सों देहकी सुधि बिस राये भँवर भ्रमत हैं यामें श्लेषोत्प्रेक्षा है सो सदानन्द जे राम हैं तिनके महानन्द के लिये हनुमान् मानो वसतही ल्याये हैं वसत को देखि सबके आनद होत है तासों अथवा जैसे राजन के यहा आनदार्थ माली वसत बनाइकै लैजात है तैसे मानो रामचन्द्र के महाआनद को हनुमान् वसत को रूपही बनाइ ल्याये हैं ५५ मूरि जो औषधि है ताको छिये कहे छुये सों ५६। ५७॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद निर्मितायारामभक्तिप्रकाशिकाया सप्तदश प्रकाश ॥ १७॥

दोहा ॥ अष्टादशे प्रकाशमें केशवदास कराल। कुंभकर्ण को वर्णिबो मेघनादको काल १ दोधकछद ॥ रावण लक्ष्मण को सुनि नीके। छूटि गये सब साधन जीके॥ रेसुत मन्त्रि विलंब न लावो। कुंभकरणहिं जाइ जगावो २ राक्षस लक्ष्मण साधन कीने। दुदुभि दीन्ह बजाइ नवीने॥ मत्त अमत्त बड़े अरु बारे। कुंजरपुज जगावत हारे ३ आइ जहीं सुरनारि सभागीं। गावन बीण बजावन लागीं॥ जागि उठो तबहीं सुरदोषी। क्षुद्रक्षुधा बहुभक्षण पोषी ४॥

कुंभकर्णको औ मेघनादको काल कहे मृत्यु वर्णिबो १ साधन कहे जय-सिद्धि के उपाय २ साधन कहे जगाइबे को यत्न ३ यह महादेव को वर रह्यो है कि देवांगनन को गान सुनि कुभकर्ण अकालहू में जागि है तासों जब देवागना आइ गावन लागीं तब जाग्यो। यथा हनुमन्नाटके " निद्रां तथापि न जहौ यदि कुम्भकर्णः श्रीकण्ठलब्धवरकिंनरकामिनीनाम् ॥ गन्धर्वयक्षसुरसिद्धनरांगनानामाकर्ण्य गीतममृत परम त्रिनिद्रः " ४॥

नाराचछंद ॥ अमत्तमत्तदंतिपंक्ति एक कौरको करै।

भुजा पसारि आसपास मेघओप संहरै ॥ विमान आसमान के जहाँ तहाँ भगाइयो । अमान मानसो दिवान कुंभकर्ण आइयो ५ रावण ॥ समुद्रसेतु बांधिकै मनुष्य दोइ आइयो । लिये कुचालि वानरालि लंक अंक लाइयो ॥ मिल्यो वि-भीषणो न मोहिं तोहिं नेकहू डरेउ । प्रहस्तआदि दै अनेक मंत्रि मित्र संहरेउ ६ करो सो काज आशु आजु चित्तमें जो भावई । असौख्य होइँ जीव जीव शुक्र सौख्य पावई ॥ समेति राम लक्ष्मणै सो वानरालि भक्षिये । सकोश मंत्रि मित्र पुत्र धाम आम रक्षिये ७ ॥

मान गर्व दीवान सभा ५ वानरालिको लंकके अंक कहे गोदमें लायो है अर्थ लंक के मध्यमें प्राप्त कियो है अथवा जो पुरी काहू कबहू नहीं घेरयो ताको घेरिकै अंक कहे कलंक लायो है यामें रामचन्द्रके बलको वर्णन है निंदा नहीं है तासो सरस्वती उक्तार्थ नहीं कियो ६ ऐसो कार्य्य करो जासों देवतनको विघ्न हो जीव जे बृहस्पति हैं ते असौख्य होइँ औ हमारी जय होय शुक्र सुख पावैं सरस्वती उक्तार्थ राम लक्ष्मण समेत या वान-रालि को भक्षिये कहे भक्षण करि [illegible] है अथ नहीं भक्षण करि सकियत काहे [illegible] ये वानर हम भक्षण करे हैं इनको सेतुबन्धादि धर्म देखिकै हमारो जाव [illegible] है ताको कोश कहे खजाना सहित मन्त्र्यादिकन को रक्षिये कहे रक्षण करि सकित हैं औ नहीं रक्षण करि सकियत अर्थ ये हमको सबको मारि प्राणनि लेन चाहत हैं ७ ॥

कुंभकर्ण—मनोरमाछंद ॥ सुनिये कुलभूषण देव विदूषण । बहु आजिविराजित के तुम पूषण ॥ भवभूपजे चारिपदारथ साधन । तिनको कबहूँ नाहिं बाधक बाधत ८ पंकजवाटिका छंद ॥ धर्म करत अति अर्थ बढावत । संतत हितरति गो-विंद गावत ॥ सनति उपजतही निशि वासर । साधन तन मन सुक्ति महीधर ९ ॥

बहुते जे हैं आजि कहे समरन के विराजी कहे शोभनहार अर्थ अनेक समरकर्ता तिनके मध्य में तुम पूषण कहे सूर्यसम हौ कहू तमपूषणपाठ है तहां अर्थ कि बहुत जे आजिविराजी सग्रामकर्ता हैं तिनके तमपूषण कहे तमको पूषणसम हौ अर्थ जैसे सूर्य तमको नाश करत है तैसे तुम सग्राम कर्ता जे शत्रुभट हैं तिन्हैं नाश करत हौ चारि पदार्थ अर्थ धर्म काम मोक्ष ८ चारों पदार्थन के साधिबे को समय कहत हैं कि महीधर जे राजा हैं ते सतत कहे निरतर धर्महू करत हैं औ सतत अतिअर्थ द्रव्यहू को बढ़ावत हैं अथवा धर्मको करत अर्थ बढ़ावत हैं अर्थ सतरीति सों अर्थ बढ़ावत हैं औ संतत छित हैं रति स्त्रीभोग अर्थ कामसाधन जिनको ऐसे कोविद गावत हैं अर्थ ये तीनों एकही समयमों साध्य हैं औ जब सतति कहे पुत्र उत्पन्न भयो तब निशि औ वासर तन औ मन करिकै मुक्तिको साधन करत हैं आजतक तुम अर्थ धर्म कामको साधन कीन्हों अब तुम्हारो पुत्र समर्थ है ताको सब राज्य भार सौंपि सीताको रामचन्द्र को दैकै हेतुकरि मुक्ति साधन करो इति भावार्थः ९ ॥

दोहा ॥ राजा अरु युवराज गज प्रोहित मंत्री मित्र ॥ कामी कुटिल न सेइये कृपण कृतघ्न अमित्र १० घनाक्षरी ॥ कामी वामी झूठ क्रोधी कोढ़ी कुलद्वेषी खलु कातर कृतघ्नी मित्रदोषी द्विजद्रोहिये । कुरुष किंपुरुष काहली कलहि क्रूर कुटिल कुमत्री कुलहीन केशौ ठोहिये ॥ पापी लोभी झूठ अंध बावरो बधिर गूगा बौना अविवेकी हठी छली निरमोहिये । सूम सर्वभक्षी दैववादी जो कुवादी जड़ अपयसी ऐसो भूमि भूपति न सोहिये ११ ॥

ये पांचों राजादि इन दूषण सहित होहिं तौ सेवनके योग्य नहीं होत अथवा यथाक्रम सों जानो राजा कामी काहेते उचितानुचित विचार विना सुंदरी देखि प्रजाजनकी स्त्रिनको गहि मँगावत हैं तासों देश उजारि होत है औ युवराज कुटिल कहेते मत्र्यादिकन सों विरोध राज्य विध्वंस करत हैं औ पुरोहित कृपण कहे दरिद्र काहेते विवाहादि समयमों द्रव्यलोभवश

वेदविहित यज्ञादि बिताइ अमंगल करत हैं अथवा शत्रुसों कछु द्रव्य पाइ मारणादि के लिये राशि नाम बतावत हैं औ मंत्री कृतघ्नी कहेते स्वामी को कृत बिसारि शत्रुसों मिलि राज्य छोड़ावैं औ मित्र अमित्र कहे हृदयमों भलो न चाहै काहेते कछु गूढ़मंत्र कहौ सो शत्रुपास पहुँचावै ये पांचों इन पांचहुन दोष सहित सेवन योग्य नहीं होत यासों या जनायो कि तुम राजा हौ तुम्हैं ऐसो काम साधन न चाहिये जासों ईश्वर जे रामचन्द्र हैं तिनकी स्त्री को हरिल्याये हौ १० वामी वाममार्गी कुपुरुष कहे पुरुषार्थ रहित किंपुरुष कहे कुछ है पुरुषकी आकृति जिनकी काहली रोगी दैववादी कहे जे भाग्य भरोसे रहत हैं याहू में या जनायो कि तुमको ऐसो काम साधन न चाहिये ११ ॥

निशिपालिकाछंद ॥ वानर न जानु सुर जानु शुभगाथ हैं। मानुष न जानु रघुनाथ जगनाथ हैं ॥ जानकिहि देहु करि नेहु कुल देहु सो। आजु रण साजु पुनि गाजु हँसि गेहु सो १२ रावण-दोहा ॥ कुंभकर्ण करि युद्ध के सोइरहो घरजाइ ॥ वेगि विभीषण ज्यों मिल्यो गहो शत्रुके पाइ १३ मंदोदरी ॥ इंद्रजीत अतिकाय सुनि नारांतक सुखदाय। मेघनसों प्रभु झुर तहैं क्यों न कहौ समुझाय १४ चचलाछंद॥ देव कुंभकर्णके समान जानिये न आन। इंद्र चन्द्र विष्णु रुद्र ब्रह्मको हरेउ गुमान ॥ राजकाज को कहै जो मानिये सो प्रेम पालि। कै चली न को चलै न कालकी कुचालिचालि १५॥

कुल औ देहसों नेह करिकै जानकी को देहु यह कहि या जनायो कि न देहौ तौ रामचन्द्र तुम्हारे कुलके सहित तुम्हारो नाश करिहै १२ कारि यहै करौ १३ झुकत कहे रिस करत है मेघनसों रघुनन्दन काहे या जनायो कि एक भाई विभीषण समुझावन लाग्यो ताको लात मार्यो अब वैसेही कुंभकर्ण सों रिस करत हैं १४ देव रावणको सम्बोधन है जो बात कुंभकर्ण कहत हैं सो राजके काज के हितको कहत हैं ताहि प्रेमको पालिकै कहे हित करिकै मानिये अथ सीता को देकै रामचन्द्रसों हित करौ काहेते काल

जा समय है ताकी जो कुचालि कहे प्रतिकूलता है तामें चालि कहे चाल युद्धादि उत्कट कर्मरहित विचारयुक्त निज हितसाधक कार्य कृत्य कैं पूर्व नाहीं चल्यो को अब नाहीं चलत अर्थ जे पूर्व भये हैं तिन चल्यो है अब जे होत जात हैं ते चलतहैं जब आपनो समय टेढ़ो होत है तब शत्रुमिलनादि कार्य करि गौं साधिबो अनुचित नहीं है इति भावार्थः ॥ अथवा कालकी जो कुचालि है ताकी जो चालि कहे चालुहै अर्थ जब आपनो काल प्रति कूल भयो ता समयमों जो कार्यसाधक उचित चाल है १५ ॥

विष्णु भाजिभाजि जात छोड़ि देवता अशेष। जाम- दग्नि देखिदेखि कैं न कीन नारि वेष॥ ईश रामते बचे बचेक वानरेश बालि। कैंचली न कोचलै न कालकी कुचालि चालि १६ विजया ॥ रामहिं चोरि न दीन्हीं सिया जितके दुख तो तप लीलिलियो है। रामहिं मार न दीन्हों सहोदर रामहिं आवन जान दियो है॥ देह धस्यो तुमहीं लगि आजु लौं रामहिंके पिय ज्याये जियो है। दूरि कस्यो द्विजता द्विज देव हरेही हरे आततायी कियो है १७॥

कालकी कुचालिमें चालु कैं चलीहै सो कहत हैं देव दानवनके युद्ध में देवतनके सहायको विष्णुजात हैं परतु जब जानत हैं कि दैत्यनको समय सहायक है हमको कुटिल है हम इनसों न जीति हैं तब यशकी सुधि भुलाइ आपने प्राणन की रक्षाके लिये भागिजात हैं या प्रकार कैयो बारकी कथा पुराणन में प्रसिद्ध है यासों या जनायो कि विष्णुसों बली कोऊ नहीं है तेऊ समय विचारि गौं साधिजात हैं औ जामदग्नि जे परशुराम हैं तिनको देखिकै कैं क्षत्री नारि को वेष नहीं धस्यो यासों या जनायो कि जब परशुराम को समय रह्यो तब बड़े २ क्षत्री समय विचारि नारि को वेष धरि जीव बचायो औ तेई परशुराम ताही क्षत्रीवंश में उत्पन्न जे रामचन्द्र हैं तिनको समय बली विचारि आपनो धनुष-बाण दै हेतु करयो तासों हे ईश! रामचन्द्र को समय बली है सो सीताको दैकै हेतुरूपी जो बचिबे को उपाय है तासों बचो काहेते बालि बली रहे तिन बचिबे को उपाय न कियो ते न बचे मारेही गये चौथो तुमको अर्थ पाछेके छन्दमें कह्यो है १६ आवनजान

दियो अर्थ युद्धमंडल में आवन दियो फेरि युद्धमंडल सों फिरि जान दियो स्त्री हर्तादिक छः आततायी कहावत हैं यथा भागवते " अग्निदो गरदश्चैव शस्त्रपाणिर्धनापहः । क्षेत्रदारापहरश्चैव षडेते आततायिनः " आततायी ब्राह्मणहूँ होइ ताके वधसों ब्रह्मदोष नहीं है तासों १७ ॥

दोहा ॥ संधि करो विग्रह करो सीताको तो देह ॥ गनौं न पिय देहीनमें पतिव्रताकी देह १८ रावण-विजया ॥ हौं सतु छांडि मिलौं मृगलोचनि क्यों क्षमिहैं अपराधनये । नारि हरी सुतबांध्यो तिहारेहौं कालिहि सोदर सॉगिहिये ॥ वामन मांग्यो त्रिपैग धरा दक्षिणा बलि चौदह लोक दये । रचक वैरहुतो हरिवंचक बांधि पताल तऊ पठये १९ दोहा ॥ देवर कुंभकरणसों हरिअरिसों सुत जाइ ॥ रावणसों प्रभु कौन को मंदोदरी ब्यराइ २० ॥

पतिव्रता जो स्त्रीहैं तिनकी देह स्वरूप देहिनमें न गनौं १८ अपराधनये कह्यो तासों बलिको प्राचीन वैर जानो अर्थ हिरण्यकशिपु के रचक वैर सों बलिको बांधि पताल पठायो १९ । २० ॥

चामरछंद ॥ कुंभकरण रावणैं प्रदक्षिणाहि दै चल्यो । हाइहाइ ह्वै रह्यो अकाश आशुही हल्यो ॥ मध्य क्षुद्रघंटिका किरीट संग शोभनो । लक्षपक्षसों फणिंद्र इंद्रको चल्यो मनो २१ नाराच ॥ उडैं दिशादिशा कपीश कारिकोरि स्वासहीं । चपै चपेट पेट बाहु जानु जंघसों तहीं ॥ लिये हैं और ऐंचि ऐंचि वीर वाहुवातहीं । भखेते अंतरिक्षऋक्ष लक्षलक्ष जातहीं २२ कुंभकर्ण-भुजंगप्रयातछंद ॥ न हौं ताड़का हौं सुबाहै न मानो । न हौं शंभुकोदंड सांचो नखानो ॥ न हौं तालमाली खरै जाहि मारो । न हौं दूषणै सिंधु सूधो नि-हारो २३ सुरी आसुरी सुंदरी भोगकर्णै । माहाकालको काल

हौं कुंभकर्णौं ॥ सुनो रामसंग्रामको तोहिं बोलों। बढ्यो गर्व लंकाहि आये सो खोलों २४ ॥

लक्ष विधिको जो पक्ष कहे विरोध है तासों अर्थ बड़े विरोध सों अथवा लक्ष विधिको जो पक्ष कहे बल है तासों अर्थ बड़ेबल सों इहां लक्ष शब्द अधिकार्यसों है "पक्षो मासार्द्धके पार्श्वगृहे साध्यविरोधयोः ॥ केशादेः परतो वृंदे बले सखिसहाययोरितिमेदिनी" २१ जे लक्षन ऋक्ष भयसों अंतरिक्ष को जातहैं तिन्है बाहके वात वायु सों खैंचिकै भखे खाडडारथो २२ द्वैछंद को अन्वय एक है खरै कहे खर राक्षसै सूधो निहारा अर्थ कपिनको सूधो समुझिकै मारन बेधन करयो सरस्वती उक्तार्थः ॥ मेरीओर इन सम शत्रु दृष्टिसों न निहारो सूधो कहे कृपादृष्टि सों निहारो अथवा मोको सूधो कहे शत्रुभाव रहित आपनो दास निहारो सरस्वती उक्तार्थः ॥ लंका में आये ते जो तुम्हारे गर्व बढ्यो है ताहि खोलों कहे प्रसिद्ध करों आशय कि जब मोको मारिहौ तब तुम्हारो बलादिको जो गर्व है सो सब प्राणिनमों प्रसिद्ध है है २३ । २४ ॥

उठ्यो केशरी केशरी जोर छायो। बली बालिको पूत लै नील धायो ॥ हनूमंत सुग्रीव शोभैं सभागे। डसैं डासले अंग मातंगलागे २५ दशग्रीवके बंधु सुग्रीव पायो। चल्यो लंकमैं लै भले अकलायो ॥ हनूमंत लातै हत्यों देह भूल्यो। छुट्यो कर्ण नासाहिलै इंद्र फूल्यो २६ सँभार्यो घरी एक दूमै मरूकै। फिर्यो रामही सामुहैं सों गदालै ॥ हनूमंतजू पूछ सों लाइ लीन्हों। न जान्यों कबै सिंधुमें डारिदीन्हों २७ ॥

केशरी नाम वानर केशरी कहे सिंहके जोरसों छायो उठ्यो अर्थ सिंह सम गर्जि कै शीघ्र चल्यो २५ इन्द्रसम सुग्रीव फूल्यो सुखी भयो २६।२७ ॥

जहीं कालकेतु सों ताल लीनो। कर्यो रामजू हस्तपादादि दीनो ॥ चल्यो लोटते धाइवक्रै कुचाली। उड्यो मुंड लै बाण ज्यों शुंडमाली २८ तहीं स्वर्गके दुंदभी दीह बाजैं। कर्यो पुष्पकी वृष्टि जैदेव गाजैं ॥ दशग्रीव शोक ग्रस्यो

लोकहारी । भयो लंकही मध्य आतंक भारी २६ दोहा ॥ तबहीं गयो निकुंभिला होमहेत इंद्रजीत ॥ कह्यो तहां रघुनाथ सों मतो विभीषणमीत ३० चचरीछंद ॥ जोरि अंजलिको विभीषण रामसों बिनती करी। इंद्रजीत निकुंभिला गयो होमको रिसजीभरी ॥ सिद्ध होम न होइ जौलगि ईश तौलगि मारिये । सिद्ध होहि प्रसिद्ध है यह सर्वथा हम हारिये ३१ दोहा ॥ सोई वाहि हतै कि नर वानर ऋक्ष जो कोइ ॥ बारह वर्ष क्षुधा तृषा निद्रा जीते होइ ३२ चंचरी छंद ॥ रामचन्द्र बिदा करो तब बेगि लक्ष्मणवीर को । त्यों बिभीषण जामवंतहि संग अंगद धीरको ॥ नील लै नल केशरी हनुमन्त अंतक ज्यों चले । वेगि जाइ निकुंभिलाथल यज्ञके सिगरे दले ३३ ॥

तालवृक्ष आदिपदते आयुध जानो वज्रै शद्दे शुंबै शुंडमाली गहादेन२८।२६ दोहा क्षेपक है निकुंभिला राक्षस के देवतन को स्थान वटवृक्ष सों युक्त है तामें यज्ञकरि इंद्रजीत अजय होत रह्यो है ३० । ३१ । ३२ । ३३ ॥

जामवंतहि मारि द्वै शर तीनि अंगद छेदियो । चारि मारि बिभीषणै हनुमन्त पंच सुभेदियो ॥ एकएक अनेक वानर जाइ लक्ष्मण सों भिर्‌यो । अध अधक युद्ध ज्यों भव गों जुर्‌यो भवही हर्‌यो ३४ गीतिकाछंद ॥ रण इंद्रजीत अजीत लक्ष्मण अस्त्रशस्त्रनि संहरै । शर एकएक अनेक मारत वृंद मंदर ज्यों परै ॥ तब कोपि राघव शत्रुको शिर बाण तत्क्षण करधर्‌यो । दशकंध संध्यहि को कियो शिर जाइ अंजलि में पर्‌यो ३५ रण मारि लक्ष्मण मेघनादहि स्वच्छशंख बजाइयो । कहि साधु साधु समेत इंद्रहि देवता सब आइयो ॥ कछु मांगिये वरवीर सत्वर भक्ति श्रीरघुनाथकी।

पहिराइ माल विशाल अर्चहि कैगये सब साथकी ३६ कलहंसछंद ॥ हति इद्रजीत कहँ लक्ष्मण आये। हँसि रामचन्द्र बहुधा उरलाये॥ सुनि मित्र पुत्र शुभ सोदर मेरे। कहि कौन कौन सुमिरौं गुण तेरे ३७ दोहा ॥ नींद भूख अरु प्यासको जो न साधते वीर॥ सीतहि क्यों हम पावते सुनि लक्ष्मण रणधीर ३८॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-
चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायामिन्द्रजिद्वधवर्णनो
नामाष्टादशः प्रकाश. ॥ १८ ॥

लक्ष्मण सौं कैसे जायभिरयो भय जो डर है सोही कहे हृदय सों हरयो कहे दूरिभयो है जाके ऐसो जो गर्वादि करिकै अंध कहे आधरो अधक नाम दैत्य है सो जैसे भव जे महादेव हैं तिनसों युद्ध में जुरयो है अर्थ जैसे महादेव सों निर्भय अधक लरयो तैसे लक्ष्मण सों इद्रजीत लरत भयो ३४ एक एक कहे एकको परस्पर अनेक शर मारतहैं अर्थ लक्ष्मण मेघनाद को अनेक शर मारत हैं मेघनाद लक्ष्मणको मारत हैं ते शर दुहुन के अगनमें मंदर में जलबुदसम परत हैं अर्थ अतिबलीन तासों कछू पीड़ा नहीं करत उद्धरयो काढ़यो ३५ साथकी कहे जो अर्चा की विधि सग मों लै आये रहैं कछू शुभगाथ की पाठ है तो शुभगाथ कहे लक्ष्मण ३६। ३७। ३८ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद
निर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायामष्टादश प्रकाश ॥ १८ ॥

दोहा ॥ उनईसयें प्रकाशमें रावण दुखनिधान ॥ जूझैगो मकराक्ष पुनि ह्वैहै दूतविधान १ रावण जैहै गूढ़थल रावर लुटै विशाल ॥ मंदोदरी कढ़ोरिबो अरु रावणको काल २ मोटनकछंद ॥ देख्यो शिर अजलि मे जबहीं। हाहा करि भूमि परयो तबहीं॥ आये सुत सोदर मंत्रि तबै।

मंदोदरि त्यों तिय आई सबै ३ कोलाहल मंदिर मांझ भयो । मानो प्रभुको उड़ि प्राण गयो ॥ रोवै दशकंठ विलाप करै । कोऊ न कहूं तन धीर धरै ४ रावण–दंडक ॥ आज आदित्य जल पवन पावक प्रबल चंद आनंदमय ताप जगको हरौ । गान किन्नर करहु नृत्य गंधर्बकुल यक्ष विधि लक्ष उर यक्षकर्दम धरौं ॥ ब्रह्मरुद्रादिदै देव त्रैलोकके राजको जाय अभिषेक इंद्रहि करौं । आजु सिय रामदै लंक कुलदूषणहिं यज्ञको जाय सर्वज्ञ विप्रन वरौं ५ महोदर–तोटक ॥ प्रभु शोक तजौ तन धीर धरो । सक शत्रु वधो सो विचार करो ॥ कुलमें अब जीवत जो रहिहै । सब शोकसमुद्रहि सों बहिहै ६ ॥

दुःखको निधान कहे बड़ो दुःख १ रावरे स्त्रिनके रहिबे को घर कढ़ोरिबो कहे केशादि पकरि निर्दय खैंचिबो २ । ३ । ४ इंद्रजीत के मरे रावण बड़े दुःखसों सयुक्त है ऐसे विलाप वचन कहत भयो कि जो इंद्रजीत मरचो तो मोहू मरतही हौं तासों मेरे डरसों जे बातैं जे जन नाहीं करत रहे ते सब भयको छोडिकै आपने आपने भाये काज करौ कपूर औ अगरु औ कस्तूरी औ कक्कोल मिलाइ यक्षकर्दम होत है सो यक्षनको अतिप्रिय है अंगन में लेप करत हैं "कर्पूरागुरुकस्तूरीकक्कोलैर्यक्षकर्दम इत्यमरः" औ सीताराम मिलिकै कुलदूषण विभीषणको लंका दैकै सर्वज्ञ ब्राह्मणन को यज्ञको निवरो कहे अवकाश देहिं ५ अतिदुःख में धैर्य के वचन कहिबो रुचिर ६ नाना महोदर मंदोदरी धीर धराइबे के वचन कहत हैं जा उपाय सों शत्रु मरो सो कहे सकै अब शत्रु मारबेको सो विचार करो सबके गयेते जो शेष है ताके समुद्र मे बह्यो करिहै ६ ॥

मंदोदरी–चौपाई ॥ सोदरजू भयो सुतहितकारी । को गहिहै लंकागढ़ भारी ॥ सीतहि दैकै रिपुहि सँहारो । मोहिति है विक्रमबल भारो ७ रावण ॥ तुम अब सीतहि देहु

१–कर्पूरागुरुकस्तूरीकक्कोलघुसृणानि च । एकीकृतमिदं सर्वं यक्षकर्दम इष्यत इति व्याडि ॥

न देहू। बिनु सुत बधु धरौं नहिं देहू॥ यहि तन जा तजि लाजहि रैहौं। वन बसि जाइ सबै दुख सैहौं ८ मकराक्ष-भुजंगप्रयातछंद॥ कहा कुंभकर्णो कहा इंद्रजीतै। करै सोइ वोबैकरे युद्धभीतै॥ सुजौलौं जिऔं हौं सदा दास तेरो। सियाको सकै दै सुनो मन्त्र मेरो ६॥

यह जो तुम्हारो भारी लकागढ़ है ताहि कौन गांह है कहे लै सकि है अर्थ लकागढ़ शत्रुके लीबे लायक नहीं है विक्रम कहे यत्न बल कहे शक्ति को मोहति है कहे मूर्च्छित करति है अर्थ तुम्हारो यत्न औ बल निष्फल होत है सो याही के दु ख प्रभाव सों ७। ८ भीत युद्ध कहि या जनायो कि बाण वेधनादि भय सों अन्तर्धान है युद्ध करिहैं सरस्वती उक्तार्थः॥ वै आपने बल सों सबकों मारि सीताको ले हैं इति व्यंग्यार्थः ६॥

महाराज लका सदा राज कीजै। करौं युद्ध मेरी बिदा बेगि कीजै॥ हतौं राम स्योबंधु सुग्रीव मारौं। अयोध्याहि लै राजधानी सुधारौं १० विभीषण–वसंततिलकाछंद॥ को-दंड हाथ रघुनाथ सँभारि लीजै। भागे सबै समरयूथप दृष्टि दीजै॥ बेटा बलिष्ठ खरको मकराक्ष आयो। संहारकाल जनु कालकराल धायो ११ सुग्रीव अंगद बली हनुमंत रोक्यो। रोक्यो रह्यो न रघुवीर जहीं विलोक्यो॥ मार्यो विभीषण गदा उर जोर ठेली। काली समान भुज लक्ष्मण कंठ मेली १२ गाढ़े गहे प्रबल अंगनि अग भारे। काटे कटै न बहुभां-तिन काटि हारे॥ ब्रह्मा दियो वरहि अस्त्र न शस्त्र लागे। तैही चल्यो समर सिंहहि जोर जागे १३ गाढ़ांधकार दिवि भूतल लीलिलीन्हों। अस्तास्त मानहुँ शशी कहँ राहु कीन्हों॥ हाहादि शब्द सब लोग जहीं पुकारे। बाढ़े अशेष अंग राक्षसके बिदारे॥ श्रीरामचन्द्र पग लागत चित्त हर्षै। देवाधिदेव मिलि सिद्धन पुष्प बर्षै १४॥

सरस्वती उक्तार्थः ॥ काकोक्तिसों कहत है कि हे महाराज ! अब लंका में तुम सदा राज किया करौ महाराज पद कहि या जनायो कि मंत्रको त्यागकरि प्रभुतासों अपने मनही की बात कस्यो औ जैसे कुंभकर्णादिकन को सबको विदा कियो है तैसे मेरीहू बिदा करो हौ युद्ध करौ जाइ औ तुम्हारी आज्ञा के सदृश जैसे कुंभकर्णादिकन बंधु सहित राम औ सुग्रीवको मारि राजधानी अयोध्या में सुधारयो है तैसे हौंहू बंधु सहित राम औ सुग्रीव को मारिकै राजधानी अयोध्या में सुधारौं जैसे सब मरि गये हैं तैसे हौंहूं मरौं जाइ इति व्यंग्यार्थः १० । ११ विभीषण गदा मास्यो ताको उरके जोरसों ठेलिकै लक्ष्मणके कंठमें काले सर्पके समान भुजा मेलत भयो १२ कि शशी को दिवि आकाश तें भूतलमें पाइकै अर्थ स्थानच्युत अबल जानिकै स्वाभाविक शत्रुता सों गाढ़ो कहे बहुत जो अंधकार है ताने लीलिलियो है औ कि राहु ने ग्रस्तास्त कीन्हों है शशी सम लक्ष्मण हैं अंधकार औ राहु सम मकराक्ष है जब मकराक्ष को शस्त्रास्त्र सों मरण ना जान्यो तब हाथन सों कसिकै गाढ़े जो गहे रहै ताही समय शीघ्रता सों लक्ष्मणजी बाढ़ कहे स्थूलकाय ह्वैकै राक्षस के अशेष सम्पूर्ण अंग बिदारे कहे विदीर्ण कीन्हे अर्थ फारि डारे ऐसी शीघ्रता सों लक्ष्मण जू आपने अङ्ग स्थूल किये कि मकरांक्ष जो हस्त ग्रहण करे रहै सो हस्त ग्रहण ना छूटनपायो तासों वक्षस्थल फाटि गयो अधिदेव गन्धर्वादि औ आदिदेव पाठ होइ तौ ब्रह्मादि जानौ यह छन्द छ चरण को है १३ । १४॥

दोहा ॥ जूझतही मकराक्षके रावण अतिदुखपाइ ॥ सत्वर श्रीरघुनाथपै दियो बसीठ पठाइ १५ सुंदरीछंद ॥ दूतहि देखतही रघुनायक । तापहँ बोलि उठे सुखदायक ॥ रावणके कुशली सुत सोदर । कारज कौन करै अपने घर १६ द्रुत-विजयछंद ॥ पूजि उठे जबहीं शिवको तबहीं विधि शुक्र बृहस्पति आये । कै बिनती मिस कश्यपके तिन देव अदेव सबै बकसाये ॥ होमकि रीति नई सिखई कछु मंत्र दियो श्रुतिलागि सिखाये । हौं इतको पठयो उनको उत लै प्रभु मंदिर माझ सिधाये १७ ॥

सत्वर कहे शीघ्र बसीठ दूत पूंछौ कि रावण कौन कारज करतहै ताको जवाब रावण के प्रभाव को देखावत चतुरता सों दियो जब रावण देव औ अदेव सबके नाश करिबे के लिये शिव जे महादेव हैं तिनको पूजन करिकै उठे हैं कि ताहीक्षण अतिडर मानिकै विधि ब्रह्मा औ शुक्र औ बृहस्पति ये तीनों आइकै कश्यपके व्याजसों बिनती करिकै देव औ अदेव सब बकसाये कहे माँगि लीन्हें अर्थ ब्रह्मादिकन आइ यह कह्यो कि कश्यप यह बिनती करयोहै कि देव औ अदेवनको हमको बकसिदेव अर्थ इनको नाश ना करौ इहां अदेवपद ते जे देवतन ते अतिरिक्त प्राणी हैं दैत्य मनुष्यादि ते सब जानौ यासों या जनायो कि जब रावण शिवकी पूजा करत है तब संहार करिबेकी शक्ति प्राप्ति होतिहै औ देव अदेवनको बकसाइकै कछू नई होमकी रीति सिखायो औ श्रुतिकानमें लागिकै कछू मन्त्र दीन्हों याके आगे मोहिं या ओर पठायो औ ब्रह्मादिकनको लैकै प्रभु जे रावण हैं ते मंदिर को गये कहिबे को हेतु या जामें रामचन्द्र जानैं कि हम प्रतिकोप सों रावण सब देव औ अदेवको नाश करिबेको चाह्यो तिनको बकसाइ ब्रह्मादिकन कछु हमारिही हानिहेतु होम औ मंत्र सिखायो हैहै १५ । १६ । १७ ॥

दूत–संदेश ॥ शूर्पणखा जो विरूप करी तुम ताते कियो हमहू दुख भारो । वारिधिबंधन कीन्हों हुतो तुम मोसुत बंधन कीन्हों तिहारो ॥ होइ जो हीनी सो होई रहै न मिटै जिय कोटि विचार विचारो । दै भृगुनंदनको परशा रघु-नंदन सीतहि लै पगु धारो १८ दोहा ॥ प्रतिउत्तर दूतहि दियो यह कहि श्रीरघुनाथ ॥ कहियो रावण होहि जब मदोदरिके साथ १९ रावण–संयुताछंद ॥ कहि धौं विलंब कहा भयो । रघुनाथपै जब तू गयो ॥ केहि भांति तू अवलोकियो । कहु तोहिं उत्तर का दियो २० ॥

सीताको हरिकै तुमको दुःख दीन्हों अथवा सीताही को भारी दुःख दीन्हों परशुराम तौ धनुष बाण दियो है इहां रावण परशा मांग्यो तहां या जान्यो कि, रावण सुन्यो है कि रामचन्द्र परशुराम को हथियार छोरि लीन्हों है

औ परशुरामको मुख्य हथियार परशाही है तासों परशा जान्यो १८ रामचन्द्र मंदोदरी की बुद्धि की स्तुति विभीषण सों सुन्यो है ता लिये मंदोदरी के साथ कहा है और जो मंदोदरी इन वचननको सुनि है तौ समय विचार रजादि दै रावणको लरिबे को पठाइ है अथवा जो मंदोदरी सहित रावण दुख पावै अथवा कुंभकर्णादि के मरे सों रावण भीत ह्वै साथ के लिये ना पठावत है एवा न होइ कि आपनी शरणागत राखि आनै तो हमरो शरणागत रक्षक को धर्म प्रतिपालन करि रावणको रक्षतही बनै ता लिये जो मंदोदरी इन वचननको सुनि है तौ समय विचारि रजादि दै लरिबेहीके लिये पठाइ है सन्धिके लिये ना पठाइ है १९ । २० ॥

दूत–दंडक ॥ भूतलके इंद्र भूमि बैठे हुते रामचन्द्र मारिच कनक मृगछालहि बिछायेजू । कुंभहर कुंभकर्ण नासाहर गोद शीश चरण अकंप अक्ष अरि उर लायेजू ॥ देवांतक नारांतक त्योंही मुसक्यात वीर विभीषण बैनतन कान रुख बायेजू । मेघनाद मकराक्ष महोदर प्राणहर बाण त्यों विलोकत परम सुख पायेजू २१ रामसंदेश–विजयछंद ॥ भूमि दई भुवदेवनको भृगुनंदन भूपन सों वर लैकै । वामन स्वर्ग दियो मघवै सो बली बलि बांधि पताल पठैकै ॥ सन्धिकि बातनको प्रतिउत्तर आपु नहीं कहिये हितकै कै । दीन्ही है लंक विभीषणको अब देहिं कहा तुमको यह दैकै २२ मंदोदरी–मालिनी छंद ॥ तब रावकहि हारे रामको दूत आयो । अब समुझि परी जो पुत्र भैया जुझायो ॥ दशमुख सुख जीजै रामसों हौं लरौं यों । हरि हर सब हारे देवि दुर्गा लरी ज्यों २३ ॥

रावण पूछेउ कि केहि भांति तू रामचन्द्र को देख्यो है ताको उत्तर याम दियो कुंभहर औ कुंभकर्ण नासाहर सुग्रीव अकंप औ अक्षको अरि हनुमान् शत्रु हैं सप्तमे प्रकाश में कह्यो है कि " जिन अक्षयादि बलिष्ठ मारे। संग्राममें अगन्त वीर मारे' याम विरोध होत है तासों या जनाया दूसरो

अकप रह्यो ताको हनुमान् है। यथा वाल्मीकीये "स चतुर्दशभिर्बाणैर्निशितैर्देहदारणैः। निर्बिभेद महावीरो हनुमन्तमकम्पनः १ ततो वृक्ष समुत्पाट्य कृत्वा वेगमनुत्तमम्। शिरस्यभिजघानाशु राक्षसेन्द्रमकम्पनम् २ यथा पद्मपुराणे॥ जघान हनुमान्भूयश्चतुर्थेहन्यकम्पनम्" औ देवांतक औ नारांतक के अंतक अंगद औ मेघनाद औ मकराक्ष औ महोदर के प्राणहर लक्ष्मण यह अतिनिर्भय समय स्वरूप जानौ २१ वर कहे बलसों लैकै या प्रकार अवतार धरि धरि हम तीनों लोक बांटि दियो अब तुमको यह जो परशा है ताको दैकै कहा कौन स्थान देहिं जामें तुम रहौ परशुरामकी कथा कहि यह जनायो कि जिन सहस्रार्जुन तुम्हैं बांधि राख्यो तिनको हम क्षणमें मार्‍यो वामन कथा कहि या जनायो कि जिन बलि की दासिन पातालसों तुम्हैं गहिकै निकारि दीन्हों तिनको बांधिकै हम पाताल पठायो तैसे तुमहूं को मारि विभीषण को लंका देहैं २२ शुंभ निशुंभादिके युद्धमें हरिहरादि सब हारिगये हैं तब दुर्गा लरिकै मार्‍यो है यह कथा मार्कण्डेयपुराण में प्रसिद्ध है २३॥

रावण॥ छलकरि पठयो तो पावतो जो कुठारे। रघुपति बपुराको धावतो सिंधुपारे॥ हति सुरपतिभर्ता विष्णु माया विलासी। सुनहिं सुमुखि तोको ल्यावतो लक्षि दासी २४ चामरछंद॥ प्रौढ़रूढिको समूढ गूढ गेहमें गयो। शुक्र मंत्र शोधि शोधि होमको जहीं भयो॥ वायुपुत्र बालिपुत्र जामवंत धाइयो। लंकमें निशंक अंक लंकनाथ पाइयो २५ मत्तदंतिपंक्ति वाजिराजि छोरिकै दई। भांतिभांति पक्षिराजि भाजि भाजिकै गई॥ आसनै बिछावनै वितानतान तूरियो। यत्र तत्र छत्र चारु चौंर चारु चूरियो २६ भुजंगप्रयातछंद॥ भगी देखिकै शंकि लंकेशबाला। दुरी दौरि मंदोदरी चित्रशाला॥ तहां दौरिगो बालिको पूत फूल्यो। सबै चित्रकी पुत्रिका देखि भूल्यो २७॥

सिंधुके पारै धावतो कहे भागिजातो सुरपति इंद्र तिनके भर्ता रक्षक औ

माया के विलासी जे विष्णु हैं तिनको हवि कहे मारिकै तोको लक्षि जो लक्ष्मी हैं ताको दासी ल्यावतो यासों या जनायो कि रामचन्द्र जो करत हैं सो सब परशाही के बल सों करत हैं यामें रामचन्द्र की शक्ति कछु नहीं है २४ मौढ़ जो धृष्ठता है ताकी रूढ़ि कहे परिपक्कता ताको समूढ़ कहे समूह अर्थ अतिधृष्ट ऐसा जो रावण है सो यज्ञ करिबेको गूढ़गेहमों जात भयो मदोदरी की ऐसी कटु बातैं सुनि कछू लाज न कियो तासों अतिधृष्ट कह्यो "समूढः पुंजिते भुग्ने इति मेदिनी" सो शुक्र के मंत्रको शोधि कहे शुद्धोच्चार करिकै होमके अर्थ जब उद्यत भयो तब निशक कहे शका ते रहित है अक हृदय जिनको ऐसे जे वायुपुत्रादि हैं ते धावत भये तब लंकनाथ के जे अक कहे राजचिह्न हैं छत्र चामरादि तिन्हैं पायो कहे देख्यो तब जान्यो कि याही मंदिर में रावण हैहै ता लिये या प्रकारको उपद्रव कर्‍यो सो आगे कहत हैं २५ तान डोरी २६ । २७ ॥

गहैं दौरि जाको तजैं ताकि ताको । तजैं जादिशाको भजै वाम ताको ॥ भलीकै निहारी सबै चित्रमारी । लहै सुदरी क्यों दरीको विहारी २८ तजै दृष्टिको चित्रकी मृष्टि धन्या । हँसी एक ताको तहीं देवकन्या ॥ तहीं हाँसही देव-कन्या दिखाई । गही शक्तिकै लक्करानी वताई २९ ॥

फून्यो कहे आनदित जा पुनरी का अगद दौरिकै गहत हैं ताको पुतरी जानि तजत हैं औ अगद जा दिशाको तजत हैं ता दिशाको वाम मदोदरी भजति है अथवा जा दिशाको अर्थ जा दिशाकी पुतरिनको अगद गहत हैं ता दिशामें अगदको ताकिकै देखिकै ता दिशाको तजै कहे छाड़ति है अर्थ ता दिशाकी पुतरिन को छाड़नि हैं औ जा दिशाको अगद तजत हैं ता दिशा को मदोदरी भजै कहे प्राप्त होति है अथवा भागति है दरी कदरा २८ धन्या कहे अतिनिपुण जो चित्रकी सृष्टि है सो अगदकी दृष्टिको तजै कहे त्याग करनि है अथ मदोदरी पास दृष्टि नहीं जानदेनि मदोदरीको नहा देखन देति इति अथवा धन्या जो चित्रकी सृष्टि है तामें मदोदरीकी दृष्टिको तजै कहे त्याग करनि है अर्थ आपने पास नहीं आवन देति यह मदोदरी है ऐसो ज्ञान दृष्टि म नहीं होत इति भावार्थ ॥ या प्रकार

कौतुक देखिकै अगद को एक देवकन्या हँसतभई सो हासीसा देवकन्या अगदको देखाइ कहे देखिपरी तब ताही को मदोदरी जानि अगद गही तब शाकिकै ताने लकरानी जो मंदोदरी है ताको बतायो कहूँ लहीं शाकिकैं पाठ है २६ ॥

सुआनी गहे केश लकेशरानी । तमश्री मनो सूरशो-भानि सानी ॥ गहे बांह ऐंचैं चहूओर ताको । मनो हंस लीन्हे मृणालीलताको ३० छुटी कठमाला लरैं हार टूटे । खसैं फूलफूले लसैं केश छूटे ॥ फटी कंचुकी किंकिणी चारु छूटी । पुरी कामकीसी मनो रुद्र लूटी ३१ विना कञ्चुकी स्वच्छ वक्षोज राजैं । किधौं सांचहू श्रीफलै शोभसाजैं ॥ किधौं स्वर्णके कुभ लावण्यपूरे । वशीकर्णके चूर्ण सपूर्ण पूरे ३२ मनो इष्टदेवै सदा इष्टहीके । किधौं गुच्छ द्वै कामसंजीवनीके ॥ किधौं चित्तचौगानके मूल सोहैं । हिये हेमके हालगोला विमोहैं ३३ सुनी लंकरानीनकी दीनबानी । तहीं छांड़ि दीन्हों महामौन मानी ॥ उठ्यो सो गदा लै यदा लंकवासी । गये भागिकै सर्वशाखाविलासी ३४ मदोदरी—

दोहा ॥ सीतहि दीन्हों दुख वृथा सांचो देखो आजु ॥ करै जो जैसी त्यों लहै कहा रंक कह राजु ३५ ॥

सूर्य की शोभान सों सानी मानों तमश्री अधकारकी श्रीशोभाहै तमश्री सम बार हैं सूरशोभा सम सिंदूर है इहां सिंदूर नहीं कह्यो सो उपमान ते उपमेय को ग्रहण कियो अथवा सूरशोभा सम अंगद हैं मृणालीलता सम बाहु हैं हंस सम अगदादि वानर हैं ३० लावण्य सुदरता ३१ सदा दुष्ट जो स्वामी रावण है ताके इष्टदेवै हैं अर्थ जैसे सब प्राणी इष्टदेव को हृदय मों बसाये रहत हैं तैसे रावण के मनमों सदा बसत हैं गुच्छपुष्प गुच्छ कामसंजीवनीलता सम मदोदरी है औं कि चित्त जे मन हैं तिनको जो चौगान खेल है ताका [illegible] [illegible] अर्थ कारण जो मदोदरी ता हिये

कहे वक्षस्थल है तामें साहत हैं कहे सुवर्ण के हालगोला कहे गेंदा हैं अर्थ जैसे हालगोलानको खेलनहार आपनी आपनी ओर खैंचत हैं तैसे देखन-हारन के चित्त इन कुचनको आपनी आपनी ओर खैंचत हैं मूल कहि या जनायो कि मनुष्य चौगान खेल खेलत हैं चित्त नहीं खेलत सो याही ते चित्तन को चौगान खेल नयो उत्पन्न भयो है सो जानो अथवा चित्त चौगान के म[illegible] हालगोला[illegible] जो विशेषण है चौगान खेल प्रसिद्ध है ३८ मान[illegible] जो जगत् है ताको छोड़िदीन्हीं मानी कहे गर्वी यदा रहे जर २३। ३४। ३५॥

रावण—विजयछंद॥ को बपुरा जो मिल्यो है विभी-षण है कुलदूषण जीवैगो कौलों। कुंभकरण मर्यो मघवा रिपु तौरी कहा न डरौं यमसौलों॥ श्रीरघुनाथके गातनि सुंदरि जाने न तू कुशली तनु तौलों। शालै सबै दिगपालन के कर रावणके करवाल है जौलों ३६ चामरछंद॥ रावणै चले चले ते धाम धामते सबै। साजि साजि साज शूर गाजि गाजिकै नचै॥ दीह दुंदुभी अपार भाँति भाँति बाजहीं। युद्ध-भूमिमध्य क्रुद्ध मत्तदंति राजहीं ३७ चंचरीछंद॥ इंद्र श्री-रघुनाथको रथहीन भूतल देखिकै। वेगि सारथिसों कह्यो रथ जाहि लै शुभिशेखिकै॥ तूण अक्षयबाण स्यन्दन अभेद लै तनत्राणको। आइयो रणभूमिमें करि अप्रमेय प्रमाणको ३८ कोटिभाँतिन पौनते मनते महालघुता लसै। वैठिकै ध्वजअग्र श्रीहनुमंत अंतकज्यों हँसै॥ रामचन्द्र प्रदक्षिणा करि दक्षह्वै जबहीं चढ़े। पुष्पवर्षि बजाय दुंदुभि देवता बहुधा बढ़े ३९॥

तनु कहे रचहू कुशली न जा[illegible] उराधे हे सुंदरि ' श्रीरघुनाथ के गातनि करिकै मर तनको तू कुशली न जाने अथ मोको रामचन्द्र मार[illegible] है ३६। ३७ तूण कहे तर्कस अक्षय कहे जाते बाण न चुकैं ३८ लघुता शीघ्रता हनुमान ध्वजअग्र में यासों चह कि यह रथ कहूं राक्षसन माया न किया होइ बढ़े फूले अर्थ आनंदित भये ३९॥

रामको रथमध्य देखत क्रोध रावणके बढ्यो। बीस बाहुनकी शरावलि व्योमभूतलसों मढ्यो॥ शैलह्वै सिकता गये सब दृष्टिके बलसहरे। ऋक्ष वानर भेदि तत्क्षण लक्षधा छलना करे ४० सुंदरीछंद॥ बाणन साथ बिधे सब वानर। जाय परे मलयाचलकी धर॥ सूरजमंडल में यक रोवत। एक अकाशनदी मुख धोवत ४१ एक गये यमलोक सहे दुख। एक कहैं भवभूतन सों रुख॥ एकति सागरमांझ परे मरि। एक गये बड़वानलमें जरि ४२ मोटनकछंद॥ श्रीलक्ष्मणको पकस्यो जबहीं। छोड़्यो शर पावकको तबहीं। जास्यो शरपंजर छार कस्यो। नैर्ऋत्यनको अतिचित्त डस्यो ४३ दौरे हनुमंत बली बलसों। लै अंगदसंग सबै दलसों॥ मानों गिरिराज़ तजे डरको। घेरे चहुँओर पुरंदरको ४४॥

सिकता बारू दृष्टिके बल कहे पराक्रम अर्थ अतिबाणांधकार मों काहू को कछु देखि नहीं परत छलना करे मधुमक्षिकादिकन के छाता जामें मधु रहत है ४०। ४१। ४२ नैर्ऋत्य राक्षस ४३ पुरंदर इंद्र सम रावण है गिरिराजनके सदृश अंगदादि हैं ४४॥

हीरकछंद॥ अंगद रणअंगन सब अंगन मुरझाइकै। ऋक्षपतिहि अक्षरिपुहि लक्षगति बुझाइकै॥ वानरगण बाणनसन केशव जबहीं मुरयो। रावन दुखदावन जगपावन समुहे जुस्यो ४५ ब्रह्मरूपकछंद॥ इंद्रजीत जीत आनि रोकियो सुबाण तानि। छोड़दीन वीरबानि कानके प्रमाण आनि॥ शिवप्रताप काढि चाप चर्म वर्म मर्म छेदि। जातभो रसातलै अशेष कंठमाल भेदि ४६ दंडकछंद॥ सूरज मुशल नील पट्टिश परिघ नल जामवंत असि हनू तोमर प्रहारे हैं। परशा सुखेन कुंत केशरी गवाय शूल विभीषण गदा

ज्यों धनुषगुण शैलशृंग सदृश रावण शिर हैं हंसवंशावली सदृश श्वेत छत्र हैं ४६ रिपुबल करिकै खंडित हैं रणपांडित्यादि जाके ऐसे जे लक्ष्मण हैं ते भूलिरहे कहे आश्चर्ययुक्त है रहे हैं तासों मनसा वाचा कर्मणा रावण सों लरिबो तजिकै ५० मैं तन औ मनसों लज्जित होत हौं ५१ ॥

राम—छप्पै ॥ जेहि शर मधुमड मरदि महासुर मर्दन कीन्हेउ। मारेहु कर्कश नर्क शङ्ख हतिशङ्ख जो लीन्हेउ ॥ निष्कंटक सुरकटक कस्यो कैटभवपु खंड्यो। खरदूषण त्रिशिराकबंध तरुखंड विहंड्यो ॥ कुंभकर्ण ज्यहि संहस्यो पल न प्रतिज्ञाते टरौं। तेहि बाण प्राण दशकंठके कंठदशौ खंडित करौं ५२ दोहा ॥ रघुपति पठयो आशुही असुहर बुद्धि निधान ॥ दशशिर दशहू दिश न को बलिदै आयो बान ५३ मदनमनोरमाछंद ॥ भुवभारहि सयुत राकसको गण जाइ रसातलमें अनुराग्यो। जगमें जयशब्द सबै तिहि केशव राज विभीषणके शिर जाग्यो ॥ मयदानवनंदिनिके सुखसों मिलिकै सियके हियको दुख भाग्यो। सुर दुंदुभिसी संग जा शर रामको रावणके शिरसाथहि लाग्यो ५४ मंदोदरी—विजयछंद॥ जीतिलिये दिगपाल शचीके उसासन देवनदी सब सूकी। वासरहू निशि देवनकी नरदेवनकी रहसपति टूकी॥ तीनिहुँ लोकनकी तरुणीनकी बारी बँधी हुती दंडदुहूकी। सेवन श्वान शृगालसो रावण सोवत सेज परे अब भूकी५५॥

कर्कश कठोर तरुखंड सप्तताल ५२ असुहर प्राणहर ५३ मयदानवनंदिनि मंदोदरी सहोक्ति अलंकार है ५४ सदा रावण के भयसों स्वर्गसों भागे जे इंद्र हैं तिनके विरहसों शची इन्द्राणी के जे उष्ण उसास हैं तिन सों देवनदी आकाशगंगा सब सूकी कहे सूखिगई ५५ ॥

राम—तारकछंद ॥ अब जाहु विभीषण रावण लैकै।

सकलत्र सबधु क्रिया सब कैकै ॥ जनसेवक सम्पति कोश सँभारो । मयनंदिनिके सिगरे दुख टारो ५६ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-
चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां रावणवधवर्णन
नामैकोनविंश॰ प्रकाश॰ ॥ १६ ॥

जनसेवक कहे सेवकजन अथवा जनबधु जनसेवक चाकर सम्पत्ति अश्व गज वस्त्रादि कोश खजानो ५६ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायामेकोनविंशः प्रकाश ॥ १६ ॥

दोहा ॥ या बीसयें प्रकाशमें सीतामिलन विशेखि ॥ ब्रह्मादिक की अस्तुती गमन अवधपुरि लेखि १ प्राग वरणि अरु वाटिका भरद्वाजकी जानि ॥ ऋषि रघुनाथ मिलाप कहि पूजा करि सुख मानि २ श्रीराम—तारकछद ॥ जय जाय कहो हनुमंत हमारो । सुख देवहु दीरघ दु ख बिदारो ॥ सब भूषण भूषितकै शुभगीता । हमको तुम वेगि दिखावहु सीता ३ हनुमत गये तहँहीं जहँ सीता । तब जाय कही जयकी सब गीता ॥ पग लागि कह्यो जननी पगुधारो । मग चाहतहैं रघुनाथ तिहारो ४ सिगरे तन भूषण भूषित कीने । भरिकै कुसुमाजलि अग नवीने ॥ द्विज देवनि वदि पढी शुभगीता । तब पावक अक चली चदिगीता ५ भुजग-प्रयातछद ॥ सजबा सवे अग शृगार मोहैं । त्रिलोकै रमा देव देवी विमोहैं ॥ पिताअक ज्यों कन्यका शुभ्रगीता । लसै अग्निके अक त्यों शुद्ध सीता ६ ॥

१ । २ । ३ । ४ सीता को बादे करे वन्ना करिकै देवतन द्विज ब्राह्मण समान शुभगीता कहे मगलपाठ पढ्यो अर्थ जैमे गमन समय मों ब्राह्मण

मगलपाठ पढ़त हैं तैसे सीताजू के रामचन्द्र पास गमन में देव पढ़त भये अथवा द्विज औ देव औ बदीजन शुभगीता पढ़त भये औ जो अग्नि के अंकमें बैठिकै सीता आई सो लोक के देखाइब को तौ शुद्धता की साक्षी दियो औ जो सीताको देह कनककुरग के आगमन में रामचन्द्र अग्नि को सौंप्यो रहै ता देहकी थाती सम रामचन्द्र के दीबेको अग्नि ल्याये हैं सो जानो ५। ६॥

महादेवके नेत्रकी पुत्रिकासी। कि सग्रामकी भूमिमें चण्डिकासी॥ मनो रत्नसिंहासनस्था शची है। किधौं रागिनी रागपूरे रची है ७ गिरापूरमें है पयोदेवतासी। किधौं कज की मञ्जुशोभा प्रकासी॥ किधौं पद्महीं में सिफाकद सोहै। किधौं पद्मके कोश पद्मा विमोहै ८ कि सिंदूर शैलाग्र में सिद्धकन्या। किधौं पद्मिनी सूरसंयुक्त धन्या॥ सरोजासना है मनो चारु बानी। जपापुष्पके बीच बैठी भवानी ९ मनो ओषधीवृदमें रोहिणीसी। कि दिग्दाहमें देखिये योगिनी सी॥ धरापुत्र ज्यों स्वर्णमाला प्रकाशै। मनो ज्योतिसी तक्षकाभोग भासै १० सुरेंद्रवज्राछंद॥ आशावरी माणिक कुंभ शोभै अशोकलग्ना वनदेवतासी। पालाशमाला कुसुमालिमध्ये वसंतलक्ष्मी शुभलक्षणासी॥ आरक्तपत्रा शुभ चित्रपुत्री मनो विराजै अति चारु बेखा। सम्पूर्ण सिन्दूर प्रभास कैधौं गणेशभालस्थल चद्ररेखा ११॥

जहां केवल रत्नपद पाइये तहा अरुणाही रत्नको बोध होत है यह कवि नियम है रामदीपिकादि अथवा अनुराग प्रेम इति ७ गिरा सरस्वती के पूर कहे जलसमूह में पयोदेवता कहे जलदेवता हैं औ कि गिरापूरमें कजकी शोभाहै अर्थ कि कमलहै सरस्वतीको जल अरुण प्रसिद्धहै "पूरो जलसमूहे स्यादिति मेदिनी" ८ सूर जे सूर्य हैं तिनसों संयुक्त मिली पद्मिनी कमलिनी है सूर सम अग्नि है कमलिनी सम सीता हैं यहां अरुण सरोज

जानो ६ चन्द्रमा ओषधीश है औ रोहिणी चन्द्रमा की स्त्री है ता सबन्ध सों जानो ओषधिन को अग्नि सम ज्वलन प्रसिद्ध है धरापुत्र मगल के जैसे स्वर्णमाला प्रकाशी कहे शोभै धरापुत्र सम अग्नि है स्वर्णमाला सम सीता हैं भोगिफण तक्षकको अरुण वर्ण प्रसिद्ध है १० आशावरी रागिनी अशोक वृक्षमें लग्ना कहे सलग्न स्थित इति जो वनदेवता हैं ताके सम हैं अशोकवृक्ष को अरुण वर्ण है ११ ॥

विजयछद ॥ है मणि दर्पणमें प्रतिबिंब कि प्रीति हिये अनुरक्त अभीता । पुंजप्रतापमें कीरतिसी तप तेजनमें मनो सिद्ध विनिता ॥ ज्यों रघुनाथ तिहारिये भक्ति लसै उर केशवके शुभगीता । त्यों अवलोकिये आनँदकंद हुताशनमध्य सवासन सीता १२ दोहा ॥ इंद्र वरुण यम सिद्ध सब धर्मसहित धनपाल ॥ ब्रह्म रुद्र लै दशरथहि आयगये तेहि काल १३ अग्नि–वंसततिलकछद ॥ श्रीरामचन्द्र यह संतत शुद्ध सीता । ब्रह्मादि देव सब गावत शुभ्र गीता ॥ हूजे कृपाल गहिजै जनकात्मजाया । योगीश ईश तुम हौ यह योगमाया १४ श्रीरामचन्द्र हँसि अंक लगाइ लीन्हो । संसारसाक्षि शुभपावक आनि दीन्हो ॥ देवान दुदुभि बजाय सुगीत गाये । त्रैलोक्यलोचनचकोरनि चित्र भाये १५ ॥

कि अनुरक्त कहे अनुरागी हृदयमों अभीता निश्चला भांति है विनीता नम्र १२ । १३ योगीश जे महादेव हैं तिनके ईश कहे स्वामी तुम हौ अर्थ विष्णु हौ औ यह जो सीता हैं सो योगमाया लक्ष्मी है पुनरुक्ति "नित्य वसति योग प्राप्नोतीति योगमाया लक्ष्मी" अथ विष्णु के वक्षस्थल में सदा युक्त रहति है तासों योगमाया नाम है योगमाया कहि या जनायो कि यह लौं सदा तुम्हारे वक्षस्थल म प्राप्त रहति है कहू रंचहू भिन्न नहीं होति तासों अदोष है १४ श्रीरामचन्द्र कह्यो है तासों त्रैलोक्य लोचनचकोर कह्यो १५ ॥

ब्रह्मा–दोधकछंद ॥ राम सदा तुम अंतरयामी। लोकचतुर्दशके अभिरामी ॥ निर्गुण एक तुम्हैं जग जानै। एक सदा गुणवंत बखानै १६ ज्योति जगै जगमध्य तिहारी। जाइ कही न सुनी न निहारी ॥ कोउ कहै परिणाम न ताको। आदि न अंत न रूप न जाको १७ तारकछंद ॥ तुमहौ गुणरूप गुणी तुम ठाये। तुम एकतें रूप अनेक बनाये ॥ यकहै जो रजोगुणरूप तिहारी। त्यहि सृष्टि रची विधिनाम विहारी १८ गुणसत्त्व धरे तुम रक्षत जाको। अब विष्णु कहैं सिगरे जग ताको ॥ तुमहीं जग रुद्रस्वरूप सँहारो। कहिये तिनमध्य तमोगुण भारो १६ ॥

अंतर्यामी कहे सबके अंतर में व्याप्त रहत हौ अभिरामी कहे रमता अर्थ चौदहोलोकमें रमत हौ या जगके एकै प्राणी वेदान्ती तुमको निर्गुण कहे रज सत्त्व तमोगुण तीनों करिकै रहित ज्योतिरूप जानत हैं औ एकै सदा रज सत्त्व तमोगुण युक्त ब्रह्मादिरूप बखानत हैं १६ यामें निर्गुण रूप कहत हैं कही नहिं जाइ इत्यादिसों या जनायो जहां इन्द्रिनको गमन नहीं १७ अब सगुण कहत हैं सत्त्वादि तीनों गुणरूप तुमहीं हौ औ गुणी ब्रह्मादिरूप तुमहीं हौ रजोगुणरूप कहे रजोगुणयुक्तरूप १८ जाको कहे जा सृष्टिको १६ ॥

तुमहीं जगहौ जगहै तुमहींमें। तुमहीं विरची मर्याद दुनीमें ॥ मर्यादहि छोड़त जानत जाको। तबहीं अवतार धरो तुम ताको २० तुमहीं धर कच्छपवेष धरेजू। तुम मीन ह्वै वेदनको उधरेजू ॥ तुमहीं जग यज्ञवराह भयेजू। क्षिति छीनि लई हिरण्याक्ष हयेजू २१ तुमहीं नरसिंहको रूप सँवारो। प्रहलादको दीरघदुःख विदारो ॥ तुमहीं बलि बावनवेष छल्योजू। भृगुनंदन ह्वै क्षितिक्षत्र दल्योजू २२ तुमहीं यह रावणदुष्ट सँहारो। धरणीमहँ बूड़त धर्म उबारो ॥

तुमहीं पुनि कृष्णको रूप धरौगे। हति दुष्टनको भुवभार हरौगे २३ तुम बौद्धस्वरूप दयाहि धरौगे। पुनि कल्कि ह्वै म्लेच्छसमूह हरौगे॥ यहि भांति अनेकस्वरूप तिहारे। अपनी मर्यादके कार्य सँवारे २४ महादेव–पंकजवाटिका छंद॥ श्रीरघुवर तुम हौ जगनायक। देखहु दशरथको सुखदायक॥ सोदर सहित पितापदपावन। बन्दन किय तबहीं मनभावन २५॥

विराट्रूपसों जग तुमहीं हौ औ यह जग तुमहीं में बसत है। यथा कविप्रियायाम् "शेष धरे धरणी धरणी विधि केशव जीव रचे जग जेते। चौदह लोक समेत तिन्हैं हरिके प्रतिरोमन में चितये ते" ताको कहे ताके वध को २० धर कहे पर्वत अर्थ समुद्रमथन समय मंदराचलको कच्छपरूप ह्वै पृष्ठमें धारण कियो २१। २२। २३ अनेक और स्वरूप व्यासादि जानो २४।२५॥

दशरथ–निशिपालिकाछंद॥ राम सुत धर्मयुत सीय मन मानिये। बंधुजन मातुगण प्राणसम जानिये॥ ईश सुरईश जगदीश सम देखिये। रामकहँ लक्ष्मण विशेष प्रभु लेखिये २६ रामचन्द्र–चंचलाछंद॥ जूझि जूझिके गये जे वानरालि ऋक्षराजि। कुंभकरण लोकहरण भक्षियो जे गाजि गाजि॥ रूप रेखस्यो विशेषि जीउठैं करौ सो आज। आनि पांइलागियो तिन्हें समेत देवराज २७ दोहा॥ वानर राक्षस ऋक्ष सब मित्र कलत्र समेत॥ पुष्पकयानहि रघुनाथजू चले अवधि के हेत २८॥

हे राम, सुत! सीताको धर्मयुत मन मानो अर्थ सीता निर्दोष हैं जो सन्देह करो कि हम ग्रहण करैं हमार बंधुआदि गुरुजन कैसे ग्रहण करिहैं [illegible]

को ईश महादेव सुरईश विष्णु जगदीश ब्रह्मा के सम देखो कै जानौ इनको विशेषिकै प्रभु कहे स्वामी लेखौ अर्थ स्वामी सम इनकी सेवा करौ बंधुसम न जानो इति भावार्थ २६ रूपस्वरूप रेख चेह्न तिनसों स्यो कहे सहित जी उठे सो उपाय करौ या प्रकार रामचन्द्र देवराज जे इन्द्र हैं तिन सों कह्यो सो रामचन्द्रकी आज्ञासों सजीवनी आदि उपायसों सबको जिआइकै रामचन्द्र के आइ पांइ लगे २७ भरतकी प्रतिज्ञा है कि जो चौदह वर्ष में रामचन्द्र न ऐहैं तौ हम नहीं जीहैं ता अवधि की मर्यादा के लिये पुष्पक में चढ़ि अतिशीघ्र चले अथवा अवधि अयोध्या २८ ॥

चचरीछद ॥ सेतु सीतहिं शोभना दरशाइ पंचवटी गये। पाइलागि अगस्त्यके पुनि अत्रियैते बिदा भये ॥ चित्रकूट बिलोकिकै तबहीं प्रयाग बिलोकियो। भरद्वाज बसैं जहां जिनते न पावन हैं बियो २९ राम—तारकछंद ॥ चमकैं द्युति सूक्ष्म शोभति बारू। तनु ह्वै जनु सेवत हैं सुर चारू ॥ प्रतिबिम्बित दीप दिये जलमाहीं। जनु ज्वालमुखीन के जाल नहाहीं ३० जलकी द्युति पीत सितासित सोहै। बहुपातक घात करै यक कोहै ॥ मदएण मलै घसि कुंकुम नीको। नृप भारतखंड दियो जनु टीको ३१ ॥

बियो कहे दूसरो २९ तनु कहे सूक्ष्म ३० यक कहे केवल जो बहुत पातक हैं ताके घात कहे नाश करै को कहे करिबे के अर्थ एणमद जो कस्तूरी है औ मलय चंदन औ कुंकुम केसरि को घसिकै भारतखंडरूपी जो नृप राजा है ताने मानों मारण तिलक दियो है जाको देखतही पातकन को नाश होत है औरो राजा शत्रु के नाश करिबे को मारणतिलक शिर में देते हैं जाके देखतही शत्रु मरत है मारण मोहनोच्चाटनादि षट्कर्म की तिलकादि क्रिया मंत्रशास्त्र मों प्रसिद्ध है भारतखंडवासिन को पातक दरिद्रादि पीड़ा करत हैं सोई शत्रुता जानो ३१ ॥

लक्ष्मण—दंडक ॥ चतुरवदन पंचवदन षटवदन सहसवदनहू सहसगनि गाई है। सातलोक सातद्वीप सातहू रसा-

तलनि गंगाजीकी शोभा सबहीको सुखदाई है ॥ यमुनाको जल रह्यो फैलिके प्रवाहपर केशौदास बीच बीच गिराकी गोराई है। शोभन शरीरपर कुंकुमविलेपनको श्यामलदुकूल झीन झलकति झाई है २२ सुग्रीव—चंद्रकला ॥ भवसागरकी जनु सेतु उजागर सुंदरता सिगरी बसकी। तिहुँ देवनकी द्युतिसी दरशै गति शोषै त्रिदोषनके रसकी॥ कहि केशव वेदत्रयी मतिसी परितापत्रयी तलको मसकी । सब बंदैं त्रिकाल त्रिलोक त्रिवेणिहि केतु त्रिविक्रमके यसकी २३ ॥

चतुरचवदन ब्रह्मा पंचवदन शिव षट्वदन स्वामिकार्त्तिक सहसवदन शेष तिन करिके सहसगति कहे सहसप्रकार सों गाई है अथवा सहस्रगति कहे सहस्रधारा सातलोक भू अंतरिक्षादि सातद्वीप जंबूद्वीपादि सात रसातल अतल वितलादि २२ सेतु सम जाके मग प्राणी भवसागर पार होत हैं तीनों देव ब्रह्मा विष्णु महेश त्रिदोष वात पित्त कफको जो रस कहे बल है ताकी गतिको शोषति है अर्थ कफ पित्त वात दुःखद दोषकृत जो मृत्यु है तासों बचावति है एसी त्रिदेवनकी द्युतिहू है वेणीहू है वेदत्रयी ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद परितापत्रयी आध्यात्मिक आधिभौतिक आधिदैविक को तलको अधोभागको मसकी कहे दबायो है अर्थ पगायो है ऐसी वेदमतिहू है वेणीहू है त्रिविक्रम जो वामन तीनि पैग मा तीनोंलोक नाप्यो है तिन तीनि पादविक्षेपको त्रिरूप पताका है २३ ॥

विभीषण—दण्डक ॥ भूतलकी वेणीसी त्रिवेणी शुभशोभि-जाति एक कहैं सुरपुर मारग विमान है। एक कहैं पूरण अ-नादि जो अनन्त कोऊ ताको यह केशौदास द्रव्यरूप गात है ॥ गन्धमुख कर सब शोभाकर मेरे जान कौनो यह अद्भुत सुगंध अवदात है। दरश परश छूत थिर चर जीवनको कोटि कोटि जन्मकी कुगंध मिटिजात है २४ भुजंगप्रयातछंद ॥ भरद्वाजकी वाटिका राम देखी। महादेवकीसी वनी चित्त

लेखी ॥ सबै वृक्ष मदारहूते भले हैं । छहू काल के फूल फूले फले हैं ३५ कहू हसिनी हंससों चित्तचोरैं । चुनैं ओसके बूंद मुक्तानि भोरैं ॥ शुकाली कहू सारिकाली विराजैं । पढैं वेद मन्त्रावली भेद साजैं ३६ ॥

कुगध पढ़ते पातक जानौ ३४ महादेवकी वाटिकासी बनी चित्तमें लेख्यो मदार कल्पवृक्ष विशेष छहू काल छहू ऋतु ३५ कहू हससों कहे हस सहित हसिनी मुक्तानि के भोरैं कहे भ्रमसों ओस के बुंद चुनती हैं सो सब के चित्त को चोरावती हैं यासों हंसनकी मदमत्तता जनायो वेदमन्त्रावली के जे भेद साजैं हैं तिन्हैं पढ़ती हैं अर्थ अनेक प्रकारके मन्त्र ऋषिन के पढ़त सुनत हैं तिन्हैं शिष्य ताही विधि आप पढ़त हैं ३६ ॥

कहूं वृक्षमूलस्थली तोय पीवैं । महामत्त मातंग सीमान छीवैं ॥ कहू विप्र पूजा कहूं देवअर्चा । कहू योगशिक्षा कहूं वेदचर्चा ३७ कहू साधु पौराणकी गाथ गावैं । कहू यज्ञ की शुभ्र शाला बनावैं ॥ कहू होममन्त्रादिके धर्म धारैं । कहू बैठिकै ब्रह्मविद्या विचारैं ३८ सुआई जहां देखिये वक्र रागी । चलै पिप्पलैतिक्षवुध्यै सभागी ॥ कँपैं श्रीफलै पत्र हैं यत्र नीके । सुरामानुरागी सबै रामहीके ३९ ॥

कहूं महामत्त मातग वृक्षनकी मूलस्थली कहे थाल्हामें तोय जल पीवत हैं परंतु वृक्षनकी औ थाल्हनकी सीमा मर्यादा नहीं छुवत अर्थ वृक्ष औ थाल्हन को तोरत विदारत नहीं हैं ३७ पौराणकी कहे अष्टादशपुराण संबधिनी ब्रह्मविद्या वेदांत ३८ वक्र कहे मुख हैं रागी कहे अरुण जिनके ऐसे शुकही हैं और काहू ऋषिको मुख तांबूलरागयुक्त नहीं है यतीको तांबूल भक्षण निषिद्ध है तासों “ विधवानां यतीनां च ताम्बूलं ब्रह्मचारिणाम् । एकैकं मांसतुल्यं स्यान्मिलितं मदिरासमम् ” सभागी कहे भाग्यवान् अर्थ अति वृद्धयुक्त अतिबड़े इति श्रीफल कहे कदली के जे पत्र हैं तेई जहां कांपत हैं यासों या जनायो कि सभागी तौ सब हैं ये और कोऊ काहू भयसों कँपत

नहीं है और सबै रामानुरागी हैं परन्तु राम जो श्री हैं तामें अनुराग नहीं है रामचन्द्र के अनुरागी हैं ३९ ॥

जहां बारिदै वृंद गाजानि साजै । मनौ जहां दण्डकारी विराजै ॥ भरद्वाज बैठे तहां प्रेम मोहै । मनो एकही चक्र लोकेश सोहैं ४० लक्ष्मण-दण्डक ॥ केशौदास मृगजवछेरू चूसें बाघिनीन चाटत सुरभि बाघबालकबदन है । सिंहन की सटा ऐंचे कलभ करनिकरि सिंहनको आसन गयद को रदनहै ॥ फणीके फणनपर नाचत मुदित मोर क्रोध न विरोध जहां मदनमदन है । वानर फिरत डोरेडोरे अधताप-सनि शिवको समाज कैधौं ऋषि को सदन है ४१ ॥

जहां ता आश्रममें शिष्यके बीचमें बैठे अनेक इतिहासादि कहि विप्रन के मन को मोहत हैं इत्यर्थ लोकेश ब्रह्मा ४० मृगजवछेरू मृगबालक सग ग्रीवा के बार डोरेडोरे कहे डोल डोल अधतापस कहे बडेतपस्वी यासा वानरन को ऋषिन के थोड़ा सा आत्मनिर्भरता जनायो अथवा अध कहे आधर जो तापस कहे तपस्वी हैं तिनको डेर कहे हाथ गह अर्थ जहां जाइवे की इच्छा करत हैं तहां वानर पठाइ आवत है और शिवके समाज में मृगजवछेरू पदते चन्द्रमा के रथ के हरिण जानो अथवा और अनेक गणन के मृगवाहन हैं। यथा तुलसीकृतरामायणे ' नानावाहन नानावेखा । हरषे शिव समाज निजदेखा " औ सुरभि पदते महादेवको वाहन वृषभ जानौ औ बाघबालक पदते कातूगण को वाहन व्याघ्र जानौ औ सिंहपद ते देवी का वाहन सिंह जानौ अथवा दूनों पदते सिंहही जानौ औ गयद पदते गणेश जानौ औ फणी महादेव धारण करे हैं मोर स्वामिकार्तिक को वाहन है औ अधतापस कहे तापसरूपधारी जे आधरे गण हैं। यथा तुलसीकृतरामायणे " विपुल नयन कोउ नयन बिहीना " औ वानर पद ते वानरमुख गण जानो। यथा तुलसीकृतरामायणे खर श्वान सुअर [illegible] जैसे शिवके समाजमें स्वाभाविक विरोधी जीव अविरुद्ध रहत हैं तैसे आश्रमहू में रहत हैं याते भावार्थ ४१॥

भुजंगप्रयातछंद ॥ जहां कोमलै वल्कलै वस्त्र सोहैं । जिन्हैं

अल्पधी, कल्पशाखी विमोहैं ॥ धरे शृंखला दु खदा है दुरते । मनो शम्भुजी सगलीने अनते ४२ ॥

यामें आश्रमके ऋषिजनन को वर्णन है जहां जा आश्रम म ऋषिन के कोमल वल्कलही के वस्त्र साहत हैं परतु जिनका देखि अल्पधी लघुबुद्धि अर्थ की स्पर्धायुक्त है बुद्धि जिनकी ऐसे जे कल्पशाखी कल्पवृक्ष हैं ते विमोहैं कहे मोहित होत हैं अथवा अल्पकी धी कहे बुद्धिसों अर्थ हम इन सों लघु हैं या बुद्धिसों मोहत हैं केवल वचनही सों एतो देत हैं जेतो कल्पवृक्षनहू को मोह होत है कि हमहू इनसम न भये अथवा अल्पसाक्षी पाठ होइ तौ जिनको देखि अल्पकी धी करिकै अर्थ कि हम इनसों लघु हैं या बुद्धिसों कल्पाक्षी जे कल्पांतयोनी मार्कंडेय आदि हैं ते मोहत हैं औ केवल शृखला जो कठिन बंधन है ताको धारण करे हैं परंतु दुरते कहे बड़े जे औरन के दुःख हैं तिनको दारै कहे नाश करत हैं अर्थ ऐसे ऐसे आचार्य कृत्यन सों युक्त हैं, " शृङ्खला पुंस्कटी वस्त्रबन्धे च निगडे त्रिष्विति मेदिनी " महादेव अनत जे शेष हैं तिनको संग में लीन्हें हैं धारण करे हैं औ ऋषिजन अनत जे भगवान् हैं तिनके ध्यान सों अथवा कथन सों सगमें लीन रहते हैं ४२ ॥

मालिनीछंद ॥ प्रशमित रज राजै, हर्षवर्षा समैसे । विरल जटन शाखी स्वर्नदीकूल कैसे ॥ जगमग दरशायी सूरके अशु ऐसे । स्वरगनरकहर्ता नाम श्रीराम कैसे ४३ भुजगप्रयातछद ॥ गहे केशपाशै प्रियासी बखानों । कँपैं शापके त्रासते गात मानों ॥ मनो चन्द्रमा चन्द्रिका चारु साजें । जरासों मिले यों भरद्वाज राजें ४४ ॥

फेरि कैसे हैं ऋषिजन सो कहत हैं वर्षासमय में रज जो धूरि है सो प्रशमित कहे नष्ट राजति है ऋषिन के रजोगुण सब ऋषि सत्त्वगुणी हैं, इति भावार्थ, स्वर्नदी गगा के कूल की शाखी वृक्ष विरल कहे प्रकट जटा जे जड़ैं हैं तिन सहित हैं इहां स्वर्नदीकूलको साखी कहि अतिपावनताहू जनायो अथवा स्वर्नदी उपलक्षणमात्र है नदीमात्र के कूल का जानो नदी के प्रवाह के वेग सों जड़ै खुलि जाती हैं प्रसिद्ध है औ ऋषिजन जगा जे

लग्नमये कच हैं तिन सहित हैं " जग लग्नकचे मूल इति मेदिनी " सूर के अंशु किरण जग के जे मग राह है तिनके दरशाई देखावनहार हैं औ ऋषि यमलोक के जे ब्रह्मलोकादि स्वर्गनरकादि यज्ञादि इत्यादि सब लोकन के मग दरशाई हैं राम नाम के जपसों स्वर्ग नरकको भोग मिटत है मुक्ति होति है अथवा ज्ञानोपदेश करि स्वर्ग व नरकको भोग दूरिकरि मोक्षको प्राप्त करत हैं और जो सब चरणन के अंत में सो पाठ होइ तौ फक्त भरद्वाजही को वर्णन है ४३ जरा जो वृद्धता है सो भरद्वाज के केशपाश गहे है तासों प्रिया कहे अतिप्रिया स्त्री सम जानियत है प्रियाहू अति प्यारसों धृष्टता करि पानके केश गहतिहै सो केश गहिबो अनुचित समुझि ऋषि शाप न देहिं याही त्राससों मानो ताके गात कांपत हैं जो कहौ अगनौ भरद्वाज के कांपत हैं वृद्धताके कैसे कह्यो तौ भरद्वाज के अंगन में मिले वृद्धताके अंग कांपत हैं ताही सों भरद्वाजहूके अंग कांपत हैं काहेते भरद्वाज के अंगन में मध्यम कांपनहीं रह्यो तामें जानौ चंद्रसम ऋषि हैं चन्द्रिकासम शुक्ल जरा है अर्थ जरायुक्त शुक्लबार हैं ४४ ॥

दोहा ॥ भस्मत्रिपुण्ड्रक शोभिजै बरणत बुद्धि उदार ॥ मनो त्रिस्रोतासोतद्युति वदत लगी लिलार ४५ भुजगप्रयातछंद ॥ मनो अकुराली लसै सत्यकीसी । किधौं वेद विद्याप्रभाई प्रभासी ॥ रमै गंगकी ज्योति ज्यों जह्नु नीकी । विराजै सदा शोभ दंतावली की ४६ ॥

त्रिस्रोता गंगा कहूँ वदति पाठ है तहां या अर्थ कि त्रिस्रोताके सोतन की द्युति लिलार में लगी भरद्वाज को वदति है अर्थ सेवति है ४५ सत्य को रंग श्वेत है प्रभा शोभा प्रभी कहे भरद्वाजको मुखरूपी शुभस्थान पाइकै आश्चर्ययुक्त हैरही है अथ प्रसन्न हैरही है ज्यों कहे जानो जह्नु ऋषिके मुखमें नीकी गंगाकी ज्योति रमति है जह्नु ऋषि गंगाको पान कियो है सो कथा प्रसिद्ध है ४६ ॥

गीतिकाछंद ॥ भृकुटी विराजति श्वेत मानहुँ मंत्र अद्भुत सामके । जिनके विलोकतही विलात अशेष कर्मज कामके ॥ मुखवास आस प्रकास केशव भौंर भीर न साजहीं । जनु

सामके शुभ स्वच्छअक्षर ह्वै सपक्ष विराजहीं ४७ तनु कबुकंठ त्रिरेख राजति रज्जुसी अनुमानिये। अविनीत इंद्रिय-निग्रही तिनके निबधन जानिये॥ उपवीत उज्ज्वल शोभिजै उर देखि यों बरणैं सबै। सुर आपगा तपसिंधुमे जस श्वेतश्री दरशै अबै ४८॥

सामवेद काम जो कंदर्प है ताके जे कर्म हैं परस्त्रीगमनादि तिनते ज कहे उत्पन्न ज वस्तु हैं अघ पातक ते अशेष कहे सपूर्ण बिलात हैं अथवा काम जो हैं शुभ अशुभ अभिलाष तिनके जे कर्म हैं तिनते ज कहे उत्पन्न वस्तु हैं अर्थ स्वर्ग नरक भोग शुभ अभिलाषके कर्मन सों स्वर्गभोग उत्पन्न होत हैं अशुभ अभिलाष के कर्मन सों नरकभोग उत्पन्न होत है ते दुवौ बिलात हैं अर्थ जिनको देखि प्राणी स्वर्गनरकभोगसों भिन्न होत हैं अत में मुक्ति पावत हैं प्रथम कह्यो है कि स्वर्गनरकहता नाम श्रीराम कैसो। औ सोमके मंत्रके पुरश्चरण सों काके कर्मज बिलात हैं इनके देखतही तासों अद्भुत कस्यो बास सुगंध ४७ कंबुसदृश कंठ में तनु सूक्ष्म त्रिरेखा राजति है ताहि रज्जु कहे जेवरी सम अनुमानियत है सो जेवरी काहेके लिये है अविनीत कहे अशिक्षित अर्थ आज्ञा टारि अभिलषित बातकर्ता जे इंद्रिय नेत्रादि हैं तिनके निग्रही कहे ताड़नकर्ता अर्थ दुःखद निबधन कहे बंधन है तपसिंधु भरद्वाज हैं सुरआपगा गंगाके तीनों सोत सम उपवीन के तीनों सूत्र हैं सिंधु में मिलिबो नदी को धर्म है ४८॥

दोहा॥ फटिकमाल शुभ शोभिजै उर ऋषिराज उदार॥ अमल सकल श्रुतिबरणमय मनो गिराको हार ४९ सुंदरी छंद॥ यद्यपि है रसरूपरस्यो तनु। दंडहि सों अविलंबित है मनु॥ धूमशिखानके व्याज मनो गुनि। देवपुरी कहँ पंथ रच्यो मुनि ५० रूप धरे बड़वानलको जनु। पोषत हैं पय-पानहिं सो तनु॥ क्रोध भुजंगम मंत्र बखानहु। मोहमहातम के रवि मानहु ५१॥

श्रुतिवर्ण वेदाक्षर सम फटिक गुरिया हैं औ भरद्वाज की वाणी सरस्वती

हारा सम है औ सरस्वती में गुम्फित मानो बेनाक्षरनहूं की माला पहिरे है ४९ वृद्धतासों चलिबे के लिये दंड लिये हैं तामें तर्क करत है कि ऋषि को तनु रूप रस पहते रूप रस गन्ध शब्द स्पर्श पाचौ इन्द्रिनके पाचौं विषय जानो तिन करिकै कहे तिनकी वासना करिकै रह्यो कहे व्यंगयो है रहित भयो है इति अर्थ वृद्धतासों नेत्रादि इन्द्रिनकी रूपादि विषयकी वासना हरि गई है ताहू पर मानो दंड सों अवलम्बित कहे युक्त है दंड पद श्लेष है दंड कहे निग्रह औ लकुट औ अग्निहोत्राग्नि को आहुति सों नित्यही प्रज्वलित कियो करत है तामें तर्क है कि धूमशिखा जो अग्नि है ताके व्याज मानो देवपुरी की पथ राह बनाई है ५० पय दूध औ जल " पयः क्षीरे च नीरे च इति हैम " ५१ ॥

सत्यसरा असखा कलिके जनु । पर्वत औषधि सिद्धिन के मनु ॥ पापकलापनके दिनदूषण । देखि प्रणाम कियो जगभूषण ५२ पद्धटिकाछंद ॥ सीतासमेत शेषावतार । दंडवत किये ऋषिके अपार ॥ नरवेष विभीषण जामवंत । सुग्रीव बालिसुत हनूमंत ५३ ऋषिराज करी पूजा अपार । पुनि कुशल प्रश्न पूछी उदार ॥ शत्रुघ्न भरत कुशली निकेत । सब मित्र मंत्रि मातन समेत ५४ भरद्वाज ॥ कह कुशल कहौं तुम आदिदेव । सब जानतहौ संसारभेव ॥ विधि विष्णु शंभु रवि शशि उदार । सब पावकादि अंशावतार ५५ ब्रह्मादि सकल परमाणुअंत । तुमहीं हौ रघुपति अति अनंत ॥ अब सकल दानदै पूजि विप्र । पुनि कहहु विजय वैकुंठ क्षिप्र ५६ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां रामस्य भरद्वाजाश्रमगमननाम विंश प्रकाश ॥ २० ॥

सत्य कहे सत्ययुग औषधि सम जे आठौ सिद्धि हैं तिनके पर्वत हैं जैसे

राजस दान कहावै ५ विप्रन दीजन हीनविधानै । जानहु तामस दानै ॥ विप्र न जानहु जै जगरूपै । जानहु ये सब विष्णुस्वरूपै ६ ' श्लोक ॥ साचारो वा निराचारो साधुर्वासाधुरेव च । अविद्यो वा सविद्यो वा ब्राह्मणो मामकी तनु ७ " तोमरछंद ॥ द्विज धाम देहिं जो जाइ । बहुभाति पूजि सुराइ ॥ कछु नाहिंने परिमान । कहिये सो उत्तमदान ८ द्विजको जो देत बुलाइ । कहिये सो मध्यम राइ ॥ सुनि याचनाहिमि दानु । अतिहीनता कहँ जानु ९ ॥

५ विप्रनको जगरूप कहे जगत् के रूपों मैं कहे जनि जानहु ६ पाछे कह्या कि विप्रनको विष्णुस्वरूप जानौ ताको विष्णुवाक्य सों पुष्ट करत हैं विष्णु कह्यो है कि ब्राह्मण साचार कहे आचारसहित होइ और अर्थ सुगम है मामकी कहे हमारा तनु कहा है ७ ताको उत्तम दान को कछु प्रमाण नहीं है ८ अतिहीन कहे अधम ९ ॥

' श्लोक ॥ अभिगम्योत्तम दानमाहूत चैव मध्यमम् ॥ अधम याच्यमान स्यात्सेवादान तु निष्फलम् १० ' दोहा ॥ प्रतिदिन दीजत नेमसों ताकहँ नित्य बखान ॥ कालहि पाइ जो दीजिये सो नैमित्तिक दान ११ ' श्लोक ॥ आश्रित साधुकर्माणं ब्राह्मणं यो व्यतिक्रमेत् ॥ तस्य पुण्यचयोप्याशु क्षय याति न सशय १२ ' तोटकछंद ॥ पहिले निजवर्तिन देहु अबै । पुनि पावहिं नागरलोग सबै ॥ पुनि देहु सबै निज देशिनको । उबरो धन देहु विदेशिनको १३ दोधकछंद ॥ दान सकाम अकाम कहैहैं । पूरि सबै जगमाझ रहेहैं ॥ इच्छित ही फल होत सकामै । रामनिमित्त ते जानि अकामै १४ ॥

अभिगम्य कहे ब्राह्मण के घर में जाइकै जो दान है सो उत्तम है और आहूत कहे ब्राह्मण को बोलाइकै जो दान है सो मध्यम है औ याच्यमान

कहे जब ब्राह्मण माँगे आइ तब जो दान है सो अधम है और सेवादान कहे जब ब्राह्मण सेवा करै तब जो दान है सो निष्फल है अर्थ वामें कछू पुण्य नहीं है १० कालपाइ अर्थ चन्द्र सूर्य ग्रहणादि समयमों ११ आपनो आश्रित जो साधुकर्मा ब्राह्मण है ताको जा व्यतिक्रमेत् कहे व्यतिक्रम करत है अर्थ तिन्हैं छोड़ि और को दान देतहै ताको पुण्यचय कहे पुण्यसमूह आशु कहे शीघ्रही क्षय याति कहे क्षयको प्राप्त होत है यामें संशय नहीं अपि शब्दते या जनायो कि थोरी पुण्य तो क्षय को प्राप्त होतिही है १२ आश्रितको व्यतिक्रम न कियो चाहिये तासों पहिले निज कहे आपनेवर्ती कहे आश्रितनको देहु औ निजवृत्तिन पाठ होइ तौ निज कहे आपने इहां है दानहीसों वृत्ति कहे जीविका जिनकी नागर कहे नगरवासी १३ । १४ ॥

दानते दक्षिण वाम बखानो । धर्मनिमित्त ते दक्षिण जानो ॥ धर्मविरुद्धते वाम गुनौ जू । दान कुदान सबैते सुनौ जू १५ देहु सुदानते उत्तम लेखो । देहु कुदान तिन्हैं जनि देखो ॥ छांड़ि सबै दिन दानहिं दीजै । दानहिं ते सबके मत लीजै १६ दोहा ॥ केशव दान अनतहैं बनै न काहू देत ॥ यहै जानि भुवभूप सब भूमिदान ही देत १७ "श्लोक ॥ यत्किंचित्कुरुते पाप ज्ञानतोऽज्ञानतोऽपि वा ॥ अपि गोचर्ममात्रेण भूमिदानेन शुध्यति १८ सप्तहस्तेन दण्डेन त्रिंशद्दण्डैर्निवर्त्तनम् ॥ दशतान्येव गोचर्म दत्त्वा स्वर्गे महीयते १९ अन्यायेन हृता भूमिर्यैर्नरैरपहारिता । हरन्तो हारयन्तश्च हन्यते सप्तमं कुलम् २० " राम-दोहा ॥ कौनहि दीजै दान भुवहैं ऋषिराज अनेक । देहु सनाढ्यन आदि दै आये सहित विवेक २१ श्रीराम-उपेंद्रवज्राछंद । कहौ भरद्वाज सनाढ्य को हैं । भये कहांते सब मध्य सोहैं ॥ हुते सबै विप्र प्रभावभीने । तजे ते क्यों ये अतिपूज्य कीने २२ ॥

मारणोच्चाटनादि के लिये जो दान है सो धर्मविरुद्ध जानौ अथवा

वेश्यादि के अर्थ दान १५ सब के मीमांसकादिकन के मत कहे सम्मत अर्थ सम्मत फल को लीजै कहे पाइयत है अर्थ मीमांसकादिकन को मत है कि यज्ञादि सों ऐहिक पारलौकिक फल होत है सो सब फल दाननहीं सों पाइयत है तासों सबको यज्ञादिकन को छोड़िकै दिनप्रति दानही को दीजै १६ । १७ यत् कहे जो ज्ञानतः कहे जानिकै अज्ञानत कहे बिन जाने कोऊ प्राणी किंचित् कहे कछु पाप कहे पाप जो है ताहि कुरुते कहे करत है सो प्राणी गोचर्ममात्रेण भूमिदानेन कहे गोचर्ममात्र भूमिदान करत सते शुद्ध होत है अपिशब्द को अर्थ यह कि अधिक भूमिदान करै तासों तौ शुद्ध यामें गोचर्म को लक्षण कहत हैं १८ सप्तहस्तेन दण्डेन कहे सात हाथ के दंड करिकै त्रिंशद्दण्डैः कहे तीसदण्ड करतसंते निवर्तनसंज्ञक भूमिक्षेत्र होत है हस्तप्रमाण दुइसै दश औ दशतान्येव कहे तेई निवर्तनही एक गोचर्मसंज्ञक क्षेत्र होत हैं हस्तप्रमाण इकीससै २१०० सो गोचर्मप्रमाणहू भूमिको दत्त्वा कहे दैकै स्वर्ग कहे स्वर्गको महीयते कहे जात है १९ यैर्नरैः कहे जिन नरन करिकै अन्यायेन कहे न्याय विनाही भूमि हृता कहे हरीगई औ जिन नरन करिकै अपहारिता कहे हराइ गई ता भूमि करिकै हरन्त कहे हरनहार औ हारयन्त हरावनहार ते हन्यन्ते कहे पीड़ाको प्राप्त होत हैं अथ सो भूमि तिनका पीड़ा करती है औ तेषा सप्तम कुलमपि हन्यते अर्थ ताही भूमिकरिकै तिनके सातपुश्तिपर्यन्त पितर पीड़ा को प्राप्त होत हैं अर्थ जे दाताकी भूमिको निर्दोष छोरत हैं औ वृथापवाद कहि छोरावत हैं सो भूमि तिनको औ तिन दुहुन के सप्तपुश्ति पर्यंत पितरन का पितृलोक में पीड़ा करति है २० ऋषि कह्यो कि सनाढ्यन को दान देहु काहेते इन सनाढ्यन का आदिही सों अर्थ जबसों इनकी उत्पत्ति है तबही सों तुम निवेकरहित दै आये हौ २१ । २२ ॥

भरद्वाज ॥ गिरीश नारायणपै सुनी यों । गिरीश मोसों जो कही कहौं त्यों ॥ सुनो सो सीतापति साधुचर्चा । करी सो जाते तुम ब्रह्मअर्चा २३ नारायण–मोटनकछन्द ॥ मोतें जलनाभिसरोज वढ्यो । ऊंचो अति उग्र अकाश चढ्यो ॥ ताते चतुरानन रूपरयो । ब्रह्मा यह नाम प्रकट्ट भयो २४ ताके मनते सुत चारि भये । सो हैं अतिपावन वेदमये ॥ चौहू जन

के मनते उपजे । भुवदेव सनाढ्यते मोहिं भजे ॥ दीन्हो तुमहीं तिन जो हितजू । ह्वैहौ तुम ब्रह्मपुरोहितजू २५ ॥

गिरीश महादेव जाते कहे जाकारण ते तुम ब्रह्मअर्चा कहे सनाढ्य ब्राह्मणन की पूजा करी है अथवा ब्रह्म जे तुम हौ ते सनाढ्यनकी अर्चा आदिही सों करी है २३ । २४ यह छंद छः चरणको है चारि सुत सनक सनंदन सनातन सनत्कुमार वेदमये कहे वेदस्वरूप ये नारायण के वचन शिवमति हैं तिन्हैं कहिकै द्वै चरणमों भरद्वाज रामचन्द्र सों कहत हैं कि हे रामचन्द्र ! नारायणरूप जे तुमहौ तिनहीं तिनको हितसों यह वचन दियो है वचन इति शेष ॥ कि तुम ब्रह्म कहे परब्रह्म के पुरोहित ह्वैहौ २५ ॥

गौरीछंद ॥ ताते ऋषिराज सबै तुम छांड़ो । भूदेवसनाढ्यनके पद मांड़ो ॥ दीन्हो तुमहीं तिनको बररूरे । चौहूं युग होहु तपोबलपूरे २६ उपेंद्रवज्राछंद ॥ सनाढ्यपूजा अघओघहारी । अखंड आखंडललोकधारी ॥ अशेषलोकावधि भूमिचारी । समूल नाशैं नृप दोषकारी २७ श्रीरामतोटकछंद ॥ हनुमंत बली तुम जाहु तहां । मुनि वेष भरत्थ बसत जहां ॥ ऋषिके हम भोजन आजु करैं । पुनि प्रात भरत्थहि अंकभरैं २८ ॥ चतुष्पदीछंद ॥ हनुमंत विलोके भरत सशोके अंग सकल मलधारी । बकला पहिरे तन शीश जटागन हैं फलमूलअहारी ॥ बहुमन्त्रिनगण में राजकाजमें सब सुखसों हित तोरे । रघुनाथपादुका तन मन प्रभुकरि सेवत अंजलि जोरे २९ ॥

ब्रह्मपुरोहितहूवे को इन्हूँ तुम्हारोई वर है औ तुम ब्रह्महौ ताते कहे ता हेतु ते २६ अखंड कहे पूर्ण आखंडललोकधारी कहे इंद्रलोक की धारणहारी है जो कोऊ सनाढ्यन की पूजा करत है ताको पूर्ण इंद्रलोक देति है इति भावार्थ. अशेषलोकावधि कहे चौदहौं लोकपर्यंत जो भूमि कहे स्थान है तिनमें चारी कहे गमनकारी है अर्थ चौदहौं लोकमें सनाढ्यनकी पूजा सब करत हैं अथवा चौदहौं लोकनमें नयनमार्ग श्रवणमार्गमें गमन कराति

है अर्थ चौदहों लोक में विदित है २७ बीसयें प्रकाश में भरद्वाज कह्यो है कि अब करहु विजय वैकुंठ त्रिय या प्रकार निमंत्रण दियो है तासों रामचन्द्र हनुमान् सों कहत हैं कि आज ऋषि को निमत्रण है तासों ऋषि के इहां भोजन करि प्रात भरत पास नंदिग्राम में आइ हैं २८ । २६ ॥

हनूमान् ॥ सब शोकनि छांड़ो भूषणमाड़ो कीजै विविध बधाये । सुरकाज सँवारे रावण मारे रघुनदन घर आये ॥ सुग्रीव सुयोधन सहित विभीषण सुनहु भरत शुभगीता । जय कीरति ज्यों सँग अमल सकलअँग सोहत लक्ष्मण सीता ३० पद्धटिकाछंद ॥ सुनि परम भावती भरत बात । भये सुखसमुद्र में मगन गात ॥ यह सत्य किधौं कछु स्वप्न ईश । अब कहा कह्यो मोसन कपीश ३१ जैसे चकोर लीलै अँगार । त्यहि भूलिजाति सिगरी सँभार ॥ जीउठत उवत ज्यों उद्धिनन्द । त्यों भरत भये सुनि रामचन्द ३२ ज्यों सोइ रहत सब सूरहीन । अति ह्वै अचेत यद्यपि प्रबीन ॥ ज्यों उवत उठत हँसि करत भोग । त्यों रामचन्द्र सुनि अवधलोग ३३ मालिनीछंद ॥ जहँ तहँ गज गाजैं दुंदुभी दीह बाजैं । बहुवरणपताका स्यदनाश्वादि राजैं ॥ भरत सकल सेनामध्य यों वेष कीने । सुरपति जनु आये मेघमालानि लीने ३४ सकलनगरवासी भिन्नसेनानि साजैं । रथ सुगज पताका झुंडझुंडानि राजैं ॥ थलथल सब शोभैं शुभ्रशोभानि छाई । रघुपति सुनि मानो औधसी आज आई ३५ चामरछंद ॥ यत्र तत्र दास ईश व्योमते विलोकहीं । बानरालि रीछराजि दृष्टि सृष्टि रोकहीं ॥ ज्यों चकोर मेघओघमध्य चंद्रलेखहीं । भानुके समान यान त्यों विमान देखहीं ३६ मदनमनोहर दंडक ॥ आवत विलोकि रघुबीर लघुवीर तजि व्योमगति

तलभू विमान तब आइयो। रामपदपद्म सुखसद्म कहँ बधु-युग दौरि तब षट्पदसमान सुख पाइयो॥ चूमि मुख सूंघि शिर अंक रघुनाथ धरि अश्रुजल लोचनन पेरि उर लाइयो। देव मुनि वृद्ध परसिद्ध सब सिद्धजन हर्षि तन पुष्पबरषानि बरषाइयो ३७॥

माड़ौ कहे पहिरौ ३०। ३१ उदधिनद चन्द्रमा ३२। ३३ स्यन्दन रथ अश्व घोड़े आदि पदते पालकी आदि और जानो ३४ थल थलमें सकल नगरवासी कैसे शोभित हैं कि अनेक प्रकार के भूषण वस्त्रादि की शोभा तसों छायो रघुपति को आगमन इति शेषः सुनिकै मानो अमरपुरीही सी आई है ३५ वानरन की आलि कहे पंक्ति औ ऋक्षन की राजि पंक्ति है सो पुरवासिन की दृष्टि की जो सृष्टि है ताको रोंकति है अर्थ आगे वानर ऋक्ष उछत आवत हैं तासों रामचन्द्र नहीं देखि परत भानु कहे सूर्यरूपी जो यान कहे बाहि वाहन हैं तामें चढ्यो चन्द्रमा को जैसे मेघओघ कहे मेघ समूह में चकोर लेखैं ताही विधि भानु सूर्य सम यान पुष्पक में रामचन्द्रको ऋक्ष वानरनके मध्य में पुरवासी देखत हैं यामें अभूतोत्प्रेक्षा है दूसरो अर्थ सुगम है ३६ अंक कहे गोद में धरिलियो कहे बैठारि लियो फेरि लोचनन में अश्रु देखि अतिप्रीतिसों उर में लाय लियो ३७॥

दोहा॥ भरतचरण लक्ष्मण परे लक्ष्मणके शत्रुघ्न॥ सीता पगलागत दियो आशिष शुभ शत्रुघ्न ३८ मिले भरत अरु शत्रुहन सुग्रीवहिं अकुलाइ॥ बहुरि विभीषणको मिले अंगद को सुख पाइ ३९ आभीरछंद॥ जामवंत नल नील। मिले भरत शुभशील॥ गवय गवाक्ष गयंद। कपिकुल सब सुखकंद ४० ऋषिवशिष्ठको देखि। जन्म सफल करि लेखि॥ राम परे उठि पांय। लक्ष्मणसहित सुभाय ४१ दोहा॥ लै सुग्रीव विभीषणहिं करि करि विनय अनंत॥ पांयन परे वशिष्ठके कविकुलबुधिबलवंत ४२ श्रीराम-पद्धटिकाछंद॥ सुनिये

वशिष्ठ कुलइष्टदेव। इन कपिनायकके सकल भेव॥ हम बूड़त हैं विपदासमुद्र। इन राखि लियो संग्रामरुद्र ४३॥

जब भरत शत्रुघ्न सीता के पद लागे तब सीताजू आशिष दियो कि शत्रुघ्नकहे शत्रुनको मारो ३८। ३६। ४०। ४१। ४२ कपिनायक सुग्रीव सग्राम में रुद्र कहे भयकर ४३॥

सब आसमुद्रकी भूसुधाइ। तब दई जनकतनया बताइ॥ निजभाइ भरत ज्यों दुःखहर्ण। अतिसमर अमर हत्यो कुभकर्ण ४४ इन हरे विभीषण सकलशूल। मन मानतहौं शत्रुभतूल॥ दशकंठ हनत सब देवसाखि। इन लिये एक हनुमत राखि ४५ तजि तिय सुत सोदर बंधु ईश। मिले हमहिं काय मन वच ऋषीश॥ दइ मीचु इंद्राजितकी बताय। अरु मन्त्र जपत रावण दिखाय ४६॥ तोटकछंद॥ इन अंगद शत्रु अनेक हने। हम हेतु सहे दिन दुःख घने॥ बहु रावणको सिखदै दुख लै। पुनि आये भले सियभूषण लै ४७॥

सुधाइ कहे ढुँढ़ाइकै कुंभकर्ण को तौ रामचन्द्रही मार्‍यो है परंतु कुभकर्ण की नासा श्रवण प्रथम सुग्रीव काटि लियो है ताही समय में रामचन्द्र मार्‍यो है तासों ताको मारिबो सुग्रीवही पर स्थापित करत हैं अमर कहे काहूके मारिबे लायक नहीं ४४ जब मेघनाद ब्रह्मपाश में हनुमान् को बांधि लै गयो है तब रावण हनुमान् के वध करिबे की आज्ञा राक्षसनको दियो है तब विभीषण दूत मारिये न राज छोंड़ि दीजई ऐसे वचन कहि हनुमान् को बचायो है सो कथा चौदहें प्रकाशमों है ४५ सोदर कुभकर्ण बधु ज्ञाति समूह ईश रावण के मन्त्र जपत समय अगदादि गये हैं ता समय विभीषण के कछू वच। नहीं हैं तौ इहां रामचन्द्रकी उक्तिसों जानो कि विभीषणही के बताये सों अगदादि गये हैं ४६ हम हेतु कहे हमारे हेतु ४७॥

दशकंधके जाय जो गढथली। तिनके तनसों बहुभाति दली॥ महिमें मयकी तनया ऋषी। मति मारि अकंपनको

हर्षी ४८ दोहा ॥ माख्यो मैं अपराध बिन इनको पितु गुण-ग्राम ॥ मनसा वाचा कर्मणा कीन्हे मेरे काम ४९ गीतिका छंद ॥ इन जामवंत अनेक राक्षस लक्षलक्षनही हने । मृग-राज ज्यों वनराजमें गजराज मारतनीगने ॥ बलभावना बलवान कोटिक रावणादिक हारहीं । चढ़िव्योमदीह विमान देव दिवान आनि निहारहीं ५० दोहा ॥ करै न करिहै करत अब कोऊ ऐसो कर्म ॥ जैसे बांध्यो जलउपल जलनिधिसेतु सधर्म ५१ गीतिकाछंद ॥ हनुमत ये जिन मित्रतारविपुत्रसों हमसों करी । जलजाल कालकराल माल उफाल पारध-राधरी ॥ निश्शंक लंक निहारि रावणधाम धामनि धाइयो। यक वाटिकातरुमूल सीतहि देखिकै दुख पाइयो ५२ ॥

गूढ़स्थली जयस्थान तिनके अंगदके तनसों कर्षी कहे खैंची कठोरी इति औ अकपन को मारिकै इनकी मति हर्षी प्रसन्न भई ४८ । ४९ लक्ष लक्षनही अर्थ एक एक बार में लाख लाख मारयो है वनराज कहे बड़ो वन बलभावना कहे बलक्रिया हारही कहे हारत भये यहां भूतार्थ मों वर्त्त मान प्रत्ययको अर्थ है ५० उपल पाषाण सधर्म कहे यथोचित ५१ काल हुते कराल जे नक्रादि जतु हैं तिनको है माल कहे समूह जामें ऐसो जो जलजाल कहे समुद्र को जल समूह है ताके पारकी धरा पृथ्वी को उफाल कहे कूदिबो ताही सों धरी कहे प्राप्त भये अर्थ एतो बड़ो समुद्र ताके पार कूदिही कै गयो काहू पोतादिमें नहीं गये इति भावार्थः ५२ ॥

तरु तोरिडारि प्रहारि किंकर मंत्रि पुत्र सँहारियो । रण मारि अक्षकुमार रावण गर्वसों पुर जारियो ॥ पुनि सौंपि सीतहि मुद्रिका मणि शीशकी जब पाइयो । बलवंत नांघि अनंतसागर तैसही फिरि आइयो ५३ दशकंठ देखि विभी-षणै रण ब्रह्मशक्ति चलाइयो । करि पीठि त्यों शरणागतै तब आय वक्षसि लाइयो ॥ यकयाम यामिनिमें गयो

हति दुष्ट पवन आनिकै । त्यहिकाल लक्ष्मणको जिवाइ जियाइयो हम जानिकै ५४ दोहा ॥ अपने प्रभुको आपनो कियो हमारो काज ॥ कपिकुल कहो हनुमतमों भक्तनको शिरताज ५५ नामरछन्द ॥ वीर धीर साहसी बली जे विक्रमी क्षमी । साधु सर्वदा सुखी तपी जपी जे गयमी ॥ भोगभाग योगयाग वेगवन्त है जिते । वायुपुत्र रामकाज वारि डारिये तिते ५६ दोहा ॥ सीता पाई रिपु हत्यो देख्यो तुम अरु गेहु ॥ रामायण जयसिद्धिको कपिशिर टीका देहु ५७ यहि विधि कपिकुलगुणनको कहत हुते श्रीराम ॥ देख्यो आश्रम भरत को केशव नदीग्राम ५८ ॥

अनन कह नडो ५३ दुष्टपदन कालनेमि जानो लक्ष्मणको जियाइ हम कहे हम जियायो लक्ष्मणके मरे राम न जी हैं यह जानिकै ५४ सब भक्तन के शिरताज एहे हैं इति भावार्थ ५५ विक्रमी उपायी भाग कहे भाग्य रामप्रत्ययात भागा त्रि पांचो शब्द जानौ रामराज में वायुपुत्र पर इत्यादिन श्रीरामचन्द्र सबनका वारि डारियत हैं अर्थ जो रामकाज वायुपुत्र सँवारयो है तो इन श्रीरामचन्द्रका काहू को सँवारयो न सँवरतो ५६ रामायण कह रावर ॥ ५७ । ५८ ॥

सुन्दरीछन्द ॥ पुष्पकते उतरे रघुनायक । यक्षपुरी पठये सुखदायक ॥ सोदरको अवलोकित यों थल । भूलिरह्यो कपि राक्षस जो दल ५९ कञ्चनको अतिशुद्ध सिंहासन । राम रच्यो तहि ऊपर आसन ॥ कोपरहीरनको अतिकोमल । नामउँ कुंकुम चन्दन को जल ६० दोहा ॥ चरणकमल श्री रामके भरत पखारे आप ॥ जाते गंगादिकनको मिटत सकल सन्ताप ६१ पज्झटिकाछन्द ॥ सूरज चरणविभीषणके अति । आपुहि भरत पखारि महामति ॥ दुदुभि धुनि करिकै

बहुभेवन। पुष्पबरषि हरषे दिवि देवन ६२ दोहा॥ पीछे दुरि शत्रुघ्नसन लक्ष्मण ध्वाये पाइ॥ पग सौमित्रि पखारियो अंग दाादिके आइ ६३ तोमरछंद॥ शिरते जटानि उतारि। अंग अगरागानि धारि॥ तन भूषि भूषण वस्त्र। कटिसों कसे सब शस्त्र ६४ दोहा॥ शिरते पावन पादुका लेकरि भरत वि-चित्र॥ चरणकमल तरहरि धरी हँसि पहिरी जगमित्र ६५॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-
चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांरामस्यनन्दिग्राम-
प्रवेशोनामैकविंशतितम· प्रकाश· ॥ २१॥

यक्षपुरी कुबेरपुरी ५९ कोमल कहे चिक्कण ६०। ६१। ६२ सौमित्र शत्रुघ्न ६३। ६४ तरहरि कहे तरे ६५॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायामेकविंशतितमः प्रकाशः॥ २१॥

दोहा॥ या बाइसें प्रकाशमें अवधपुरीहि प्रवेश॥ पुर-वासिन मालानिसों मिलिबो रामनरेश १ सुंदरीछंद॥ अवधपुरी कहँ राम चले जब। ठौरहि ठौर विराजत हैं सब॥ भरत भये शुभ सारथि शोभन। चमर धरे रविपुत्र विभीषन २ तोमरछंद॥ लीनी छरी दुहुँ वीर। शत्रुघ्न लक्ष्मण धीर॥ टारैं जहां तहँ भीर। आनंदयुक्त शरीर ३ दोधकछंद॥ भू-तलहू दिवि भीर विराजैं। दीह दुहू दिशि दुंदुभि बाजैं॥ भाट भले बिरदावलि गावैं। मोद मनो प्रतिबिम्ब बढ़ावैं ४ भूतलकी रज देव नशावैं। फूलनकी बरषा बरषावैं॥ हीन-निमेष सबै अवलोकैं। होड़ परी बहुधा दुहुँ लोकैं ५॥

१। २। ३ देवतनके प्रतिबिम्ब सम अवधवासी अवधवासिनके प्रतिबिम्ब सम देवता मोद बढ़ावत हैं अर्थ जो आनद क्रिया हास्यादि अवध-

वामी करत है सोई देवना करत , ४ हाड कहे बहस मानो अवधवासी बहमकरि अमरावतीको धूरि उड़ावत है औ देवना ताभूरिको फूल नकी अनिष्टिकरि नशाइ देते हैं अर्थ दवाइ लेत हैं औ देवना तौ अति मेघही हैं औ रामचन्द्रके दर्शनमें अवधवासिनहूकी पलक नहीं लागत सो मानो परस्पर होड़ किये हैं कि देखिये को। हारी पलक लागति है यामें असिद्ध विषय हेतूत्प्रेक्षा है ५ ॥

तारकछंद ॥ सिगरे दल अवधपुरी तब देखी । अमरावतिते अतिसुंदर लेखी ॥ चहुँओर विराजति दीरघ खाई । शुभ देवतरंगिनिसी फिरि आई ६ अतिदीरघ कंचनकोट विराजै । मणि लाल कँगूरनकी रुचि राजै ॥ पुर सुंदर मध्य लसै छवि छायो । परिवेष मनो रविको फिरि आयो ७ दोहा ॥ विविधपताका शोभिजैं ऊंचे केशवदास ॥ दिवि देवनके शोभिजैं मानहुँ व्यजनविलास ८ विजयछंद ॥ चढीं प्रतिमंदिर शोभ बढी तरुणी अवलोकनको रघुनंदनु । मनो गृहदीपति देह धरे सु किधौं गृहदेवि विमोहति है मनु ॥ किधौं कुलदेवि दिये अनि केशव कै पुरदेविन को हुलस्यो गनु । जहीं सो तहीं यहि भांति लसैं दिवि देविन को मद घालति हैं मनु ९ ॥

देवतरंगिनि गंगासम कह्यो नागों विमलजल युक्त जानो ६ रविसम अयोध्यापुरी है परिवेषसम कंचन कोट है ७ व्यजन पखा ८ अपनी सुंदरतादि देखाइ देविनकी सुंदरतादिको मद दूरि करती है अवधपुरी की स्त्री देविनहू सों अधिक सुंदरी हैं इति भावार्थ ९ ॥

दोहा ॥ अतिऊंचे मंदिरन पर चढीं सुंदरी साधु ॥ दिवि देवनको करति हैं मनु आतिथ्य अगाधु १० तोटकछंद ॥ नर नारि भली सुरनारि सबै । तिनको उपरैं पहिंचानि अबै ॥ मिलि फूलनकी बरषैं बरषा । अरु गावति हैं जय

के करषा ११ पद्मावतीछंद ॥ रघुनंदन आये सुनि सब धाये पुरजन जैसे तैसे। दर्शनरस भूले तन मन फूले बरणे जाहिं न जैसे ॥ पतिके सँग नारी सब सुखकारी रामहिं यों दृग जोरी। जहँ तहँ चहुँ ओरनि मिली झकोरनि चाहति चंद-चकोरी १२ पद्धटिकाछंद ॥ बहुभांति रामप्रति द्वार द्वार। अतिपूजत लोग सबै उदार ॥ यहि भांति गये नृपनाथ गेह। युतसुंदरि सो दरस्यो सनेह १३ दोहा ॥ मिले जाय जननी-नको जबहीं श्रीरघुराइ ॥ करुणारस अद्भुत भयो मोपै कह्यो न जाइ १४ सीता सीतानाथजू लक्ष्मणसहित उदार ॥ सबन मिले सबके किये भोजन एकहि बार १५ ॥

अति सुंदररूप आतिथ्यसम है १० यासों या जनायो कि जेती दूरि देविनको विमान है तेतेई ऊंचे अवधवासिन के गृह हैं ११ । १२ नृपनाथ दशरथ १३ । १४ । १५ ॥

सोरठा ॥ पुरजन लोग अपार यहई सब जानत भये ॥ हमहीं मिले अगार आये प्रथम हमारही १६ मदनहराछंद ॥ सँगसीतालक्ष्मण श्रीरघुनन्दन मातनके शुभपांइ परे सब दुःख हरे। आंसुन अन्हवाये भागनि आये जीवन पाये अंकभरे अरु अंकधरे ॥ ते वदन निहारैं सरबसु वारैं देहिं सबै सबहीन घनो अरु लेहिं घनो। तन मन न सँभारैं यहै बिचारैं भाग बड़ो यह है अपनो किधौं है सपनो १७ स्वा-गताछंद ॥ धामधामप्रति होति बधाई। लोकलोक तिनकी धुनि छाई ॥ देखिदेखि कपि अद्भुत लेखैं। जाहिं यत्र तित रामहिं देखैं १८ दौरि दौरि कपि रावर आवैं। बारबार प्रति धामनि धावैं ॥ देखिदेखि तिनको दै तारी। भांतिभांति बिहँसैं पुरनारी १९ ॥

१६ रामचन्द्रजू भागनमों आये तामों मात जीवनसम पाये सो अर्थ भरे कहे अतिप्रेमनों छातीमें लगाये फेरि अंक जो गोद है तामे धरे कहे बैठारे तब आ।दाश्रुनमों सीता राम लक्ष्मण को अन्हवाय औ ते सबै कौशल्यादि माता रामादिके वदन निहारती हैं औ तिनपर सर्वस्व वारि वारि सबको अथ याचक नगिनको देती हैं औ तिन याचकनसों आशीर्वाद करि घनो लेती हैं पावती हैं अथ याचक आशीर्वाद देते हैं कि जो हमको तुम दियो ताको कोटिगुणित तुम्हारे हो अथवा रामादिके वदन दर्शनही सों घनो लेती हैं पावती हैं अर्थ मुखदर्शन करि घनो पायो सम मानती हैं १७। १८ रावर क्षीभवन १९ ॥

श्रीराम– दोहा ॥ इन सुग्रीव विभीषणै अंगद अरु हनुमान ॥ सदा भरत शत्रुघ्नसम माताजी मैं जान २० सुमित्रा–सोरठा ॥ प्राणनाथ रघुनाथ जियकी जीवनमूरि हौ ॥ लक्ष्मण हे तुम साथ अमियहु चूक परी जो कछु २१ राम–दंडक ॥ पौरिया कहौं कि प्रतीहार कहौं किधौं प्रभु पुत्र कहौं मित्र किधौं मंत्री सुखदानिये । सुभट कहौं कि शिष्य दास कहौं किधौं दूत केशौदास हाथको हथ्यार उर आनिये ॥ नैन कहौं किधौं तन मन किधौं तनत्राण बुद्धि कहौं किधौं बल-विक्रम बखानिये । देखिबे को एक हैं अनेक भांति कीन्हीं सेवा लक्ष्मणके मात कौन कौन गुण गानिये २२ ॥

२० । २१ पौरिया जो मुख्य द्वार की रक्षामें रहत है प्रतीहार जो राज सभा के द्वार में सुवर्णादि को दंड लै ठाढ़ो रहत है बल जोर विक्रम यत्न ये सब एक एक आपनो आपनो कार्य करि सुख देत हैं सो लक्ष्मण ने जहां जाको काज लाग्यो है तहां ताही विधि तौन काज करि हमको परमसुख दीन्हो है २२ ॥

मोटनकछंद ॥ शत्रुघ्न विलोकत राम कहैं । डेरानिसजौ जहँ सुक्ख लहैं ॥ मेरे घर सम्पति युक्त सबै । सुग्रीवहि देहु निवास अबै २३ साजे जो भरत्थ सबै धनको । राखो तहँ

जाइ विभीषन को ॥ नैऋत्यनको कपि लोगनको । राखौ निजधामनि भोगनको २४ दोहा ॥ एक एक नैऋत्यको जितने वानर लोग ॥ आगेही ठाढे रहत अमित इद्रके भोग २५ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-
चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांरामस्यायोध्यापुर-
प्रवेशोनाम द्वाविंश॰ प्रकाश ॥ २२ ॥

संपत्ति अनेक भोग वस्तु २३ । २४ अमित कहे अप्रमाण २५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद निर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां द्वाविंशः प्रकाश ॥ २२ ॥

दोहा ॥ या तेइसें प्रकाशमें ऋषिजन आगम लेखि ॥ राज्यश्री निंदा कही श्रीमुख राम विशेखि १ मल्लिकाछंद ॥ एककाल रामदेव । शोधु बंधु करत सेव ॥ शोभिजैं सबै सो और । मंत्रि मित्र ठौर ठौर २ वानरेश यूथनाथ । लंकनाथ बंधुसाथ ॥ शोभिजैं सबै समीप । देशदेशके महीप ३ दोहा ॥ सरस स्वरूप विलोकिकै उपजी मदनहिं लाज ॥ आइ गये ताही समय केशव ऋषि ऋषिराज ४ असित अत्रि भृगु अंगिरा कश्यप केशव व्यास ॥ विश्वामित्र अगस्त्ययुत वालमीकि दुर्वास ५ ॥

१ । २ वानरेश सुग्रीव यूथनाथ अंगदादि लंकनाथ के जे बन्धु बिभीषण अथवा बन्धु जे ज्ञातिवर्ग हैं राक्षसगण इति ते हैं साथ जिनके ऐसे लंकनाथ जे विभीषण हैं ते ३ सरस कहे अपना सों अधिक सुंदर ४ । ५ ॥

वामदेव मुनि कण्वयुत भरद्वाज मतिनिष्ठ ॥ पर्वतादि दै सकल मुनि आये सहित वशिष्ठ ६ नगस्वरूपिणीछंद ॥ सबंधु रामचन्द्रजू उठे विलोकिकै तबै । सभा समेति पाँपरे विशेषि पूजियो सबै ॥ निरेकसों अनेकधा दशा अनूप

आगने । ५ ॥ अर्घ आदि दै विनै किये गनेघने ७ राम—रूपमाला छंद ॥ रावरे मुखके बिलोकतही भये दुख दूरि । सुप्रलाप नहीं रहे उरमध्य आनँदपूरि ॥ देह पावन ह्वैगयो पदपद्म को पय पाइ । पूजतै भयो वशपूजित आशुही मुनिराइ ८ सन्निधान भरे तपोधन धाम धी धन धर्म । अद्यमद्य सबै भये निरवद्य वासरकर्म ॥ ईश यद्यपि दृष्टिही भइ भूरि मंगल सृष्टि । पूछिवे कहँ दोनिहै सो तथापि वाग्विसृष्टि ९ ॥

निष्ठ कहे उत्कर्षे हैं मति जिनकी " निष्ठोत्कर्षनश्वरयोरित्यभिधान चिन्तामणि " ६ विनेक सों विचार सों अर्घ यथोचित अनर्घ कहे अमोल अत पाद्यादि पूजाविधि प्रसिद्ध है " अर्घ पूजाविधौ मूल्ये इत्यभिधानचिन्तामणि " ७ द्वै छंद को अन्वय एक है तपोधन श्रापित को सम्बोधन है सुप्रलाप कहे सुवचन ' सुप्रलापः सुवचनमित्यमरः ' पदपद्म को पय कहे चरणोदक रावरे पदको सबध सुप्रलापादिकमा सर्वत्र है सन्निधान कहे समीप सों अर्थ रावरे निकट प्राप्त भये सो हमारे धाम भर और धी बुद्धि धन औ धर्मादि भर अर्थ धाम धनादि भर बुद्धि धर्ममों भरी अद्य कहे आज सद्य कहे शीघ्रही सबै जो वासरकर्म कहे रोज रोज के नित्यकर्म हैं निरवद्य कहे अनिंद्य भये औ हे ईश ! यद्यपि तुम्हारी दृष्टि सो अवलोकनही सों हमपर भूरि कहे बहुत मंगल कहे कल्याण की दृष्टि भई अर्थ हमारो बड़ो कल्याण भयो परंतु कल्याण में तो काहूकी तृप्ति होति नहीं तासों अधिक कल्याण के लिये तुमसों कछू पूँछिवे को हमारे वाक जे वचन हैं तिनकी विसृष्टि कहे उत्पत्ति होति है ८ । ९ ॥

दोहा ॥ गंगासागरसों बडो साधुनको सतसंग ॥ पावन करि उपदेश अति अद्भुत करत अभंग १० ॥

साधुन को जो सत्संग है सो गंगासागरहू सों बड़ो है काहेते कि अति अद्भुत जो उपदेश शिक्षा है तासों पावन कहे पवित्र करिकै अभंग कहे नाशरहित कै अर्थ मुक्त करत है अथवा उपदेश सों अतिपावन करि [illegible] अभंग कहे मुक्त [illegible] तन्मुक्त करत है उपदेश करि अभंग करिबे [illegible] दक्षि [illegible] गाम गर [illegible] नहीं [illegible] बड़ो कह्यो एतो रामचन्द्र के

कहतही विरक्त वचन समुझि अगस्त्य बीचही में बोलि उठे तासों जो पूछिबो रहे सो नहीं पूंछन पायें सो चौबीसयें प्रकाश में कह्यो है कि "औ कछु जीव उधारन को मत जानत हौ सौ कहौ प्रभु है रतु" कहिबे को हेतु यह कि हमको कछू ऐसों उपदेश करौ जासों संसार छूटै मुक्ति होइ १० ॥

अगस्त्य–नाराचछंद ॥ किये विशेष सों अशेष काज देवरायके । सदा त्रिलोक लोकनाथ धर्म विप्र गायके ॥ अनादि सिद्धि राजसिद्धि राज आज लीजई । नृदेवतानि देवतानि दीहसुक्ख दीजई ११ ॥

हे त्रिलोकलोकनाथ ! अर्थ तीनों लोक के जे लोक कहे जन हैं तिन के नाथ कहे स्वामी हौ अर्थ ईश्वर हौ यासों या जनायो कि तुम्हारो बंधन कौन है जासों छूटिबे की इच्छा करत हौ रावण को मारि देवराय जे इंद्र हैं औ धर्म औ विप्र औ गाय इनके अशेष कहे पूर्ण काज करयो अब अपनी अनादि सिद्धि अर्थ तुम्हारी परम्परा की सिद्धि है औ राज सिद्धि कहे राजनकी सिद्धि जो राजनि है ताहि लीजै नृदेवता राजा ११ ॥

दोहा ॥ मारे अरि पारे हितू कौन हेतु रघुनंद ॥ निरानंद से देखियत यद्यपि परमानद १२ श्रीराम–तोमरछंद ॥ सुनि ज्ञानमानसहंस । जप योग याग प्रशंस ॥ जगमांझ है दुखजाल । सुख है कहा यहि काल १३ तहँ राजहै दुखमूल । सब पापको अनुकूल ॥ अब ताहिलै ऋषिराय । कहि कौन नरकहि जाय १४ चौपाई ॥ सोदर मंत्रिनके जे चरित्र । इनके हमपै सुनि मख मित्र ॥ इनहीं लगे राजके काज । इनहीं ते सब होत अकाज १५ ॥

एक तौ तुम परमानंदरूपही हौ ताहू पर अरि रावणादिको मारे औ हितू इंद्रादि को पालत भये ऐसे आनंदवर्धक काजऊ करे ताहूपर तुम्हैं निरानंदसे काहे देखियत है इ यर्थ ज्ञानरूपी जो मानस मानसर है ताके हंस हौ औ जग में याग औ याग की है प्रशंसा स्तुति जिनकी दूनों पद संबोधन हैं १२ । १३ । १४ । १५ ॥

राजभार नल भैयनि दयो । छलबल छीनि सबै तिन लयो ॥ जब लीन्हों सब राज विचारि । नल दमयंती दियो निकारि १६ राजा सुरथराजकी गाथ । सौंपी सब मंत्रिन के हाथ ॥ संतत मृगया लीन विचारि । मंत्रिन राजा दियो निकारि १७ राजश्री अतिचचल तात । ताहूकी सुनि लीजे बात ॥ यौवन अरु अविवेकी रग । विनश्यो को न राजश्री संग १८ शास्त्र सुजलहुँ न धोवत तात । मलिन होत अति ताके गात ॥ यद्यपि है अति उज्ज्वल दृष्टि । तदपि सृजति रागनकी सृष्टि १६ ॥

नलकी कथा पुराणमों प्रसिद्ध है १६ मृगया शिकार सुरथहू की कथा मार्कंडेयपुराणमों प्रसिद्ध है १७ अति चचल जो राजश्री है ताहू में ऐसो दोष है सो सुनौ कहियत है यौवन औ अविवेकी रग औ राजश्री के संग में को नहीं विनश्यो ये तीनों सम हैं अथवा यौवन औ अविवेकी रंगयुक्त जो राजश्री है अर्थ सदा यौवन औ अविवेकसों युक्त रहति है ताके सग को नहीं विनश्यो अथवा हितोपदेश में कह्यो है कि " यौवन धनसम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकता । एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम् ? " यामें चारि कह्यो है ता मतसों यह अर्थ कि यौवन, अविवेकी, रंग औ राज औ श्री कहे सम्पत्ति इन चारिके संग में को नहीं विनश्यो १८ शास्त्र को उपदेश सुनिकै शास्त्रकी आज्ञानुसार नहीं करत और तासों मलिन उदास होत हैं अथवा अनेक शास्त्र सुनावो ताहूपर पातकनकरि ताके गात मलिन होत हैं शास्त्रहू सुनिकै अनेक पातक करतही हैं इत्यर्थः औ यद्यपि याकी उज्ज्वल विमल दृष्टि है अर्थ उत्तम पदार्थन पर दृष्टि है तौ अति उत्तम जो पदार्थ ईश्वरपद है तामें प्रीतिवारे सों नहीं करति राग जो स्रक् चंदन वनितादि विषे अभिलाष है ताको सृजति कहे उत्पन्न करति है । " अभिमतविषयाभिलाषो रागः " १६ ॥

महापुरुषसों जाकी प्रीति । हरति सो झंझामारुत रीति ॥ विषय मरीचिकानि की ज्योति । इंद्री हरिण

हारिणी होति २० गुरुके वचन अमल अनुकूल। सुनत होत श्रवणनको शूल॥ मैनवलित नववसन सुदेश। भिदत नहीं जल ज्यों उपदेश २१॥

जा पुरुषकी प्रीति महापुरुष जे भगवान् हैं तिनसों है ताके पास आइ झझामारुत कहे अतिजोर वायुकी रीतिसों हरति कहे तोरति है अर्थ जैसे झझामारुत वृक्षलतानिको तोरति है तैसे यह प्रीति को तोरति है आशय यह कि आपु विष्णुकी स्त्री हैं तासों प्रीतिरूपी स्त्रीको विष्णुके पास जात देखि सौतिधर्म सों तोरति है अर्थ राजनकी प्रीति ईश्वरपर नहीं होति रूप रस गंध स्पर्श शब्द ये जे पांचौ विषयरूपी मरीचिका कहे मृगतृष्णा हैं तिनकी ज्योति में इंद्रीरूपी जे हरिण हैं तिनकी हारिणी कहे लैजानहारी होति है अर्थ मृगतृष्णासम मिथ्या जो पचधा विषय हैं तामें राजनकी इंद्रिनको भ्रमावति है २० मैन कहे मोम २१॥

मित्रनहूको मतो न लेति। प्रतिशब्दक ज्यों उत्तर देति॥ पहिले सुनै न शोर सुनंति। माती करिणी ज्यों न गनंति २२ दोहा॥ धर्म धीरता विनयता सत्य शील आचार॥ राज्यश्री न गनै कछू वेद पुराण विचार २३ चौपाई॥ सागर में बहुकाल जो रही। शीत वक्रता शशिते लही॥ सुरतुरंगचरणनि ते तात। सीखी चंचलताकी बात २४ कालकूटते मोहन रीति। मणिगणते अतिनिष्ठुर प्रीति॥ मदिरा ते मादकता लई। मंदर उदर भई भ्रममई २५॥

प्रतिशब्दक कहे झाईं शब्द अर्थ जैसे शब्दके साथही प्रतिशब्दक होत है तैसे राजा मित्रके वाक्य में शुभाशुभ को विचार नहीं करत साथही उत्तर कहे जवाब देत है औ पहिले तो हित वाक्यको सुनति नहीं जो शोर करि कहै सो सुनिबो करत है तौ माती करिणीसम गनति नहीं अर्थ जैसे माती करिणी महावतके हितके हितवचन नहीं गनति तैसे राज्यश्री मित्रादि के हितवचन नहीं गनति २२।२३ क्षीरसागर में बहुत काल रही है तहां इनको संग रह्यो तिनसों ये कर्म सीखि हैं शीतता कहे मगज है सेवकादिको

धनादि दीनो वक्रता क्रुद्धकै वधादि करिबो सुरतुरंग उच्चैःश्रवा चपलताकी बात कहै क्षणमें औरक्षणमें और करिबो करिबो २४ जैसे कालकूट भक्षणसों मोहित मूर्च्छित भये प्राणीको कछु सुधि नहीं रहति है तैसे राज्यश्री में मोहित राजन को ईश्वरादिकी सुधि भूलि जाति है इत्यर्थ निष्ठुरतावश राजन को जीववधादि में कछु दया नहीं आवति इत्यर्थ राज्यश्री के वश मस्त है राजा हित वस्तुको विचार नहीं करत इत्यर्थ औ विष्णु करिकै भ्रमाया जो मंदर है ताके संगसों राज्यश्री के उदर में भ्रमगई कहे भ्रमाधिक्य भई अर्थ मंदरको भ्रमत देखिकै भ्रम सिख्यो राजन के उरमें सदा वधु आदि कनहू को प्रतिकूलताको भ्रम रहत है इत्यर्थ २५ ॥

दोहा ॥ शेष दई बहुजिह्वता बहुलोचनता चारु ॥ अप्सरानिते सीखियो अपरपुरुषसञ्चारु २६ चौपाई ॥ दृढ गुन बांधे हू बहुभांति । को जानै केहि भांति बिलाति ॥ गज घोटक भट कोटिन अरैं । खड्ग लता पञ्जरहू परैं २७ अपना इति कीन्हे बहुभांति । को जानै कित है भजि जाति ॥ धर्म कोषमंडित शुभदेश । तजति भ्रमरि ज्यों कमलनरेश २८ ॥

बहुजिह्वता कहे एक जिह्वासों अनेक जिह्वासम बात कहि बहुलोचनता कहे है लोचनसों अनेक लोचनसम देखिबो अर्थ राजा अति बतकहा होत हैं औ चारदृष्टि सों सर्वत्र देखत हैं अपर कहे अन्यपुरुष गनि सञ्चार अर्थ एक पुरुष राजा को छाड़ि एक पास जाइबो २६-है छंदको अन्वय एक है गुनपद श्लेष है शूरतादि औ डोरी गज औ घोटक घोड़ औ भट कोटिन रक्षा के अर्थ अरैं कहे हठ करैं औ निवर्गी खड्ग तरवारिरूपी जो लता है ताके पंजरहू में परैं अर्थ तरवारि हाथ में लैकै अनेक गजादि चौकी दे रक्षा करैं ताहूपर और अनेक विधि अपनाइति कीन्हेहू अर्थ प्रीति कीन्हेहू धर्म राजधर्म औ कोमलता कोष खजाना औ सिफारद तामों मंडित युक्त औ शुभदेश कहे सुंदर है राज्यभूमि जाकी औ सुष्ठु है देश उत्पत्ति स्थान जाको औ कमलरूपी जो नरेश राजा है ताको तजति है औ को जानै कहा है भागि जाति है सुंदरतादिहू के वश नहीं होति इति भावार्थ २७ । २८ ॥

यद्यपि होइ शुद्धमति सत्तु । फिरै पिशाची ज्यों उनमत्तु ॥

गुणवतानि आलिंगति नहीं । अपवित्रानि ज्यों छांडति तहीं २६ शूरनि नाशति ज्यो अहि देखि । कंटक ज्यों बहु साधन लेखि ॥ सुधा सोदरा यद्यपि आप । सबही ते अति कटकप्रताप ३० यद्यपि पुरुषोत्तमकी नारि । तदपि सकल खल जन अनुहारि ॥ हितकारिनकी अतिद्वेषिणी । अहितलोग की अन्वेषिणी ३१ मनमृगको सुबधिककी गीति । विषय बेलिको वारिदरीति ॥ मदपिशाचिकाकीसी अली । मोह नींदकी शय्या भली ३२ ॥

सत्तु कहे माणी अर्थ राजासों राज्यश्री युक्त हैं पिशाचाक्रांत पुरुषसम उन्मत्त फिरत है गुणवतनि कहे विद्यादि अनेक गुणको अपवित्रसम त्याग करति है इत्यर्थः " पण्डिते निर्द्धनत्वमित्युक्तं माधवानलनाटके" २६ नाशति कहे छोंड़ति है शूर औ साधुन को राज्यश्री नहीं प्राप्त होति अथवा शूर औ साधुन को सग्रह राजा नहीं करत इत्यर्थः सुधा जो अमृत है ताकी सोदरा बहिन ३० पुरुषोत्तम विष्णु द्वेषिणी कहे शत्रु है अन्वेषिणी कहे ढूँढ़न हारी है ३१ बधिकसम मनरूपी मृगको बाधिलेति है व हे काबू करिलेति है इत्यर्थः औ वारिद कहे मेघसम विषयरूपी बेलिको हरित करति है इत्यर्थः मदरूपी जो पिशाचिका प्रेतिनि है ताकी अली कहे सखी है अर्थ सहायक है पढावनहारी, इति मोह कहे अज्ञानरूपी जो नींद है ताकी शय्या है जैसे शय्या में नींद बढ़ति है तैसे राज्य में मोह बढ़त हैं इत्यर्थः ३२ ॥

आशीविषदोषनकी दरी । गुण सतपुरुषन कारण छरी ॥ कलहंसनको मेघावली । कपटनृत्यकारीकी थली ३३ दोहा ॥ वामकामकरिकी किधौं कोमलकदलि सुबेख ॥ धीर धर्म द्विजराज को मनो राहु की रेख ३४ चौपाई ॥ मुखरोगी ज्यों मौनै रहै । बात बुलाय एक द्वै कहै ॥ बंधुवर्ग पहिचानै नही । मानो सन्निपात है गही ३५ ॥

दरी कन्दरा में आशीविष सर्पसम अनेक मृजापीड़नादि दोष जामें वास करत हैं इत्यर्थः औ अवक जे नियादि गुणरूपी सत्पुरुष हैं तिनके कारण

कहे अर्थ छरी कहे ताड़नदंड है जैसे राजद्वार में ताड़नदंड देखि सत्पुरुष नहीं आवत तैसे राज्यश्रीयुक्त पुरुष के पास विद्यादि गुण नहीं आवत कुपुरुष लोभवश दंडपात सहि भूपद्वारादि स्थल में जातही हैं तासों सत्पुरुष कह्यो राज्यसुखालस्यसों राजा गुणों को अभ्यास नहीं करत इति भावार्थः फल कहे अभिन्नता नैचित्य इति हसनको मघावलीसम राजन के कलको राज्यश्री दूरि करति है इत्यर्थः अनेक शत्रु भयादि युक्त राजनको चित्त सदा रहत है इति भावार्थः शत्रुसैन्यभेदादि अनेक कपटयुक्त राजा होत हैं इति भावार्थः ३३ वाम कहे कुटिल जो कामकदर्परूपी करि हाथी है ताको सुवेष कहे हरित कोमल कदली केरा है अर्थ गजको कदली सम कामको कल' कर्ता है अथवा सुखद है राजा अतिकामी होत हैं इति भावार्थः कदली-भक्षण सों गज को बल औ सुख होत है यह प्रसिद्ध है औ धीर औ धर्म-रूपी द्विजराज चन्द्रमा को राहुरेख सम पीड़ाकर्ता है इत्यर्थः राजवधु मंत्र्यादि में भेद भय मानि सदा अधीर रहत हैं औ आलस्यवश दानादि धर्म विधिपूर्वक नहीं करत इति भावार्थः ३४। ३५॥

महामन्त्रहू होत न बोध। डसी कालअहि करि जनु क्रोध॥ पान विलास उदित आतुरी। परदारागमने चातुरी ३६॥ मृगया यहै शूरता बढ़ी। बदीमुखनि चापसों पढ़ी॥ जो केहू चितवै यह दया। बात कहै तो बडी ऐ मया ३७ दरशन दीबोई अतिदान। हँसि बोलै तौ बड़ सनमान॥ जो केहू सों अपनो कहै। सपने कीसी पदवी लहै ३८ दोहा॥ जोई अति हितकी कहै सोई परमअमित्र॥ सुखवक्ताई जानिये संतत मंत्री मित्र ३९॥

मन्त्रिन करि दीन्हे जे महामंत्र कहे बड़े बड़े मंत्र हैं तिनहू सों जाको बोध ज्ञान नहीं होत सो मानो कालअहि कहे कालसर्प करिकै क्रोध करिकै डसी कहे काटी गई है अर्थ मानो क्रोधकरि कालसर्प काट्यो है जा प्राणी को कालसर्प काटत है ताहूके झारिबे के जे महामंत्र हैं तिनसों बोध ज्ञान नहीं होत अर्थ मूर्च्छा नहीं जागति पान कहे मद्यपान को जो विलास है ताही में उदित कहे प्रकट है आतुरी शीघ्रता जाकी ३६ मृगया यहै शूरता बढ़ी

इत्यादि मों या जनायो कि याही विधि राजा थारो करत है ताको बहुत मानिलेत हैं ३७ पदवी राज्य ३८। ३९ ॥

चौपाई ॥ कहौं कहांलगि ताके साज। तुम सब जानत हौ ऋषिराज ॥ जैसी शिवमूरति मानिये। तैसी राज्यश्री जानिये ४० सावधान ह्वै सेवै जाहि। सांचो देत परमपद ताहि ॥ जितने नृप याके वश भये। पेलि स्वर्ग मग नर्कहि गये ४१ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांराज्यश्रीदूषणवर्णनन्नाम त्रयोविंश प्रकाश ॥ २३ ॥

४० शिवमूर्तिहू को सावधान ह्वै विधिपूर्वक सेवन बनि परै तौ स्वर्ग प्राप्त होत है न बनै तौ चित्तविक्षेपादि है अंत में नरक प्राप्त होत है तैसे याहूको सावधान ह्वै जनकादि सम सेवन करै तौ स्वर्गताई परंतु सावधान ह्वै सेवन नहीं बनि परत तासों केतने भूप बेन आदिक स्वर्ग मगसों पेलिकै नरकको गये हैं तासों हम राज्यश्री ग्रहण न करिहैं इति भावार्थ ४१ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद निर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायांत्रयोविंश प्रकाशः ॥ २३ ॥

दोहा ॥ चौबीसयें प्रकाशमें राम विरक्त बखानि ॥ विश्वामित्र वशिष्ठसों बोध कह्यो शुभ आनि १ राम—अमृतगति छंद ॥ सुमति महाऋषि सुनिये। जगमहँ सुक्ख न गुनिये ॥ मरनहिं जीवन तजहीं। मरिमरि जन्म न भजहीं २ उदरनि जीव परत है। बहुदुखसों निसरत है ॥ अतहु पीर अनतहीं। तनउपचार सहतहीं ३ दोधकछंद ॥ पांच भली न कछू जिय जाने। लै सब वस्तुन आनन आनै ॥ शैशवते कछु होत बढ़ेई। खेलत हैं ते अयान अढेई ४ है गिहु मातानिते दुखभारे। श्रीगुरुते अतिहोत दुखारे ॥ भूख न प्यास न नींद न जोवे। खेलन को बहुभांतिन रोवै ५ ॥

जोर में अर्थ युवाअवस्था में चित्तरूपी जो चिता है तामें जीव को कहे दुचिताई जो संशय है सो जारति है जैसे चिता में मर प्राणी को जारियत है तैसे चित्तरूपी चिता में जीव को दुचिताई जारति है इत्यर्थ औ अहि कहे सर्पसम जो कोप है सो दीह कहे बहुत अर्थ नीकी विधि जीव के त्वचा चर्म की चबाई कहे चबात है अर्थ काटत है अथवा त्वचासम अहिकोप चबात है अर्थ सर्प त्वचा में काटत है तब जीवको परमपीड़ा होति है औ कोप तौ जीवही को काटत है ताको पीड़ा तौ अकथनीय है औ जब कामकंदर्प अथवा अभिलाषरूपी जो समुद्र है ताके तरंग के झकोरनमें झूल्यो इत उत आयो गयो तब हे महाप्रभु ! जीव जो है सो भूल्यो अर्थ अपनपौ को भुलान्यो महाप्रभु ऋषिन को संबोधन है चितादाह सर्पदंश समुद्र तरंग के झकोरन में सबको विकलतासों अपनपौ की सुधि भूलि जाति है ६ यौवन जोर में और कहा होत है सो कहत हैं धूमसम जो नीलनिचोल कहे श्याम वस्त्र है तामें सोहति है इहां केवल धूमकी समता के लिये नीलनिचोल कह्यो अग्निदाह भयसों परनारी लोकभयसों छुइ नहीं जाति देखत ही मनको दुवौ मोहत हैं परनारी मोहति कहे वश करति है अग्नि मोहति कहे भयसों अथवा तेजसों मूर्च्छित करति है सो पापरूपी यौवन है तामें चारि कहे गामी अर्थ जैसे अग्नि वन में बिहरति है तैसे परनारी पाप ही में बिहरति है ऐसी परनारीरूपी जो पावकशिला है सो नरको जारति है परस्त्री को देखि जीव विकल होत है इत्यर्थ. ७ ॥

बंक हिये न प्रभा सरसीसी । कर्दम काम कछू परसीसी ॥ कामिनि काम कि डोरि असीसी । मीन मनुष्यन को बनसीसी ८ ॥

मनुष्यन के जे हिये हैं तिनकी जो प्रभा शोभा है सोई बंक कहे कुटिल अर्थ थाह रहित अथवा गहिर सरसी कहे तड़ागसी है अर्थ हृदय तड़ाग सम है औ काम अभिलाषरूपी जो कर्दम कीच है तासों कछु कहे कछु अर्थ थोरीहू परसी कहे युक्त है यासों या जनायो कि अधिक कामयुक्त की का कथा है ता सरसी में कामिनि कहे स्त्रीरूपी जो कामकंदर्प शिकारी की डोरी है सो असी है कहे लगी है ते स्त्री मीनरूपी जे मनुष्य हैं इहां मनुष्य पदसे मनुष्यनके जीव जानो तिनको कहे तिनके वश करिबे को बनसीसी

भूलत हैं कुलधर्म सबै तबहीं जबहीं बरु आनि ग्रसैजू। केशव वेद पुराणनको न सुनै समुझै न त्रसै न हँसैजू॥ देवनि ते नरदेवनिते नरते वरवानर ज्यों विलसैजू। यत्र न मत्र न मूरि गनै जग यौवन कामपिशाच बसैजू १० ज्ञान बिके तन त्राननिको कहि फूलके बाणनि बेधवकोतो। वाइ लगाइ विवेकनको बहुशोधक को कहि बाधक जोतो॥ औरको केशव लूटतो जन्म अनेकनके तपसानको यो तो। तौ मम लोक सबै जग जातो जो काम बड़ो बटपार न होतो ११॥

यामें यौवनकृत दुःख कहत हैं वेदपुराणनको प्रथम तौ सुनत नहीं औ सुनत हैं तौ समुझत नहीं औ समुझत हैं तौ त्रसत कहे डरत नहीं औ वेदवचनहींको निंदा करि हँसत हैं वानरसम विलसत कहि या जनायो कि पशुसम बुद्धि है जाति है १० यामें कामव्यवहारको पीड़ा कहत हैं साधक प्राणायामादि एतो कहे जहान पचीसयें प्रकाशमें यकतालिसयें दोहामों रामचन्द्र कह्यो है " मोहिं न हुतो जनाइवे सबहीं जान्यो आज " यासों या जानौ रामचन्द्र ईश्वरत्वको छिपाये रहे हैं औ यामें मम लोक सबै जगजातो या उक्तिसों ईश्वरत्व प्रकट होत है तहां कविको भ्रम जानब अथवा तौ ममलोक कहे ममताविशिष्ट जे लोक मर्त्यलोकादि हैं तिनसों सबै जग कहे सब जगत्के जीव आपने स्थानको ब्रह्मपदको इति शेषः जातो प्राप्त होतो ११॥

मकरंदविजयाछंद॥ कम्पै वरबानी डगै उर डीठि तुचाति-कुचै सकुचै मति बेली। नवै नवग्रीव थकै गति केशव बालक तें सँगही सँग खेली॥ लिये सब आधिन व्याधिन संग जरा जब आवै ज्वराकि सहेली। भागै सब देहदशा जिय साथ रहै दुरि दौरि दुराशा अकेली १२॥

यामें वृद्धताको व्यवहार कहत हैं पुत्रादिके कटुवचनादि सों जनित जो आधि कहे मानसीव्यथा औ व्याधि शरीरव्यथा ज्वरादि तिनके संगमें लिये ज्वरा जो मृत्यु है ताकी सहेली सखी जो जरा वृद्धता है सो जब

देहमें आवति है तब ताके उरसों वाणी कांपै लागति है अर्थ मुखसों व्यक्त वचन नहीं कढ़त औ डीठि डगै कहे टगमगाति है औ त्वचा कहे चर्म अति कुचै बहुत सिकुरि जाति है औ मति बुद्धिरूपी जो बेली लता है सो सकुचै कहे संकोचको प्राप्त होति है अर्थ बुद्धिहीन होति जाति है औ नव कहे नवीन प्रकार सों ग्रीवा नवै कहे नत होति है नवपद यासों कह्यो कि और जो कोऊ काहू को नवत है अर्थ प्रणाम करत है सो नयोई नहीं रहत ग्रीवा जबसों नवति है तबसों नईही रहति है उठतिही नहीं अथवा भयसों अनित्यको छोड़ि नत होति है औ जो जीवके संगही संगमें बालकही से खेली है सो गति गमन जीवकी सहाय छोड़ि जरा के भयसों थकि रहति है औ देहकी जो दशा कहे शुभ दशा है सुंदरतादि सो सब भागति है जियके साथमें दुरिकै केवल दुराशा कहे दुष्ट आशा रहि जाति है वृद्धता में इनकी सबको सुभावहीसों यह होति है तामें जरा के भयको तर्क है तासों असिद्धविषय हेतूत्प्रेक्षा है यह वस्तु हमको इते दिनमें मिलि है ऐसी जो बुद्धि है सो दुराशा कहावति है १२ ॥

विलोकि शिरोरुह श्वेत समेत तनोरुहके सबको गुण गायो । उठे किधौं आपुके औधिके अंकुर शूल कि शुष्क समूल नशायो ॥ जरे किधौं केशव व्याधिनकी किधौं आधि के आखर अंत न पायो । जरा शरपंजर जीव जस्यो कि जराजर कंबरसो पहिरायो १३ मनोहरविजयाछंद ॥ दिनही दिन बाढ़त जाइ हिये जरिजाइ समूल सो औषधि खैहै । किधौं याहिके साथ अनाथ ज्यों केशव आवत जात सदा दुख सैहै ॥ जग जाकी तु ज्योति जगै जड़ जीवन पाये तु तापहँ जानन पैहै । सुनि बालदशा गइ ज्वानी गई जरि- जैहै जराऊ दुराशा न जैहै १४ ॥

यामें प्रसंगवश वृद्धता को वर्णन है तनोरुह कहे तनके रोम तिन सहित शिरोरुह शिरके बारन को श्वेत विलोकिकै यामकार सों गुण गायो है कि आयुर्बल की अवधि मर्यादा जो आई है ताके अंकुर उठे हैं औ कि शूल नाम आयुध विशेष है शूलहू लगे शुष्क समूल कहे पूर्ण नाशको प्राप्त

होत है वृद्धताहू में तासों जानौ औ कि अनेक जे व्याधी शरीरव्यथा हैं तिनकी अनेक जरै हैं औ कि अनेक आधी जे मानसीव्यथा लिखी हैं तिनके आखर अक्षर हैं जिनको अंत नहीं पाइयत अर्थ बहुत हैं वृद्धता में अनेक आधि व्याधि होती हैं इति भावार्थः औ कि जरा जो बुढ़ाई है ताने शर बाण तिनके पंजर में जीव को जस्यो कहे डास्यो है औ कि जराजर कहे जरबाफी कंबर सो जीव को पहिरायो है १३ यामें जीव प्रति काहूको उपदेश है सो उपदेश कहि रामचन्द्र दुराशाकृत पीड़ा देखावत हैं जाकी कहे जा ब्रह्म की १४ ॥

दोहा ॥ जहां भामिनी भोग तहँ विन भामिनि कहँ भोग ॥ भामिनि छूटे जग छुटै जग छूटे सुखयोग १५ जोई जोई जो करै अहंकारके साथ ॥ स्नान दान तप होम जप निष्फल जानौ नाथ १६ तोटकछंद ॥ जियमांझ अहंपद जो दमिये। जिनहीं जिनहीं गुणश्री रमिये ॥ तिनहीं तिनहीं लखि लोभ डसै। पटतंतुनि उंदुर ज्यों तरसै १७ ॥

यामें स्त्रीव्यवहारकृत पीड़ा कहत हैं जहां भामिनि स्त्री है तहांई दुःखरूपी संसार को भोग है सो भामिनि जब छूटै तब संसार छूटै तबहीं सुख को योग है अर्थ दुःखमयी संसार को बंधन दुराशादि सम स्त्रीहू है १५ यामें अहंकार को व्यवहार कहत हैं अहंकार के साथ जो करिये सो निष्फल होत है १६ ताही अहंकार को जो काहू प्रकारसों दमिये दूरिये तो जिन जिन मिथ्याभावनादि गुणनसों श्री जो द्रव्य है तासों रमिये अर्थ द्रव्यको प्राप्त हूजियत है तिन तिन गुणनको देखिकै लोभ जो है सो जीव को डसत है काटत है अर्थ काहूको अनुत्तम कर्मसों द्रव्य पावत देखि लोभ जीवको प्रेरत है कि यहै कर्म करौ जामें द्रव्यलाभ होइ अहंकारहीन प्राणी योग्यायोग्य को विचार नहीं करत जा प्रकार द्रव्य मिलै सोई ऊंच नीच कर्म करत है इति भावार्थः लोभ कैसे डसत है जैसे पट वस्त्रके तंतु कहे सूत्रन को उंदुर कहे मूषक तरसै कहे काटत है आशय कि जैसे मूषक पटतंतुन को वृथा काटत है कछू ताको काम नहीं है तैसे लोभ वृथा जीव को सतावत है १७ ॥

विजयछंद ॥ दान सयाननिके कलपद्रुम टूटत ज्यों ऋण ईशके मांगे । सूखत सागरसे सुख केशव ज्यों दुख श्रीहरि के अनुरागे ॥ पुण्य बिलात पहारनसे पल ज्यों अघ राघव की निशि जागे । ज्यों द्विजदोषते संतति नाशति त्यों गुण भाजत लोभके आगे १८ ॥

सो लोभ कैसो है ताको व्यवहार कहत हैं जैसे ईश महादेव हैं तिनके मांगे ते ऋण टूटि जात है अर्थ जब महादेव सों मांगौ तब महादेव एती द्रव्य देते हैं जामें केतेऊ बड़ो ऋण होइ सो दूरि होत है तैसे ता लोभ के आगे दान औ सयानन के जे कल्पद्रुम कल्पतरु हैं ते टूटि जात हैं अर्थ लोभसों दानको अभिलाष नशिजात है औ उचितानुचित करिबे में जो सयान चातुरी है सो नहीं रहति औ जैसे श्रीहरि जे विष्णु हैं तिनके अनुरागे सों भक्ति किये सों सागर ऐसे संसार दुःख सूखत हैं तैसे ता लोभ के आगे जो जीवके सागर से सुख सो सूखि जात हैं अर्थ लोभवश इत उत प्राणी धायो धायो फिरत है धन पुत्र कलत्रादिको सुख नहीं करन पावत औ जैसे राघवकी निशि कहे राघवसंबंधी व्रत दिन रामनवमी आदिकी निशि में पलहू भरि जागेते अघ पाप बिलात हैं तैसे लोभ के आगे पहारन से बड़े बड़े पुण्य बिलात हैं अर्थ लोभसों ऐसे ब्रह्मद्रव्यहरणादि पातक प्राणी करत हैं जासों केतेऊ बड़े पुण्य होइँ तौ नाशि जात हैं यामें केशव को रामोक्ति में अपनी उक्ति को भ्रम है औ जैसे ब्रह्मदोष ते संतति जो वंश है सो नाशि जात है तैसे लोभके आगे अनेक गुण भागत हैं अर्थ अनेक गुणको त्याग करि प्राणी लोभवश जन जनसों दीन होत हैं " गुणशतमप्यर्थिता हरति इति प्रमाणात् " १८ ॥

दान दया शुभशील सखा विभुकै गुण भिक्षुक को बिभुकावैं । साधु सुधी सुरभी सब केशव भाजि गईं भ्रम भूरि भजावैं ॥ सज्जनसंग बछेरू डरैं बिडरैं वृषभादि प्रवेश न पावैं । बार बड़े अघबाघ बँधे उरमंदिर बालगोविंद न आवैं १९ ॥

यामें पापको व्यवहार कहत हैं उररूपी जो मंदिर घर है ताके बार कहे द्वारमें बड़े अघ पापरूपी अनेक बाघ बँधे हैं तासों उर में जीव को

परमसुखद राहगोविंद जे भगवान् हैं ते नहीं आवत युक्ति यह कि द्वारपै बाघ बँध्यो देखि बालक घरमें कैसे आइसकैं कैसे हैं अववाघ कि दान औ दया औ शील ये जे जीवके सखा कहे हित हैं तिनको बिभ्रुकै कहे डेरवाइकै आवन नहीं देत औ शूरतादि जे अनेक गुणरूपी भिक्षुक हैं तिनको बिभुकावैं क्रोधित करि देते हैं अर्थ ऐसे डेरावत हैं जासों गुणहूं क्रुद्ध है फिरि जात हैं औ सुष्ठु जे धी बुद्धि हैं अर्थ पुण्यमार्गमें प्रवृत्त जे बुद्धी हैं तेई साधु सुरभी गौवैं हैं ते सब भाजिगईं काहे ते भूरि कहे बड़ो भ्रम देखाइकै भजाइ देते हैं औ सज्जनन के सत्संगरूपी जे बछेरू हैं तेऊ जिनको डरत हैं डरिकै डर मंदिर २ में नहीं आवत औ वृषभपद श्लेष है बैल औ धर्मसों जैसे बाघ को देखिकै बैल बिडरैं कहे भागि जात हैं तैसे अघबाघनको देखि धर्मादि भागत हैं पापके संयोग ते जीवके हितसाधक जे दान दयादि हैं ते सब नशिजात हैं इति भावार्थः १६ ॥

दोहा ॥ आंखिन अक्षत आंधरो जीव करै बहुभांति ॥ धीरन धीरज बिन करै तृष्णा कृष्णा राति २० तृष्णा कृष्णा षटपदी हृदयकमलमों वास ॥ मत्तदंतिगलगंड युग नर्क अनर्क विलास २१ ॥

तीनि छंदनमें तृष्णाको व्यवहार कहत हैं तृष्णारूपी जो कृष्णा राति कहे कृष्णपक्षकी राति है सो आंखिन अक्षत कहे आंख तो है पर जीवको आंधरो करति है अर्थ तृष्णायुक्त प्राणी को आंखिनसों आपनो अपमानादि नहीं देखि परत औ कृष्णा रातिहू में अंधकार में घटपटादि वस्तु आंखिन सों नहीं देखिपरत औ धीरनको धीर विना करिदेति है अर्थ कहूं कछु पाइबो होइ तौ तृष्णायुक्त प्राणी कैसोऊ धीर होइ तौ धीर छोंड़ि धावत है औ रातिमें अंधकारमें चौरादि भय सों बड़े धीरऊ धीर बिन है जात हैं २० कृष्णा कहे श्याम जो तृष्णारूपी षट्पदी भ्रमरी है ताको हृदयरूपी कमलमें वास है ता तृष्णाको नरक औ अनरक कहे स्वर्ग को विलास दुवौ मत्तदंती के गल कहे गलत अर्थ मदसों चुवत दुवौ गंडस्थल हैं अर्थ जैसे भ्रमरी कमलमों बसति है औ गजन के गंडस्थलन प्रति धायो करति है तैसे तृष्णा नरकभोग स्वर्गभोगप्रति धायो करति है सो उपाउ जीव को नहीं करन देति जासों जीव मुक्त होइ २१ ॥

विजयाछंद ॥ कौन गने यहि लोकतरी न विलोकि विलोकि जहाजन बोरै । लाजविशाल लता लपटी तनधीरज सत्यतमालनि तोरै ॥ वंचकता अपमान अयान अलाभ भुजंग भयानक कृष्णा । पाटु बड़ो कहुं घाटु न केशव क्यों तरिजाइ तरंगिनि तृष्णा २२ ॥

फेरि कैसी है तृष्णा सो कहत कि ऐसी तृष्णारूपी जो तरंगिणी नदी है सो कौनी तरहसे जीवसों तरि कहे उतरि जाइ कैसी है तृष्णा नदी कि यहि लोक कहे मृत्युलोककी जे तरी कहे नौका हैं तिन्हैं कौन गनै अर्थ तिनको तो बोरिही देति है "स्त्रियां नौस्तरणिस्तरिरित्यमरः" इहां तरी पदते मनुष्यदेह जानो अर्थ मनुष्यदेह को प्राप्त ह्वैकै तौ जीव तृष्णाको पार पावतही नहीं है मनुष्यदेह में तृष्णा कैसेहू नहीं मिटति इत्यर्थः विलोकि विलोकि कहे ढूँढ़ि ढूँढ़ि जहाजको बोराति है यहां जहाज पदते देवशरीर जानो अर्थ देवताहू तृष्णाको पार नहीं पावत अथवा लोकतरी पद ते लोकव्यवहारयुक्त मनुष्यदेह जानौ औ जहाजपदते संसारको त्याग किये जे योगीजन हैं तिनके शरीर जानो अर्थ योगीजन तृष्णा को पार नहीं पावत संसारविशिष्ट प्राणिनकी कहां गिनती है औ लाजरूपी जो विशाल लता है सो लपटी है तनमें जिनके ऐसे धीर औ सत्यरूपी तमाल वृक्ष हैं तिन्हैं अति वेगसों तोरै कहे उखारि डारति है नदीहू कूलके वृक्ष उखारि डारति है इहां तमालपद उपलक्षण है तासों वृक्षमात्र जानो अर्थ तृष्णा सों लाज औ सत्य प्राणी को दूर ह्वैजात है औ वञ्चकता कहे छल औ अपमान औ अयान अज्ञानता औ अलंभ कहे याचित वस्तुकी अप्राप्तिरूपी जे भुजंग सर्प हैं तिनकरिकै अतिभयानक है नदीहू में सर्प रहत हैं अर्थ वंचकतादि जे चारों हैं तिनसों युक्त सदा तृष्णा रहति है औ कृष्णा कहे श्यामरूपा है औ जाको पाटु बड़ो है अंत नहीं पाइयत औ दुहूं कूलमें कहूं घाट नहीं है जहां विश्रामहूं पावैं २२ ॥

पैरत पाय पयोनिधि में मन मूढ़ मनोज जहाज चढ़ोई । पेलतऊ न तजै जड़ जीव जऊ बड़वानल क्रोध डढ़ोई ॥ झूठतरंगिनि में उरझै सुझते पर लोभप्रवाह बढ़ोई । बूड़त

है तेहिते उबरै कहि केशव काहे न पाठ पढ़ोई २३ ॥

यामें जीव प्रति काहूकी शिक्षा है सो प्रसंग पाइ रामचन्द्र कहत हैं हे मन मूढ़ ! जड़जीव तू मनोज कंदर्परूपी जो जहाज है तामें चढ़यो पापरूपी पयोनिधि समुद्र में पैरत है अर्थ कामवश परस्त्रीगमनादि पाप करत फिरत है तहां अनेक अपमानादि ते उत्पन्न जो क्रोधरूपी बड़वानल है तामें जऊ कहे यद्यपि डढ़ोई कहे जरिहू गयो है तऊ कहे ताहूपर मनोजजहाज में चढ़ि काम समुद्र में पैरिबो यह जो खेल है ताको तू नहीं तजतो एतेहू पर लोभ रूप प्रवाह बढ़यो है जामें ऐसी जो झूठरूपी तरंगिणी नदी पापसमुद्र में मिली है तामें उरझत है अड़ि जात है अर्थ लोभवश अनेक झुठाई करत फिरत सो या प्रकार है या समुद्रमें तुम बूड़त हौ सो जासों उबरै कहे निकरै सो केशव यह जो पाठ है ताको आजु तक काहे न पढ़यो अर्थ भगवान् को न कहे न जप्यो अबहूं भगवान् को नाम जपिबो तोको उचित है इति भावार्थः ॥ केशव पदके कहिबे को आशय यह कि " के जले शेते इति केशवः" अर्थ वे समुद्र के जलही में सोयो करत हैं तासों समुद्र सों उबारिबो उनको सहज है और नामके जपहू सों या समुद्र सों न काढ़ि है इति भावार्थः २३ ॥

दोहा ॥ जो केहूं सुखभावना काहूको जग होति ॥ काल आयु पटतंतु ज्यों तबहीं काटत जोति २४ ब्रह्मविष्णु शिव आदि दै जितने दृश्य शरीर ॥ नाश हेतु धावत सबै ज्यों बड़वानल नीर २५ ॥

यामें समय के व्यवहार कहत हैं जो केहूं कहे कौनेहूँ प्रकार सों सुखभावना कहे मोक्षकी वासना जगमें काहू प्राणी के होति है तो काल कहे समयरूपी जो आयु मूषक है सो ता भावना की जोति कहे डोरि अथवा अंकुर को पटवस्त्र के तंतु सूत्रसम तबहीं कहे ताहीसमय काटि देत है अर्थ समय मति फेरि देति है जासों सुखभावना दूरि ह्वैजाति है २४ देहव्यवहार कहि अब यामें मृत्युकृत पीड़ा कहत हैं ब्रह्मा औ विष्णु औ शिव आदिक जितने दृश्य शरीर हैं ते अनेक यज्ञादि कर्म करि उत्पत्ति पालन संहार करनादि प्रभुत्व पाइ पुनि पुनि या संसार में नाशही के हेतु धावत हैं कहे प्राप्त होत हैं अर्थ या संसार में इनको सबको नाश होत है मृत्युकृत पीड़ा

को य सब प्राप्त होत हैं इति भावार्थः कैसे धावत हैं जैसे बड़वानल में समुद्र को नीर जल नाश के हेतु धावत है। यथा योगवाशिष्ठे "ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च सर्वे ये भूतजातयः। मृत्युर्नश्यति भूपाल सलिलानीव वाडवः"॥२५॥

सुन्दरीछंद॥ दोषमयी जो दवारि लगी अति। देखत ही त्यहिते जो जरी मति॥ भोगकी आश न गूढ़ उजागर। ज्यों रजसागर में मुनि नागर २६ विजयाछंद॥ माछी कहै अपनो घर माछरु मूसो कहै अपनो घर ऐसो। कोने घुसी कहै घूसि घरौरा बिलारि औ व्याल बिलेमहँ वैसो॥ कीटक श्वानगो पाक्षि औ भिक्षुक भूत कहै अमिजासह जैसो। हौं हूं कहौं अपना घर तैस्यहि ताघरसों अपनो घर कैसो २७॥

हे मुनिनागर! या संसार में दोषमयी कहे दूषण अपवाद इति तत्स्वरूप जो दवारि डाढ़ा है अथवा दोषमयी कहे दूपणाधिक्यरूपी जो दवारि है सो अति लगी है अति कहि या जनायो कि सब संसार भरे में लगी है ऐसो स्थान या संसार में कोऊ नहीं है कि जहां प्राणीको दोष न लगै अथवा जहां कोऊ को दोष न लगावै अर्थ या संसार में वृथा सब सबको दोष लगावत है अथवा दोष कहे परस्पर विरोधमयी जो दवारि लगी है ताको देखतही तासों हमारी मति जरि गई है दवारि के छुये सों जरियत है याके देखत ही जरी कहे अतितेज जनायो तामतिमें या संसार में राज्यादि भोग की आश कहे इच्छा न गूढ़ कहे अंतर में है न उजागर कहे प्रसिद्ध है जैसे सागर समुद्र में रज धूरि गूढ़ उजागर नहीं है जा स्थान में जो जीव दवारि में जरत है ता स्थानमें ताके भोगकी इच्छा नहीं होति यह रीति ही है २६ जैसे ये सब अपनो अपनो घर कहत हैं तैसे ता घरसों कहे ताही घरको हौं हूं अपना कहौं सो घर अपनो कैसो कहे कौन विधि है या संसार में कछू काहू को नहीं है वृथा ममत्व है इति भावार्थः २७॥

सुंदरीछंद॥ जैसहि हौं अब तैसहि हौं जग। आपद संपदके न चलौं मग॥ एकहि देह तियाग विना सुनि। हौं न कछू अभिलाष करौं मुनि २८ जो कछु जीव उधारणको

मत। जानत हौं तो कहौं तनु है रत ॥ यों कहि मौन गही जगनायक। केशवदास मनो वच कायक २९ चामर छंद ॥ साधु साधुकै सभा अशेष हर्ष हर्षियो। दीह देवलोकते प्रसूनवृष्टि वर्षियो ॥ देखि देखि राजलोक मोहियो महाप्रभा। आइयो तहां तुरंत देवकी सबै सभा ३० ॥

राज्यादि जे आपद् विपत्ति औ संपद् संपत्तिके मग यह हैं तिनमें हौं न चलिहौं हे मुनि! एक देहत्याग विना और कछू अभिलाष नहीं करतो अर्थ केवल देहत्याग करिबेही की इच्छा है २८ रत कहे अनुरक्त २९ देवकी सबै सभा आइयो कहे आवत भई सो राजलोक कहे राजभवनकी प्रभा देखि मोहियो कहे मोहित भई ३० ॥

विश्वामित्र ॥ व्यासपुत्रके समान शुद्धबुद्धि जानिये। ईशको अशेष तत्त्व तत्त्वसो वखानिये ॥ इष्ट हौ वशिष्ट शिष्ट नित्य वस्तु शोधिये। देवदेव रामदेवको प्रबोध बोधिये ३१ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां जगन्निन्दावर्णनन्नाम चतुर्विंशतितमः प्रकाशः ॥ २४ ॥

विश्वामित्र वशिष्ठ सों कहत हैं कि हम तुमको व्यासपुत्र जे शुकाचार्य हैं तिनके समान शुद्धबुद्धि कहे ज्ञानयुक्त है बुद्धि जिनकी ऐसे जानियत है अर्थ अतिज्ञानी हौ औ ईश जे ईश्वर हैं तिनको जो अशेष कहे संपूर्ण तत्त्व कहे स्वरूप है ताको तत्त्व कहे सिद्धान्त सो अर्थ निश्चयात्मक बखानि एक हेतु कहत हौं "तत्त्वस्वरूपे परमात्मनीति मेदिनी" हे शिष्ट कहे श्रेष्ठ वशिष्ठ तुम इष्ट कहे रघुवंश के गुरु हौ औ नित्य जो वस्तु है ताको शोधिये कहे ढूंढ़ो करत हौ सो सब विधिसों तुमको उचित है तासों देवके देव जे रामदेव हैं तिनको प्रबोध जो ज्ञान है तासों बोधिये कहे बोध करौ अर्थ जीवोद्धारको मत रामचन्द्र पूंछत हैं सो कहौ ३१ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायां चतुर्विंशतितमः प्रकाशः ॥ २४ ॥

दोहा ॥ कथा पचीस प्रकाश में ऋषिवशिष्ठ सुख पाइ ॥ जीवउधारण रीति सब रामहिं कह्यो सुनाइ १ वशिष्ठ-पद्धटिका छंद ॥ तुम आदि मध्य अवसान एक। अरु जीव जन्म समुझो अनेक ॥ तुमहीं जो रची रचना विचारि। त्यहि कान भांति समुझौं मुरारि २ सब जाति बूझियत मोहिं राम। सुनिये जो कहौं जग ब्रह्मनाम ॥ तिनके अशेष प्रतिबिंब-जाल। त्यइजीव जानि जगमें कृपाल ३ निशिपालिकाछंद ॥ लोभ मद मोह वश काम जबहीं भये। भूलि गये रूप निज वेधि तिनसों गये ॥ राम ॥ बूझियत बात यह कौन विधि उद्धरै। वशिष्ठ ॥ वेदविधि शोधि बुध यत्न बहुधा करै ४ राम-दोहा ॥ जित लैजैहै वासना तित तित ह्वैहै लीन ॥ यत्न कहौ कैसे करै जीव बापुरो दीन ५ वशिष्ठ-दोधकछंद ॥ जीवनकी युग भांति दुराशा। होति शुभाशुभ रूप प्रकाशा ॥ यत्नसों शुभपंथ लगावै। तौ अपनौ तबहीं पद पावै ६ ॥

१ जीवन के जे अनेक जन्म हैं तिनको समुझौं कहे जानत हौं अथवा अनेक जे जीव हैं तिनके जन्मको अर्थ जा प्रकार सों जीवन की उत्पत्ति है ताको समुझौ कहे मोसों बूझत हौ २ सब वस्तु जानिहू कै जो हमसों बूझियत कहे पूंछत हौ तौ सुनौ हम कहियत है जगमें जो ब्रह्मनाम कह्यो है अर्थ जिनको ब्रह्मनाम है तिनके जे प्रतिबिंब जो प्रतिबिंबसमूह हैं तेई जीव हैं यह मत प्रतिबिंबवादिन को वेदांतमें प्रसिद्ध है ३ अपनो जो रूप ब्रह्म है ताको भूलि गये तिनसों लाभादिसों ४ वासना दुराशा ५ शुभ दुराशा जो ईश्वरपूजनादिकी आशा है ताके पंथ में जीवको अथवा मनको लगावै तो अपनो जो पद स्थान है ब्रह्मस्थान ताको पावै अर्थ शुभ वासनाको ग्रहण करै ताके बादि ताहू वासना को त्याग करि ब्रह्मपद को प्राप्त होय ६ ॥

हौं मनते निधिपुत्र उपायो। जीवउधारण मंत्र बतायो ॥ है परिपूरण ज्योति तिहारी। जाइ कही न सुनी न निहारी ७

दोहा ॥ ताकी इच्छाते भये नारायण मतिनिष्ठ ॥ तिनते चतुरानन भये तिनते जगत प्रतिष्ठ ८ दोधकछंद ॥ जीव सबै अवलोकि दुखारे । आपने चित्त प्रयोग विचारे ॥ मोहिं सुनाये तुम्हैं ते सुनाऊं । जीवउधारण गीत गुनाऊं ९ दोहा ॥ मुक्तिपुरी दरबारके चारि चतुर प्रतिहार ॥ साधुनको सतसंग सम अरु संतोष विचार १० यह जग चक्रव्यूह किय कज्जलकलित अगाधु ॥ तामहँ पैठि जो नीकसै अकलंकित सो साधु ११ ॥

ज्योति ब्रह्मज्योति ७ । ८ तिन चतुरानन जगत् के जीवन को संसार में दुखारे देखिकै आपने चित्त में तिन जीवन के उद्धार को प्रयोग कहे यत्न विचारयो सो सब हमको सुनायो है सो तुमको सुनाइयत है ९ । १० यामें साधुको लक्षण कहत हैं जैसे कज्जलकलित चक्रव्यूह में शपथार्थ पैठिकै अकलंकित कहे कज्जलचिह्नरहित निकसे सो साधु कहे दोषरहित होत है तैसे कज्जलसम दोषयुक्त जो संसार है तामें पैठि अकलंकित कहे अदोष निकसै सो प्राणी साधु है ११ ॥

दोधकछंद ॥ देखतहूं एक काल छियेहूं । बात कहै सुनै भोग कियेहूं ॥ सोवत जागत नेक न क्षोभै । सो समता सब ही महँ शोभै १२ जो अभिलाष न काहूको आवै । आये गये सुख दुःख न पावै ॥ लै परमानँदसों मन लावै । सो सब मांझ संतोष कहावै १३ आयो कहां अब हौं कहि कोहौं । ज्यों अपनो पद पाऊं सो टोहौं ॥ बंधु अबंधु हिये महँ जानै । ताकहँ लोग विचार बखानै १४ ॥

यामें समता को लक्षण कहत हैं संसार को जो स्रक् चंदन वनितादि विषय भोग है ताको देखतहूं औ छुयेहूं औ ताही की बात कहै औ सुनै औ भोगहू करै परंतु सोवत औ जागत नेकहू तामें क्षोभै नहीं अर्थ लीन न होय औ सबही में कहे अग्निजलादि में समता शोभै सोई समता है १२

यामें संतोष को लक्षण कहत हैं जो काहू वस्तु की अभिलाप जीमें न आवै औ काहू वस्तु के आये सों प्राप्त भये सों सुख न पावै औ गये सों दुःख न पावै औ मनको लैकै परमानंद जो ब्रह्म है तामें लगावै सोई सत्र माँझ कहे चारों के मध्यमें संतोष कहावत है १३ यामें विचार को लक्षण कहत हैं मैं कौन हौं औ कहां आयो हौं अब जा उपाय सों अपने पद स्थान को पाऊं सो टोहौं कहे ढूंढ़ौं या प्रकार सों विचार करै औ बंधु कहे हित शमदमादि अबंधु कहे अहित काम क्रोधादि को हिये में जानै सोई विचार है १४ ॥

चारिमें एकहु जो अपनावै । तौ तुमपै प्रभु आवन पावै ॥ राम ॥ ज्योति निरीह निरंजन मानी । तामहँ क्यों ऋषि इच्छ बखानी १५ वशिष्ठ—दोहा ॥ सकल शक्ति अनुमानिये अद्भुत ज्योति प्रकाश ॥ जाते जगकी होत है उत्पति थिति अरु नाश १६ श्रीराम—दोधकछंद ॥ जीव बँधे सब आपनी माया । कीन्हें कुकर्म मनो वच काया ॥ जीवन चित्तप्रबोध न आनो ॥ जीवनमुक्तके भेद बखानो १७ ॥

जैसे चोवदारको अपनाइकै राजा के पास सब जात हैं तैसे इन चारि में एकहूको अपनावै तौ तुमपै ज्ञान पावै फेरि राम ऋषिसों पूंछ्यो कि ज्योति को तौ निरीह कहे इच्छारहित औ निरंजन कहे रागरहित मान्यो औ कह्यो कि "ताकी इच्छा ते भये नारायण मतिनिष्ठ" तौ ज्योतिमें इच्छा क्यों कही सो कहौ १५ वशिष्ठ कह्यो कि अद्भुत जो ज्योतिको प्रकाश है तामें इच्छादिक हैं तौ नहीं परंतु इच्छादिकनकी सबकी शक्ति अनुमानियत है जा शक्ति सों संसारकी उत्पत्ति स्थिति नाश होत है १६ जीव जे हैं ते आपनी मायामें बँधे मनसा वाचा कर्मणा कुकर्म कुत्सित कर्म कीन्हे हैं तिन जीवन को जो प्रबोधन कहे ज्ञान तुम कह्यो सो हम चित्तमें आन्यो अर्थ न्यास जान्यो इति अब जीवन्मुक्त के भेद कहौ १७ ॥

वशिष्ठ ॥ बाहरहूं अतिशुद्ध हियेहू । जाहि न लागत कर्म कियेहू ॥ बाहर मूढ़सों अन्त सयानो । ताकहँ जीवन्मुक्त बखानो १८ दोहा ॥ आपुनसों अवलोकिये सबही युक्ता-

सकति औ तिहि प्राणी के क्षणमें संसाररूपी दुःख क्षीण होत हैं औ मुक्तिरूपी जो अमित आनंद है सो उदोत प्रकाश करत है २२ अंगुष्ठ ते तृतीय अंगुली को नाम अनामिका है तासों नासाको वामरंध्र अंगुष्ठ सों रोंकि वामरंध्र सों वायु को छोड़िये सो पूरक प्राणायाम है औ दक्षिण रंध्र अंगुष्ठ सों औ वामरंध्र अंगुष्ठ सों औ वामरंध्र अनामिका सों साथही रोंकि वायु को हृदय में स्थापन करिये सो कुंभक है । यथा वायुपुराणे "प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्तो रेचकः पूरकस्तथा । कुंभको रेचकस्तत्र नासारन्ध्राच्च दक्षिणात् ॥ निरुध्य वामरन्ध्रश्चानामिकायविसर्जनम् । निरुध्य दक्षिणं रन्ध्रं वामरन्ध्राच्च पूरणम् ॥ तथैवानामिकाङ्गुल्या पूरणन्तु तदुच्यते । रेचकात्पूरणात्पश्चाद् द्वे पुटे नासयोस्तथा ॥ संनिरुध्य हृदि स्थाप्य वायुन्तिष्ठेत् स कुम्भकः" २३ । २४ ॥

वशिष्ठ–तारकछंद ॥ हम एक समय निकसे तपसा को । तब जाइ भजे हिमवंत रसाको ॥ बहुभांति कस्यो तप क्यों कहि आवै । शितिकंठ प्रसन्न भये जग गावै २५ दंडकछंद ॥ ऊजरे उदार उर वासुकी विराजमान हारकेसमान आन उपमा न टोहिये । शोभिजै जटान बीच गंगाजू के जलबुंद कुंदकीसी कली केशौदास मन मोहिये ॥ नख कीसी रेखा चन्द्र चन्दन सी चारु रज अंजन शृँगारहू गरल रुचि रोहिये । सब सुख सिद्धि शिवा सोहै शिवजूके साथ जावकसो पावक लिलार लाग्यो सोहिये २६ ॥

रसा पृथ्वी जग गावै अर्थ जिनको जगत् के प्राणी गान करत हैं २५ ऊजरे औ उदार कहे बड़े उरमें हार मालाके समान वासुकी नाम सर्प विराजमान है और उपमा को नहीं टोहिये कहे ढूंढ़ियत अर्थ और उपमा के सदृश नहीं हैं तासों खोज नहीं करियत रज कहे विभूति अंजन जो शृंगार है ताकी रुचि गरल जो विष है ता करिकै रोहिये कहे धारण करियत है अर्थ लागि गयो पार्वती के नेत्रांजन सम गरल शोभित है सब सुख की सिद्धि शिवा जो पार्वतीजी हैं ते संग में शोभती हैं औ जावक कहे

महाउरसम खिलार में लाग्यो पावक अग्नि शोभित है ऐसे सदा सुरत-चिह्नयुक्त प्रसन्न है हमारे समीप आये इति शेषः २६ ॥

महादेव–तारकछंद ॥ वर मांगि कछू ऋषिराज सयाने। बहुभांति चले तपपंथ पयाने ॥ वशिष्ठ ॥ पुरवो परमेश्वर मो मन इच्छा। सिखवो प्रभु देव प्रपूजन शिक्षा २७ शिव–दोहा ॥ राम रमापति देव नहिं रंग न रूप न भेव ॥ देव कहत ऋषि कौन को सिखऊं जाकी सेव २८ वशिष्ठ–तोमर छंद ॥ हम कहा जानहिं अज्ञ। तुम सर्वदा सर्वज्ञ ॥ अब देव देहु बताइ। पूजा कहौ समुझाइ २९ शिव ॥ सतचितप्रकाश प्रभेव। तेहि वेद मानत देव ॥ तेहि पूजि ऋषि रुचि मंडि। सब प्राकृतनको छंडि ३० पूजा यहै उर आनु। निर्व्याज धरिये ध्यानु ॥ यों पूजि घटिका एक। मनु कियो यज्ञ अनेक ३१ ॥

चले तपपंथ में अर्थ उचित तपपंथ में तुम बहुभांति पयाने कहे गमन कर्यो है अर्थ बड़ो तप कर्यो है २७। २८। २९ सत् कहे सत्यरूप चित् कहे चैतन्यरूप जो प्रकाश कहे ज्योति जो रामचन्द्रको प्रभेव कहे भेद है अर्थ रूपांतर है ताको वेद देव मानत हैं प्राकृत कहे लघु गणेशादि ३० निर्व्याज कहे निष्कपट ध्यानको धरिये यहै ता देवकी पूजा है अर्थ ताकी पूजा केवल ध्यान ही है और नहीं है ३१ ॥

जिय जान यहई योग। सब धर्म कर्म प्रयोग ॥ सब रूप पूजि प्रकास। तब भये हमसे दास ॥ यह वचन करि परमान। प्रभु भये अन्तर्धान ३२ दोहा ॥ यह पूजा अद्भुत अगिनि सुनि प्रभु त्रिभुवननाथ ॥ सबै शुभाशुभ वासना मैं जारी निजहाथ ३३ झूलनाछंद ॥ यहि भांति पूजा पूजि जीव जो भक्त परम कहाइ। भवभक्तिरसभागीरथीमहँ देहि डु-

बनि वहाइ ॥ पुनि महाकर्ता महात्यागी महाभोगी होइ। अति शुद्ध भाव रमै रमापति पूजिहैं सब कोइ ३४ दोहा ॥ राग द्वेष विन कैसहू धर्माधर्म जो होइ ॥ हर्ष शोक उपजै न मन कर्ता महासो लोइ ३५ ॥

धर्म के जे दानादि कर्म हैं तिनको प्रयोग कहे यत्न सब प्राणी प्रकाश जो रूप है ज्योतिरूप ताको पूजिकै हमारे सम दास भये हैं परिमाण कहे निश्चय ३२। ३३ जो जीव या प्रकारसों पूजा पूजिकै परमभक्त कहायकै भव जो संसार हैं ताके दुःखनको भक्तिरसकी जो भागीरथी गंगा हैं तामें बहाइ देइ अर्थ दूरि करै फेरि महाकर्ता औ महात्यागी औ महाभोगी होइ औ शुद्धभाव सों रमापति में ईश्वर में रमै कहे प्राप्तहोइ औ ताको सबकोऊ पूजन करि हैं ३४ महाकर्तादिकन के तीनिहूं के लक्षण क्रमसों कहत हैं जाके राग कहे प्रीति विना जीवरक्षणादि कछू धर्म अकस्मात् हैजाइ ताको हर्ष कहे सुख न होइ औ द्वेष कहे विरोध विना जीवहिंसादि अधर्म होइ ताको शोक दुःख न होइ सो प्राणी महाकर्ता है ३५ ॥

भोज अभोजनरत विरत नीरस सरस समान ॥ भोग होइ अभिलाष बिन महाभोग ता मान ३६ जो कछु आंखिन देखिये वाणी बरण्यो जाहि ॥ महातियागी जानिये झूठौ जानौ ताहि ३७ तोमरछंद ॥ जिय ज्ञान बहुब्योहार। अरु योग भोग विचार ॥ यहि भांति होइ जो राम। मिलि हैं सो तेरे धाम ३८ सवैया ॥ निशि वासर वस्तु विचार करै मुख सांच हिये करुणा धनु है। अघनिग्रह संग्रह धर्म कथा न परिग्रह साधुनको गनु है ॥ कहि केशव योग जगै हिय भीतर बाहर भोजनसों तनु है। मनु हाथ सदा जिनके तिनको वनही घर है घरही वनु है ३९ ॥

भोज कहे भक्ष्य औ अभोज कहे अभक्ष्य पदार्थ में रक्त अनुरक्त औ विरत विरक्त न होइ अर्थ भोज्य अभोज्य को समान भक्षण करै औ नि-

रस कहे स्वादरहित सरस स्वादयुक्त वस्तु जाको समान होइँ औ भोग जाको अभिलाष विना होइ सो महाभोक्ता है ३६ । ३७ जाके जियमें ज्ञान को बहुत प्रकार को व्यवहार है औ योग औ भोग को बहु विचार है ऐसो जब होइ तब तुम्हारो जो धाम तेज है ज्योतिरूप ताको मिलि है अथवा धाम कहे घर वैकुंठ ताको मिलि है प्राप्त हैहै ३८ वस्तुविचार कहे ब्रह्मविचार अथवा सत् असद्वस्तु को विचार निग्रह ताड़न परिग्रह कहे परिजन निकटवासी इति " परिग्रहः परिजने इति मेदनी " ३९ ॥

दोहा ॥ लेइ जो कहिये साधु अनलीन्हें कहिये वाम ॥ सबको साधन एक जग राम तिहारो नाम ४० राम ॥ मोहिं न हुतो जनाइबो सबही जान्यो आजु ॥ अब जो कहौ सो करे बनै कहे तुम्हारे काजु ४१ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां जीवोद्धारवर्णनन्नाम पञ्चविंशः प्रकाशः ॥ २५ ॥

वाम कहे कुटिल साधन कहे उपाय अर्थ मुक्तिको उपाय केवल तुम्हारे नाम को जप है ४० जो अपनो ईश्वरत्व मोहिं काहूको जनाइबोई नहीं रह्यो सो सबही जान्यो तासों जो कहौ सो अब करिये अर्थ राज्य लीवे को कहत हौ सो लेहैं ४१ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां पञ्चविंशः प्रकाशः ॥ २५ ॥

दोहा ॥ कथा छवीस प्रकाशमें कह्यो वशिष्ठ विवेक ॥ राम नामको तत्त्व अरु रघुवर को अभिषेक १ मोटनक छंद ॥ बोले ऋषिराज भरत्थ तबै । कीजै अभिषेक प्रयोग सबै ॥ शत्रुघ्न कह्यो चुप ह्वै न रहौ । श्रीरामके नामको तत्त्व गहौ २ ॥

१ जब रामचन्द्र राज्य अंगीकार कस्यो तब ऋषिराज वशिष्ठ सों भरत

बोले प्रयोग यत्र शत्रुघ्न भरतसों कह्यो कि चुप क्यों नहीं है रहते अर्थ राज्याभिषेक तौ रामचन्द्र अंगीकार करयो है तौ हैहैई जो ऋषिराज कह्यो है कि "सबको साधन एक जग राम तिहारो नाम" ता रामनाम को तत्त्व ऋषिसों गहौ अर्थ सुनिकै धारण करौ २ ॥

राम ॥ श्रद्धा बहुधा उर आनि भई । ब्रह्मा सुतसों बिनती बिनई ॥ श्रीरामको नाम कहौ रुचिकै । मतिमान महा मनकों शुचिकै ३ वशिष्ठ–स्वागताछंद ॥ चित्तमांझ जब आनि अरूझी । बात तात कहँ मैं यह बूझी ॥ योग याग करि जाहि न आवै । स्नान दान विधि मर्म न पावै ॥ है अशक्त सब भांति बिचारो । कौन भांति प्रभु ताहि उधारो ४ ॥

शत्रुघ्न के उर में बड़ी श्रद्धा भई ३ अरूझी अर्थ संदेह भई तात ब्रह्मा मर्म सिद्धांत ४ ॥

ब्रह्मा–भुजंगप्रयातछंद ॥ जहीं सच्चिदानंदरूपै धरैंगे । सुत्रैलोक्यको ताप तीनों हरैंगे ॥ कहैगो सबै नाम श्रीराम ताको । सदा सिद्ध है शुद्ध उच्चार जाको ५ कहै नाम आधो सो आधो नशावै । कहै नाम पूरो सो वैकुंठ पावै ॥ सुधारैं दुहूं लोकको वर्ण दोऊ । हिये छद्म छांड़े कहै वर्ण कोऊ ६ सुनावै सुनै साधुसंगी कहावै । कहावै कहै पाप पुंजै नशावै ॥ स्मरावै स्मरै वासना जारि डारै । तजै छद्मको देवलोकै सिधारै ७ तामरसछंद ॥ जब सब वेद पुराण नशैहैं । जप तप तीरथहू मिटिजैहैं ॥ द्विज सुरभी नहिं कोउ विचारै । तब जग केवल नाम उधारै ८ दोहा ॥ मरणकाल काशीबिषे महादेव निजधाम ॥ जीवनको उपदेशि हैं रामचन्द्रको नाम ९ मरण काल कोऊ कहै पापी होइ पुनीत ॥ सुखही हरिपुर जाइहै सब जग गावै गीत १० ॥

और मंत्र पुरश्चरणादिसों सिद्ध किये जात हैं औ याके शुद्ध उच्चार सदाही सिद्ध हैं ५ आधो नाम रा अथवा म अधोगति नरक इति पूरे नाम के जपसों वैकुंठ प्राप्त होत है मृत्युलोक में कहा होत है ता लिये फेरि कहत हैं कि राम ये जे दुवौ अंक वर्ण हैं ते मृत्युलोक स्वर्गलोक दुवौ सुधारत हैं मृत्युलोक में यश गौरवादि को लाभ होत है वैकुंठ में देवसुख प्राप्त होत है इत्यर्थः ६ । ७ । ८ । ९ । १० ॥

रामनामके तत्त्वको जानत वेद प्रभाव॥ गंगाधर कै धरणिधर बालमीकि मुनिराव ११ दोधकछंद ॥ सातहु सिंधुन के जल रूरे। तीरथजालनिके पय पूरे॥ कंचनके घट वानर लीने। आइ गये हरि आनँदभीने १२ दोहा ॥ सकल रत्नमय मृत्तिका शुभ औषधी अशेष॥ सातद्वीपके पुष्प फल पल्लव रस सविशेष १३ दोधकछंद ॥ आंगन हीरनको मन मोहै। कुंकुम चंदन चर्चित सोहै॥ है सरसीसम शोभ प्रकासी। लोचन मीन मनोज विलासी १४ दोहा ॥ गजमोतिन युत शोभिजैं मरकतमणिके थार॥ उदकबुंदसों जनु लसत पुरइनिपत्र अपार १५ विशेषकछंद ॥ भांतिन भांतिन भाजन राजत कौन गने। ठौरहि ठौर रहे जनु फूलि सरोज घने॥ भूपनके प्रतिबिंब विलोकत रूपरसे। खेलत हैं जल मांझ मनो जलदेव बसे १६ पद्धटिकाछंद ॥ मृगमद मिलि कुंकुम सुरभि नीर। घनसार सहित अंबर उशीर॥ घसि केसरिसों वहु विविध नीर। क्षिति छिरके चर थावर शरीर १७ बहुवर्ण फूल फल दल उदार। तहँ भरि राखे भाजन अपार॥ तहँ पुष्प वृक्ष शोभैं अनेक। मणिवृक्ष स्वर्ण के वृक्ष एक १८ त्यहि उपर रच्यो एकै बितान। दिवि देखत देवनके विमान॥ दुहुँ लोक होत पूजाविधान। अरु नृत्य गीत वादित्र गान १९ ॥

धराणिधर शेष ११ हरि जे रामचन्द्र हैं तिनके अभिषेकोत्सव के आनंद में भीने इत्यर्थः १२ रस घृतादि १३ भांतिन भांति तीनि छन्द में एकवाक्यता है सरसी तड़ाग ता आंगन में प्रतिबिंबित जे सबके लोचन हैं तेई मनोज के काम के मीन मत्स्य हैं अथवा मनोजविलासी कहे काम के खेलिबे के मीन हैं १४ ताही तड़ागमें पुरइनि पत्र सम हैं १५ ताही तड़ाग में भाजन कहे पात्र सरोज सम फूलि रहे हैं प्रतिबिंब जलदेव सम हैं १६ सुरभि सुगंधित अथवा सुंदर "सुरभिर्हेम्नि चम्पके ॥ जातीफले मातृभेदे रम्ये चैत्रवसन्तयोः। सुगन्धौ गवि शल्लक्यामिति हेमचन्द्रः" अम्बर सुगंध वस्तुविशेष "अम्बरं न द्वयोर्व्योम्नि सुगन्ध्यंतरवस्त्रयोरिति मेदिनी" सरिसों बराबरिसों अर्थ मृगमदादि सब सम घसिकै १७ दल पत्र भाजन पात्र १८ एकै अपूर्व वादित्र बाजने १९ ॥

तरु ऊमरिको आसन अनूप। बहु रचित हेममय विश्वरूप॥ तहँ बैठे आपुन आइ राम। सिय सहित मनो रति रुचिर काम २० जनु घन दामिनि आनंद देत। तरु कल्प कल्पवल्ली समेत॥ है कैधौं विद्या सहित ज्ञान। कै तपसंयुत मन सिद्धि जान २१ कै विक्रमयुत कीरति प्रवीन। कै श्रीनारायण शोभलीन॥ कै अतिशोभित स्वाहा सनाथ। कै सुंदरता शृंगार साथ २२ सुंदरीछंद॥ केशव शोभ नक्षत्र विराजत। जाकहँ देखि सुधाधर लाजत॥ शोभित मोतिन के मतिके गन। लोकनके जनु लागि रहे मन २३ दोहा॥ शीतलता शुभता सबै सुंदरताके साथ॥ अपनी रविकी अंशु लै सेवत जनु निशिनाथ २४॥

ऊमरि गूलरि हेममय कहे सुवर्णमयी विश्व कहे संसारके रूप अर्थ संसार के वस्तु स्वरूपन करिकै रचित है चित्रित है २० कै तपसंयुक्त सिद्धि कहे तपसिद्धि है यह मनमें जानु इत्यर्थः २१ श्रीलक्ष्मी सनाथ कहे अग्निसहित शृंगार रस अथवा भूषणन को शृंगार किये सों सुंदरता बढ़ति है तासों जानों २२। २३ ताही छत्र में तर्क है शीतलता औ शुभता कहे

मांगल्य औ सुंदरता जो सब कहुँ पूर्ण है तिनके संग अपनी औ रविकी अंशु किरणि लैकै मानों निशिनाथ चन्द्रमा रामचन्द्र को सेवत है चन्द्रकिरणिसम मुक्तन की किरणि हैं रविकिरणिसम औ जटित जे माणिक्यादि मणि हैं तिनकी किरणि हैं औ शीतलतादि है ही हैं २४ ॥

सुंदरीछंद ॥ ताहि लिये रविपुत्र सदा रत। चमर विभीषण अंगद ढारत ॥ कीरतिलै जगकी जनु वारत। चंदक चंदन चंद सँवारत २५ लक्ष्मण दर्पणको दिखरावत। पाननि लक्ष्मण बंधु खवावत ॥ अर्थ लैजै नरदेव सदा रत। देव अदेवनि पायन पारत २६ दोहा ॥ जामवंत हनुमंत नल नील मरातिब साथ ॥ छरी छबीली शोभिजै दिग्पालन के हाथ २७ रूप बहिक्रम सुरभिसम वचन रचन बहुभेव ॥ सभा मध्य पहिंचानिये नर नरदेवन देव २८ आई जब अभिषेककी घटिका केशवदास ॥ बाजे एकहि बार बहु दुंदुभि दीह अकास २९ ॥

रत कहे अनुरक्त है कीर्तिसम चमर है फिरि चमर कैसे हैं कि चंद्रक जो कपूर है औ चंदन औ चंद्रमा है सदा आर्त कहे पीड़ित जिनसों अर्थ जिनकी श्वेततासों अपनी श्वेतता हीन समुझि चंद्रकादि दुःखी होत हैं २५। २६ माही मरातिब प्रसिद्ध है छरी आशा २७ सुरभि सुगंधि २८। २९ ॥

झूलनाछंद ॥ तब लोकनाथ विलोकिकै रघुनाथ को निज हाथ। सविशेष सों अभिषेककी पुनि उच्चरी शुभ गाथ ॥ ऋषिराज इष्ट वशिष्ठसों मिलि गाधिनंदन आइ। पुनि बालमीकि वियास आदि जिते हुते मुनिराइ ३० रघुनाथ शंभु स्वयंभुको निज भक्ति दी सुख पाइ। सुरलोकको सुरराजको किय दीह निरभय राइ ॥ विधिसों ऋषीशनसों विनय करि पूजि औ परि पांइ। बहुधा दई तपवृक्षकी सब सिद्ध सिद्ध सुभाइ ३१ ॥

लोकनाथ जे ब्रह्मा हैं तिन अभिषेककी घटिका आई विलोकिकै निज हाथसों रघुनाथ को अभिषेक की कहे करयो पुनि फेरि शुभगाथ कहे वेदविहित गाथको उच्चार करयो इत्यर्थः पुनि कहे ब्रह्मा के अभिषेक किये बादि वशिष्ठादिक जेते मुनिराय ताठौरहुते तिनहुँन अभिषेक करि शुभ गाथ उचरी इत्यर्थः ३० स्वयंभु कहे ब्रह्मा ३१ ॥

दोहा ॥ दीन्हो मुकुट विभीषणै अपनो अपने हाथ ॥ कंठमाल सुग्रीवको दीन्हो श्रीरघुनाथ ३२ चंचरीछंद ॥ माल श्रीरघुनाथके उर शुभ्रसीताहि सो दई । आफियो हनुमंतको तिन दृष्टिकै करुणामई ॥ और देव अदेव वानर याचकादिक पाइयो । एक अंगद छोड़िकै ज्वइ जासुके मन भाइयो ३३ अंगद ॥ देव हौ नरदेव वानर नैऋतादिक धीर हौ । भरत लक्ष्मण आदिदै रघुवंशके सब वीर हौ ॥ आजु मोसन युद्ध माड़हु एक एक अनेककै । बापको तब हौं तिलोदक दीह देहुँ विवेककै ३४ राम–दोहा ॥ कोऊ मेरे वंशमें करिहै तोसों युद्ध ॥ तब तेरो मन होयगो अंगद मोसों शुद्ध ३५ विधिसों पायँ पखारिकै राम जगतके नाह ॥ दीन्हेउ गांव सनौढियन मथुरामंडलमाह ३६ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां रामस्यराज्या-भिषेकवर्णनन्नाम षड्विंशः प्रकाशः ॥ २६ ॥

आफियो कहे दियो तिन सीताजू ३२ । ३३ । ३४ । ३५ । ३६ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद-निर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायां षड्विंशः प्रकाशः ॥ २६ ॥

दोहा ॥ सत्ताइसे प्रकाशमें रामचन्द्र सुखसार ॥ ब्रह्मादिक अस्तुति विविध निजमतिके अनुसार १ ब्रह्मा–झूलना

छंद॥ तुम हौ अनंत अनादि सर्वग सर्वदा सर्वज्ञ। अब एक हौ कि अनेक हौ महिमा न जानत अज्ञ॥ भ्रमिबो करैं जग लोक चौदह लोभमोहसमुद्र। रचना रची तुम ताहि जानत हौं न ब्रह्म न रुद्र २॥

१ सर्वग कहे सर्वत्र व्याप्त लोभ मोहके समुद्र अर्थ लोभ मोहसों भरे जे चौदह लोक कहे चौदहौ लोकके प्राणी जा रचनामें भ्रमिबो करत हैं अर्थ संदेह को प्राप्त भयो करत हैं ता रचना को नहीं जानत हौं न ब्रह्म वेद जानत हैं न रुद्र जानत हैं अथवा चौदहौ लोकमें लोभ औ मोहके समुद्रै में हम भ्रम्यो करत हैं तासों तुम्हारी रचना को नहीं जानत २॥

शिव-दंडक॥ अमल चरित तुम बैरिन मलिन करौ साधु कहैं साधु परदारप्रिय अति हौ। एक थल थित पै बसत जग जनप्रिय केशौदास द्विपद पै बहुपद गति हौ॥ भूषण सकलयुत शीश धरे भूमिभार भूतल फिरत पै अभूत भुवि पति हौ। राखौ गाय ब्राह्मणन राजसिंह साथ चिर रामचन्द्र राज करौ अदभुत गति हौ ३ इंद्र॥ वैरी गाय ब्राह्मण को ग्रंथन में सुनियत कविकुलहीके सुवरणहरकाज है। गुरुशय्यागामी एक बलकै विलोकियत मातंगनहीं के मतवारे कैसो साज है॥ अरिनगरीन प्रति होत है अगम्यागौन दुर्गनहिं केशौदास दुर्गतिसी आज है। देवताई देखियत गढ़ानि गढ़ोई जीवो चिर चिर रामचन्द्र जाको ऐसो राज है ४॥

याहू में विरोधाभास है अमल निर्मल चरितन सों बैरिन को मलिन करत हौ इत्यर्थः पर कहे उत्कृष्ट दार अर्थ लक्ष्मीजू " राघवत्वे भवेत्सीता रुक्मिणी कृष्णजन्मनीति पुराणात् " जा भूमिको शीशमें धरे हैं ताहीपर फिरिबो विरोध है गाय सदृश जे ब्राह्मण हैं तिनहूं को राखत हौ रक्षा करत अथवा गाय औ ब्राह्मणन को राखत हौ औ राजसिंह कहे राज-

रूपी जे सिंह हैं तिनसों साथ कहे मित्रता है तो सिंहसों मित्रता औ गाय की रक्षा यह विरोध है ३ यामें परिसंख्यालंकार है ग्रंथन में लिख्यो है कि गाय ब्राह्मणके वैरसों ऐसो पाप होत है सुंदर वर्ण अक्षर कविता में धरिबेको देवताई कहे देवनाकी प्रतिमाहीं टांकी आदिकी गढ़निसों गढ़ो देखियत है और कोऊ प्राणी नहीं गढ़्यो जात अर्थ ताड़नाको नहीं प्राप्त होत ४ ॥

पितर ॥ बैठे एक छत्रतर छांह सब क्षितिपर सूरकुलकलश सुराहुहितमति हौ । त्यक्तवामलोचन कहत सब केशौदास विद्यमान लोचन द्वै देखियत अति हौ ॥ अक्रूर कहावत धनुषधर देखियत परमकृपालु पै कृपाणकरपति हौ । चिर चिर राज करौ राजा रामचन्द्र सब लोक कहै नरदेव देवदेव गति हौ ५ अग्नि ॥ चित्रहीमें आज वर्णसंकर विलोकियत व्याहहीमें नारिनके गारिनसों काज है । ध्वजै कंप योगी निशि चक्रै है वियोगी द्विजराज मित्रद्वेषी एक जलदसमाज है ॥ मेघै तो गगनपर गाजत नगर घेरि अपयश डर यशही को लोभ आज है । दुःखहीको खंडन है मंडन सकल जग चिर चिर राज करौ जाको ऐसो राज है ६ ॥

यामें विरोधाभास है विरोधपक्ष राहुग्रह अविरोध सुराह कहे सुमार्ग त्यक्त कहे त्यागे वामलोचन औ वाम कहे कुटिल लोचन अर्थ काहूसों टेढ़े लोचन करि नहीं ताकत विद्यमान कहे प्रत्यक्ष अक्रूर कहे दंडरहित अर्थ काहूको तुम दंड द्रव्य नहीं देते कृपाण जो करवाल है सो है कर हाथ में जिनके ५ यामें परिसंख्या है वर्ण जे अरुणादि हैं तिनको संकर मिलाइबो द्विजराज चन्द्रमा मित्र सूर्य जाको राज सकल जगको मंडन भूषण है ऐसे जे तुम हौ ते चिर चिर कहे बहुकाल पर्यंत राज करौ ६ ॥

वायु ॥ राजा रामचन्द्र तुम राजहु सुयश जाको भूतल के आसपास सागरको पाससो । सागरमें बड़भाग वेष शेष नागजूको जपै सुखदानि खानि विष्णुको निवाससो ॥ विष्णु

जू में भूरिभाव भावको प्रभाव जैसो भवजूके भालमें विभूति को विलाससो। भूतिमाहँ चंद्रमासो चंद्रमें सुधाको अंशु अंशुनिमें केशौदास चंद्रिका प्रकाशसो ७ देवगण॥ राजा रामचंद्र तुम राज करौ सब काल दीरघ दुसह दुख दीनन को दारिये। केशौदास मित्रदोष मंत्रदोष ब्रह्मदोष देवदोष राजदोष देशते निकारिये॥ कलह कृतघ्न महिमंडल के बरिबंड पाखंड अखंड खंड खंड करि डारिये। वंचक कठोर ठेलि कीजै वाट आटआट झूठ पाठ कंठपाठकारी काठ मारिये ८ ऋषिगण॥ भोगभार भागभार केशव विभूति-भार भूमिभार भूरि अभिषेकनके जलसे। दानभार गानभार सकल सयानभार धनभार धर्मभार अक्षत अमलसे॥ जय-भार यशभार राजभार राजत है रामशिर आशिष अशेष मंत्रबलसे। देश देश यत्र तत्र देखि देखि तेहि दुख फाटत हैं दुष्टनके शीश दाह्यो फलसे ६॥

पास कहे फांस अंशु किरणि ७ दारिये कहे नाश करत हौ वंचक ठग कठोर निर्दय झूठरूपी जो पाठ है ताके जे कंठपाठकारी हैं अर्थ जे गूढ़ही कह्यो करत हैं विभूति ऐश्वर्य ८। ६॥

केशव-विजयाछंद॥ जाइ नहीं करतूति कही सब श्री सविता कविता करि हारो। याहीते केशवदास अशीश पढ़ै अपनो करि नेकु निहारो॥ कीरति देवनकी दुलही यश दूलह श्रीरघुनाथ तिहारो। सातौ रसातल सातहु लो-कन सातहु सागरपार विहारो १० किन्नर, यक्ष, गन्धर्व-रामलीलाछंद॥ अजर अमर अनंत जय जय चरित श्रीरघुनाथ। करत सुर नर सिद्ध अचरज श्रवण सुनि सुनि गाथ॥ काय मन वच नेम जानत शिलासम परनारि। शिला

ते पुनि परमसुंदरि करत नेक निहारि ११ चमर ढारत मातु ऊपर पाणि पीड़ा होइ। विषदंड ज्यों कोदंड हरको टूक कीन्हो होइ॥ साधु होइ असाधु राखत द्विजनहीको मान। सकल मुनिगण मुकुटमणिको मर्दियो अभिमान १२॥

सविता सूर्य १० शिलाते सुंदरी अहल्याको कस्यो है ११ विषदंड कहे पवनारी को दंड मुनिगणमुकुट मुनि नारदकी कथा तुलसीकृत रामायणमों प्रसिद्ध है वानर सदृश मुखकरि दियो है अथवा परशुराम छंद उपजाति है १२॥

सूर सुंदर सरसरविरति करत रतिकहँ लालि। एकपत्नीव्रत निबाहत मदनको मद घालि॥ सुखद सुहृद सपूत सोदर हनत नृप जा काज। पलकमें सोइ राज छांड़्यो मातु पितुकी लाज १३ मंथरासों मोद मानत विपिन पठयो पेलि। शूर्पणखाकी नाक काटी करन आई केलि॥ चंचु चापत अंगुरी शुक ऐंचि लेत डराइ। बंधुसहित कबंधके उर मध्य पैठे धाइ १४ सर्वथा सर्वज्ञ सर्वग सर्वदा रस एक। अज्ञ ज्यों सीता विलोकी व्यग्र भ्रमत अनेक॥ बाण चूकत लक्ष्यको को गनै केतिकबार। ताल सातौ बेधियो शर एक एकहि वार १५ सापराध असाधु अति सुग्रीव कीन्हो मित्र। अपराध बिन अतिसाधु बालिहि हन्यो जानि अमित्र॥ चलत जब चौगानको लैचलत दल चतुरंग। देवशत्रुहि चले जीतन ऋक्ष वानर संग १६ भूलिहू जा तन निहारत गरु सो गिरिन समान। निगरु देखो भये गिरिगण जलधि में ज्यों पान॥ यतन यतननि तरण सरयू डोडिडोलत डीठि। गये सागरपार दै पगु प्रकट पाहन पीठि १७॥

सब पर रति प्रीति रचिकै सब कीर्तिकी प्रीतिकी लालि कहे लालसा इच्छा करत हौ औ आश्चर्य पक्षमें रति जो कामकी स्त्री है ताको लालि कहे लालसा

करत हौ अर्थ रतिकी लालसा करत हौ औ मदनको मदघालक हौ यह आश्चर्य है ताही सोदर के लिये अर्थ भरत के लिये राज्यही छांड्यो इति शेषः १३ मंथरा कूबरी १४ व्यग्र विकल अनेक स्थाननमों इति शेषः भ्रमत कहे घूमत तौ सर्वग औ सर्वज्ञकी अज्ञसम स्थल ढूँढ़िबो आश्चर्य है औ सर्वदा एकरस कहे आनंदरूप जो रहनि है ताको विकल ह्वैबो आश्चर्य है लक्ष्य निशाना वार कहे चोट १५ । १६ निगरु कहे हरुये पान पात्र १७ ॥

वाजि गज रथ वाहिनी चढ़ि चलत अमित सुभाय। लंक में बिन पानहीं निज गये अपने पाय ॥ यज्ञको फल गहत यत्ननि यज्ञपुरुष कहाय। बेर जूंठे दियो शबरी भक्षियो सुख पाय १८ कुसुमकंदुक लगत कांपत मूंदि लोचन मूल। शत्रुसन्मुख सहे हँसि हँसि शैल असि शर शूल ॥ दूरि करत न दया दर्शत देर दंशत दंश। भई वार न करत रावण वंशको निर्वंश १९ वाण बेझहि आनको लगि नाम अपनो लेत। कालसों रिपु आपु हति जयपत्र औरहि देत ॥ पुण्यकालन देत विप्रन तौलि तौलि कनङ्क। शत्रुसोदरको दई सब स्वर्णही की लङ्क २० होइ मुक्त सो जाहि इनको मरत आवै नाम। मुक्त एक न भये वानर मरे करि संग्राम ॥ एक पल बिन पान खाये वारबार जम्हात। वर्ष चौदह नींद भूख पियास छोड़ी गात २१ क्षमे बरु अपराध अपने कोटि कोटि कराल। अपराध एक न क्षम्यो गोद्विजदीनको सब काल ॥ यदपि लक्ष्मण करी सेवा सर्वभांति सभेव। तदपि मानत सर्वथा करि भरतहीकी सेव २२ ॥

१८ कुसुम जे फूल हैं तिनको कंदुक गेंद १९ बेझहि निशाना २० मुक्त कहे मुक्ति औ मरे २१ छंद उपजाति है २२ ॥

कहत इनको सर्व सांचे सकल राना राय। तनक सेवा दासकी कहैं कोटिगुणित बनाय ॥ डरन यक अपलोकते ये

जीव चौदह लोक । ठौर जाकहँ कहुँ न ताकहँ देत अपनो ओक २३ छांड़ि ऋषि द्विज देवऋषि ऋषिराज सब सुख पाइ । प्रकट सकल सनौढियनके प्रथम पूजे पाइ ॥ छोड़ि पितर त्रिशंकु है विपरीत यद्यपि देह । अवध केशव जात शूकर श्वान स्वर्ग सदेह २४ एक पल उर मांझ आये हरत सब संसार । आयकै संसारमें इन हरेव भूतलभार ॥ शेष शंभु स्वयंभु भाषत निगम नेति न जास । ताहि लघुमति बरणि कैसे सकत केशवदास २५ याहि विधि चौदह भुवनके गाव मुनि यशगाथ । प्रेमसह पहिराइ सबको बिदा किय रघुनाथ २६ झूलनाछंद ॥ अभिषेककी यह गाथ श्रीरघुनाथकी नर कोइ । पल एक गावत पाइहै बहुपुत्र सम्पति सोइ ॥ जरि जाहिंगी सब वासना भवविष्णुभक्त कहाइ । यमराजके शिर पाउँ दै सुरलोक लोकनि जाइ २७ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां ब्रह्मादिस्तुतिवर्णनन्नाम सप्तविंशः प्रकाशः ॥ २७ ॥

अपलोक कहे अपगतलोक अर्थ छोटो लोक औ कलंक २३ ऋषिसामान्य तपस्वी द्विजऋषि कहे ब्राह्मणश्रेष्ठ देवऋषि ब्रह्मऋषि राज वशिष्ठादि २४ । २५ । २६ । २७ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायां सप्तविंशः प्रकाशः ॥ २७ ॥

दोहा ॥ अट्ठाइसे प्रकाशमें वर्णन बहुविधि जानि ॥ श्रीरघुवरके राजको सुर नरको सुखदानि १ भुजंगप्रयात छंद ॥ अनंता सबै सर्वदा शस्ययुक्ता । समुद्रावधिः सप्त ईती विमुक्ता ॥ सदा वृक्ष फूले फले तत्र सोहैं । जिन्हैं अल्पधी

निर्वेदादिते इति सव्यभिचारी भावरस ग्रन्थनमें प्रसिद्ध हैं नारी नाटिका दंड ब्रह्मलकुट औ डांडु अर्थ और कोऊ काहूसों डांड़ नहीं लेत मीचुसों वियोग कहि जनायो कि सबकी मुक्ति होति है वासनाई बंध्या है, अर्थ वासनाको जो शुभाशुभ फल स्वर्ग नरकादि भोग है सो काहू प्राणीको नहीं होत सब प्राणी मुक्त होत हैं १२। १३ पाप कहे कष्ट पट्टन शहर पाप नाम कष्टको विहारीकी शतसैयामों है " सीरे यत्ननि शिशिर निशि सहि विरहिनि तनताप। बसिबेकी ग्रीषमदिननि परयो परोसिनि पाप " रामनामसों एक संसारही को सब जीतत है अर्थ संसारबंधन सों छूटि जात है और कोऊ काहूको हरावत नहीं १४॥

चंद्रकलाछंद॥ सबके कल्पद्रुमके वन हैं सबके वर वारन गाजत हैं। सबके घर शोभित देवसभा सबके जयदुंदुभि बाजत हैं॥ निधि सिद्धि विशेष अशेषनिसों सब लोग सबै सुख साजत हैं। कहि केशव श्रीरघुराजके राज सबै सुरराजसे राजत हैं १५ दंडक॥ जूझहिंमें कलह कलहप्रिय नारदै कुरूप है कुबेरै लोभ सबके चयनको। पापनकी हानि डर गुरुनको वैरी काम आगि सर्वभक्षी दुखदायक अयन को॥ विद्याहीमें वादु बहु नायक है वारिनिधि जारज है हनुमंत मीत उदयनको। आंखिन अछत अंध नारिकेर कृश कटि ऐसो राज राजै राम राजिवनयनको १६॥

कल्पद्रुम के अर्थ कल्पद्रुम सरिस द्रुमवृक्षनके वन हैं देवसभा सम सभा महापद्मादि जे नवौ निधि हैं औ अणिमादि जे अष्टसिद्धि हैं तिन अशेषन पूर्वन सहित विशेषपूर्वक सब लोग और जे सबै सुख हैं तिन्हैं साजत हैं अर्थ करत हैं १५ पार्वती के शापसों कुबेर कुरूप भये हैं सो कथा वाल्मीकीय रामायण उत्तरकांड मों प्रसिद्ध है चयन कहे आनंदअयन कहे घर को दुःखदायक अर्थ दाहक औ सर्वभक्षी आगिही है बहुनायक बहुल स्त्रीनको अर्थ नदिनको नायक स्वामी और सब एकपत्नी भोगी हैं इति भावार्थः सब के उदयन प्रकाशन को मीत कहे हित है अर्थ सबके शुभाकांक्षी हैं नारिकेर कहे नारिकेरके फल औ कटिही कृश दुर्बल है १६॥

दोहा ॥ कुटिल कटाक्ष कठोर कुच एकै दुःख अदेय ॥ द्विस्वभाव अश्लेषमें ब्राह्मणजाति अजेय १७ तोमरछंद ॥ बहुशब्द वंचक जानि । अलि पश्यतोहर मानि ॥ नरछांहई अपवित्र । शर खड्ग निर्दय मित्र १८ सोरठा ॥ गुण तजि अवगुणजाल गहत नित्य प्रति चालनी ॥ पुंश्चलीति तेहि काल एकै कीरति जानिये १९ दोहा ॥ धनद लोक सुरलोक मय सप्तलोकके साज ॥ सप्तद्वीपवति महि बसी रामचन्द्रके राज २० दशसहस्र दशसै बरष रसा बसी यहि साज ॥ स्वर्ग नरकके मग थके रामचन्द्रके राज २१ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां रामराज्यवर्णनन्नामाष्टविंशः प्रकाशः ॥ २८ ॥

द्विस्वभाव कहे द्वै प्रकारको स्वभाव श्लेष कवितामों है एक समय और अर्थ कहत हैं एक समय और कहत हैं और सबको एकई स्वभाव है इति भावार्थः १७ बहु कहे बहुत विधिसों शब्द जो है सोई वंचक कहे ठग है अर्थ वंचक यह जो शब्द है सोई है और कोऊ प्राणी ठग नहीं है अथवा बहुत जे परस्पर कोमल भाषित शब्द हैं तेई ठग हैं अर्थ ठग सम मोहित करत हैं औ अलि जे भ्रमर हैं तेई पश्यतोहर कहे देखतहूँ चोरी करत हैं अर्थ सबके देखत भ्रमर पुष्पनसों मधु चोरत हैं १८ गुणरूप पिसानको त्यागि अवगुण रूपी भूमिको ग्रहण करति हैं पुंश्चली परकीया १९ । २० रसा पृथ्वी स्वर्ग नरकके मग थके कहे नहीं चलत अर्थ न कोऊ प्राणी स्वर्ग जाइ न नरक जाइ सब मुक्तिपुरीको जात हैं २१ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायामष्टविंशः प्रकाशः ॥ २८ ॥

दोहा ॥ उनतीसयें प्रकाशमें बरणि कह्यो चौगान ॥ अवध दीपशुककी बिनति राजलोक गुणगान १ चौपाई ॥ एक

कल्पसाखी विमोहैं २ सबै निम्नगा क्षीरके पूरपूरी। भई कामगोसी सबै धेनु रूरी॥ सबै वाजि स्ववाजिते तेजपूरे। सबै दंति स्वर्दतिते दर्प रूरे ३ सबै जीव हैं सर्वदानन्द पूरे। क्षमी संयमी विक्रमी साधु शूरे॥ युवा सर्वदा सर्व विद्याविलासी। सदा सर्वसंपत्ति शोभाप्रकासी ४ चिरंजीव संयोग योगी अरोगी। सदा एकपत्नीव्रती भोगभोगी॥ सबै शील-सौंदर्य्यसौगंधधारी। सबै ब्रह्मज्ञानी गुणी धर्मचारी ५॥

१ जा रामचन्द्र के राज्यमें समुद्रावधि कहे समुद्रपर्यंत अवंता जो पृथ्वी है सो सप्त जे शुकादि ईति हैं तिनसों विमुक्त रहित सस्य धान्यसों युक्त है "अतिवृष्टिरनावृष्टिर्मूषकाः शलभाः शुकाः। स्वचक्रम्परचक्रञ्च सप्तैता ईतयः स्मृताः" जिन वृक्षन को देखि अल्पबुद्धि जे कल्पशाखी कल्पवृक्ष हैं ते विमोहैं कहे मोहित होत हैं कि ऐसे हम न भये अथवा अल्पकी बुद्धिसों अर्थ हम इनसों लघु हैं या बुद्धिसों मोहत हैं २ निम्नगा नदी क्षीर जल स्ववाजि उच्चैःश्रवा (उच्चैःश्रवसी यस्य, उच्चैः शृणोतीति वा) स्वर्दंति ऐरावत दर्पमद ३। ४ संयोगी कहे सदा स्त्रीसंयोगसों युक्त सौगंधपद ते स्वाभाविक अंगसुगंधि जानौ ५॥

सबै न्हान दानादि कर्माधिकारी। सबै चित्तचातुर्य चिंताप्रहारी॥ सबै पुत्रपौत्रादिके सुक्ख साजैं। सबै भक्त माता पिता के विराजैं ६ सबै सुंदरी सुंदरी साधु सोहैं। शची सी सतीसी जिन्हैं देखि मोहैं॥ सबै प्रेमकी पुण्यकी सद्मिनी सी। सबै चित्रिणी पुत्रिणी पद्मिनीसी ७ भ्रमै संभ्रमी यत्र शोकै सशोकी। अधर्मैं अधर्मी अलोकै अलोकी॥ दुखै तौ दुखी ताप तापाधिकारी। दरिद्रै दरिद्री विकारै विकारी ८ चौपाई॥ होमधूम मलिनाई जहां। अति चंचल चलदल हैं तहां॥ बालनाश है चूड़ाकर्म। तीक्षणता आयुधके धर्म ९ लेत जनेऊ भिक्षादान। कुटिल चाल सरितानि बखान॥

व्याकरणै द्विजवृत्तिन हरै । कोकिल कुलपुत्र न परिहरै १०
फागुहि निलज लोग देखिये । जुवा देवारीको लेखिये ॥
नित उठिबे झोई मारिये । खेलतमें केहूं हारिये ११ ॥

चित्तकी चातुर्य करिकै औरकी चिंताके महारी कहे हर्ता हैं ६ सुंदरी स्त्री सुंदरी कहे सुंदरता युक्त साधु कहे पतिव्रता सझिनी कहे हवेली चित्रिणी कहे चित्रिणी जाति है पुत्रिणी कहे पुत्रवती हैं औ पझिनी कहे पझिनी जाति है यासों या जनायो कि हस्तिनी शंखिनी एकौ नहीं हैं ७ अलोक कहे अपलोक ८ चलदल पिप्पल वृक्ष बार शिरोरुह इति औ बालक चूड़ाकर्म क्षौरकर्म ६ द्विज जे ब्राह्मण हैं तेई व्याकरण शास्त्रही मों वृत्तिको हरत हैं हरि लेत हैं अर्थ पढ़त हैं और कोऊ काहूकी वृत्ति जीविका को नहीं हरत व्याकरणशास्त्रमों सूत्रवृत्ति प्रसिद्ध है १० बेझा निशाना खेलतही में काहू विधिसों हारि होति है अन्यत्र हारि नहीं होति ११॥

दंडक ॥ भावै जहां व्यभिचारी वेधै रमै परनारी द्विजैंगन दंडधारी चोरी परपीरकी । मानिनीनहीं के मन मानियत मानभंग सिंधुहि उलंघि जाति कीरति शरीरकी ॥ मूलै तौ अधोगति न पावत है केशौदास मीचहीसों है वियोग इच्छा गंगनीरकी । बन्ध्या वासनानि जानु विधवा सुबाटिकाई ऐसी रीति राजनीति राजे रघुवीरकी १२ दोहा ॥ कविकुल हीके श्रीफलन उर अभिलाष समाज ॥ तिथिहीको क्षय होत है रामचन्द्रके राज १३ दंडक ॥ लूटिबेके नाते पाप पट्टनै तौ लूटियत तोरिबेको मोहतरु तोरि डारियत है । घालिबे के नाते गर्व घालियत देवनके जारिबेके नाते अघ-ओघ जारियत है ॥ बांधिबेके नाते ताल बांधियत केशौदास मारिबे के नाते तौ दरिद्र मारियत है । राजा रामचन्द्र जू के नाम जग जीतियत हारिबेके नाते आन जन्म हारियत है १४ ॥

वैरसों हम कहां जाइँ तासों हे राम ! अभयदान दीजै खेलको समय है आयो तासों अब खेल बंद करो इति भावार्थः १४ ॥

चौपाई ॥ गोलनकी बिनती सुनि ईश । घरको गमन कस्यो जगदीश ॥ पुर पैठत अतिशोभा भई । वीथिन असवारी भरि गई १५ मनों सेतु मिलि सहित उछाह । सरितन के फिरि चले प्रवाह ॥ ताही समय द्योस नशि गयो । दीप उदोत नगरमहँ भयो १६ नखतनकी नगरीसी लसी । मानों अवध देवारी बसी ॥ नगर अशोकवृक्ष रुचिरयो । मधु प्रभु देखि प्रफुल्लित भयो १७ अध अधफर ऊपर आकाश । चलत दीप देखियत प्रकाश ॥ चौकी दै जनु अपने भेव । बहुरे देवलोकको देव १८ बीथी विमल सुगंध समान । दुहूँ दिशि दीसत दीपप्रमान ॥ महाराज को सहित सनेह । निजनैनन जनु देखत गेह १६ बहु विधि देखत पुरके भाइ । राजसभा महँ बैठे जाइ ॥ पहर एक निशि बीती जहीं । बिनतीको शुक आये तहीं २० ॥

१५ प्रथम जातसमय कह्यो है कि "तरुपुंजन सों सरिता भली । मानहुं मिलन समुद्रहि चली" सो अब आवत में ताही में तर्क करत हैं कि मानों सेतु में मिलिकै उछाह आनंद सहित सरितन के तेई प्रवाह फिरि चले हैं जैसे लंका जात में रामचन्द्र सेतु बांध्यो है तामें लगिकै सरितन के प्रवाह फिरि चले हैं तैसे जानो १६ रुचि कहे सुंदरता सों रयो युक्त नगररूपी जो अशोक वृक्ष है सो मधु कहे बसंत सम जे रामचन्द्र हैं तिन्हें देखि प्रफुल्लित भयो है १७ यामें आकाशदीपन को वर्णन है एकै आकाश के अध कहे अधोभाग में हैं औ एकै अधफर कहे मध्यभागमों हैं एकै ऊपर हैं या प्रकार ज्यों ज्यों क्रम क्रम डोरि खींची जाति है त्यों त्यों आकाशको चलत प्रकाश दीप देखियत है सो मानों ये सब दीप नहीं देवता हैं अवधपुरी की चौकी देत हैं तिनके मध्य मानों आपने भेव कहे समय प्रमाण चौकी दैकै ये देव आपने लोक जात हैं १८ विमल तृणादिरहित सुगंध

गंधयुक्त समान उच्च नीच रहित दुहुँ दिशि कहे गैल के याहू ओर वाहू ओर सनेह प्रेम औ तैल १९ भाइ कहे चेष्टा २० ॥

शुक—हरिप्रियाछंद ॥ पौढ़िये कृपानिधान देवदेव रामचन्द्र चन्द्रिकासमेति चन्द्र चित्त रैनि मोहै । मनहुँ सुमन सुमतिसंग रचे रुचिर सुकृत रंग आनँदमय अंग अंग सकल सुखनि सोहै ॥ ललित लतनके विलास भ्रमरवृंद ह्वै उदास अमलकमलकोश आसपास वास कीन्हे । तजि तजि माया दुरंत भक्त रावरे अनंत तव पद कर नैन बैन मानहुँ मन दीन्हे २१ घर घर संगीत गीत बाजे बाजैं अजीत कामभूप आगम जनु होत हैं वधाये । राजभौन आसपास दीप वृक्ष के विलास जगति ज्योति यौवन जनु ज्योतिवंत आये ॥ मोतिनमय भीति नई चन्द्रचन्द्रिकानिमई पङ्कअङ्क आङ्कित भवभूरि भेद सो करी । मानहुँ शशि पण्डित करि जोन्ह ज्योति मण्डित श्रीखण्डशैलकी अखंड शुभ्र सुंदरी दरी २२ एक दीपद्युति विभाति दीपति मणि दीपपांति मानहुँ भुवभूपतेज मंत्रिनमय राजै । आरे मणिखचित खरे बासन बहुबास भरे राखत गृह गृह अनेक मनहुँ मैन साजै ॥ अमल सुमिल जलनिधान मोतिनके शुभ वितान तापर पलिका जराय जड़ित जीव हरषै । कोमलतापर रसाल तन सुखकी सेज लाल मनहुँ सोम सूरज पर सुधाबिंदु बरषै २३ फूलनके विविध हार घोरिलनि उरमत उदार बिच बिच मणि श्याम हार उपमा शुक भाखी । जीत्यो सब जगत जानि तुमसौं हरि हारि मानि मनहुँ मदन धनुषनिते गुण उतारि राखी ॥ जल थल फल फूल भूरि अंबर पट वास धूरि स्वच्छ यच्छ कर्दम हिय देवनि अभिलाखे । कुंकुम मेदौयवादि मृगमद

काल अतिरूपनिधान। खेलनको निकरे चौगान ॥ हाथ धनुष शर मन्मथरूप। संग पयादे सोदर भूप २ जाको जबहीं आयसु होइ। जाइ चढ़ै गज वाजिन सोइ ॥ पशुपतिसे रघुपति देखिये। अनुगत शेष महा लेखिये ३ वीथी सब असवारिन भरी। हय हाथिनसों सोहत खरी ॥ तरुपुंजनसों सरिता भली। मानों मिलन समुद्रहि चली ४ ॥

१। २ जा गजपर औ जा वाजिपर चढ़िकै चलिबे को रामचन्द्र को आयसु जाको होत है सो तापर चढ़त है रामचन्द्रके अनु कहे पाछे गत कहे प्राप्त शेष लक्ष्मण हैं औ महादेव के अनु पश्चाद्भाग में गत प्राप्त शेष कहे शेषनाग हैं शेष को महादेव ग्रीवा में पहिरे हैं सो पृष्ठभाग में उरमत हैं इत्यर्थः कहूं अनुगण सैन पाठ है तौ अनु पश्चाद् गण समूह सैनको पेखियत है औ महादेवके अनु पश्चाद् गण वीरभद्रादिकनकी महासैन पेखियत ३ वीथी गली ४ ॥

यहि विधि गये राम चौगान। सावकाश सव भूमि समान ॥ शोभन एक कोस परिमान। रचो रुचिर तापर चौगान ५ एक कोद रघुनाथ उदार। भरत दूसरे कोद विचार॥ सोहत हाथै लीन्हे छरी। कारी पीरी राती हरी ६ देखन लग्यो सबै जगजाल। डारि दियो भुव गोला हाल ॥ गोला जाइ जहां जहँ जबै। होत तहीं तितहीं तित सबै ७ मनों रसिक लोचन रुचि रचे। रूपसंग बहु नाचनि नचे ॥ लोक लाज छांड़े अँगअंग। डोलत जनु जनमनके संग ८ गोला जाके आगे जाइ। सोई ताहि चलै अपनाइ ॥ जैसे तियगण को पातिरयो। जेहि पायो ताहीको भयो ९ उतते इत इतते उत होइ। नेकहु ढील न पावै सोइ ॥ काम क्रोध मदमढ्यो अपार। मानों जीव भ्रमै संसार १० ॥

सावकाश कहे फैलाव सहित और समान कहे नीच उचरहित ५ कोद

कहे और ६ जाहीं कहे तबै ७ रुचि कहे इच्छा रूप सुंदरता ८।९।१०॥

जहां तहां मारै सब कोइ। ज्यों नर पंचविरोधी होइ॥ घरी घरी प्रति ठाकुर सबै। बदलत वासन वाहन तबै ११॥ दोहा॥ जब जब जीतैं हाल हरि तब तब बजत निशान॥ हय गय भूषण भूरि पट दीजत लोग निदान १२ चौपाई॥ तब तेहि समय एक बेताल। पढ़्यो गीत गुनि बुद्धि विशाल॥ गोलनकी बिनती सुख पाई। रामचन्द्रसों कीन्ही आई १३ दंडक॥ पूरवकी पूरा पूरी पापर पूरीसे तन बापुरी वैदूरि हीते पांयन परति हैं। दक्षिणको पक्षिनीसी गच्छैं अंतरिक्ष मग पश्चिमको पक्षहीन पक्षी ज्यों उरति हैं॥ उत्तरकी देती हैं उतारि शरणागतनि बातन उतायली उतार उतरति हैं। गोलनकी मूरति न दीजिये जू अभैदान रामवैर कहां जाइँ बिनती कराति हैं १४॥

वासन वस्त्र ११। १२ बेताल भाट गोलनकी बिनती कहे गोलनकी तरफ सों बिनती रामचन्द्रसों करयो १३ यामें समय विचारि स्तुतिपूर्वक गोलनकी बिनतिनके व्याज खेल खेलिबो मने करत हैं कहत हैं कि हे राम! पापर पूरी भेद प्रसिद्ध है औ पूरी कहे पूरीसम हैं तन जिते कहे ऐसे जे पूर्वदिशा की पूरा कहे ग्राम पूरी कहे लघुग्राम हैं ते बापुरी दूरिही ते भयसों तुम्हारे पांयन परती हैं औ दक्षिणकी पूरापूरी अंतरिक्ष आकाश के मग पक्षिणी सम गच्छती हैं पक्षहीन कहि या जनायो कि उड़ि जाइबो चाहती हैं पै पक्षहीनता सों रहि जाती हैं औ उत्तरकी पूरापूरी तुम्हारो विरोधी जो शरणागत है ताको उतारि देती हैं अथवा उत्तरमें पर्वत पर बसती हैं सो पर्वतसों उतारि देती हैं कैसे उतारि देती हैं कि बातनहूं करि कै उतायली जो जल्दी है ताके उतारमें उतरती हैं अर्थ यह कहती हैं कि तुम इहांसों जल्दी जाउ नहीं तौ रामचन्द्र जानि हैं तौ हमको बिदारि हैं यासों या जनायो कि उत्तर की पुरी दुर्गम पर्वतनहूं पर हैं तहांऊं तुम्हारे वैरीको नहीं राखि सकतीं तासों गोलनकी मूरति बिनती करती हैं कि राम-

कर्पूर आदि बीरा वनितन बनाइ भाजन भरि राखे २४ पन्नगी नगीकुमारि आसुरी सुरी निहारि विविध बीन किन्नरीन किन्नरी बजावैं। मानों निष्काम भक्ति शक्ति आय आपनीन देहन धरि प्रेमन भरि भजन भेद गावैं॥ सोदर सामंत शूर सेनापति दास दूत देश देशके नरेश मंत्रि मित्र लेखिये। बहुरे सुर असुर सिद्ध पंडित मुनि कवि प्रसिद्ध केशव बहुराय राजराज लोक देखिये २५॥

पांच छंदको अन्वय एक है रैनिमें चंद्रिका समेत चंद्र चित्तको मोहत है प्रसन्न करत है अर्थ रात्रिके संगसों चंद्रिका समेत है चंद्र चित्त मोहत है सो मानों सुष्ठु जो मति है ताके संगसों सुष्ठु जो मन है ताके अंग आनंदमय कहे स्वच्छ सुकृत सुकर्म के रंगसों रचे हैं सुकृत को रंग श्वेत कविप्रिया में श्वेत गणना में कह्यो है "शेष सुकृत शुचि सत्त्वगुण संतनके मनहास" सो मन सफल कहे पुत्र धनादि के सुखन सहित सोहत हैं सुकृतीको सब सुख प्राप्त होत हैं यह प्रसिद्ध है सुमतिसम रात्रि है सुमनसम चंद्रमा है सुकृतसम चांदनी है ललित लतनके विलाससों उदास ह्वैकै अर्थ त्याग करिकै मायासम लता हैं भक्तसम भ्रमर हैं कर औ नयन औ बैनसम कमल हैं बैनपदते इहां मुख जानौ छंद उपजाति है आसपास जे दीप वृक्ष कहे झाऊ हैं तिनके विलाससों राजभवनकी ज्योति जगति है जानों यौवन के आयें शरीर की ज्योति जगति है इति शेषः॥ ताही राजभवन की चंद्र चंद्रिका निमयी कहे चंद्रिकनसों युक्त जो मोतिनमय भीति है ताहि भव जो संसार है ताके जे भूरि भेद हैं अर्थ अनेक विधि चित्र हैं तिन सहित पंक जो चंदनपंक है तासों सेवकन चित्रित करी है अर्थ भीतिनमें चित्र विचित्र चंदन पंक लग्योहै सो श्रीखंड जो चंदनहै ताको शैल मलयाचल अथवा चंदनही को निर्मित जो शैल है ताकी शुभ्र कहे श्वेत औ सुंदरी रुचिरदरी कंदरा को पंडित कहे चतुर जो शशि है सो जोन्ह ज्योति सों मंडित करी है चंदन लेपसों युक्त है तासों राजभवन को श्रीखंड शैलसम कह्यो है दरीसम गृहको उदर है ता भूपभवनमें ये दीप की द्युति विभाति कहे शोभित है औ मणिदीप कहे भीतिनमें जटित मणिनमें प्रतिबिंबित जे दीप हैं तिनहूंकी पांति

दीपति हैं सो मानों भुवमें अर्थ भुवमंडलमें मंत्रिनमय कहे मंत्रिनके तेजमय अर्थ मंत्रिनके प्रतापसों शुक्र राजाको तेज राजत है भूपतेजसम एक दीप है मंत्रिनके तेजसम प्रतिबिंबदीपहैं मंत्रिनको तेज राजतेजके प्रतिबिंबसम होतही है अथवा मानों राजाको तेज है मंत्रिन में व्याप्त राजत है मंत्रिनसम मणि हैं भूप तेजसम दीप है औ आरे कहे ताख मणिन करिकै खरे कहे नीकी विधि चित्रित हैं तिनमें बहुवास कहे सुगंधनसों भरे अनेक वासन कहे पात्र गृहगृह में कहे स्थान स्थान में स्त्रीजन राखती हैं ते मानों मैन जो काम है ताको साजै हैं अर्थ कामके लाइबे के सुगंध हैं औ अमल कहे निर्मल सुमिल कहे गोल औ जल कहे पानी के निधान जे मोती हैं तिनके शुभ वितान कहे चँदोवा हैं तन सुख तन जो लाल अरुण सोमसम मोतिन को वितान है सुधाबिंदुसम मोती हैं सूर्यसम अरुण सेज है घोरिला धनुषके गोशा सदृश होत है औ धनुषसों गुण उतास्यो जात है तब एक गोशामों लग्यो रहत है "गुणरोदःमौर्वीज्यासिंजिनी गुण इत्यमरः" औ जल औ थलके भूरि कहे अनेक विधिके फल औ फूल औ अंबर वस्त्र औ पटवास कहे सुगंधचूर्ण ताकी धूरि "पिष्टातः पटवासक इत्यमरः" औ जाको हिय में देवता अभिलाष करत हैं सो ऐसो स्वच्छ यच्छकर्दम "कर्पूरागुरुकस्तूरीकंकोलैर्यक्षकर्दमः" औ कुंकुम केसरि औ मेदौयवादि कहे उबटन औ मृगमद कस्तूरी औ कर्पूर आदि औ हीरा बनाइ बनाइकै भिन्नभिन्न भाजन पात्रनमें बनिता जे दासीजन हैं तिन भरि राखे हैं किन्नरीन कहे सारंगीनकी आपनी आपनी शक्ति सों कहे अणिमादि सिद्धिके बलसों देहनको धरिकै बहुरे कहे आज्ञा पाइ रावरी सभा सों अपने धामनको जात हैं तासों अब आपहू चलिकै राजलोकको देखिये औ तहां पौढ़िये इत्यन्वयः २१।२२।२३।२४।२५॥

दोहा॥ कहि केशव शुकके वचन सुनि सुनि परमविचित्र॥ राजलोक देखन चले रामचन्द्र जगमित्र २६ नाराच छंद॥ सुदेश राजलोक आसपास कोट देखियो। रची विचारि चारि पौरि पूरबादि लेखियो॥ सुवेष एक सिंह पौरि एक दंतिराज है। सु एक वाजिराज एक नंदिवेष साज है २७ दोहा॥ पांच चौक मध्यहि रच्यो सातलोकतर

हारि ॥ पट ऊपर तिनके तहां चित्रे चित्र विचारि २८ चामर छंद ॥ भोज एक चौकमध्य दूसरे रची सभा। तीसरे विचार मंत्र और नृत्यकी प्रभा ॥ मध्यचौक में तहां विदेहकन्यका बसै। सर्वभाव रामचन्द्रलीन सर्वथा लसै २६ ॥

राजलोक कहे राजभवन २६ रामचन्द्रजू राजलोकके आसपास सुदेश कहे अच्छो कोट देखत भये अर्थ आसपास कोट है ताके मध्यमें राजलोक है ता कोटके पूर्वादि दिशामों क्रमसों चारों ओर चारिपौरि कहे द्वार हैं पूर्व दिशामों सिंह पौरि है दक्षिण दिशामों दंतिपौरि है पश्चिमदिशामों वाजिपौरि है उत्तर-दिशामों नंदिपौरि है इहां सिंहादिपौरिसों सिंहादि स्वरूपयुक्त पौरि जानौ२७ ता कोटके मध्यहि कहे मध्यमें सात लोकके तरहारि कहे सतमहलाके तरे पांच चौक अँगनाई रचो है अर्थ अँगनाई विशिष्ट पृथक् पांच भवन बने हैं सतमंजिला हैं तिनके कहे तिन भवनन के पट्ऊपर कहे छठयें लोकके जे ऊपर कहे छति है तहां विचारिकै कहे जहां जैसो चाहिये तैसो तहां समुझिकै चित्र चित्रे हैं और अर्थ पांच चौक मध्यमें रच्यो है ते कैसे हैं सातों लोक जे अतल १ वितल २ सुतल ३ तलातल ४ महातल ५ रसातल ६ पाताल ७ हैं तरहारि कहे अधन्यून जिनते अर्थ सातौलोकमें ऐसे धाम नहीं हैं औ षट् कहे छःलोक जे भू १ अंतरिक्ष २ स्वर्ग ३ ब्रह्मलोक ४ पितृलोक ५ सूर्यलोक ६ तिनहूं के ऊपर है अर्थ श्रेष्ठ है यासों या जनायो कि सातवों लोक जो वैकुंठ है ताके सदृश है तहां विचारिकै अर्थ यथोचित स्थानमें चित्र चित्रे हैं अथवा सात लोक जे तरहारि कहे तरेके हैं अतलादि औ षट् जे भूलोकादि हैं तिनहूं के ऊपर जो लोक है वैकुंठ सो विचारिकै तिनके कहे ता वैकुंठ के धामनके चित्रसम चित्रे हैं अर्थ वैकुंठ धामन के प्रतिमा बने हैं अथवा विचारिकै तिनके वैकुंठ धामनके चित्र चित्रे हैं अर्थ जे चित्र वैकुंठ धामन में हैं तेई इनमें चित्रे हैं २८ यामें पांचहू चौकनको प्रयोजन कहत हैं और चौथे चौकमें नृत्यकी प्रभा रची इत्यर्थः २६ ॥

दोधकछंद ॥ मंदिर कंचनको यक सोहै। श्वेत तहां छतुरी मन मोहै ॥ सोहत शीरष मेरुह मानों। सुंदर देव दिवान बखानों ३० मंदिर लालनको यक सोहै। श्याम तहां

छतुरी मन मोहै ॥ ताहि यहै उपमा सब साजै । सूरज अंक मनों शनि राजै ३१ मंदिर नीलनको यक सोहै । श्वेत तहां छतुरी मन मोहै ॥ मानहुँ हंसनकी अवलीसी । प्राविटकाल उड़ाइ चलीसी ३२ मंदिर श्वेत लसै अति भारी । सोहति है छतुरी अति कारी ॥ मानहुँ ईश्वरके शिर सोहै । मूरति राघवकी मन मोहै ३३ तोटकछंद ॥ सब धामनमें यक धाम बन्यो । अतिसुंदर श्वेत स्वरूप सन्यो ॥ शनि सूर बृहस्पति मंडलमें । परिपूरण चन्द्र मनों बलमें ३४ चौपाई ॥ बहुधा मंदिर देखे भले । देखन शुभ्रशालिका चले ॥ शीत भीत ज्यों नेक न त्रसे । पलुक वसन शालामहँ लसे ३५ जलशाला चातक ज्यों गये । अलि ज्यों गंधशालिका ठये ॥ निपट रंक ज्यों शोभित भये । मेवाकी शालामें गये ३६ ॥

तिन पांचहू मंदिरन को रूप क्रमसों पांच छंदनमों कहत हैं मेरुह कहे मेरु के शीर्ष कहे अग्रभागमें देवदिवान कहे देवसभा है ३० । ३१ मेघन करि आच्छादित श्याम प्राविट्काल कहे वर्षाकाल सम नीलमणिनको मंदिर है हंसावली सम श्वेत छतुरी है ३२ ईश्वर महादेव ३३ शनैश्चरादि के मंडलमें परिदृष्ट्यादि दोषसों संयुक्त हैकै चन्द्रमा हीनबलहू हैजात है तासों बल में कहे बलाधिक्यसों युक्त कह्यो इहां शनि सूर बृहस्पति मंडल में कहे शनि सूर बृहस्पति आदिके मंडल में जानौ श्याम मंदिर शनैश्चर है अरुण मंदिर सूर्य है सुवर्णमंदिर बृहस्पति है श्वेतमंदिर शुक्र है ३४ शीत जो जाड़ो है तासों भीत जो प्राणी हैं सो जैसे अनेक वस्त्रनमें प्रसन्नचित्त होत हैं या प्रकार वस्त्रन के देखिबे में नेत्र से कहे न ऊंचे अर्थ प्रसन्नचित्त है सब बसनशाला के वस्त्र देख्यो इत्यर्थः याही विधि जलशालादि में चातकादि सम जाइबे में केवल चित्तचोप की समता जानौ ३५ । ३६ ॥

चतुर चोरसे शोभित भये । धरणीधर धनशाला गये ॥ मानमीन कैसे मनमेव । गये मानशालामें देव ३७ मंत्रिनस्यो

बैठे सुख पाइ । पलुक मंत्रशालामें जाइ ॥ शुभ शृँगारशाला को देखि । उलटे ललित बयनसे लेखि ३८ तोटकछंद ॥ जब रावरमें रघुनाथगये । बहुधा अवलोकत शोभ भये ॥ सब चंदन की शुभ शुद्धकरी । मणि लालशिरानि सुधारिधरी ३९ बरँगा अतिलाल सुचंदनके । उपजे वन सुंदर नंदनके ॥ गजदंतनकी शुभ सींक नई । तिन बीचन बीचन स्वर्णमई ४० तिनके शुभ छप्पर छाजत हैं । कलशा मणिलाल विराजत हैं ॥ अति अद्भुत थंभनकी दुगई । गजदंत सुचंदन चित्रमई ॥ तिनमांझ लसैं बहु भायन के । शुभ कंचन फूल जरायनके ४१ ॥

मानिनीन के सदृश इत्यर्थः ३७ जा शाला में स्त्रीजन शृंगार करती हैं अथवा भूषणादि शृंगारवस्तु जा शाला में धरे हैं ताको देखतेही प्रेमातुर है रावर में जाइबेकी इच्छा करि नयनसम कहे नयनपूतरीसम उलटे कहे फिरे नयनपूतरी अतिशीघ्र फिरति है तैसे अतिशीघ्र फिरे जानौ ३८ रावर स्त्रीभवन शिरा टोपी ३९ । ४० तिनके कहे गजदंत सुवर्णादि के अथवा तृणके दुगई द्विकनाई अथवा द्वैखंभ एक में मिलाइ लागत हैं सो दुगई कहावत है ४१ ॥

रूपमालाछंद ॥ वर्णवर्ण जहां तहां बहुधा तने सो वितान । झालरैं मुकतानकी अरु झूमका बिनमान ॥ चौकठैं मणि नीलकी फटिकानके सुकपाट । देखि देखि सो होत हैं सब देवता जनु भाट ४२ श्वेत पीत मणीनकी परदा रची रुचि लीन । देखिकै तहँ देखिये जनु लोल लोचन मीन ॥ शुभ्र हीरनको सुआँगन है हिंडोरा लाल । सुंदरी जहँ झूलहीं प्रतिबिम्बके जहँ जाल ४३ स्वागताछंद ॥ धामधाम प्रति आसन सोहैं । देखि देखि रघुनाथ विमोहैं ॥ बरणि शोभ कवि कौन कहैजू । यत्र तत्र मन भूलि रहैजू ४४ दोहा ॥

जाके रूप न रेख गुण जानत वेद न गाथ ॥ रंगमहल रघुनाथ गे राजशिरीके साथ ४५ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां लोकवर्णनन्नामैकोनत्रिंशः प्रकाशः ॥ २६ ॥

झूमका झब्बा विनमान कहे बहुत ४२ तिनको देखिकै सबके लोचन मीनसम लोल होत हैं यह देखियत है ४३ । ४४ जाके रूपादि एको नहीं हैं ते राजश्री के साथ ह्वै रंगमहल गये तो रूपादियुक्त प्राणिन को तौ लै जायोई चाहै इति भावार्थः ४५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायामेकोनत्रिंशः प्रकाशः ॥ २६ ॥

दोहा ॥ या तीसयें प्रकाशमें बरण्यो बहुविधि जानि ॥ रंगमहल संगीत अरु रामशयन सुखदानि १ पुनि सारिका जगाइबो भोजन बहुत प्रकार ॥ अरु वसंत रघुवंशमणि वर्णन चंदउदार २ चतुष्पदीछंद ॥ द्युति रंगमहल की सहसवदनकी बर्णै मति न बिचारी । अधऊरधराती रंगसँघाती रुचि बहुधा सुखकारी ॥ चित्री बहुचित्रनि परम विचित्रनि रघुकुलचरित सुहाये । सब देव अदेवनि अरु नरदेवनि निरखि निरखि शिर नाये ३ आई बनि बाला गुणगणमाला बुधि बल रूपन बाढ़ी । शुभ जाति चित्रिनी चित्रगेहते निकसि भई जनु ठाढ़ी ॥ मानों गुणसंगनि यों प्रति अंगनि रूपक रूप विराजै । बीणानि बजावैं अद्भुत गावैं गिरा रागिनी लाजै ४ ॥

१ । २ संघाती कहे सघन है रुचि शोभा ३ मानों गानादि जे गुण हैं तिनके संगनि समूहनिसों युक्त जे प्रति अंग हैं तिनसों युक्त रूप जो सुंदरता के रूपक कहे विचित्र विराजत हैं ४ ॥

पद्धटिकाछंद ॥ स्वर नाद ग्राम नृत्यति सताल। मुख वर्ग विविध आलापकाल॥ बहुकला जाति मूर्च्छना मानि। बड़भाग गमकगुण चलत जानि ५॥

षड्जादि जे सप्तस्वर हैं तिनको जो काल औ तार तीनि प्रकार को नाद है औ तीनि प्रकारके जे ग्राम हैं औ देशी आदि जे अनेक विधि ताल हैं तिन सहित नृत्यति कहे नाचती हैं। स्वरादीनां सर्वेषां लक्षणमुक्तं संगीतदर्पणे। तत्र स्वरलक्षणम् "श्रुत्यनन्तरभावित्वं यस्यानुरणनात्मकः। स्निग्धश्च रंजकश्चासौ स्वर इत्यभिधीयते १ अथवा॥ स्वयं यो राजते नादः स स्वरः परिकीर्त्तितः २ श्रुतिभ्यः स्युः स्वराः षड्जर्षभगान्धारमध्यमाः। पञ्चमो धैवतश्चाथ निषाद इति सप्त ते ३ अथ त्रिधा नादः॥ ध्वनौ तु मधुरास्फुटे, कलो मन्द्रस्तु गम्भीरे तारोत्युच्चैस्त्रयस्त्रिषु इत्यमरः॥ अथ ग्रामलक्षणम्॥ ग्रामः स्वरसमूहः स्यान्मूर्च्छनादेः समाश्रयः। तौ द्वौ धरतले तत्र स्यात् षड्जग्रामआदिमः १ द्वितीयो मध्यमग्रामस्तयोर्लक्षणमुच्यते। षड्जग्रामः पञ्चमे च चतुर्थे श्रुतिसंस्थिते २ स्वीयान्त्यश्रुतिसंस्थोसि मध्यमग्राम इष्यते। यद्वा धस्त्रिश्रुतिः षड्जे मध्यमे च चतुःश्रुतिः ३ ऋमयोः श्रुतिमेकेकां गान्धारश्चेत्समाश्रयेत्। यः श्रुतिं यो निषादस्तु धश्रुतिं स श्रुतिं सृतः४ गान्धारग्राममाचष्टे तदा तं नारदो मुनिः। प्रवर्त्तते स्वर्गलोकग्रामोसौ न महीतले ५ अथ काललक्षणं विनोदाचार्येणोक्तम्॥ हस्तद्वयस्य संयोगे वियोगे वापि वर्त्तते। व्याप्तिमान् यो दशप्राणैः स कालस्तालसंज्ञकः॥ तथा च सारोद्धारे॥ कालस्ताल इति प्रोक्तः सोऽवच्छिन्नोद्रुतादिभिः। गीतादिमानकर्त्ता स्यात्स द्वेधा कथितो बुधैः॥ तथा च संगीतार्णवः॥ कालः क्रिया च मानं च संभवन्ति यया सह। तथा तालस्य संभूतिरिति ज्ञेयं विचक्षणैः १ मार्गदेशी गतत्वेन तालोसौ द्विविधो मतः। शुद्धशालंगसंकीर्णास्तालभेदाः क्रमान्मताः २ तालः कालक्रियामानमित्यमरः" औ आलाप के काल मों कहे समयमों मुख विविध वर्ग कहे अनेक रूप होत हैं। आलापलक्षणम् "रागालापनमालप्तिः प्रकटीकरणं मतम्" औ बहु कहे बहुत प्रकारकी जे कला हैं औ पांच जे जाति हैं औ एकईस जे मूर्च्छना हैं औ बड़ कहे बड़े अर्थ नीको जो चारि प्रकार को भाग है औ पंचदश प्रकार की जो गमक है इनके सरकेते गुण हैं तिनसहित नृत्यमों चलति कहे

चलती है यह जानि कहे जानौ । अथ कलाः चूड़ामणिः " दक्षिणोवार्त्त-कश्चित्रो ध्रुवचित्रतरस्तथा । अथ चित्रतरश्चेति षण्मार्गाः शास्त्रसंमताः ॥ ध्रुवादिककलाष्टौ च मार्गे दक्षिणसंज्ञके । ध्रुवका सर्पिणी चैव पताका पतितास्तथा॥ चतस्रो वार्तिके ज्ञेयाश्चित्रेथ पुनरुच्यते । ध्रुवका पतिता चेति योजनीया विशेषतः॥ ध्रुवे कलैका विज्ञेया शार्ङ्गदेवेन कीर्तिता । अथ चित्रतरे मार्गे कला च द्रुतसंमिता ॥ मार्गे चित्रतमे ज्ञेया कला करजसंज्ञिता ॥ अथ जातयः ॥ चतुरस्रस्तथा तिस्रः खण्डो मिश्रस्तथैव च । संकीर्णा पंच विज्ञेया जातयः क्रमशो बुधैः ॥ चतुर्वर्णैस्त्रिभिर्वर्णैः पञ्चवर्णैस्तथैव च । सप्तवर्णैश्च नवभिर्जातयः क्रमशोदिताः॥अथ मूर्च्छनालक्षणम् ॥ क्रमात्स्वराणां सप्तानामारोहश्चावरोहणम् । मूर्च्छनेत्युच्यते ग्राम त्रयेताः सप्त सप्त च ॥ अथ भागलक्षणम् ॥ धातुप्रबन्धावयवः सचोद्ग्राहादिभेदतः। चतुर्धा कथितो भागस्त्वदानूद्ग्राहसंज्ञकः ॥ आदावुद्ग्राह्यते गीतं येनाद्ग्राहस्ततो भवेत् । मेलापको द्वितीयस्तु ग्राहकध्रुवमेलनात् ॥ ध्रुवत्वाद्ध्रुवसंज्ञस्तु तृतीयो भाग उच्यते । आभोगस्त्वन्तिमो भागो गीतपूर्णत्वसूचकः ॥ अर्थ गमकलक्षणम् ॥ स्वरस्यकं यो गमकः श्रोतृचित्तसुखावहः । भेदाः पञ्चदशैवास्य कथितास्तिरियादयः" ५॥

बहुवर्ण विविध आलापकालि । मुखचालि चारु अरु शब्द चालि ॥ बहु उडुप तिर्यगपति पति अड़ाल । अरु लाग धाउ रापरंगाल ६ उलथा टेंकी आलम सदिंड । पदपलटि हुरुमयी निशँक चिंड ॥ अरु तिनाकि भ्रमनि देखि मती धीर । भ्रमि सीखत हैं बहुधा समीर ७ मोटनक छंद ॥ नाचैं रसवेष अशेष तबै । बरसैं सुरसैं बहुभांति सबै ॥ नवहू रसमिश्रित भाव रचैं । कौनों नहिं हस्तकभेद बचैं ८ दोहा ॥ पाइँ पखाउज तालसों प्रतिधुनि सुनियत गीत ॥ मानहुँ चित्रविचित्र मति पढ़त सकल संगीत ९ अमल कमलकर अंगुली सकल गुणनिकी मूरि ॥ लागत मूठ मृदंगमुख शब्द रहत भरि पूरि १० ॥

प्रथम गान को विषय निरूपण करि अब द्वै छंदमों नृत्यको विषय निरू-

पण करत हैं द्वै छंदको अन्वय एक है आलापकालि कहे आलापकाली अर्थ आलापकाल के योग्य बहुवर्ण कहे अनेक रंगकी अर्थ अनेक तरह की औ विविध कहे अनेक जे चारु कहे सुंदर मुखचालि नृत्य हैं औ शब्दचालि औ बहुत प्रकारके जे उडुप हैं औ तिर्यगपति कहे पक्षिशार्दूल नृत्य औ पति औ अड़ाल औ उलथा औ टेंकी औ आलम नृत्यसदिंडकहे दिंड नृत्यसहित औ पद पलटी औ हुरुमयी औ निशंक औ चिंड ये जे नृत्य हैं औ कहूं उडुपति रियपति बट अड़ाल पाठहै तौ तिरिय औ बट येऊ नृत्यके भेद जानौ तिनमें तिन छिनकी अमु कहे शीघ्र भ्रमनि कहे घूमनि देखिकै मतीधीर कहे धीरमति सों अर्थ मतिमों धैर्य धरिकै एकाग्रचित्त ह्वैकै इति भ्रमि कहे बघरुराके ब्याज घूमि २ कै समीर जे वायु हैं ते सीखत हैं अथवा तिनकी भ्रमनि देखिकै अपनी शीघ्रता के गरूर करिकै मति है धीर जिनकी ऐसे जे समीर हैं ते भ्रमि कहे संदेहको प्राप्त ह्वैकै अर्थ अपना सों अधिक जानि आतुरह्वैकै शीघ्रता सीखत हैं । नृत्यानां लक्षणमुक्तं संगीतदर्पणे—अथ मुखचालिः " नृत्यादौ प्रथमं नृत्यं मुखचालिरिति स्मृता " अथ शब्दचालिः ॥ प्राग्वत् कृत्वास्थानहस्तौ मध्यसंचेन नर्त्तकः । यत्र स्थित्वैकपादेन शब्दवर्णानुगामिनीम् ॥ गतिं नयेद् द्वितीयेन दक्षिणाध्वनि शोभनाम् । तद्वत्पादान्तरेणाथ क्रमेणैतद्द्वयोर्यदा ॥ पर्यायेण गतिं कुर्याद्वार्त्तिकादिषु पञ्चसु । मार्गेष्वसौ शब्दचालिः पण्डितैश्च निरूपिता २ अथोडुपानि ॥ नेरिः करणनेरिश्च मित्रं चित्रं तथा भवेत् । नत्रश्च जारमानश्च मुरुरिंडमुरुं तथा ॥ हुल्लश्च लावणी ज्ञेया कर्त्तरी तुल्लकन्तथा । प्रसरश्च द्वादशः स्युरुडुपानि यथाक्रमात् ३ अथ पक्षिशार्दूलनृत्यलक्षणम् ॥ यदि मण्डीमधिष्ठाय प्रसृतौ भ्रमतः करौ । तदा तं नरशार्दूलाः पक्षिशार्दूलमूचिरे ४ अथ पतिनृत्यलक्षणम् ॥ कूटाक्षराभ्यां कान्याचिन्निमित्तात्यन्तकोमलाः । एकरूपाक्षरः चश्चत्पुटतालानुगापदा ॥ वाचते यो वाद्यखण्डो विरामैर्भूरिभिर्मुहुः । यो निर्मितो वाद्यपाठैर्वाद्यभेदापतिः स्मृतः ५ अथाडाललक्षणम् ॥ सुलूं बद्ध्वा तदोत्प्लुत्य चरणैः पक्षिपक्षवत् । भ्रमित्वा नियते भूमौ तदडालमितीरितम् ६ अथ लागनृत्यलक्षणम् ॥ लागशब्देन कर्णाटभाषया उत्प्लुतिरिति ७ अथ धावनृत्यलक्षणम् ॥ आकाशचार्यो द्विन्नाश्चेत्ततश्च तिरियम्भवेत् । अन्ते मुरुतदौदृष्टं धाउनृत्यं नटोत्तमैः ८ अथ रापरङ्गालनृत्यलक्षणम् ॥ शूलं बद्ध्वैकपादेन सहैवानुपतेद्यदि । द्वितीयोऽपि तदारापरंगालं तद्विदो विदुः ९ अथ उलथानृत्यलक्षणम् ॥

उत्प्लुत्य ध्रुवैर्यदा नृत्येत् करणैरनालसन्मितैः। तदोत्प्लुत्याद्यकरणं नृत्यं नृत्यविदो विदुः (अथवा उलथानृत्य को लक्षण नामार्थ ही है) १० अथ टेंकीनृत्यलक्षणम् ॥ पादौ समौ यदा यस्मिन् पार्श्वे नामरतार्थिना। उत्प्लुत्योत्पादयेच्चित्रं तदा टेंकीति कथ्यते ११ अथालमनृत्यलक्षणम् ॥ भूमावेकं समास्थाय द्वितीयं पूर्ववद्यदा। पानश्चेरणं चारुतं बीशश्चतुरा विदुः (याही को नामान्तर अमल है) १२ अथ दिण्डनृत्यलक्षणम् ॥ उत्प्लुत्य चरणद्वन्द्वं वज्ञनिष्पीडनोपमम्। परिभ्राम्यावनीं याति यदि तद्दिण्डमुच्यते १३ अथ पदपलटीनृत्यलक्षणम् ॥ पुरःप्रसार्य्य चरणं लङ्घयेदपरांघ्रिणाम्। सुलूपूर्वं तदान्वर्था प्रोक्ता लङ्घितजङ्घिका (याहीको अन्वर्थ पदपलटी है) १४ अथ हुरुमयीनृत्यलक्षणम्॥ अलातां परिवृत्यांगं पादपृष्ठं गतं यदा। अलातांघ्रौ पृष्ठगते शीघ्रमन्यांघ्रिलङ्घयेत् ॥ लङ्घयेद्दक्षिणान्येन प्रोक्ता हुरुमयी नटैः १५ अथ निशङ्कनृत्यलक्षणम् ॥ सुलूपूर्वपदोत्प्लुत्य मिलितौ चरणौ समौ। दूरम्भूमौ निपतितः स निशङ्कः प्रकीर्त्तितः १६ अथ चिण्डनृत्यलक्षणम् ॥ विडचिण्डुः कालचारी इति चिण्डुर्द्विधा भवेत्। यदि पिन्नस्तु मुख्योत्र निबद्धोविडचिण्डुकः ॥ तत्तज्जात्यनुकारेण कालचारीति कीर्तितः। तालतानसुलूतुंगघर्घरीध्वनिपेशलम् ॥ वादते तुडते केचिद् गीतेन यतिपूर्वकम्। तत्तज्जातियुतं नृत्यं नानागनिनिनिभितम् ॥ चारुपादानुचंचत्रकिंकिणीध्वनिपेशलम्। कालासैरपि लास्याङ्गैरङ्गजैरन्तरान्तरा ॥ धृतहस्तत्रिशूलादि यत्र नित्यं समाचरेत्। तदा धीरैः समाख्यातं चिण्डनृत्यं मनोहरम् १७ ॥ ६। ७ रसवेष कहे रस स्वरूप अर्थ शृंगारादि जे नवरस हैं तिनमें जा रसको प्रबंध गावती ता रसके रूप आप ह्वै जाती हैं और बहुत प्रकारसों रसस्वाद को वर्षती हैं भाव कहे चेष्टा हस्तक हस्तक्रिया रंगमहल में स्त्रियन के पांवकी औ पखावज की तालसहित प्रति धुनि जो झाईं शब्द है ताहूको गीत सुनियत है सो मानों विचित्रमति जे स्त्री पुरुषन के चित्र हैं ते ताही विधि पांवकी औ पखावज की ताल दैकै ताही विधि गीतको गाइ सब संगीत को पढ़त हैं ८। ९। १० ॥

घनाक्षरी ॥ अपघन घायन विलोकियत घायलनि घने सुख केशोदास प्रकट प्रमान है। मोहे मन भूलै तन नयन रुदन होत सूखै शोचपोच दुख मारण विधान है ॥ आगम

अगम तंत्र शोधि सब यंत्र मंत्र निगमनिवारिबेको केवल अयान है। बालनको तनत्राण अमितप्रमाण सब रीझि रामदेव कामदेव कैसो बान है ११॥

रीझि रामदेव कहत हैं इति शेषः कहा कहत हैं कि कामदेव के बाणन को त्राण है बख्तर बालकन को तन है अर्थ जबलौं जीव बालकन के तनरूपी त्राण में रह्यो तबलौं कामत्राण नहीं लागत औ गान जो है ताको त्राण बालकनहूं को तनही है अर्थ बालकनहूं को व्याप्त होत है इतनोई भेद है और अमित कहे अनंत सब बात प्रमाण कहे तुल्य है तासों गान कामदेव को ऐसो बाण है कैसो है कामदेव को बाण और गान जाके बाणु अपघन जो शरीर है तामें नहीं विलोकियत औ घायलन के घनो सुख होत है औ मन मोहकी मूर्च्छा को प्राप्त होत है औ तनकी सुधि भूलि जाति है औ नयनन में रोदन होत है औ पोच कहे नाना जो राज्यादि वस्तु को शोच है सो सूखि जात है औ मारणही है विधान जाको ऐसो दुःख होत है अथवा दुःखको मारणको कहे नाशकर्ता है विधान जाको औ अगम कहे अनंत आगम जे धर्मशास्त्र हैं औ अगम जे तंत्रशास्त्र हैं तिनके जे शोधि कहे ढूंढ़िकै अथवा शुद्ध करिकै यंत्र औ मंत्र हैं औ निगम जे वेद हैं ताके जे यंत्र मंत्र हैं ते सब ताके निवारण करिबे को केवल अयान अज्ञान हैं केवल पदको अर्थ यह किया कि निवारण की विधि वे जानत नहीं ११॥

दोहा॥ कोटिभांति संगीत सुनि केशव श्रीरघुनाथ॥ सीताजूके घर गये गहे प्रीतिको हाथ १२ सुंदरीछंद॥ सुंदरि मंदिर में मन मोहति। स्वर्णसिंहासन ऊपर सोहति॥ पंकजके कर हाटक मानहु। है कमला विमला यह जानहु १३ फूलनको सुबितान तन्यो वर। कञ्चनको पलिका यक तातर॥ ज्योतिजराय जरेउ अतिशोभनु। सूरजमंडलते निकस्यो जनु १४॥

जैसे सखीको हाथ गहि स्त्रीके पास सब जात हैं तैसे प्रीतिरूपा जो सखी है ताको हाथ गहे रामचंद्र सीता के घर गये १२। १३। १४॥

सोदर सुत मंत्रि मित्र दिशि दिशिके नृप विचित्र पंडित मुनि कवि प्रसिद्ध सिद्ध द्वार ठाढ़े। रामचन्द्र चन्द्रओर मानहुँ चितवत चकोर कुवलयजलजलधि जोर चोप चित्त बाढ़े २३ नचत रचत रुचिर एक याचक गुणगण अनेक चारण मागध अगाध बिरद बंदि टेरे। मानहुँ मंडूक मोर चातक चपकरत शोर तड़ित बसनसंयुत घनश्याम हेत तेरे॥ केशव सुनि वचन चारु जागें दशरथकुमारु रूपप्याइ ज्याइलीन जन जलथलओकके। बोलि हँसि विलोकि वीर दान मान हरी पीर पूरे अभिलाष लाख भांति लोकलोकके २४॥

टोल टोल कहे झुंड झुंड कैसे हैं करिदान जो मद है ताके कर्ता औ श्लेपसों दाता औ मान कहे आदरकर्ता भ्रमर जात हैं तिन्हैं शिरपर बैठावत हैं दाता है आदर करै ताके समीप सब प्रसन्न है जात हैं इति भावार्थः॥ समृद्ध कहे सम्पत्तियुक्त कैसे हैं मुनिगण सिद्ध कहे आपने वश्य जो सिद्धि कहे तपसिद्धि अथवा अष्टसिद्धि हैं तिन्हैं धरे हैं अथवा गिरिगणनही को विशेषण हैं सिद्धि जो सिद्धि तपसिद्धि है तिनको धरे हैं अर्थ जिन पर्वतन मों जातही बिन तप कियेही तपसिद्धि प्राप्त होति है मलिनगई कहे मलिनता को प्राप्तभई बोध कहे ज्ञानसम तरणि जे सूर्य हैं तिनकी किरणें हैं कुबुद्धिसम दीपज्योति है हृदयसम भूमंडल जानों निजज्योति अर्थ ब्रह्मज्योति उडु नक्षत्र आनंदकंद चन्द्रको विशेषण है सूर्य के प्रकाशके त्राससों निशिचर कहे चोर परस्त्रीगामी कुलटादिके जे विलास औ हास हैं ते निरास कहे नाश होत हैं औ भारे जे तम अंधकार हैं ते नाशत हैं औ शुभ कहे तपस्वी आदि प्राणी पूजादि कर्म तिनके सकल गात फूलत कहे प्रफुल्लित होत हैं हे राम! जैसे तुम्हारे नामको मुखमें लेत शुभ जे मंगलादि हैं तिनके गात प्रफुल्लित होत हैं औ शैल कहे पर्वत सम अशुभ अमंगल विलात हैं मदनरूपी जो पंडित ऋषि कहे पंडित श्रेष्ठ हैं गुदरैनि परीक्षा रामचंद्ररूपी जे चंद्र तुमहौ तिनकी ओर दर्शन के चोप चित्तन में जोर कहे अतिबाढ़े हैं जिनके ऐसे चकोर औ कुबलय कोई औ जलधिके जल हैं मानों या प्रकारसों दरादि द्वार पर ठाढ़े चितवत हैं एकै अर्थ नृत्यकारी नचत हैं

औ और जे अनेक याचक हैं ते अपने गुणगण रचत हैं छंद उपजाति है २१ । २२ । २३ । २४ ॥

दोहा ॥ जागत श्रीरघुनाथके बाजे एकहिं बार ॥ निगर नगारे नगरके केशव आठहुद्वार २५ मरहट्टाछंद ॥ दिन दुष्टनिकंदन श्रीरघुनंदन आँगन आये जानि । आईं नवनारी सुभगशृँगारी कंचनभारी पानि ॥ दात्योनि करत हैं मनन गहत हैं औरिबोरि घनसार । सजि सजि विधिमूकनि प्रति गंडूषनि डारत गहत अपार २६ दोहा ॥ संध्या करि रविपांय परि बाहर आये राम ॥ गणक चिकित्सक आशिषा बंधुन किये प्रणाम २७ मरहट्टाछंद ॥ सुनि शत्रु मित्रकी नृपचरित्रकी रुयाति रावत बात । सुनि याचकजनके पशु पक्षिनके गुणगण अति अवदात ॥ शुभ तन मज्जन करि स्नान दानकरि पूजे पूरणदेव । मिलि मित्र सहोदर बंधु शुभोदर कीन्हे भोजनभेव २८ ॥

निगर कहे मौन विधिको सजिकै प्रतिगंडूषनि कहे प्रतिकुल्लन को डारत हैं औ गहत हैं असार अनेक अथवा प्रतिगंडूषनि कहे कुल्लाकुल्ला प्रति अर्थ हरि कुल्ला मूकनि कहे कुल्लाके त्यागन की विधिको सजिकै डारत हैं त्यागत हैं फेरि और गहत हैं २५ । २६ गणक ज्योतिषी चिकित्सक वैद्य २७ मज्जन कहे उबटनादि सहोदर भरतादिबंधु जातिजन बिरादरी इति शुभोदर कहे नीकी विधि उदरपूर्ति करिकै अथवा शुभोदर बड़े भोजनकर्ता २८ ॥

दंडक ॥ निपट नवीन रोगहीन बहुक्षीरलीन पीन बच्छ पीन तनतापन हरत हैं । तांबे मढ़ी पीठि लागे रूपकखुरन डीठि डीठि स्वर्णशृंग मन आनँद भरत हैं ॥ कांसेकी दोहनी श्यामपाटकी ललितनोइ घटनसों पूजिपूजि पाँयनि परत

हैं । शोभन सनौढियन रामचन्द्र दिनप्रति गोशतसहस्र दैकै भोजन करत हैं २६ तोटकछंद ॥ तहँ भोजन श्रीरघुनाथ करैं । षटरीति मिठाइन चित्त हरैं ॥ पुनि खीरसों चौविधि भात बन्यो । तकि तीनि प्रकारनि शोभ सन्यो ३० षटभांति पहीति बनाइ सची । पुनि पांचसो व्यंजन रीतिरची ॥ विधि पांच सो रोटिन मांगत हैं । विधिपांच बरा अनुरागत हैं ३१ ॥

२६ चौविधि को अन्वय दूनों ओर है अर्थ चारि विधिकी खीर बनी है औ चारिविधिको भात बन्यो है ३० सची कहे संचित कस्यो अर्थ एकत्र कस्यो ३१ ॥

विधिपांच अथान वनाइ कियो । पुनि द्वै विधि क्षीरसो मांगि लियो ॥ पुनि झारिसो द्वै विधि स्वाद घने । विधि दोइ पछ्यावरि सातपने ३२ दोहा ॥ पांचभांति ज्योंनार सब षटरस रुचिर प्रकास ॥ भोजन करि रघुनाथजू बोले केशव दास ३३ हरिलीलाछंद ॥ बैठे विशुद्ध गृह अग्रज अग्रजाइ । देखी वसंतऋतु सुंदर मोददाइ ॥ बौरे रसालकुल कोयल केलिकाल । मानों अनंग ध्वज राजत श्रीविशाल ३४ ॥

अथान अचार झारि आम्र के चूर्ण में जीरजकादि डारि जल में घोरि बनति है पश्चिममों प्रसिद्ध है पछ्यावरि शिखरनि को भेदहै कहूं मूरनि कहत हैं या सब प्रकार भोजन के मिलाइ छप्पन होत हैं ३२ शर्करादि मधुर १ आम्रादि अम्ल २ करैला आदि तिक्त ३ मरिचादि कटु ४ लवणादि लवण ५ हर्रादि कषाय ६ ये जे षट् छः रस हैं तिनकी है रुचिर प्रकाश जामें ऐसी जो चूष्य आम्रादि १ पेय दुग्धादि २ भोज्य भक्तादि ३ लेह्य अवलेहादि ४ चर्व्य पिस्ता बदामादि ५ पांचभांति की जेवनार है ताको भोजन करिकै रामचन्द्र बोले भोजन समयमों बोल्यो न चाहिये यह धर्मशास्त्रोक्त है ३३ रामचन्द्रजू भोजन करिकै गृहअग्रज कहे गृह में अग्रज श्रेष्ठ जो गृह घर है ताके अग्रभागमों वसंत बहार देखिबे को जाइकै बैठत भये कोमल कहे सुगंधयुक्त रसाल आम्रवृक्ष बौरे हैं सो मानों यह केलिको

शूल ३६ किधौं वन जीवनको मधुमास । रचे जग लोचन भौंर विलास ॥ किधौं मधुको सुख देत अनंग । धरेउ मन मीननि कारण अंग ४० किधौं रतिकी रति वेलिनिकुंज । बसै गुण पक्षिनको जहँ पुंज ॥ किधौं सरसीरुह ऊपर हंस । किधौं उदयाचल ऊपर हंस ४१ दोहा ॥ प्राची दिशि ताही समय प्रकट भयो निशिनाथ ॥ वर्णत ताहि विलोकिकै सीता सीतानाथ ४२ ॥

नागरलोग कहे नगरश्रेष्ठ जो नर हैं ते रामचन्द्रको बैठे देखि परस्पर वर्णत हैं मूलके भक्षणसों शूल दूरिहोत है औ रामरूपी जो आनंदमूल है ताके देखतही शूल दूरिहोत है ३६ की वनरूपी जे जीव प्राणी हैं तिनको मधुमास चैत्रमास है जैसे चैत्र वनको फुलावनको फुलावत है तैसे रामचन्द्र जगत् के प्राणिनको प्रफुल्लित करत हैं औ मधुमास में भ्रमर अनुरागत हैं इहां जगके लोचन भ्रमर के विलाससों रचे कहे अनुरागे हैं औ कि रामचन्द्र नहीं हैं अनंग काम हैं वनमें विराजमान जो मधु वसंत ताको दरश दैकै सुखदेत है कैसो है अनंग सबके मनरूपी जे मीन मत्स्य हैं तिनके कारण कहे गहिबेके अर्थ अंगनको धारण करयो है देखतही रामचन्द्र सबके मनको गहिराखत हैं तासों जानों ४० रति प्रीति औ कीर्ति यशरूपी जो बेलि है तिनको निकुंज है कुंज में पक्षी बसत हैं रामचन्द्र में गुणरूपी जे पक्षी हैं तिनके पुंज समूह वसत हैं "निकुञ्जकुञ्जौ वा क्लीवे लतादिपिहितोदरे इत्यमरः" सरसीरुह औ उदयाचल सम गृह है हंस पक्षी औ हंस सूर्यसम रामचन्द्र हैं ४१ प्राची पूर्व ४२ ॥

हरिणीछंद ॥ फूलनकी शुभ गेंद नई । सूंघि शची जनु डारिदई ॥ दर्पणसों शशि श्रीरतिको । आसन काम महीपतिको ४३ मोतिनको श्रुति भूषण भनो । भूलिगई रविकी तिय मनो ॥ अंगदको पितुसों सुनिये । सोहत तारहिं संग लिये ॥ भूप मनोभव छत्र धरेउ । लोक वियोगिन को बिडरेउ ४४ देवनदी जल राम कह्यो । मानहुँ फूलि सरोज रह्यो ॥

फेन किधौं नभसिंधु लसै। देवनदीजल हंस बसै ४५ दोहा॥ चारु चन्द्रिकासिंधुमें शीतल स्वच्छ सतेज॥ मनो शेषमय शोभिजै हरिणाधिष्ठित सेज ४६॥

शशि जो चन्द्र है सो श्रीरति जो कामकी स्त्री है ताको दर्पण सो है ४३ तारा नक्षत्र औ बालिका स्त्री मनोभव कामवियोगी स्त्री पति परस्पर वियोगी औ विरोधी छंद उपजाति है ४४ या प्रकार सीताको वर्णन सुनिकै रामचन्द्र कह्यो नभसिंधु आकाशगंगा ४५ हरिणाधिष्ठितहै तासों चारुचंद्रिकारूपी जो सिंधु कहे क्षीरसिंधु है तामें शीतल औ स्वच्छ मलरहित सतेज कहे कांतियुक्त मानों शेषमय कहे शेषस्वरूप सेज है शेषमय सेज हरि विष्णु करसन्ते अधिष्ठित युक्त है हरिणा तृतीयांत पद है चन्द्रमा हरिण करिकै अधिष्ठित है मृग अंकमें प्रसिद्ध है ४६॥

दंडक॥ केशौदास है उदास कमला करसों कर शोषक प्रदोष ताप तमोगुण तारिये। अमृत अशेपके विशेष भाव वर्षत कोकनदमोदचंडखंडन विचारिये॥ परम पुरुष पदविमुख परुषरुख सुमुख सुखद विदुषन उरधारिये। हरि हैरी हियमें न हरिण हरिणनैनी चन्द्रमा न चन्द्रमुखी नारद निहारिये ४७॥

सीतासों रामचन्द्र कहतहैं कि हे हरिणनयनी! यह चन्द्रमा नहीं है नारद हैं औ याके हियमें यह हरिण नहीं है हरि विष्णु हैं सो अश्लेपसों कहत हैं कैसा है चन्द्रमा कमलनको जो आकर समूह है तासों उदास है कर किरण जाके चन्द्रकिरण स्पर्शसों कमल संकुचित होत है औ प्रदोष जो रजनीमुख है औ ताप जो उष्ण है औ तमोगुण जो अंधकार है तिनको शोषक दूरि करणहार है यह तारिये कहे जानियत है पूर्णिमाको चन्द्र जब उदित भयो तब रात्रि को प्रवेश होत है रजनीमुख काल व्यतीत होत है तासों शोष कह्यो "प्रदोषो रजनीमुखमित्यमरः" औ अशेप कहे पूर्ण जो अमृत है ताके जे भाव कहे विभूति हैं वृद्धि इति ताको विशेष सों वर्षत है अमृतकी बड़ी वर्षा करत है इत्यर्थः औ कोक जे चक्रवाक हैं तिनको जो

नद शब्द है ताको जो मोद है अर्थ परस्पर स्त्री पुरुष, संभाषणानंद है ताको चंड कहे उग्र अर्थ नीकीविधि खंडन कहे खंडनकर्ता है अर्थ चक्रवाकन को वियोगी करि परस्पर स्त्री पुरुष संभाषणानंद को दूरि करत है अथवा प्रथम कमलाकर पद कह्यो है तहां श्वेतादि कमल जानो इहां कोकनद कहे अरुण कमल को जो मोद है ताको चंड खंडन है "रक्तोत्पलं कोकनदमित्यमरः" औ परमपुरुष जो पति है ताके पदसों जे स्त्री विमुख हैं अर्थ मानकिये हैं तिन्हें परुपरुख कहे कठोर रुख है अर्थ तापकर्ता है औ जे लोगन पतिसों सुमुख हैं तिनको सुखद है औ विदुष जे प्रवीणलोग हैं तिन करिकै उरमें धारियत है प्रवीण के सदा चन्द्रोदय की इच्छा रहति है चौरादिक चन्द्रोदय नहीं चाहत इति भावार्थः नारद कैसे हैं कि कमला जो लक्ष्मी है अर्थ द्रव्य ताके आकर समूहसों उदास है कर हाथ जाको अर्थ बहुतहू द्रव्य कोऊ देइ ताको ग्रहण नहीं करत अल्पकी का कथा है इति भावार्थः औ प्रकर्ष जे दोष हैं गोवधादि औ ताप जे दैहिक, दैविक, भौतिक, त्रैताप हैं औ तमोगुण के शोषक दूरिकर्ता हैं तमोगुण के शोष कहि या जनायो कि सदा सत्त्वगुणयुक्त रहत हैं औ अमृत कहे नाहीं है मृत्यु जिनकी अशेष कहे पूर्ण ऐसे जे विष्णु हैं तिनके जे भाव कहे अनेक लीला हैं तिनको विशेष सों वर्णत हैं अर्थ भगवान् की अनेक लीला विशेष सों गान करत हैं अथवा भाव कहे अभिप्राय ताको वर्णत हैं कहत हैं अर्थ भूत भविष्य वर्तमान तीनों काल में जो ईश्वर के अभिप्राय के कृत्य हैं ताहि जानत हैं सो सबसों कहत हैं त्रिकालज्ञ हैं इत्यर्थः "भावोभिप्रायवस्तुनोः स्वभावजन्मसत्तात्माक्रियालीलाविभूतिषु इत्यभिधानचिन्तामणिः" औ कोक जो शास्त्रविशेष हैं ताको जो नद शब्द है वचन इति ताको जो मोद आनंद है ताके खंडन कहे खंडनकर्ता हैं अर्थ कोकशास्त्र मों अनेक कामवार्ता हैं तिनको निंदत हैं औ परमपुरुष जे भगवान् हैं तिनके पदसों जे प्राणी विमुख हैं अर्थ विष्णु की भक्ति नहीं करत तिन्हें परुपरुख कठोर रुख हैं औ जे सुमुख हैं अर्थ विष्णुभक्त हैं तिन्हें सुखद हैं औ विदुप जे पंडित हैं तिन करिकै जिनको उरमें धारियत है अथवा विशेष सों दुःख नहीं जिन करिकै उरमें धारियत अर्थ सदा आनंदयुक्त रहैं ४७ ॥

दोहा ॥ आई जानि वसंत ऋतु वनहिं विलोकत

राम ॥ धरणिधसे सीतासहित रतिसमेत जनुकाम ४८ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांवसन्तदर्शनन्नाम त्रिंशत्प्रकाशः॥ ३० ॥

वनको देखत वसंत ऋतु आई जानिकै वनविहार करिबो मन में निश्चय करि सीतासहित गृह अग्र सों धरणि को धसे कहे उतरे ४८ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद-निर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायां त्रिंशत्प्रकाशः ॥ ३० ॥

दोहा ॥ इकतीसयें प्रकाशमें रघुवर बाग पयान ॥ शुक मुख सियदासीनको वर्णन विविधविधान १ ब्रह्मरूपक छंद ॥ भोर होतही गयो सो राजलोक मध्य बाग। वाजि आनियो सुएक इंगितज्ञ सानुराग॥ शुभ्र शुद्ध चारिहून अंशु रेणु के उदार। सीखि सीखि लेतहैं ते चित्त चंचलाप्र-कार २ तोमरछंद ॥ चढ़ि वाजि ऊपर राम। वनको चले तजि धाम ॥ चढ़ि चित्त ऊपर काम। जनु मित्रको सुनि नाम ३ मगमें विलम्ब न कीन। वनराजमध्य प्रवीन ॥ सब भूप रूप दुराइ। युवती विलोकी जाइ ४ ॥

१ वनविहार के अर्थ भोर होतही राजलोक कहे रनिवास प्रथम बाग के मध्य गयो फेरि इंगितज्ञ कहे सवारकी चेष्टा को जाननहार अर्थ जैसे सवार को मन देखै ताहीविधि ताड़न विनही गमनकर्ता सानुराग कहे अपने अनुराग प्रेमसहित अर्थ जाके ऊपर आपनो बड़ो प्रेम है ऐसो वाजि रामचन्द्र आनियो कहे मँगायो अथवा वन जाइवेके अनुराग सहित जे रामचन्द्र हैं तिन इंगितज्ञ वाजि आनियो अथवा इंगित को जाननहार जो कोऊ अनुचर है सो रामचन्द्र को वाजिपर चढ़िकै बाग जायबेको इंगित जानिकै सानुराग कहे प्रेम सहित वाजि आनियो लायो कैसो है वाजि जाके शुभ्र कहे सुंदर औ शुद्ध कहे निर्दोष चारिहू चरण में इति शेषः रेणु जो धूरि

है ताके अंशु कहे कण चलत में लगिगये हैं ते मानों उदार कहे चतुर चित्त हैं चरणन में लगिकै चंचलाप्रकार कहे चंचलता को प्रकार सीखि लेत है जिनके चरणन में चित्तहू सों अधिक चंचलता है इति भावार्थः २ वनमें आयो मित्र जो बसंत है ताको नाम सुनिकै मानों चित्तपर चढ़िकै धाम छोड़ि काम वनको चल्यो है इत्यर्थः चित्तसम चंचल वाजि है काम सम सुंदर राम हैं ३ भूपरूप छत्र चामरादिको दुराइ छपे छपे युवतिनको विलोक्यो जाइ ४ ॥

स्वागताछंद ॥ रामसंग शुक एक प्रवीनो। सीयदासि-गुणवर्णन कीनो ॥ केशपाश शुभ श्याम सनेही। दास होत प्रभु जीव विदेही ५ भांति भांति कबरी शुभ देखी। रूप भूपतरवारि विशेखी ॥ पीयप्रेम प्रण राखनहारी। दीह दुष्ट छलखंडनकारी ६ किधौं शृंगारसरित सुखकारि। बंचकतानिबहावनिहारि ॥ कंचनपत्र पांति सोपान। मनों शृंगार लोकके जान ७ ॥

स्नेही स्नेह तैलयुक्त प्रभु रामचन्द्रको संबोधन है विदेही कहे ज्ञानी जे जनकादिसम देह धरे हैं अथवा जिनको देखि जीव उदास होत हैं औ विदेही होत हैं अर्थ देहकी सुधि भूलिजाति है ५ कबरी वेणी "कबरी केशविन्यासशाकयोरिति हेमचन्द्रः" अनेकदासी हैं तासों भांति भांति पद कह्यो काहू दासीकी वेणी और विधि है काहूकी और विधि है काहू की और विधि है कैसी है कबरीरूप कहे सौंदर्यरूपी जो भूप राजा है ताकी विशेष निश्चय तरवारि है कैसी है तरवारि पीय जो स्वामीरूप है ताके प्रेमकी राखनहारी है अर्थ अति प्रेमसों सौंदर्य जिनको एकहु क्षण त्याग नहीं करत औ सबके मनको वश्य करिबो यह जो रूप भूपको प्रण है ताहूकी राखनहारी है सबके मनको वश्य करति है औ दीह दुष्टसम जो छल है ताकी खंडनकारी है अर्थ जैसे तरवारि दुष्ट जे विरोधी हैं तिन्हैं खंडन करि प्रजानको राजा के वश्यकरि प्रण राखति है तैसे छलको खंडन करि सबके मनको रूपके वश्य करि प्रण राखती है ६ और नदी वृक्षादि बहावति है तैसे यह चंचलता छलताकी बहावनहारी है कंचनपत्र जे

वेणीपान हैं तिनकी पांति है सो मानों शृंगारलोक के जान कहे जाइबे को सोपान कहे सीढ़ी हैं शृंगाररस के लोकसम केशपाशयुक्त शीश हैं ७ ॥

शीशफूल अरु बेंदा लसै। भाग सोहाग मनों शिर बसै ॥ पाटिन चमक चित्तचौंधिनी। मानों दमकति घनदामिनी ८ सेंदुरमांगभरी अतिभली। तिनपर मोतिनकी अवली ॥ गंग गिरा तनसों तन जोरि। निकसी जनु यमुनाजल फोरि ९ शीशफूल शुभ जस्यो जराय। मांगफूल शोभै शुभ भाय ॥ वेणी फूलनकी वरमाल। भाल भले बेंदायुत लाल ॥ तमनगरीपर तेजनिधान। बैठे मनों बारहौ भान १० भृकुटि कुटिल बहुभायन भरी। भाल लालद्युति दीसति खरी ॥ मृगमदतिलक रेखयुग बनी। तिनकी शोभा शोभति घनी ॥ जनु यमुना खेलति शुभगाथ। परसन पितहि पसाख्यो हाथ ११ ॥

बेंदा भाल में रहतहै सो भाग कहे भाग्यसम है शीशफूल सोहागसम है इहां स्थानमें बसिबेकी उत्प्रेक्षा है तासों क्रमहीन दूषण नहीं है ८। ९ तम नगरीसम शीशके बार हैं बारहौ भानुसम शीशफूलादि हैं इहां संख्या करि उत्प्रेक्षा नहीं है बाहुल्यकी उत्प्रेक्षा है १० यमुनासम भृकुटी हैं हाथ सम कस्तूरी के तिलककी द्वै ऊर्ध्वरेखा हैं पिता जे सूर्य हैं तिनके सम भाललाल है भृकुटिन को बहुभायन भरी कह्यो है तासों यमुना को खेलत कह्यो ११ ॥

पंकजवाटिकाछंद ॥ लोचन मनहुं मनोभव मंत्रनि। भ्रूयुग उपर मनोहर मंत्रनि ॥ सुंदर सुखद सो अंजनअंजित। बाण मदन विषसों जनु रंजित १२ चौपाई ॥ सुखद नासिका जग मोहियो। मुक्ताफलनि युक्त सोहियो ॥ आनँदलतिका मनहुँ सफूल। सूंघि तजत शशि सकल कुशूल १३ पद्धटिका छंद ॥ जनु भालतिलक रविव्रतहि लीन। नृपरूप अकाशहि दीप दीन ॥ ताटंक जटित मणि श्रुतिवसंत। रवि एकचक्र-

रथसे लसंत ॥ अतिझुलझुलीन सह झलकलीन । फहरात पताका जनु नवीन १४ ॥

१२ मुक्ताफलनयुक्त अर्थ मुक्ताफल सहित नासिका भूषणयुक्त फल सहित आनंदलतिकाको कै मानों शशि जो चन्द्र हैं सो सब शूल जो दुःख है ताको दूरि करत है आनंदलतिकासम नासिकाभूषण हैं फूलसम मोती हैं शशिसम मुख है १३ भालमें तिलक कहे टीका मणिजटित ऊर्ध्वपुंड्र होत है सो जानों रूप कहे सौंदर्यरूपी जो नृपराज है सो रविके व्रत में लीन है कै रविके अर्थ आकाश को दीप दीन्हों है जे प्रथम शीशफूल कह्यो है तेई रवि हैं केशयुक्त शीश आकाश है औ मणिजटित तार्टक कहे ढार श्रुति में श्रवण में लसत हैं ते मानों रविके एकचक्र कहे एक पहियाके रथसे हैं रवि को रथ एकही पहियाको है औ झुलझुली जे पाननामा कर्णभूषण हैं तिनकी झलक शोभा सह कहे साथ अर्थ तार्टकन के साथ लीन है युक्त है मानों ताही एकचक्र रथके पताका हैं अथवा रूपनृप जो है सो रविको दीप दीन्हों है औ या प्रकार के पताकालों युक्त एकचक्र रथहू दीन्हों समर्पण कर्‍यो है इत्यर्थः १४ ॥

अतितरुण अरुण द्विज द्युति लसंति । निज दाड़िम बीजनको हसंति ॥ संध्याहि उपासत भूमिदेव । जनु वाकदेव की करत सेव ॥ शुभ तिनके सुख मुखके विलास । भयो उपवन मलयानिल निवास १५ चौपाई ॥ मृदु मुसकानि लता मन हरैं । बोलत बोल फूलसे झरैं ॥ तिनकी वाणी सुन मनहारि । वाणी वीणा धरेउ उतारि १६ लटकैं अलिक अलक चीकनी । सूक्षम अमल चिलक सों सनी ॥ नकमोती दीपकद्युति जानि । पाठी रजनीही उनमानि १७ ॥

तरुण कहे नवीन द्विजदंत मानों भूमिदेव ब्राह्मण हैं ते मुखमें बास किये वाकदेव जो सरस्वती हैं ताकी सेवा करत हैं ते ब्राह्मण संध्यासमयमों संध्या की उपासना करत हैं इहां दांतन की औ ब्राह्मणनकी द्विजशब्द सों साम्य है संध्यासम दांतनकी अरुणद्युति है दांतनपक्ष वाकदेव जिह्वा जानौ १५

ताही मुसकानि लता के फूल से जानौ १६ द्वैछंदको अन्वय एक है अलि-कलिलार दशा बाती मानो रवि सींक पसारिकै ज्योति बढ़ावत है रविपद को संबन्ध याहूमों है कवि जे शुक्र हैं तिनके हितकहे चढ़ाइ लीबे के अर्थ इत्यर्थः शुक्रसम नाकमोती हैं रविसम शीशफूल हैं १७ ॥

ज्योति बढ़ावत दशा उतारि । मानहुँ श्यामलसींक पसारि ॥ जनु कविहित रविरथते छोरि । श्यामपाटकी बांधी डोरि १८ रूप अनूप रुचिररस भीनि । पातुर नैनन की पुतरीनि ॥ नेह नचावत हित रतिनाथ । मरकत लकुटि लिये जनु हाथ १६ दोहा ॥ गगन चन्द्रते अति बड़ो तिय मुख चन्द्रविचारु॥ दई विरंचि विचारि चित कला चौगुनी चारु२०॥

१८ ताही अलक में दूसरी उत्प्रेक्षा करत हैं पुतरिनको जो अनूप रूप है तामति जो रुचिररस कहे प्रेम है तामें भीनि कहे भीजिकै अर्थ वश्य ह्वैकै पातुर कहे वेश्या अर्थ कामकी वेश्यारूपी जे नयनकी पुतरी हैं तिनको रतिनाथ जो काम है ताके हितसों मानो मर्कत कहे श्याम लकुट हाथमों लैकै स्नेह नचावत है शिक्षक लकुटके ताल में वेश्या को नृत्य सिखावत हैं यह प्रसिद्ध है अथवा कहूं भीनी पाठ है तो अनूपरूप कहे अतिसुंदर औ रुचिर जो रसप्रेम है तामें भीनी कहे युक्त पातुररूपी जे नयन की पुतरी हैं तिनको रतिनाथके हितसों नेह नचावत है इत्यर्थः १६ चन्द्रमा में सोरह कला हैं मुख में चौंसठि हैं चौंसठि कला प्रसिद्ध हैं २० ॥

दंडक ॥ दीन्हों ईशदंडबल दलबल द्विजबल तपबल प्रबल समेति कुलबलकी । केशव परमहंस बल बहुकोष बलकहा कहौंबड़ीपै बड़ाई दुर्ग जलकी ॥ विधिबलचन्द्रबल श्री को बल श्रीशबल करतहैं मित्रबल रक्षा पल पलकी । मित्रबल हीन जानि अबलामुखनिबल नीकेही छड़ाइलई कमलकमलाकी २१ दोहा ॥ रमणीमुखमंडल निरखि राकारमण लजाइ ॥ जलद जलधि शिवसूरमें राखत बदन दुराइ २२ ॥

ईश जे ईश्वर हैं तिन दंड जो नाल है ताको बल दीन है औ श्लेषसों

परिघादि दंड आयुध जानो दलपत्र औ चमूद्विज चक्रवाकादि पक्षी अथवा दंत इहां दंत पदते बीज जानो औ ब्राह्मण [illegible] तप जानो कुल कहे ज्ञातिसमूह परमहंस पक्षी औ तपस्वी विशेष कोष कहे सिफाकंद औ खजाना औ दुर्ग कोटरूपी जो लता है ताके बलकी कहा बड़ाई कहौं इत्यर्थः विधि ब्रह्माको आसन है ता संबंधसों विधिबल जानौ जलज चन्द्रहू है कमलहू है तासों ता संबंधसों चन्द्रबल जानौ लक्ष्मी को कमल में सदा बास रहत है ता संबंधसों श्रीको बल जानौ श्रीश विष्णु सदा करमें लिये रहत हैं तासों श्रीशबल जानौ औ मित्र जे सूर्य तिनहूं को बल पल पल में रक्षा करत है यद्यपि येते सब बलहैं परंतु मित्र जे तुमही तिनके बलसों कमलन को हीन जानिकै ये जे अबला सीयदासी हैं तिनके मुखनबलसों कमल की जो कमला कांतिरूपा लक्ष्मी है ताहि छड़ाय लीन्हों है अबला पद कहि रामबल की अति उत्कृष्टता जनायो २१ पूर्णचन्द्रयुक्त जो पूर्णिमा की रात्रि है सो राका कहावती है "पूर्णे राका निशाकरे इत्यमरः" याहू में असिद्ध विषय हेतूत्प्रेक्षा है २२॥

विशेषकछंद॥ भूषण ग्रीवनके बहु भांतिन सोहत हैं। लाल सितासित पीत प्रभा मनमोहतहैं॥ सुंदर रागनके बहुबालक आनि बसे। सीखनको बहुरागिनि केशवदास लसे २३

चौपाई॥ हरिपुरसी सुरपूरदूषिता। मुक्ताभरण प्रभा भूषिता॥ कोमलशब्दनिवन्त सुवृत्त। अलंकारमय मोहन मित्त॥ काव्या पद्धति शोभा गहे। तिनके बाहु पाश कवि कहे २४॥

राग भैरवादि २३ अपनी छवि करिकै सुरपुर की अर्थ सुरपुर की स्त्रिनकी दूषिता कहे निंदा करनहारी हैं औ मुक्ता जे मोती हैं तिनके जे आभरण भूषण हैं तिनकी प्रभासों भूषित हैं तासों हरिपुर विष्णुलोकसों हैं हरिपुर कैसो है कि आपनी छवि सों देवलोक को निंदत है अर्थ देवलोक सों अधिक है औ मुक्त कहे मुक्ति को प्राप्त जे जीव हैं तेई हैं आभरण भूषण तिनकी प्रभासों भूपित हैं अर्थ अनेक मुक्तजीवन सों युक्त हैं फेरि कैसी हैं कि कोमलशब्दनिवंत हैं अर्थ मधुर वचन बोलती हैं औ सुष्ठु हैं सुवृत्त कहे चरित्र जिनके औ माल्यादि अलंकार युक्त हैं औ मित्र जो स्वामी हैं ताको मोहन कहे मोहकर्ता हैं औ तिनके बाहुनको पाश कहे

फांससम कविजन कहत हैं यासों काव्यकी जो पद्धति रीति है ताकी शोभा को गहे हैं काव्यपद्धति कैसी है कोमल कहे कोमलाक्षरयुक्त जे शब्द हैं तिनसों युक्त हैं सुष्ठुवृत्त पद जाके औ उपमादि अलंकार सों युक्त हैं औ मित्र जे काव्यपाठी हैं तिनको मोहन है औ तिनके बाहुन को कविपाश-सम कहत हैं अर्थ बाहु पाशसम होत नहीं है परंतु कविनको नियम है कि काव्यरीतिमें स्त्री पुरुष के बाहु पाशसम कहत हैं " वृत्तश्छन्दश्चारित्रवृत्तिषियति मेदिनी " २४ ॥

नवरँग बहुअशोकके पत्र । तिनमें राखत राजकलत्र ॥ देखहु देव दीनके नाथ । हरत कुसुमके हारत हाथ २५ सुंदर अँगुरिन मुँदरी बनी । मणिमय सुवरण शोभासनी ॥ राजलोकके मन रुचिरये । मानो कामिनि कर करि लिये २६ अतिसुंदर उर में उरजात । शोभासर में जनु जलजात ॥ अखिललोक जलमय करिधरे । वशीकर्ण चूरणचयभरे ॥ कामकुँवर अभिषेकनि मित्र । कलश रचे जनु यौवन मित्र २७ दोहा॥ रोमराज शृंगार की ललित लतासी राज ॥ ताहि फले कुचरूपफल लै जगज्योतिसमाज २८ ॥

द्वै छंदको अन्वय एक है हे देव ! हे दीनके नाथ ! यह देखो जे हाथ कुसुम फूलन के हरत में तोरत में हारत कहे थकत हैं अर्थ जिनसों फूलऊ नहीं तूरि जात ऐसे कोमल जे हाथ हैं तेई नवरंग बहुत अशोक के पत्र हैं तिनमें कहे तिन हाथनमें राजकलत्र जे सीता हैं तिनको राखती हैं तासों मानो सुंदर जे अंगुरी हैं तिनमें सुवरण शोभासों सनी मणिमय मुंदरी बनी हैं तेई रुचि कहे सुंदरतासों रये युक्त राजलोक कहे अंतःपुर के अर्थ सीतादिकन के मन हैं तिनको मानो कर में हाथ में करिलीन्हों है अतिसेवा करि सीतादिकन के मन मानो आपने हाथ में करिलीन्हों है इत्यर्थः २५ । २६ । २७ । २८ ॥

चौपाई ॥ सूक्ष्मरोमावली सुवेष । उपमा दीन्हीं शुक सविशेष ॥ उरमें मनहुँ मदनकी रेख । ताकी दीपति दिपति

अशेख २९ दोहा ॥ कटिके तत्त्व न जानिये सुनि प्रभु त्रिभुवनराव ॥ जैसे सुनियत जगतके सत अरु असत सुभाव ३० नाराचछंद ॥ नितंब बिंबफूलसे कटिप्रदेश क्षीन है । विभूति लूटिली सबै सो लोकलाज लीन है ॥ अमोल ऊजरे उदार जंघयुग्म जानिये।मनोजके प्रमोदसों विनोदपत्र मानिये३१॥

रेख कहे लीक अर्थ हृदयमों मदन बस्यो है ताकी छवि बहार कढ़िके देखि परति है कामको रूप श्याम है २९ तत्त्वस्वरूप "तत्त्वं स्वरूपे परमात्मनीति मेदिनी" सत्स्वभाव पुण्यादि ३० नितंबबिंब कहे नितंबमंडल नितंबस्वरूप इति "बिम्बं तु प्रतिबिम्बे स्यान्मण्डले पुंनपुंसकमिति मेदिनी" फूलसे कहे प्रफुल्लित हैं अर्थ आनंद सहित हैं औ कटिप्रदेश अतिक्षीण है सो मानो नितंबन कटिकी विभूति संपत्ति लूटिलीन्हीं है तासों आनंद सहित हैं औ कटि लोक के लाज सों लीन कहे छपी है ऊजरे मलरहित प्रमोदसों कहे प्रसन्नता सहित अर्थ अतिप्रशस्त मनोज जो काम है ताके मानो विनोदयंत्र कहे विनोदके अर्थ यंत्र हैं और यंत्र के बंधनसों आनंद होत है इनके देखतही आनंद होत है ३१ ॥

छवानकी छुई न जाति शुभ्र साधु माधुरी । विलोकि भूलि भूलि जाति चित्त चालि आतुरी ॥ विशुद्ध पादपद्म चारु अंगुली नखावली । अलक्तयुक्त मित्रकी सो चित्र बैठकी भली ३२ दोहा ॥ कठिन भूमि अतिको वरे जावकयुत शुभ पाइ ॥ जनु मानिक तनत्राणकी पहिरी तरी बनाइ ३३ चौपाई ॥ बरणवरण अँगिया उरधरे । मदन मनोहरके मन हरे ॥ अंचल अतिचंचल रुचि रचैं । लोचन चल जिनके सँग नचैं ३४ दोहा ॥ नखशिख भूषित भूषणन पटि सुवरणमय मंत्र ॥ यौवनश्री चल जानि जनु बांधे रक्षायंत्र ३५ चित्रपदाछंद ॥ मोहन शक्ति न ऐसी । मकरध्वजध्वज जैसी ॥ मंत्र वशीकर साजैं । मोहनमूरि विराजैं ३६ ॥

छवा कहे एँड़ी तिनकी शुभ्र कहे मलरहित साधु कहे श्रेष्ठ माधुरी कहे सुंदरता नयननकरि छुई नहीं जाति अर्थ अतीन्द्रिय है अतिसुंदरता है इति भावार्थः जिनको विलोकिकै चित्तकी जो आतुरी शीघ्र चालि कहे चालु है सो भूलिजात है अर्थ चित्त अचल ह्वैजात है पाद औ अंगुली औ नखावली चित्र विचित्र अलक्त कहे महावरसों युक्त हैं ते मानो मित्र को कहे मित्र जो स्वामी है ताके मनकी बैठकी हैं इत्यर्थः अथवा मित्र कहे सूर्य कि सूर्यसम नखहैं ३२ जानो मानिककी तनत्राण के अर्थ पहिरे हैं इत्यर्थः ३३ । ३४ भूषण सुवर्णमय कहे कंचनमयी है औ मंत्र पक्ष सुष्ठुवर्ण-मय अक्षरमय जानौ ३५ । ३६ ॥

रूपमालाछंद ॥ भालमें भव राखियो शशि की कलाभुत एक । तोषता उपजावहीं मृदु हास चंद अनेक ॥ मार एक विलोकिकै हर जारिकै कियो क्षार । नयन कोर चितै करैं पति चित्त मार अपार ३७ चौपाई ॥ कंटक अटकत फटि कटि जात । उड़ि उड़ि बसन जात वशवात ॥ तऊ न तिनके तन लखि परे । मणिगण अंग अंग प्रति धरे ३८ दोहा ॥ उपमा गण उपजाइ हरि बगराये संसार ॥ तिनको परस-परोपमा रचि राखी करतार ३९ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांसीतासखीजन-वर्णनन्नामैकत्रिंशः प्रकाशः ३१ ॥

तोषता कहे संतोष के लिये इत्यर्थः नतिबादी सों अधिक को करिये तब संतोष होत है यह प्रसिद्ध है औ महादेव एक मार जारयो तालिये नयनकोरसों चितैकै पतिनके चित्तमें अपार मार कहे काम उत्पन्न करती हैं अथवा महादेव कामको एकई मार करयो कि जारिही डारयो औ ये काम सरिस जे पति हैं तिनके चित्त मों अपार कहे अनेक विधिको मार ताड़न करती हैं ३७ । ३८ हे हरि ! कर्ता और उपमागण उपजाइकै सं-सार में बगरायो फैलायो है औ तिन दासिन को परस्पर उपमा कहे एक

दासी की उपमा एकको एककी एकको रचि राख्यो है औ उपमा इनके सादृश्य नहीं है इत्यर्थः ३९ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद-निर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायामेकत्रिंशः प्रकाशः ३१ ॥

दोहा ॥ बत्तीसयें प्रकाशमें उपवनवर्णन जानि ॥ अरु बहु विधि जलकेलिको करेहु राम सुखदानि १ सुंदरीछंद ॥ अचानक दृष्टिपरे रघुनायक । जानकिके जियके सुखदायक ॥ ऐसे चले सबके चल लोचन । पंकज वात मनो मन रोचन २ रामसों रामप्रिया कह्यो यों हँसि । बाग देखावहु लोकनके शसि ॥ राम विलोकत बाग अनंतहि । ज्यों अवलोकत कामद संतहि ३ बोलत मोर तहां सुखसंयुत । ज्यों बिरदावलि भाटनके सुत ॥ कोमल कोकिलके कुल बोलत । ज्ञानकपाट कुँजी जनु खोलत ४ फूल तजे बहु वृक्षन को गनु । छोड़त आनँद आंसुनको जनु ॥ दाड़िमकी कलिका मन मोहति । हेमकुपी जनु बंदन सोहति ५ दोहा ॥ मधुवन फूल्यो देखि शुक वर्णत हैं निश्शंक ॥ सोहत हाटक घटित ऋतु युवतिनके ताटंक ६ दोधकछंद ॥ बेलके फूल लसैं अति फूले । भौंर भवैं तिनके रसभूले ॥ यों करवीर करी वन राजै । मन्मथबाणनकी गति साजै ७ केतकपुंज प्रफुल्लित सोहैं । भौंर उड़ैं तिनमें अतिमोहैं ॥ श्रीरघुनाथहिं आवत भागे । जे अपलोकहुते अनुरागे ८ दोहा ॥ श्याम शोण द्युति फूलकी फूले बहुत पलास ॥ जरै कामकैला मनो मधु ऋतु वातविलास ९ ॥

१ रामचन्द्र भूपरूप दुरायकै ये छपे जो युवतिनको देखत रहे सो उपवन की छवि निरखत अचानक सीतादिकनकी दृष्टिमों परे सो रामचन्द्रकी ओर

सबके चंचल लोचन ऐसे चलत भये जैसे वात कहे वायुसों मनसेचन कहे मनको सुखद पंकज कमल चलै २। ३ कुंजीसों मानो ज्ञानके कपाट खोलत हैं ज्ञानिनके कामोद्भवकरि ज्ञानको दूरि करत हैं इत्यर्थः ४ वंदन रोरी ५ मधु जो वसंत है तामें वन जो बाग है ताके मध्य दाड़िमको फूले देखिकै शुक निश्शंक वर्णत हैं दाड़िम पदको संबंध इहांऊं है मानो हाटक जो सुवर्ण है तासों घटित कहे रचित षट्ऋतुरूपी जे युवती स्त्री हैं तिनके ताटंक हार हैं भाषा में ऋतुशब्द स्त्रीलिंग है यथा रसराजकाव्ये "आई ऋतु सुरभि सुहाई प्रीति वाके चित्त ऐसे में चलै तौ लाल रावरी बड़ाई है" अथवा ऋतु करिकै घटित बनाये ६ बेल कहे बेला करवीर कनैल ७ केतक कहे केवराते भ्रमर श्रीरामचन्द्रको निकट आवत देखिकै भागत भये जे भ्रमर प्राणी में अपलोक पाप के सम केतक पुंजमें अनुरागे हैं जैसे ध्यान में अथवा साक्षात् रामागमन सों प्राणी के अपलोक दूरि होत हैं ते केतकके निकट आवत भ्रमर भागत भये इत्यर्थः ८ शोण अरुण मधु कहे वसंतऋतुरूपी जो वायु है ताके विलास सों मानो महादेव करिकै जारचो जो काम है ताके कैला फेरि जरैं कहे सुपचत हैं ९ ॥

तोटकछंद ॥ बहुचंपककी कलिका हुलसी। तिनमें अलि श्यामल ज्योति लसी ॥ उपमा शुक सारिक चित्त धरी। जनु हेमकुपी रससोंधु भरी १० चौपाई ॥ अलि उड़ि धरत मञ्जरी जाल। देखि लाज साजति सब बाल ॥ अलि अलिनी के देखत भाई। चुंबत चतुर मालती जाई ११ अद्भुत गति सुंदरी विलोकि। बिहँसतिहैं घूंघुटपट रोकि ॥ गिरत सदाफल श्रीफल ओज। जनु धर धरत देखि वक्षोज १२ तारकछंद ॥ उदरे उर दाड़िमदीह विचारे। सुदतीनके शोभन दंत निहारे ॥ अतिमंजुलवंजुल कुंज विराजैं। बहुगुंजनिकेतन पुंजनि साजैं ॥ नर अंध भये दरशे तरु मौरे। तिनके जनु लोचनहैं यकठौरे १३ ॥

हुलसी कहे फूलीं शृंगाररस सदृश भ्रमर हैं औ सोंधु सुगंध है ही है

चंपक पै भँवर बैठिबे को वर्णन कविनियम विरुद्ध है परंतु केशव बड़े कवि हैही हैं कछू विचारही कै कह्यो ह्वैहै तासों दोष नहीं है अथवा गंधहीन होति है कली तासों कह्यो है १० । ११ सदाफल जे श्रीफल बिल्व हैं ते गिरत हैं सो मानो तिन स्त्रिनके वक्षोज को ओज कहे प्रतापकांतिको देखिकै भयसों मानो उन्नत आसन को त्यागकरि धर पृथ्वी को धरत हैं अर्थ नत होत हैं १२ दाड़िमफलनके उरपाकिकै उदरे कहे फाटिगये हैं सो मानो सुदती कहे सुंदर हैं दंत जिनके ऐसी जे सीताकी दासी हैं तिनके सुंदर दंतही निहारिकै स्पर्धा सों फाटिगये हैं मंजुल अशोक गुंजनिकेतन कहे भ्रमर मौरे कहे बौरे अर्थ अशोक वृक्षन के दरशे नर अंधकहे कामांध भये तिन नरन के मानो लोचनही एकठौरे हैं बौरे अशोक वृक्षनको जनु देख्यो तिनके लोचन तहांई लागिरहे ताही सों ते अधमभये हैं इत्यर्थः १३ ॥

थल शीतल तप्त स्वभावनि साजैं। शशि सूरजके जनु लोक विराजैं॥ जलयंत्र विराजत भांति भली है। धरते जलधार अकाश चली है॥ यमुनाजल सूक्षम वेश सँवारेउ। जनु चाहतहै रवि लोक विहारेउ १४ चंचरीछंद॥ भांति भांति कहौं कहां लगि वाटिका बहुधा भली। ब्रह्मघोष घने तहां जनु हैं गिरावन की थली॥ नीलकंठ नचैं बने जनु जानिये गिरिजा बनी। शोभिजैं बहुधा सुगंध मनो मलै घनकी धनी १५॥ चौपाई॥ करुणामय बहुकामनि फली। जनु कमलाकी वासस्थली॥ शोभे रंभा शोभा सनी। मनो शचीकी आनँदबनी १६॥

उष्ण समय बैठिबे के जे स्थल हैं ते शीतलस्वभावको साजत हैं शीत समय बैठि कहे तप्तस्वभाव साजत हैं शशिको लोक शीतल है सूर्यको तप्त है जलयंत्र फुहारे १४ वाटिका में ब्रह्मघोष कहे वेदशब्द पाठशाला बनी हैं तिनमें शिष्य पढ़त हैं अथवा तपस्वी टिके हैं ते वेदपाठ करत हैं अथवा अन्यत्र ऋषिनके आश्रमन सों सीखिकै शुकादि पक्षी वेद इहां आइ पढ़त हैं औ गिरा सरस्वती के उपवन में ब्रह्मा को शब्द नीलकंठ वाटिका में मोर गिरिजाबनी में महादेव धनी कहे रानी १५ वाटिका करुणा जे वृक्ष

विशेष हैं तिनसों युक्त है औ बहुत जे काम कहे अभिलाषित फल हैं तिन सों फली है कमलाकी वासस्थली कैसी है करुणामय जे भगवान् हैं ते हैं जहां औ बहुत जे काम्य पदार्थ तिनसों फलीयुक्त है अर्थ जहां सब अभिलाषित पदार्थ मिलत हैं "कामः स्मरेच्छाकाम्येषु इति हेमचन्द्रः" वाटिका पक्ष रंभा केरा आनंदवनी यक्ष अप्सरा १६ ॥

कमलछंद ॥ तरुचंदन उज्ज्वलता तन धरे। लपटी नव नागलता मनहरे ॥ नृप देखि दिगंबर बंदनकरे। चित चंद्र कलाधररूपनि भरे १७ अतिउज्ज्वलता सब कालहु वसै। शुक केकि पिकादिक कंठहु लसै ॥ रजनी दिन आनँदकंदनि रहै। सुखचंदनकी जनु चंदनि अहै १८ ॥

जा वाटिकामों चंदनवृक्ष चिर कहे बहुतकालसों चन्द्रकलाधर जे महादेव हैं तिनके रूपनको धरे हैं कैसे हैं चंदनवृक्ष औ महादेव उज्ज्वलता जो श्वेतता है ताको तन में धारण करे हैं चंदनवृक्षहू श्वेत हैं महादेव के अंगऊ श्वेत हैं नागलता कहे नागबेलि औ नाग सर्परूपीलता औ दिगंबर नग्न दुवौ हैं महादेवको ईश्वरतासों औ वृक्षनको अति अद्भुतता सों नृप सब वन्दना करत हैं १७ फेरि वाटिका कैसी है कि जानो सीताकी दासिनके मुखचंदन की चांदनी है कैसी है वाटिका औ चांदनी सब कालहू को सब समयमों उज्ज्वलता कहे स्वच्छता औ शुक्लता वसति है कैसी है वाटिका शुकादि पक्षिन को कंठ कहे शब्दसहित लसति है अर्थ अनेक शुकादि पक्षी जामें बोलत हैं औ चांदनी शुकादिकनके शब्द सरिस जे अनेक विधि परस्पर बोलती हैं तिन सहित है औ रातौ दिन दुवौ आनंद की कंदनि कहे जर है अर्थ रातोदिन सुखद है वा चंदकी चांदनी राति ही को सुखद होति है मुखचंदकी चांदनी रातौ दिन सुख देति है इति भावार्थः शुक केकि पिकादिक के मुख बसै कहूं यह पाठ है तहांऊ मुख कहे शब्द जानौ अर्थ वही है "मुखं निस्सरणे वक्त्रे प्रारम्भोपाययोरपि। संध्यन्तरे नाटकादेः शब्देपि च नपुंसकमिति मेदिनी" १८ ॥

तोटकछंद ॥ सब जीवनको बहुसुक्ख जहां। विरही जनही कहँ दुःख तहां ॥ जहँ आगम पौनहिंको सुनिये।

नित हानि असौंधहिको गुनिये १६ दोहा ॥ तपहीको ताउन जहां तृष चातकके चित्त ॥ पात फूल फल दलनि को भ्रम भ्रमरनिके मित्त २० तारकछंद ॥ तिनमें इक कृत्रिम पर्वत राजै । मृग पक्षिनकी सब शोभहि साजै ॥ बहुभांति सुगंध मलयगिरि मानो । कलधौत स्वरूप सुमेरु बखानो २१ अति शीतल शंकरको गिरि जैसो । शुभश्वेत लसै उदयाचल ऐसो ॥ द्युतिसागरमें मैनाक मनो है । अजलोक मनो अज लोक बनो है २२ तोटकछंद ॥ सरिता तिनते शुभ तीनि चली । सिगरी सरितानकि शोभदली ॥ इक चंदन के जल उज्ज्वल है । जग जह्नुसुता शुभ शील गहै २३ चौपाई ॥ सुरगजकी मारग छविछायो । जनु दिविते भूतलपर आयो ॥ जनु धरणी में लसति विशाल । त्रुटित जुहीकी घन वन-माल २४ दोहा ॥ तज्यो न भावै एक पल केशव सुखद स-मीप ॥ जासों सोहत तिलक सो दीन्हे जंबूद्वीप २५ दोधक छंद ॥ एणनके मदकै जनु दूजी । है यमुनाद्युति कै जनु पूजी ॥ धार मनो रसराज विशाला । पंकजजालमयी जनु माला २६ दोहा ॥ दुखखंडन तरवारि सी किधौं शृंखला चारु ॥ क्रीड़ागिरि मातंगकी यहै कहै संसारु २७ क्रीड़ागिरि ते अलिन की अवली चली प्रकास ॥ किधौं प्रतापानलनकी पदवी केशवदास २८ दोधकछंद ॥ और नदीजल कुंकुम सोहै ॥ शुद्धगिरा मन मानहुँ मोहै ॥ कंचन के उपवीतहि साजै । ब्राह्मणसों यह खंड विराजै २९ ॥

सब जीवनको असौंध दुर्गंध १६ पात कहे पतन २० कृत्रिम कहे बनायो कलधौत स्वरूप कहे सुवर्णमय है अर्थ सुवर्णही को बन्यो है २१ मैनाक सागर में है यह द्युति शोभारूपी सागरमें है अज जे दशरथ के

पिता हैं तिनके लोकमें मानो अज जे ब्रह्मा हैं तिनको लोक ब्रह्मलोक बन्यो है २२ शील कहे स्वभाव ताप दूरि करणादि २३ सुरगज ऐरावतकी राह आकाशगों रात्रिकै उवति है प्रसिद्ध है जुही कहे जाही जूही पुष्प विशेष हैं २४ तिलक सों अर्थ राज्याभिषेक तिलकसों २५ एणनको मद कस्तूरी पूजी कहे पूरित अर्थ मानो यामें यमुनाकी शोभा आइ बसी है रसराज शृंगाररस पंकज इहां श्याम कमल जानौ २६ क्रीड़ागिरिरूपी जो मातंग है ताकी शृंखला क्षुद्रघंटिका है अथवा आंदू है २७ किधौं रघुवंशिन के इति शेषः प्रतापाग्निकी पदवी राह है अग्निकी राह श्याम होती है २८। २६ ॥

स्वागताछंद ॥ लौंग फूलमय सेवटि लेखी । एलवीज बहुबालक देखी ॥ केरिफूलदलनावन माहीं । श्रीसुगन्ध तहँ हैं बहुधाहीं ३० दोहा ॥ खेवत मत्त मलाह अलि को बरणै वह ज्योति ॥ तीन्यों सरिता मिलित जहँ तहां त्रिवेणी होति ३१ सीता श्रीरघुनाथजू देखी अमित शरीर ॥ द्रुम अवलोकन छोड़िकै गये जलाशयतीर ३२ चौपाई ॥ आई कमल बासु सुखदेन । मुखबासन आगे है लेन ॥ देख्यो जाइ जलाशय चारु । शीतल सुखद सुगंध अपारु ३३ मरहट्टाछंद ॥ वनश्री को दर्पनु चन्द्रातप जनु किधौं शरद आवास । मुनिजनगन मनसों विरहीजनसों विश वलयानि विलास ॥ प्रतिबिंबित थिर चर जीव मनोहर मनु हरि उदर अनंत । बंधुनयुत सोहैं त्रिभुवन मोहैं मानो बलि यशवंत ३४ ॥

नंदिन में सेवटि परिजाति है कहूँ सेवटाकरि प्रसिद्ध है एला इलायची केरि कहे केराके फूलके जे दल पत्र हैं तेई नाव हैं तिनमें सुगंध जो है सोई श्री कहे वाणिज्य द्रव्य है ३० । ३१ जलाशय तड़ाग ३२ जब कोऊ बड़ो आपने इहां आवत है ताको आगे चलिकै लेबो उचित है ३३ वनकी जो श्री लक्ष्मी है ताको दर्पण है कि चन्द्रातप कहे चांदनी है कि शरदृऋतुको आवास घर है मुनिजन के मन सम विमल है इत्यर्थः ॥ तड़ागविश जो

कमलकी जर है ताके वलय समूह युक्त है औ विरही शीतलताके लिये अनेक कमल जर धारण करे हैं हरिके उदरहू में चौदहौ लोक बसत हैं तड़ाग पाषाणादि सों बांध्यो है बलिको वामन बांध्यो है ३४ ॥

चौपाई ॥ विषमय यह सब सुखको धाम । शंबररूप बढ़ावै काम ॥ कमलन मध्य भ्रमर सुखदेत । संतहृदय जनु हरिहि समेत ३५ बीच वीच सोहैं जलजात । तिनते अलि कुल उड़ि उड़ि जात ॥ संतहियनसों मानहुँ भाजि । चंचल चली अशुभकी राजि ३६ दंडक ॥ एक दमयंती ऐसी हरै हँसि हंसवंस एक हंसिनीसी विशहार हिये रोहिये । भूषण गिरत एकै लेतीं बूड़ि बूड़ि बीच मीनगति लीन हीन उपमा न टोहिये ॥ एक पतिकंठ लागि लागि बूड़ि बूड़िजाति जल देवतासी दृगदेवता विमोहिये । केशौदास आसपास भँवर भँवत जल केलिमें जलजमुखी जलजसी सोहिये ३७ दोहा ॥ क्रीड़ासरवरमें नृपति कीन्ही बहुविधि केलि ॥ निकसे तरुणि समेत जनु सूरज किरणि सकेलि ३८ हाक-लिकाछंद ॥ नीरनिते निकसीं तिय सबै । सोहतिहैं बिन भूषण तबै ॥ चंदन चित्र कपोलन महीं । पंकज केशर शोभत तहीं ३९ ॥

द्वैचरणमें विरोधाभास है विषजल शंबररूप कहे शंवर जो मत्स्यभेद है तन्मय है अर्थ अति शंबर मत्स्ययुक्त है "शम्बरो दैत्यहरिणमत्स्यशैलजिनान्तरे इति मेदिनी" ३५ । ३६ हरैं कहे गहि लेती हैं दमयंती हू राजा नल को पठायो जो हंस है ताको गहिलियो है हंसहू पवनारी को काढ़ि गरे में डारि लेत है ३७ । ३८ ताही अर्थ कपोलन में लगे कमलन के केशर किंजल्क सोहत हैं ३९ ॥

मोतिनकी बिथुरी शुभ छटैं । हैं उरझी उरजातन लटैं ॥ हास शृँगार लता मनु बनी । भेंटति कल्पलता हित घनी ४०

केशनि ओरनि सीकर रमैं। ऋक्षनकोतमयी जनु बमैं॥ सज्जल अंबर छोड़त बने। छूटतहैं जलके कण घने॥ भोग भले तिनसों मिलि करे। बिछुरत जानि ते रोवत खरे ४१ भूषण जे जलमध्यहिं रहे। ते वनपाल वधूटिन लहे॥ भूषण वस्त्र जबै सजिलये। चारिहु द्वारन दुंदुभि भये ४२ दोहा॥ गुंगे कुब्जे बावरे बहिरे वामन वृद्ध॥ यान लये जन आइगे खोरे खंज प्रसिद्ध ४३ चौपाई॥ सुखद सुखासन बहुपालकी। फीरकबाहिनि सुखचालकी॥ एकन जोते हय सोहिये। वृषभ कुरंग अंग मोहिये॥ तिन चढ़ि राज लोक सब चल्यो। नगर निकट शोभाफल फल्यो ४४॥

हासरसलतासम मोतिनकी लरैं हैं शृंगाररसलतासम लटैं हैं कल्पलता सम स्त्री हैं ४० केशन के ओरन कहे अन्तमें सीकर जे अंबुकण हैं ते रमैं कहे शोभित हैं ऋक्ष नक्षत्र ४१ वाटिका के चारिहू द्वारन में कूच के नगारे भये इत्यर्थः ४२ स्त्री जनके निकट ऐसेही जन चाहिये जिनपै स्त्रीजन प्रीति न करैं ४३ सुखासन कहे कोमल बिछावने युक्त फिरकबाहिनी सेजगाड़ी एकन फिरकबाहिनीन में जोते हैं शोभित हैं एकन में वृषभ शोभित हैं ते आपने अंगनकरि कुरंग अंगनको मोहत हैं अर्थ अतिचंचल हैं ४४॥

मणिमय कनकजालिका घनी। मोतिनकी झालरि अति बनी॥ घंटा बाजत चहुँदिशि भले। रामचन्द्र त्यहि गज चढ़ि चले॥ चपला चमकत चारु अगूढ़। मनहुँ मेघ मघवा आरूढ़ ४५ आसपास नरदेव अपार। पाँइ पियादे राजकुमार॥ बंदीजन यश पढ़त अपार। यहि विधि गये राजदरबार ४६ त्रिजयाछंद॥ भूषित देह विभूति दिगंबर नाहिं न अंबर अंगनवीने। दूरिकै सुंदर सुंदरि केशव दौरि दरीन में आसन कीने॥ देखिये मंडित दंडन सों भुजदंड दुवौ असिदंड

विहीने । राजन श्रीरघुनाथ के बैर कुमंडल छोड़ि कमंडल लीने ४७ दोहा ॥ कमल कुलन में जात ज्यों भँवर भयो रसचित्र ॥ राजलोक में त्यों गये रामचन्द्र जग मित्र ४८ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांवनविहारवर्णनन्नाम द्वात्रिंशःप्रकाशः ॥ ३२ ॥

हौदामें मणिमयी कनकजालिका झांझरी घनी हैं इत्यर्थः ॥ अथवा झालरि की जारी मणिमयी कनककी घनी बनी हैं अगूढ़ प्रसिद्ध ४५ । ४६ असि दंड तरवारि कुमंडल पृथ्वीमंडल ४७ । ४८ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायां द्वात्रिंशःप्रकाशः ३२ ॥

दोहा ॥ तैंतीसयें प्रकाश में ब्रह्मा विनय बखानि ॥ शंम्बुकवध सियत्याग अरु कुश लव जन्म सो जानि १ ॥ त्रिभंगीछंद ॥ दुर्जनदलघायक श्रीरघुनायक सुखदायक त्रिभुवनशासन । सोहैं सिंहासन प्रभाप्रकाशन कर्मविनाशन दुखनाशन ॥ सुग्रीव विभीषण सुजन बंधुजन सहित तपोधन भूपतिगन । आये सँग मुनिजन सकल देवगन मृग तपकानन चतुरानन २ तोटकछंद ॥ उठि आदरसों अकुलाइ लयो । अतिपूजन कै बहुधा बिनयो ॥ सुखदायक आसन शोभरये । सबको सो यथाविधि आनिदये ३ दोहा ॥ सबन परस्पर बूझियो कुशलप्रश्न सुख पाय ॥ चतुरानन बोले वचन श्लाघा विनय बनाय ४ ब्रह्मा—मनोरमाछंद ॥ सुनिये चितदै जगके प्रतिपालक । सबके गुरुहौ हरि यद्यपि

१ शंबुकनामा शूद्र ॥

बालक॥ सबको सब भाइ सदा सुखदायक। गुण गावत वेद मनो वचकायक ५॥

१ त्रिभुवन के शासन कहे शिक्षक पाप पुण्य कर्म को नाशकै आपने धाम पठावत हैं इत्यर्थः॥ तपरूरी जो कानन बन है ताके मृग कहे अरण्य पशु जैसे अरण्य को मृग अवगाहन करत है तैसे अनेक तपस्याके अवगाहनकर्ता इत्यर्थः २ आनि कहे मँगाइकै ३ श्लाघा स्तुति ४। ५॥

तुम लोक रचे बहुधा रुचिकै तब। सुनिये प्रभु ऊजर हैं सिगरे अब॥ जग कोउ न भूलिहु जाइ निरय मग। मिटिगे सब पापन पुण्यन के नग ६ दोहा॥ वरुणपुरी धनपतिपुरी सुरपतिपुर सुखदानि॥ सप्तलोक वैकुंठ सब बस्यो अवधमें आनि ७ तोमरछंद॥ हँसि यों कह्यो रघुनाथ। समुझी सबै विधिगाथ॥ मम इच्छ एक सुजानि। कबहूं न होय सुआनि ८ तव पुत्र जे सनकादि। मम भक्त जानहु आदि॥ सुत मानसिक तिनकेति। भुवदेव भुवप्रगटेति ९ हम दियो तिन शुभ ठाउँ। कछु और दीबे गाउँ॥ अब देहिं हम केहि ठौर। तुम कहौ सुरशिरमौर १० ब्रह्मा–मरहट्टाछंद॥ सब वै मुनिरूरे तपबलपूरे विदित सनाढ्य सुजाति। बहुधा बहु बारनि प्रतिअवतारनि दैआये बहुभांति॥ सुनि प्रभु आखंडल मथुरामंडलमें दीजै शुभग्राम। बाढ़ै बहु कीरति लवणासुर हति अतिअजेय संग्राम ११॥ दोहा॥ जिनके पूजे तुम भये अंतर्यामी आप॥ तिनकी बात हमैं कहा पूछत त्रिभुवनदीप १२ द्विज आयो ताहीसमै मृतकपुत्रके साथ॥ करत विलापकलाप हा रामचन्द्र रघुनाथ १३ मल्लिकाछंद॥ बालकै मृतै सो देखि। धर्मराज सों विशेखि॥ बात यों कही निहारि। कर्म कौनको विचारि १४ धर्मराज–मनो-

मनोरमाछंद ॥ निज शूद्रनकी तपसा शिशुबालक । बहुधा भुवदेवनके सब बालक ॥ करिबेगि बिदा सिगरे सुरनायक । चढ़ि पुष्पक आशु चले रघुनायक १५ ॥

नग पर्वत ६ । ७ । ८ । ९ । १० आखंडल इंद्र ११ श्रीपति कहे लक्ष्मीपति १२ कलाप कहे समूह १३ धर्मराज न्यायदर्शी अथवा यमराज १४ । १५ ॥

दोधकछंद ॥ राम चले सुनि शूद्रकि गीता । पंकजयोनि गये जहँ सीता ॥ देखि लगी पग रामकि रानी । पूजिकै बूझति कोमलबानी १६ सीता ॥ कौनहुँ पूरबपुण्य हमारे । आजु फले जो इहां पगुधारे ॥ ब्रह्मा ॥ देवनको सब कारज कीन्हो । रावण मारि बड़ो यश लीन्हो १७ मैं बिनती बहु भांतिन कीनी । लोकनकी करुणा रसभीनी ॥ ऊतरु मोहिं दियो सुनि सीता । जाकि न जानि परै जिय गीता १८ मांगतहौं वर मोकहँ दीजै । चित्तमें और विचार न कीजै ॥ आजुते चाल चलौ तुम ऐसे । राम चलैं वैकुंठहि जैसे १९ सीय जहीं कछु नैन नवाये । ब्रह्म तहीं निजलोक सिधाये ॥ राम तहीं शिर शूद्रको खंड्यो । ब्राह्मण को सुत जीवनमंड्यो २० सुंदरीछंद ॥ एक समय रघुनाथ महामति । सीतहि देखि सगर्भ बढ़ी रति ॥ सुंदरि मांगु जो जीमहँ भावत । मोमन तो निरखे सुख पावत २१ सीता ॥ जो तुम होत प्रसन्न महामति । मेरे बढ़ै तुमहीं सों सदा रति ॥ अंतरकी सब बात निरंतर । जानतहौ सबकी सबते पर २२ राम—दोहा ॥ निर्गुणते सगुणो भयो सुनि सुंदरि तव हेत ॥ और कछू मांगौ सुमुखि रुचै जो तुम्हरे चेत २३ ॥

१६ द्वैछंदको अन्वय एक है ऊतरु कहे जवाब दियो अर्थ वैकुंठ चलिबे

को न कह्यो १७ । १८ । १९ नयन नवाये ते ब्रह्माको कह्यो अंगीकार करयो जानौ २० यह कह्यो इति शेषः २१ हमारे तुमहीं सों सदारति प्रीति बढ़ै यह वर हमको दीजै इत्यर्थः २२ । २३ ॥

सीताजू-सुंदरीछंद ॥ जो सबते हित मोकहँ कीजत । ईश दया करिकै वरु दीजत ॥ हैं जितने ऋषि देव नदीतट । हौं तिनको पहिराय फिरौं पट २४ राम-दोहा ॥ प्रथम दोहदै क्यों करौं निष्फल सुनि यह बात ॥ पट पहिरावन ऋषिनको जैयो सुंदरि प्रात २५ सुंदरीछंद ॥ भोजन कै तब श्रीरघुनंदन । पौढ़ि रहे बहु दुष्टनिकंदन ॥ बाजे बजे अधरात भई जब । दूतन आइ प्रणाम करी तब २६ चंचलाछंद ॥ दूत भूतभावना कही कही न जाय बैन । कोटिधा विचारियो परै कछू विचारमै न ॥ सूरके उदोतहोत बंधु आइयो सुजान । रामचन्द्र देखियो प्रभातचंद्र के समान २७ संयुताछंद ॥ बहुभांति बंदनता करी । हँसि बोलियो न दया धरी ॥ हमते कछू द्विज दोष है । जेहिते कियो प्रभु रोष है २८ दोहा ॥ मनसा वाचा कर्मणा हम सेवक सुनु तात ॥ कौन दोष नहिं बोलियत ज्यों कहि आये बात २९ ॥

देवनदी गंगा २४ दोहद कहे गर्भ २५ । २६ यामें केशव कहत है कि दूतकी कही जो भूत कहे व्यतीत भावना कहे क्रिया है रजक वचनादि कथा सो कहिबे को हम कोटि प्रकारसों विचारयो कछू विचार में नहीं परत तासों बैनसों हमसों नहीं कही जाति इत्यर्थः २७ । २८ । २९ ॥

राम-संयुताछंद ॥ कहिये कहा न कही परै । कहिये तौ ज्यों बहुतै डरै ॥ तब दूतबात सबै कही । बहुभांति देह दशा दही ३० भरत-दोहा ॥ सदा शुद्ध अति जानकी निंदत त्यों खलजाल ॥ जैसु श्रुतिहि स्वभावही पाखंडी सब काल ३१ भव अपवादनि ते तज्यो ज्यों चाहत सीताहि ॥

ज्यों जगके संयोगते योगी जन समताहि ३२ झूलनाछंद ॥ मन मानिकै अतिशुद्ध सीतहि आनियो निज धाम । अवलोकि पावक अंक ज्यों रविअंक पंकजदाम ॥ क्यहि भांति ताहि निकारिहौ अपवाद बादि बखानि । शिव ब्रह्म धर्म समेत श्रीपितुसाखि बोल्यहु आनि ३३ यमनादिके अपवाद क्यों द्विज छोड़िहै कपिलाहि । बिरहीनको दुख देत क्यों हर डारि चंद्रकलाहि ॥ यहहै असत्य जो होइगो अपवाद सत्य सुनाथ । प्रभु छोड़ि शुद्ध सुधा न पीवहु आपने विष हाथ ३४ दोहा ॥ प्रिय पावनि प्रियवादिनी पतिव्रता अति शुद्ध ॥ जगको गुरु अरु गुर्विणी छांड़त वेद विरुद्ध ३५ वे माता वैसे पिता तुमसों भैया पाइ ॥ भरत भये अपवादको भाजन भूतल आइ ३६ ॥

३० पाखंडी नास्तिक ३१ अपवाद निंदा समताको लक्षण पचीसयें प्रकाश में कह्यो है ३२ दाम जेवरी बादि वृथा ३३ यह जो ब्रह्मादिकन की साक्षी है सोई जो असत्य है तो हे नाथ! रजककृत यह अपवाद कैसे सत्य ह्वैहै इत्यर्थः सुधासम ब्रह्मादिकनकी साक्षी है विषसम रजक को अपवाद है ३४ । ३५ । ३६ ॥

राम—हरिलीलाछंद ॥ सांची कही भरत बात सबै सुजान । सीता सदा परमशुद्ध कृपानिधान ॥ मेरी कछू अवहिं इच्छ यहै सो हेरि । मोको हतो बहुरि बात कहौ जो फेरि ३७ लक्ष्मण—दोधकछंद ॥ दूखत जैन सदा शुभगंगा । छोड़हुगे बहुतुंगतरंगा ॥ मायहि निंदतहैं सब योगी । क्यों तजिहैं भव भूपति भोगी ३८ ग्यारसि निंदतहैं मठधारी । भावति है हरिभक्तनि भारी ॥ निंदतहैं तव नाम निवासी । का कहिये तुम अंतर्यामी ३९ दोहा ॥ तुलसीको मानत प्रिया

गौतमतिय अतिअज्ञ ॥ सीताको छोड़न कहौ कैसे कै सर्वज्ञ ४० शत्रुघ्न—रूपमालाछंद ॥ स्वप्नहूं नहिं छोड़िये तिय गुर्विणी पल दोइ। छोड़ियो तब शुद्धसीतहिं गर्भमोचन होइ ॥ पुत्र होइ कि पुत्रिका यह बात जानि न जाइ। लोक लोकनमें अलोक न लीजिये रघुराइ ४१ दोहा ॥ रामचन्द्र जगचन्द्र तुम फल दल फूल समेत ॥ सीता या वन पद्मिनी न्याय नहीं दुख देत ४२ ॥

फेरि कहे पलटिकै ३७ जैन नास्तिक ३८ ग्यारसि एकादशी वामी वाममार्गी ३९। ४० अलोक निंदा ४१। ४२ ॥

घरघरप्रति सब जग सुखी राम तुम्हारे राज ॥ अपने ही घर करत कत शोक अशोकसमाज ४३ राम—तोटकछंद ॥ तुम बालकहौ बहुधा सबमैं। प्रतिउत्तर देहु न फेरि हमैं ॥ जो कहैं हम बात सो जाइ करो। मनमध्य न और बिचार धरो ४४ दोहा ॥ और होइ तौ जानिजै प्रभुसों कहा वसाइ ॥ यह विचारिकै शत्रुहा भरत उठे अकुलाइ ४५ राम—दोधक छंद ॥ सीतहि लै अब सत्वर जैये। राखिमहावनमें पुनिऐये॥ लक्ष्मण जो फिरि उत्तर देहौ। शासनभंगको पातक पैहौ४६ लक्ष्मणलै वन सीतहिं धाये । स्थावर जंगमहू दुख पाये ॥ गंगहि देखिकह्यो यह सीता। श्रीरघुनायककी जनुगीता४७॥

अशोक जो आनंद है ताके समाज कहे समूह में ४३। ४४ जानिजै अर्थ दोष अदोष को निर्णय समुझिये ४५ शासन आज्ञा राजाको आज्ञाभंग वधके सम होता है यथा माधवानलनाटके "आज्ञाभङ्गो नरेन्द्राणां विप्राणां मानखण्डनम्। पृथक्शय्यावरस्त्रीणामशस्त्रवध उच्यते" ४६ सीताको लैकै लक्ष्मण वनहू को गये तहां पर्यंत कहूं कौशल्या वशिष्ठादि के वचन नहीं हैं सो ऋष्यशृंगऋषि के यज्ञ रह्यो तहां कौशल्यादि माता

औ अरुंधती सहित वशिष्ठ सब निमंत्रण में गये रहैं यह कथा उत्तररामचरित नाटक में लिखी है सो जानौ ४७ ॥

पार भये जबहीं जन दोऊ। भीमबनी जनु जंतु न कोऊ ॥ निर्जल निर्जन कानन देख्यो । भूतपिशाचन को घर लेख्यो ४८ सीताजू-नगस्वरूपिणीछंद ॥ सुनों न ज्ञान कारिका । शुकी पढ़ैं न सारिका ॥ न होमधूम देखिये । सुगंध बंधु लेखिये ४९ सुनों न वेदकी गिरा । न बुद्धि होति है थिरा ॥ ऋषीनकी कुटी कहां । पतिव्रता बसैं जहां ५० मिले न कोउ वे कहूं । न आवते न जातहूं ॥ चले हमैं कहां लिये । डरातिहैं महा हिये ५१ दोहा ॥ सुनि सुनि लक्ष्मण भीत अति सीताजूके बैन ॥ उत्तर मुख आयो नहीं जल भरि आये नैन ५२ नाराचछंद ॥ विलोकि लक्ष्मणै भई विदेहजा विदेहसी । गिरी अचेत ह्वै मनो घनै बनै तड़ीतसी ॥ कस्यो जु छांह एकहाथ एकबात बाससों । सिंच्यो शरीर वीर नैन नीरही प्रकाससों ५३ ॥

जन कहे मनुष्य जंतु कहे जीव अर्थ मनुष्य जीव केवल वनजीवही देखि परत हैं इति भावार्थः ४८ सुगंधको बंधु कहे हित अर्थ सुगंधयुक्त होम धूम नहीं देखियत अथवा सुगंधबंधु कहे दुर्गंध कहूं सुगंधबंध पाठ है तहां अर्थ सुगंध को बंध कहे बंधन है यामें ऐसो होम धूम नहीं देखियत ४९ । ५० । ५१ । ५२ मानों घनैबनै कहे घन वनको देखि तड़ित जो बिजुरी है सोई त्रसी कहे डरी है सो डरिकै अचेतह्वै गिरिपरी है इत्यर्थः कहूं घने घने तड़ी त्रसी पाठहै अर्थ मानो घने जे घन मेघ हैं तिनमें त्रसी कहे डरानी तड़ी अचेतह्वै गिरी है मेघसम वनहै बिजुरीसम सीता हैं ५३ ॥

रूपमालाछंद ॥ रामकी जपसिद्धिसी सियको चले वन छांड़ि । छांह एक फनीकरीफनदीहमालनि मांड़ि ॥ बालमीकि विलोकियो वनदेवता जनु जानि । कल्पवृक्षलता

किधौं दिविते गिरी भुव आनि ५४ सींचि मंत्र सजीव यौवन जीउठी तेहिकाल। पूंछियो मुनि कौनकी दुहिता बहू अरु बाल॥ सीताजू॥ हौं सुता मिथिलेशकी दशरत्थपुत्रकलत्र। कौन दोष तजी न जानति कौन आपुनु अत्र ५५ मुनि पुत्रिके सुनि मोहिं जानहि बालमीकि द्विजाति। सर्वथा मिथिलेशको गुरु सर्वदा शुभ भांति॥ होहिंगे सुत द्वै सुधी पगु धारिये मम ओक। रामचन्द्र क्षितीशके सुत जानिहैं तिहुँ लोक ५६ सर्वथा गुणि शुद्धसीतहिं लैगये मुनिराइ। ओपनी तपसानकी शुभसिद्धिसी सुखदाइ॥ पुत्र द्वै भये एक श्रीकुश दूसरो लव जानि। जातकर्महि आदिदै किय वेद भेद बखानि ५७ दोहा॥ वेद पढ़ायो प्रथमहीं धनुर्वेद सविशेष॥ अस्त्रशस्त्र दीन्हे घने दीन्हे मन्त्र अशेष ५८॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-
चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां जानकीत्याग-
वर्णनंनामत्रयस्त्रिंशत्प्रकाशः॥ ३३ ॥

सजीवमंत्र सों जीवनजल सींच्यो तब सीताजी उठीं अत्र कहे या स्थानमें आपनो कौन दोष है जासों मोको तजी यह हौं नहीं जानति इत्यर्थः ५४। ५५ ओक कहे घर ५६। ५७। ५८॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद-
निर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायांत्रयस्त्रिंशत्प्रकाशः॥ ३३॥

दोहा॥ आयो श्वान फिरयादिको चौंतीसयें प्रकाश॥ अरु सनाढ्यद्विज आगमन लवणासुरको नाश १॥ दोधक छंद॥ एकसमय हरि धर्मसभामें। बैठहुते नरदेव प्रभामें॥ संग सबै ऋषिराजविराजैं। सोदर मंत्रिन मित्र न साजैं २ कूकर एक फिरयादिहि आयो। दुंदुभि धर्मदुवार बजायो॥

बाजतही उठि लक्ष्मण धाये । श्वानहिं ब्राह्मण बूझन आये ३ कूकर ॥ काहूके क्रोध विरोध न देखो । रामको राज तपोमय लेखो ॥ तामहँ मैं दुख दीरघ पायों । रामहिं हौं सो निवेदन आयों ४ लक्ष्मण ॥ धर्मसभामहँ रामहिं जानो । श्वान चलो निजपीर बखानो ॥ श्वान ॥ हौं अब राजसभा नहिं आऊं । आऊं तो केशव शोभ न पाऊं ५ दोहा ॥ देव अदेव नृदेव घर पावनथल सुखदाइ ॥ बिन बोले आनंदमति कुत्सित जीवन जाइ ६ ॥

१ धर्मसभा न्यायसभा २ । ३ निवेदन कहना ४ । ५ । ६ ॥

दोधकछंद ॥ राजसभामहँ श्वान बुलायो । रामहिं देखत ही शिर नायो ॥ राम कह्यो जो कछू दुख तेरे । श्वान निशंक कहो पुर मेरे ७ श्वान—तारकछंद ॥ तुमहौ सर्वज्ञ सदा सुखदाई । अरु हौ सबको समरूप सदाई ॥ जग सोहत है जगतीपति जागे । अपने अपने सब मारग लागे ८ नरदेव न पांयपरै परजाको । निशि वासर होइ न रक्षक ताको ॥ गुणदोषनको जब होइ न दर्शी । तबहीं नृप होइ निरयपद पर्शी ९ दोहा ॥ निजस्वारथही सिद्धिद्विज मोको कयो प्रहार ॥ बिन अपराध अगाधमति ताको कहा विचार १० तारकछंद ॥ तब ताकहँ लेन तबै जन धाये । तबहीं नगरी महँते गहि ल्याये ॥ राम ॥ यह कूकर क्यों बिन दोषहि मास्यो । अपने जिय त्रास कछू न विचास्यो ११ ब्राह्मण—दोहा ॥ यह सोवतहो पंथमें हौं भोजनको जात ॥ मैं अकुलाइ अगाध मति याको कीन्हों घात १२ राम—स्वागता छंद ॥ ब्रह्म ब्रह्म ऋषिराज बखानो । धर्म कर्म बहुधा तुम

जानो ॥ कौन दंड द्विजको द्विज दीजै। चित्तचेति कहिये सोइ कीजै १३ ॥

पुर कहे ७।८।९।१०।११।१२ हे ब्रह्म ऋषिराज जो वेद वदै है ताके मतसों बखानौ कहौ १३ ॥

कश्यप ॥ है अदंड्य भुवदेव सदाई। यत्र तत्र सुनिये रघुराई ॥ ईश शीष अब याकहँ दीजै। चूकहीन अरि कोउ न कीजै १४ राम-तोमरछंद ॥ सुनि श्वान कहि तू दंड। हम देहिं याहि अखंड ॥ कहि बात तू डर डारि। जियमध्य आगु विचारि १५ श्वान-दोहा ॥ मेरो भायो करहु जो रामचन्द्र हितमंडि ॥ कीजै द्विज यहि मठपती और दंड सब छंडि १६ निशिपालिकाछंद ॥ पीत पहिराइ पट बांधि शिर सों पटी। बोरि अनुराग अरु जोरि बहुधा गटी ॥ पूजि परि पायँ मठ ताहि तबहीं दियो। मत्तगजराज चढ़ि विप्र मठ को गयो १७ दोहा ॥ भयो रंकते राज द्विज श्वानकीन करतार ॥ भोगन लाग्यो भोगवै दुंदुभि बाजत द्वार १८ सुंदरी छंद ॥ बूझत लोग सभामहँ श्वानहिं। जानत नाहिंन या परिमानहिं ॥ विप्रहि तैं जो दई पदवी वह। है यह निग्रह कै धौं अनुग्रह १९ श्वान-दोधकछंद ॥ एक कनौज हुतो मठधारी। देव चतुर्भुजको अधिकारी ॥ मंदिर कोउ बड़ो जब आवै। अंग भली रचनानि बनावै २० जा दिन केशव कोउ न आवै। तादिन पालिक ते न उठावै ॥ भेटनि लै बहुधा धन कीनो। नित्य करै बहुभोग नवीनो २१ एक दिना यक पाहुन आयो। भोजन तौ बहुभांति बनायो ॥ ताहि परोसन को पितु मेरो। बोलि लियो हित हौं सब

केरो २२ ताहि तहां बहुभांति परोस्यो । केहूं कहूं नखमाहँ रह्यो स्यो ॥ ताहि परोसि जहीं घर आयो । रोवत हौं हँसि कंठ लगायो २३ चामरछंद ॥ मोहिं मातु तत्र दूधभात भोजकों दियो । वातसों सिराइ तात क्षीर अंगुली छियो ॥ द्यो द्रयो भष्यो गयो अनेक नर्क वासभो । हौं भ्रम्यो अनेक योनि अवध आनि श्वान भो २४ दोहा ॥ वाको थोरो दोष में दीन्हों दंड अगाध ॥ राम चराचर ईश तुम क्षमियो यह अपराध २५ लोक करेउ अपवित्र वहि लोक नरकको वास ॥ छुवै जो कोऊ मठपती ताको पुण्य विनास २६ ॥

विन दोष काहूको घात न करै १४ । १५ । १६ गजरथाश्वादि की गद्दी कहे समूह जोरि यत्नकरिकै दियो औ मठदियो कृपा दुहूंओर लगति है अथवा मठधारिन की गद्दी में जोरि कहे मिलाइकै कालंजर दुर्ग जो प्रसिद्ध है ताको मठपति कियो यह बाल्मीकीय रामायणमें लिख्यो है यथा " कालंजरे महाराज कौलपत्यं प्रदीयताम् । एतच्छ्रुत्वा तु रामेण कौलपत्येभिषेचितः " १७ । १८ या जो मठपति है ताके प्रमाण को नहीं जानत १९ । २० । २१ । २२ । २३ । २४ । २५ । २६ ॥

रामायणे यथा " ब्रह्मस्वं देवद्रव्यं च स्त्रीणां बालधनं च यत् ॥ दत्तं हरति यो मोहात्स पचेन्नरके ध्रुवम् २७ स्कन्दपुराणे यथा ॥ हरस्य चान्यदेवस्य केशवस्य विशेषतः ॥ मठपत्यं च यः कुर्य्यात्सर्वधर्म्मबहिष्कृतः २८ पद्मपुराणे यथा ॥ पत्रं पुष्पं फलन्तोयं द्रव्यमन्नं मठस्य च ॥ योऽश्नाति स पचेद् घोरान्नरकानेकविंशतिः २९ देवीपुराणे यथा ॥ अभोज्यं मठिनामन्नं भुक्त्वा चान्द्रायणं चरेत् ॥ स्पृष्ट्वा मठपतिं विप्रं सवासा जलमाविशेत् ३० " दोहा ॥ औरौ एक कथा कहौं विकल भूपकी राम ॥ वहौ अयोध्या बसत है वंशकारके

धाम ३१ वसंततिलकाछंद॥ राजाहुतो प्रबल दुष्ट अनेक-हारी। वाराणसी विमलक्षेत्रनिवासकारी॥ सो सत्यकेतु यह नाम प्रसिद्ध शूरो। विद्याविनोदरत धर्मविधानपूरो३२॥

ब्रह्मस्व ब्राह्मण को द्रव्य और देवता को द्रव्य और स्त्रीको द्रव्य और बालक को द्रव्य और अपनी दीन्ही जो द्रव्य है इनको मोहवश ह्वैकै जो हरतहै सो प्राणी ध्रुव कहे निश्चय करि नरके कहे नरकमें पचेत् कहे पाकत है अर्थ जरतहै दुख पावत है इति कहिबेको हेतु यह कि देवद्रव्यहारी मठपति है सो नरकको प्राप्त होतहै २७ जो प्राणी काहू देवको मठपति होइ सो धर्मरहित ह्वैजात है इत्यर्थः २८ अश्नाति कहे भोग करत है घोर भयानक जे एकविंशति नरक हैं तिनमें पाकत है २९ मठिन को अन्न अभोज्य है खाइबे योग्य नहीं है जो खाइये तो चान्द्रायण व्रतको करिये और मठपति ब्राह्मण को स्पृष्ट्वा कहे छुइकै सवासा कहे वस्त्रसहित जलं कहे जलमें आविशेत् कहे प्रवेश करियें वस्त्र सहित स्नान करि डारिये इत्यर्थः ३० जो पाछे कह्यो है कि "गुणदोषन को जब होइ न दर्शी। तबहीं नृप होइ निरयपद पर्शी" सो बात पुष्ट करिबे के लिये सत्यकेतु की कथा कहत हैं जो वंशकार कहे डोम के घरमें त्रिकल कष्टयुक्त बसत है ता भूपकी कथा कहत हौं ३१। ३२॥

धर्माधिकार पर एक द्विजाति कीन्हों। संकल्पद्रव्य बहुधा त्यहि चोरिलीन्हों॥ बंदी विनोद गणिकादि विलास कर्त्ता। पावै दशांश द्विज दान अशेष हर्त्ता ३३ राजा विदेश बहु साजि चमू गयेहो। जूझेउ तहाँ समर योधनसों भयेहो॥ आये कराल किल दूत कलेशकारी। लीन्हेगये नृपतिको जहँ दंडधारी ३४ धर्मराज-भुजंगप्रयातछंद॥ कहा भोग-वैगो महाराज दूमें। कि पापै कि पुण्यै करेउ भूरि भूमें॥ राजा॥ सुनो देव मोको कछू सुद्धि नाहीं। कहौ आपही पाप जो मोहिं माहीं ३५ धर्मराज॥ कियो तैं द्विजोती जो धर्माधिकारी। सो तो नित्य संकल्पवित्तापहारी॥ दियोदुष्ट

रुण्डानि मुंडानि लैलै । महापाप माथे तिहारे सो दैदै ३६ ॥

बंदीजननकी जो विनोद कहे स्तुति है तामें औ गणिकादिकन को अनेक विलासको कर्त्ता रह्यो औ जो दान द्रव्य राजाके इहांसे कढ़तरह्यो है तामें दशांश ब्राह्मण पावैं औ अशेष सम्पूर्ण को हर्त्ता आप रह्यो ३३ । ३४ । ३५ । ३६ ॥

हुतो तैं सबै देशही को नियंता । भले की बुरेकी करी तैं न चिंता ॥ महासूक्ष्म है धर्मकी बात देखो । जितो दान दीन्हों तितो पाप लेखो ३७ दोहा ॥ कालसर्पसे समुझिये सबै राजके कर्म ॥ ताहूते अतिकठिन है नृपति दानको धर्म ३८ भुजंगप्रयातछंद ॥ भयो कोटिधा नर्कसम्पर्क ताको । हुते दोषसंसर्गके शुद्ध जाको ॥ सबै पापमे क्षीणभो मुक्त लेखी । रह्यो औधमें आनि है कोलबेखी ३९ तारकछंद ॥ तब बोलि उठो दरबारविलासी । द्विजद्वारलसै यमुनातट वासी ॥ अतिआदरसों ते सभामहँ बोल्यो । बहुपूजनकै मगको श्रम खोल्यो ४० राम–रूपमालाछंद ॥ शुद्धदेश ये रावरे सो भये सबै यहि बार । ईश आगम संगमादिकही अनेक प्रकार ॥ धाम पावन ह्वैगये पदपद्मको पय पाय । जन्म शुद्ध भये छुये कुल दृष्टिही मुनिराय ४१ ॥

३७ । ३८ जाको जा शुद्ध राजाको केवल संसर्गही के दोष रहे तासों नरक को संपर्क कहे संयोग भयो यासों राजाको भले बुरेकी चिंता करिबो उचित है इति भावार्थः जब नरकभोगसों सबै पाप क्षीण भये तब नरकते मुक्त भयो छूट्यो तब अवध में कोल कहे चांडाल भेद अथवा शूकरवेषी रूपधारी रह्यो है ३९ दरबार जो बहिर्द्वार है ताको विलासी द्वारपाल खोल्यो दूरि करयो ४० रामचन्द्र ब्राह्मणन सों कहत हैं कि हे ईश ! रावरे आगम आइबे सों औ संगम बैठिबो पौढ़िबो आदिसों तिन्हैं आदि जे और स्नान भोजनादि हैं तिनसों ये हमारे देश अनेक प्रकार सों शुद्ध भये औ तुम्हारे पदपद्म के छुये सों जन्म शुद्धभये औ तुम्हारी दृष्टिसों कुल शुद्ध

भये अथवा आगमसों देश शुद्ध भये औ संगम जो स्पर्श है त्यहि आदि दै सो जन्मादि अनेक प्रकारसों शुद्ध भये ते आगे कहत हैं ४१ ॥

पादपद्मप्रणामहीं भये शुद्धसीरखहाथ। शुद्ध लोचन रूप देखतही भये मुनिनाथ ॥ नासिका रसना विशुद्ध भये सुगंध सुनाम। कर्ण कीजत शुद्ध शब्द सुनाय पीयुषधाम ४२ दोधकछंद ॥ आये कहँ सोइ आयसु दीजै। आजु मनोरथ पूरण कीजै ॥ ब्राह्मण ॥ जीवति सो सब राज्य तिहारी। निर्भय ह्वै भुवलोक विहारी ४३ ऋषि-मरहट्टाछंद ॥ तुम हो सबलायक श्रीरघुनायक उपमा दीजै काहि। मुनिमानसरंता जगतनियंता आदि न अंत न जाहि ॥ मारौ लवणासुर जैसे मधु मुर मारे श्रीरघुनाथ। जग जयरसभीने श्री शिव दीने शूलहिं लीने हाथ ४४ दोहा ॥ जाके मेलत शूल यह सुनिये त्रिभुवनराय ॥ ताहिभस्म करि सर्वथा वाही के कर जाय ४५ दोधकछंद ॥ देव सबै रणहारि गयेजू। और जिते नरदेव भयेजू ॥ श्रीभृगुनंदन युद्धन मांड्यो। श्रीशिवको गनि सेवक छांड्यो ४६ ॥

४२ तुम्हारो जो सब राज्य है अर्थ राजवासी हैं सो जीवति जीवनसों निर्भय ह्वैकै भुवलोक में विहारी कहे विहार करत हैं अर्थ तुम्हारे राजवासी को कहूं भय नहीं है तामें हमको जीवितकी भय मात्र है इति भावार्थः ४३। ४४। ४५। ४६ ॥

दोहा ॥ पादारघ हमको दियो मथुरामंडल आप ॥ वासों बसन न पावहीं विना बसे अतिपाप ४७ राम ॥ रक्षहिंगे शत्रुघ्नसुत ऋषि तुमको सबकाल ॥ वासुदेव ह्वै रक्षिहौं हँसि कह दीनदयाल ४८ भुजंगप्रयातछंद ॥ चलौ वेगि शत्रुघ्न ताको सँहारो। वहै देश तौ भावतो है हमारो ॥ सदा शुद्ध

वृंदावनो भूमली है । तहां नित्य मेरी विहारस्थली है ४९ यहै जानि भूमें द्विजन्मान दीनी । बसै यत्र वृंदाप्रिया प्रेमभीनी ॥ सनाढ्यानकी भक्ति जो जीयजागै । महादेव को शूल ताके न लागै ५० बिदा ह्वै चले रामपै शत्रुहंता । चले साथ हाथी रथी युद्धरंता ॥ चतुर्धा चमू चारिहू ओर गाजैं । बजे दुंदुभी दीह दिग्देवलाजैं ५१ दोहा ॥ केशव वासर बारहें रघुपति के सब वीर ॥ लवणासुर के यमनि ज्यों मेले यमुनातीर ५२ मनोरमाछंद ॥ लवणासुर आइगयो यमुनातट । अवलोकि हँस्यो रघुनंदनके भट ॥ धनुबाण लिये निकसे रघुनंदनु । मदके गजको सुत केहरिको जनु ५३ लवणासुर–भुजंगप्रयातछंद ॥ सुन्यो तैं नहीं जो इहां भूलि आयो । बड़ो भाग मेरो बड़ो भक्ष पायो ॥ शत्रुघ्न ॥ महाराज श्रीरामहैं क्रुद्ध तोसों । तजौ देशको कै सजौ युद्ध मोसों ५४ ॥

पाप कष्ट अथवा पातक ४७ वासुदेव कृष्ण ४८ वृंदा तुलसी ४९ । ५० । ५१ लवणासुर के यमनि कहे यमराजन के सम ५२ मदके गजको कहे मदयुक्त गजको ५३ । ५४ ॥

लवणासुर ॥ वहै राम राजा दशग्रीवहंता । सो तो बंधु मेरो सुरस्त्रीनरंता ॥ हतौं तोहिं वाको करौं चित्त भायो । महादेवकी सों बड़ो भक्ष्य पायो ५५ भये क्रुद्ध दोऊ दुवो युद्धरंता । दुवो अस्त्रशस्त्रप्रयोगी निहंता ॥ बली विक्रमी धीर शोभाप्रकाशी । नश्यो हर्ष दोऊ सबैं विनाशी ५६ शत्रुघ्न–दोहा ॥ लवणासुर शिवशूल विन और न लागै मोहिं ॥ शूल लिये बिन भूलिहूं हौं न मारिहौं तोहिं ५७ ॥

रंता भोगी सरस्वती उक्तार्थः सुरस्त्रीनरंता कहि या जनायो जो रावण इंद्रहू को जीति देवांगनन को लैआयो ताहू को रामचन्द्र मास्यो तो अति-

बली हैं तिनके तुम बंधुही हौ तो कहे तौही कहे निश्चय करि इमको हतौ मारौ वाको रामचन्द्र को चित्तभायो करो महादेव की सौंह है जो तू रामचन्द्रको बंधुही है तो बड़ो भक्ष्य कहे मेरे जे भक्ष्य या ठौर के वासी हैं तिनको पालनहार तू आयो है ५५ प्रयोगी कहे चलावनहार सवर्षे कहे बाण वर्षासहित जे दोऊ विनाशी कहे परस्पर हंता हैं तिनको हर्ष नाशि गयो है अर्थ विकल हैं ५६। ५७॥

मोटनकछंद ॥ लीन्हों लवणासुर शूल जहीं। मारेउ रघुनंदन बाण तहीं ॥ काट्यो शिर शूलसमेत गयो। शूली कर सुःख त्रिलोक भयो ५८ बाजे दिवि दुंदुभिदीह तबै। आये सुर इन्द्रसमेत सबै ॥ देव ॥ कीन्हों बहु विक्रम या रन में। मांगौ वरदान रुचै मनमें ५९ शत्रुघ्न-प्रमाणिकाछंद ॥ सनाढ्यवृत्ति जो हरै। सदा समूल सो जरै ॥ अकालमृत्यु सों मरै। अनेकनर्क सो परै ६० सनाढ्यजाति सर्वदा। यथा पुनीत नर्मदा ॥ भजें सजें जे संपदा। विरुद्ध ते असंपदा ६१ दोहा ॥ मथुरामंडल मधुपुरी केशव स्ववश वसाइ ॥ देखे तब शत्रुघ्नजू रामचन्द्रके पाइ ६२ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां लवणासुरवधवर्णनं नाम चतुस्त्रिंशत्प्रकाशः ॥ ३४ ॥

५८। ५९। ६० कहिबे को हेतु यह कि ऐसे जे सनाढ्य हैं तिनकी भक्ति हम को वर दीजै ६१। ६२ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायां रामभक्तिप्रकाशिकायां चतुस्त्रिंशत्प्रकाशः ॥ ३४ ॥

दोहा ॥ पैंतीसयें प्रकाशमें अश्वमेध किय राम ॥ मोहन लवशत्रुघ्नको ह्वैहै संगरधाम १ विश्वामित्र वशिष्ठसों एकसमय रघुनाथ ॥ आरंभो केशव करन अश्वमेध की गाथ २ राम-

चामरछंद ॥ मैथिलीसमेत तौ अनेक दान मैं दियो। राजसूय आदिदै अनेकजन्म मैं कियो ॥ सीयत्याग पापते हिये सो हौं महाडरौं। और एक अश्वमेध जानकी विना करौं ३ ॥

संगरधाम कहे समरभूमि में १। २ सो ताके त्याग पापके मोचनार्थ विना जानकी एक अश्वमेध करतहौं इत्यर्थः ३ ॥

कश्यप–दोहा ॥ धर्म कर्म कछु कीजई सफलतरुनके साथ ॥ ताविन जो कछु कीजई निष्फल सोई नाथ ४ तोटकछंद ॥ करिये युत भूषणरूपरयी। मिथिलेशसुता इक स्वर्णमयी ॥ ऋषिराज सबै ऋषि बोलि लिये। शुचिसों सब यज्ञ विधान किये ५ हयशालनते हय छोरि लियो। शशिवर्णसो केशव शोभरयो ॥ श्रुतिश्यामल एक विराजत है। अलिस्यो सरसीरुह लाजत है ६ रूपमालाछंद ॥ पूजि रोचन स्वच्छ अक्षत पट्टबांधिय भाल। भूषि भूषण शत्रुदूषण छांड़ियो तेहि काल ॥ संगलै चतुरंगसेनहि शत्रुहंता साथ। भांतिभांतिन मानदै पठये सो श्रीरघुनाथ ७ जातहै जित वाजि केशव जातहैं तित लोग। बोलि विप्रन दानदीजत यत्र तत्र सभोग ॥ वेणु वीण मृदंग बाजत दुंदुभी बहुभेव। भांति भांतिन होत मंगल देवसे नरदेव ८ कमलछंद ॥ राघव की चतुरंगचमू चपको गनै केशव राजसमाजनि। शूरतुरंगन के उरझैं पगतुंग पताकनकी पटसाजनि ॥ टूटिपरैं तिनते मुक्ता धरणी उपमा बरणी कविराजनि। बिंदु किधौं मुख फेननके किधौं राजश्री स्रवै मंगललाजनि ९ ॥

४ शुचिसों पवित्रतासों ५ इहां श्वेत कमल जानों ६ शत्रुदूषण रामचन्द्र ७ सभोग कहे अनेक भोग्य वस्तु सहित ८ समाज समूह स्रवै कहे वर्षति हैं राजन के भयाणमों पुरस्त्री लाज कहे लावा मंगलार्थ वर्षती हैं यह प्रसिद्ध है ९ ॥

राच्यो १३ श्लोक ॥ " एकवीरा च कौशल्या तस्याः पुत्रो रघूद्वहः ॥ तेन रामेण मुक्तोसौ वाजी गृह्णात्विमम्बली " १४ दोधकछंद ॥ घोरचमू चहुँओरते गाजी । कौनेहि रे यह बाँधिय वाजी ॥ बोलि उठे लव मैं यह बाँध्यो । यों कहिकै धनुशायकसाँध्यो ॥ मारि भगाइ दिये सिगरे यों । मन्मथ के शर ज्ञानघने ज्यों १५ ॥

अवगाहि मँझाइकै १२ । १३ एको वीरः पतिर्यस्याः सा एकवीरा अर्थ भूमंडल में जेते प्रसिद्ध वीर हैं तिनके मध्य में एकवीर मुख्यवीर अर्थ सबसों अधिक वीरहै पति जाको औ फेरि कैसी हैं कौशल्या कोशलाधिपकी कन्या हैं तिनके पुत्र रघूद्वह कहे रघुवंश के राज्यादि भारके धारणकर्ता रामचन्द्र हैं इति शेषः इन तीनों पदनसों एक वीरात्मजत्व सुकुलजात्मजत्व राज्याभिषिक्तत्व जनायो तेन रामेण कहे तिन रामकरिकै असौ कहे यह वाजी मुक्तः कहे छोड़ो गयो है जो बली होय सो इमं कहे याको गृह्णातु कहे ग्रहण करै अथवा बांधै १४ । १५ ॥

धीरछंद ॥ योधा भगे वीर शत्रुघ्न आये । कोदण्ड लीन्हे महारोष छाये ॥ ठाढ़ो तहां एक बालै विलोक्यो । रोक्यो तहीं जोरनाराचमोक्यो १६ शत्रुघ्न—सुंदरीछंद ॥ बालक छांड़िदे छांड़ि तुरंगम । तोसों कहा करौं संगरसंगम ॥ ऊपर वीर हिये करुणारस । वीरहि विप्रहते न कहूं यस १७ लव—तारकछंद ॥ कछु बात बड़ी न कहो मुखथोरे । लवसों न जुरौ लवणासुर भोरे ॥ द्विजदोष नहीं बलताको सँहाखो । मरि ही जो रहो सो कहा तुम माखो १८ चामरछंद ॥ राम बंधु बाण तीनि छोड़िये त्रिशूलसे । भाल में विशाल ताहि लागियो ते फूलसे ॥ लव ॥ घातकीन राज तातगात तैंकि पूजियो । कौन शत्रु तैं हत्यो जो नाम शत्रुहा लियो १९ ॥

मोक्यो कहे छोड़िहीं से चुकेरहैं ता नाराचको रोंक्यो १६ । १७ । १८ । १९ ॥

निशिपालिकाछंद ॥ रोषकरि बाण बहुभांति लव छं-डियो। एकध्वज सूतयुग तीनि रथ खंडियो॥ शस्त्र दशरत्थ सुत अस्त्र कर जो धरै। ताहि सियपुत्र तिलतूलसम खंडरै २० तारकछंद ॥ रिपुहाकर बाण वहै कर लीन्हो। लवणासुर को रघुनंदन दीन्हो ॥ लवके उरमें उरभयो वह पत्री। मुर-झाइ गिरयो धरणीमहँ क्षत्री २१ मोटनकछंद ॥ मोहे लव भूमि परे जबहीं। जयदुंदुभि बाजि उठे तबहीं ॥ भुवते रथ ऊपर आनिधरे। शत्रुघ्नसो यों करुणानि भरे २२ घोड़ो तबहीं तिन छोरि लयो। शत्रुघ्नहि आनँद चित्त भयो ॥ लैकै लव को ते चले जबहीं। सीतापहँ बालगये तबहीं २३ बालक-भूलनाछंद ॥ सुन मैथिली नृप एकको लव बांधियो वर-वाजि। चतुरंगसेन भगाइकै तब जीतियो वह आजि ॥ उर लागिगो शर एकको भुवमें गिरयो मुरझाइ। वह वाजि लै लवलै चल्यो नृप दुंदुभीन बजाइ २४ दोहा ॥ सीतागीता पुत्र को सुनि सुनि भई अचेत। मनों चित्र की पुत्रिका मन क्रम वचन समेत २५ सीता—भूलनाछंद ॥ रिपु हाथ श्री-रघुनाथ के सुत क्यों परे करतार। पति देवता सबकाल जो लव जो मिलै यहि बार ॥ ऋषि हैं नहीं कुश है नहीं लव लेइ कौन छड़ाइ। वनमांझ टेर सुनी जहीं कुश आइयो अकुलाइ २६ ॥

एक बाण सों ध्वजा खंड्यो औ द्वै बाणसों सूत सारथी खंड्यो औ तीन बाणसों रथ खंड्यो तिल औ तूल रुई सम खंडरै कहे खंडन करत है २० पत्री बाण २१ । २२ । २३ । २४ । २५ । २६ ॥

कुश—दोहा ॥ रिपुहि मारि संहारि दल यमते लेउँ छड़ाइ। लवहि मिले हौं देखिहौं माता तेरे पाइ २७ सवैया ॥ गहि

यों सिंधु सरोवर सों जेहि बालि बलीबर सो बरपेस्यो। ढाहिदिये शिर रावण के गिरिसे गुरु जातन जात न हेस्यो॥ शूलसमूलउखारि लियो लवणासुर पीछेते आइ सो टेस्यो। राघव को दल मत्तकरी सुरअंकुशदै कुशकै सब फेस्यो २८ दोहा॥ कुशकी टेर सुनी जहीं फूलि फिरे शत्रुघ्न॥ दीप विलोकि पतंग ज्यों यदपि भयो बहुविघ्न २९ मनोरमाछंद॥ रघुनंदन को अवलोकतही कुश। उरमांझ हयो शरशुद्ध निरंकुश॥ ते गिरे रथ ऊपर लागतही शर। गिरि ऊपर ज्यों गजराज कलेवर ३० सुंदरीछंद॥ जूझि गिरे जबहीं अरिहारन। भाजिगये तबहीं भटके गन॥ काढ़ि लियो जबहीं लव को शर। कंठ लग्यो तबहीं उठि सोदर ३१ दोहा॥ मिले जो कुश लव कुशलसों वाजि बांधि तरुमूल। रणमहिं ठाढ़े शोभिजैं पशुपतिगणपतिनूल ३२॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-
चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांशत्रुघ्नसम्मोहोनाम
पञ्चत्रिंशः प्रकाशः॥ ३५॥

यमते लेउँ छड़ाइ कहि या जनायो कि जो मस्यो है है तो यमपुरते फेरि ल्याइहौं २७ मत्तकरि सम कह्यो सो मत्तकरी को कृत राघवदल में स्थापित करत हैं गाहियो मँझाइयो बालि बलीको जो बरबलहै ताहि बर कहे वट वृक्ष सों पेरचो कहे मर्देव औ शूलरूपी जो मूल जर रह्यो त्यहि सहित लवणासुरको वृक्षसों इति शेषः उखारि लीन्हों जैसे वृक्ष मूल के आधार सों सबल रहत है तैसे शूल सों लवणासुर सबल रह्यो तासों मूलसम कह्यो २८ पतंग पांखी २९ निरंकुश निर्भय कलेवर दे है ३०। ३१। ३२॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद-
निर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायां पञ्चत्रिंशः प्रकाशः॥ ३५॥

दोहा ॥ छत्तीसयें प्रकाश में लक्ष्मण मोहन जानि। आयसु लहि श्रीराम को आगम भरत बखानि ॥ १ ॥ रूपमालाछंद ॥ यज्ञमंडलमें हुते रघुनाथजू तेहिकाल। चर्मअंगकुरंगको शुभस्वर्णकी सँगबाल ॥ आसपास ऋषीश शोभित शूर सोदर साथ। आइ भग्गुललोग बरणे युद्धकी सब गाथ २ भग्गुल—स्वागताछंद ॥ वालमीकि थल वाजि गयोजू। विप्रबालकन घेरि लयोजू ॥ एक बांचि यदु घोटक बांध्यो। दौरि दीह धनुशायक सांध्यो ३ भांति भांति सब सेन सँहाख्यो। आपु हाथ जनु ईश सँवाख्यो ॥ अस्त्रशस्त्र तव बंधु जो धाख्यो। खंडखंड करि ताकहँ डाख्यो ४ रोषवेष वह बाण लयोजू। इंद्रजीत लगि आपु दयोजू ॥ कालरूप उर माहँ हयोजू। वीर मूर्च्छि तब भूमि भयोजू ५ तोमरछंद ॥ बहुवीर लै अरु वाजि। जबहीं चल्यो दलसाजि ॥ तब और बालक आनि। मग रोकियो तजि कानि ६ तेहि मारियो तव बंधु। तब ह्वैगयो सब अंधु ॥ वह वाजिलै अरु वीर। रणमें रह्यो रुपि धीर ७ ॥

१। २ घोटक घोड़ो ३। ४ पैंतीसयें प्रकाशमें कह्यो है कि "रिपुहा कर बाण वहै कर लीन्हों। लवणासुरको रघुनंदन दीन्हों" औ इहां कह्यो है कि इंद्रजीत लागि आप दयोजू तहां या जानौ कि वहै बाण इंद्रजीतके मारिवे को लक्ष्मणको दियो रहै औ वहै लवणासुरके मारिवेको शत्रुघ्नहूको दियो रहै अथवा इंद्रजीत लवणासुरहीको नाम जानौ इंद्रको लवणासुरहू जीत्यो है सो चौंतीसयें प्रकाशमें कह्यो है कि देव सबै रणहारि गयेजू। भूमि भयो कहे भूमिमें पख्यो कानि मर्यादा ५। ६। ७ ॥

दोहा ॥ बुधि बल विक्रम रूप गुण शील तुम्हारे राम ॥ काकपक्षधरि बाल द्वै जीते सब संग्राम ८ राम—चतुष्पदी

छंद ॥ गुणगणप्रतिपालक रिपुकुलघालक बालकते रण-रंता । दशरथनृपको सुत मेरो सोदर लवणासुरको हंता ॥ कोऊ द्वै मुनिसुत काकपक्षयुत सुनियत है जिन मारे । यहि जगतजालके करमकालके कुटिल भयानक भारे ६ ॥

काकपक्ष जुलुफ ८ बालकते बालअवस्थाही सों रणरंता कहे रण में रमत रह्यो है यह जो जगत् जाल कहे संसारसमूह है अथवा जगत्रूपी जाल फांस है औ काल कहे समय है तिनके जे कुटिल कहे टेढ़ेकर्म हैं ते भारे कहे अतिभयानक हैं या जगत्में समयके फेरसों ऐसी अनुचित बात हैजाति है जाको देखिकै बड़ो भय होतहै इत्यर्थः ६ ॥

मरहट्टाछंद ॥ लक्ष्मण शुभलक्षण बुद्धिविचक्षण लेहु बाजिकर शोधु । मुनिशिशु जनि मारहु बंधु उधारहु क्रोध न करहु प्रबोधु ॥ बहुसहित दक्षिणा दै प्रदक्षिणा चल्यो परम-रणधीर । देख्यो मुनि बालक सोदर उपज्यो करुणा अद्भुत वीर १० कुश-दोधकछंद ॥ लक्ष्मणको दल दीरघ देख्यो । कालहुते अतिभीम विशेख्यो ॥ दोमें कहौ सो कहा लव कीजै । आयुध लेहौ कि घोटक दीजै ११ ॥

प्रबोध क्षमा मुनि बालकनको लघु वेष देखि करुणारस भयो औ सोदर शत्रुघ्नको मूर्च्छित देखि आश्चर्य भयो कि एतो बड़ो वीर ताको बालकन मूर्च्छित करचो शत्रुघ्नको मूर्च्छित करयो है तासों इनको मारो चाहिये यासों वीररस भयो १० । ११ ॥

लव ॥ बूझतहौ तौ यहै प्रभु कीजै । मोअसु दै बरु अश्व न दीजै ॥ लक्ष्मण को दल सिंधु निहारो । ताकहँ बाण अगस्त्य तिहारो १२ कौन यहै घटिहै अरि घेरे । नाहिंन हाथ शरासन मेरे ॥ नेकु जहीं दुचितो चित कीन्हों । सूर बड़ो इषुधी धनु दीन्हों १३ लै धनुबाण बली तब धायो । पल्लव ज्यों दल मारि उड़ायो ॥ यों दोउ सोदर सेन सँहारैं ।

ज्यों वनपावक पौनविहारैं १४ भागत हैं भट यों लव आगे। रामके नाम ते ज्यों अघभागे ॥ यूथप यूथ यों मारि भगायो। बात बढ़े जनु मेघ उड़ायो १५ सवैया ॥ अतिरोषरसे कुश केशव श्रीरघुनायकसों रणरीति रचै । त्यहि बार न वार भई बहुवारण खड्ग हनै न गणै विरचै ॥ तहँ कुंभफटैं गज-मोतीकटैं ते चले बहुशोणित रोचिरचै। परिपूरण पूरपनारन ते जनु पीक कपूरनकी किरचै १६ ॥

बूझत कहे पूँछत असु प्राण १२ कौन कहे कहा अरिके घेरे में याही बात ना घाटि है कि हमारे हाथ में शरासन धनुष नहीं है या प्रकार कहत लव नेक चित्तको दुचित्तो करयो अर्थ युद्धहू को विचार विचारत रहे औ सूर्यकी स्तुतिहू में चित्त को लायो तब सूर कहे सूर्य बड़ो इषुधी तर्कस औ धनुष दीन्हों । यथा जैमिनिपुराणे (जैमिनिरुवाच) " स्तोत्रेणानेन संतुष्टो रविर्दिव्यं शरासनम् ॥ ददौ लवाय शौरं च जयति श्रेयमुत्तमम् १ सुवर्ण-पट्टैरुचिरैर्निबद्धं संगुणं दृढम् ॥ धनुःप्राप्य महाबाहुर्लवः कुशमथाब्रवीत् २ उपदिष्टं हि यत्स्तोत्रं मुनिना करुणात्मना ॥ शौरं तज्जपितं भ्रातस्तस्माल्लब्धं मया धनुः " १३ । १४ रसे कहे युक्त तेहिवार कहे समयमों बार कहे बेर ना भई अर्थ थोरिही बेर में बहुत वारण जे हाथी हैं तिनको खड्ग तरवारि सों हनत हैं औ काहूको गनत नहीं हैं औ चिरचै कहे विरुझात हैं पीक के पूरकहे धार सम रुचिरहै कपूर किरच सम मोती हैं १५ । १६ ॥

नाराचछंद ॥ भगे चये चमू चमूप छोड़ि छोड़ि लक्ष्मणै । भगे रथी महारथी गयन्दवृन्द को गणै ॥ कुशै लवै निरंकुशै विलोकि बंधु रामको । उठ्यो रिसाइकै बली बँध्यो सो लाज दामको १७ कुश-मौक्तिकदामछंद ॥ न हौं मकराक्ष न हौं इंद्रजीत । विलोकि तुम्हैं रण होहुँ न भीत ॥ सदा तुम लक्ष्मण उत्तम गाथ । करो जनि आपनि मातु अनाथ १८ लक्ष्मण ॥ कहौ कुश जो कहि आवति बात । विलोकतहौं

उपवीतहि गात ॥ इतेपर बाल बहिक्रम जानि । हिये करुणा उपजै अति आनि १६ विलोचन लोचतहैं लखि तोहिं । तजौ हठ आनि भजौ किनि मोहिं ॥ क्षम्यों अपराध अजौं घर जाहु । हिये उपजाउ न मातहिं दाहु २० दोधकछंद ॥ हौं हतिहौं कबहूं नहिं तोहीं । तू बरु बाणन बेधहि मोहीं ॥ बालक विप्र कहा हनियेजू । लोक अलोकनमें गनियेजू २१॥

"एकोदशसहस्राणि योधयेद्यस्तु धन्विनाम् ॥ शस्त्रशास्त्रप्रवीणश्च स महारथ उच्यते" १७ । १८ । १६ हमारे लोचन तुम्हारे देखिबे को लोचत कहे चाहत हैं भजौ मिलौ २० । २१ ॥

हरिणीछंद ॥ लक्ष्मण हाथ हथ्यार धरौ । यज्ञ वृथा प्रभु को न करौ ॥ हौं हयको कबहूं न तजौं । पट्ट लिख्यो सोइ बांचि लजौं २२ स्वागताछंद॥ बाण एक तब लक्ष्मण छंड्यो । चर्म वर्म बहुधा तिन खंड्यो ॥ ताहि हीन कुश चित्तहि मोहै । धूमभिन्न जनु पावक सोहै २३ रोषवेष कुश बाण चलायो । पौनचक्र जिमि चित्त भ्रमायो ॥ मोह मोहि रथ ऊपर सोये । ताहि देखि जड़जंगम रोये २४ नाराचछंद ॥ विराम राम जानिकै भरत्थ सों कथा कहैं । विचारि चित्तमांझ वीर वीर वे कहां रहैं ॥ सरोष देखि लक्ष्मणै त्रिलोक्य तौ विलुप्त ह्वै । अदेवदेवता त्रसैं कहा ते बाल दीन ह्वै २५ राम-रूपमाला छंद ॥ जाहु सत्वर दूत लक्ष्मण हैं जहां यहि बार । जाइकै यह बात वर्णहु रक्षियो मुनिबार ॥ हैं समर्थ सनाथ वे असमर्थ और अनाथ । देखिबेकहँ ल्याइयो मुनिबाल उत्तम गाथ २६ सुंदरीछंद ॥ भग्गुल आइगये तबहीं बहु । बार पुकारत आरत रक्षहु ॥ वे बहुभांतिन सेनसँहारत । लक्ष्मण तो तिनको नहिं मारत २७ बालक जानि तजैं करुणा करि ।

वे अतिढीठ भये दलसंहरि ॥ केहुँ न भाजत गाजतहैं रण। वीर अनाथ भये बिन लक्ष्मण २८ जानहु जै उनको मुनि बालक। वे कोउहैं जगतीप्रतिपालक ॥ हैं कोउ रावणके कि सहायक। कै लवणासुरके हितलायक २९ ॥

या छंदको सारवतीहू कहत हैं २२ तिनको कुशको धूमसम चर्मवर्म खंडित ह्वैगयो क्रोध औ प्रतापसों अग्निसम कुश के अंग शोभित हैं २३ पवनचक्र बौंड़र २४ विराम बेर त्रैलोक्य के अदेव दैत्य औ देवता विलुप्त है कहे लुकिकै त्रसैं कहे डरात हैं अर्थ लुकिहू रहत हैं ताहूपर भय नहीं मिटत यासों अतिभय जानौ २५। २६ बार कहे बारवार २७। २८ जै कहे जनि जगतीप्रतिपालक ईश्वर अथवा राजा सहायक कहे बली २९ ॥

भरत ॥ बालक रावणके न सहायक। ना लवणासुरके हित लायक ॥ है निजपातकवृक्षनके फल। मोहतहैं रघुवंशिन के बल ३० जीतहि को रणमांझ रिपुघ्नहि। को करै लक्ष्मण के बल विघ्नहि ॥ लक्ष्मण सीय तजी जब ते वन। लोक अलोकन पूरि रहे तन ३१ छोड़ाइ चाहत ते तबते तन। पाइ निमित्त करेउ मन पावन ॥ शत्रुघ्न तज्यो तन सोदर लाजनि। पूत भये तजि पापसमाजनि ३२ दोधक छंद ॥ पातक कौन तजी तुम सीता। पावन होत सुने जगगीता ॥ दोषविहीनहि दोष लगावै। सो प्रभु ये फल काहे न पावै ३३ हमहूं त्यहि तीरथ जाइ मरैंगे। सतसंगति दोष अशेष हरैंगे ॥ वानर राक्षस ऋक्ष तिहारे। गर्व चढ़े रघुवंशहि भारे ॥ तालगि यह कै बात विचारी। हौ प्रभु संतत गर्वप्रहारी ३४ चंचरीछंद ॥ क्रोधकै अति भरत अंगद संग संगरको चले। जामवंत चले विभीषण और वीर भले भले ॥ को गनै चतुरंग सेनहि रोदसी नृपता

भरी। जाइकै अवलोकियो रणमें गिरे गिरि से करी ३५॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायां भरतसमागमोनाम षट्त्रिंशः प्रकाशः॥ ३६॥

मोहत कहे मूर्च्छित करत हैं अर्थ हीनो करत हैं ३० लोक में घातन करिकै अवलोकन दोषनसों पूरिरहे हैं ३१ जबते अलोक प्राप्त भयो तब ते ता अलोक के मिटिबे के यतन को छोड़ोई चाहत रहे सो युद्धरूपी निमित्त कारण पाइकै तनको छोड़ि मनको पावन करयो शत्रुघ्नके बंधु लक्ष्मण सीताको वनमें छोड़ि आये या विधि लोकापवाद लाजनसों शत्रुघ्नहू तनको छोड़्यो पूत पवित्र छंद उपजाति है ३२ पातक कौन एतो भरतसों रामचन्द्रको प्रश्न है ३३ तेहि तीर्थ अर्थ युद्धतीर्थ में छंद उपजाति गाथा है ३४ संगर युद्ध रोदसी कहे भू, आकाश नृपता कहे नृपसमूहनसों भरी–" द्यावाभूमी च रोदसी इत्यमरः ३५॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायां षट्त्रिंशः प्रकाशः॥ ३६॥

दोहा॥ सैंतीसयें प्रकाशमें लव कटु बैन बखान॥ मोहन बहुरि भरत्तको लागे मोहनबान १ रूपमालाछंद॥ जामवंत विलोकिकै रणभीमभू हनुमंत। शोणकी सरिता बही सुअनंतरूप दुरंत॥ यत्र तत्र ध्वजापताका दीह देहनि भूप। टूटिटूटि परे मनो बहुवातवृक्ष अनूप २ पुंजकुंजर शुभ्रस्यंदन शोभिजै सुठिसूर। ठेलिठेलि चले गिरीशनि पेलिशोणितपूर॥ ग्राह तुंगतुरंग कच्छप चारु चर्म विशाल। चक्रसे रथचक्रपैरत गृद्धवृद्धमराल ३ केकरे कर बाहु मीन गयंदशुंडभुजंग। चीर चौर सुदेशके शशिबाल जानि सुरंग॥ बालका बहुभांतिहैं मणिमाल जालप्रकास। पैरि पार भये ते द्वै मुनिबाल केशवदास ४॥

१ जामवंत औ हनुमंत दुरंत कहे दुःख करिकै पाइयत है अंत पार जिनको अर्थ अतिबड़ी औ अनंत कहे अनेक शोण रुधिरकी सरिता बही हैं जामें ऐसी जो रणकी भीम भयानक भू है ताको विलोक्यो बड़े पताका ध्वजा कहावत हैं छोटे पताका कहावत हैं २ सुठि शूर अर्थ अतिशूर जे सन्मुख घावसहि मरे हैं ठेलि कहे टारि पेलि कहे दबाइकै जैसे शिलनको टारि नदिनको पूरप्रवाह चलत है तैसे इहां पर्वतसम जे गज रथ हैं तिनको टारिकै शोणित के पूर चले यासों अतिगंभीरता औ वेगता जो नदीहू तीर गृध्र रहत हैं इहांऊं हैं औ श्वेत हैरहे हैं अंगलोम जिनके ऐसे जे वृद्धप्राणी हैं तेई हंसहैं ३ केकरे गेंगटा–भुजंग सर्प ४ ॥

दोहा ॥ नाम वरण लघुवेष लघु कहत रीझि हनुमंत ॥ इतो बड़ो विक्रम कियो जीते युद्ध अनंत ५ भरत–तारक छंद ॥ हनुमंत दुरंत नदी अब नाखौ । रघुनाथ सहोदर जी अभिलाखौ ॥ तब जो तुम सिंधुहि नांघिगयेजू । अब नांवहु काहे न भीतभयेजू ६ हनुमान्–दोहा ॥ सीतापद सन्मुखहुते गयों सिंधुके पार ॥ विमुख भये क्यों जाहुँ तरि सुनो भरत यहि बार ७ तारकछंद ॥ धनु बाण लिये मुनि बालक आये । जनु मन्मथके युगरूप सुहाये ॥ करिबे कहँ शूरनके मद-हीने । रघुनायक मानहुँ द्वै वपु कीने ८ भरत ॥ मुनिबालक हौ तुम यज्ञ करावो । सुकिधौं वरवाजिहि बांधन धावो ॥ अपराध क्षमौ सब आशिष दीजै । वरवाजि तजो जिय रोष न कीजै ९ दोहा ॥ बांध्यो पट्ट जो शीश यह क्षत्रिन काजप्र-कास ॥ रोष करेउ बिन काज तुम हम विप्रनके दास १० ॥

वर्ण कहे नामके अक्षर ५ रघुनाथ सहोदर जे शत्रुघ्न औ लक्ष्मण हैं तिनको जीमें अभिलाषौ अर्थ या नदी नांघि लक्ष्मण शत्रुघ्नको देखो जाय ६ । ७ । ८ मुनिनके बालकनको यज्ञ कराइवो उचित है अश्व बांधि यज्ञ रोकिवो उचित नहीं है इति भावार्थः ९ । १० ॥

कुश–दोधकछंद ॥ बालकवृद्ध कहौ तुम काको । देहनि

को किधौं जीवप्रभाको ॥ है जड़ देह कहै सब कोई । जीव सो बालक वृद्ध न होई ११ जीव जरै न मरै नहिं छीजे। ताकहँ शोक कहा करि कीजे ॥ जीवहि विप्र न क्षत्रिय जानो। केवल ब्रह्म हिये महँ आनो १२ जो तुम देहु हमैं कछु शिक्षा। तौ हम देहिं तुम्हैं यह भिक्षा ॥ चित्त विचार परै सोइ कीजै। दोष कछू न हमैं अब दीजै १३ स्वागताछंद ॥ विप्र बालकन की सुनि बानी । क्रुद्ध सूरसुत भो अभिमानी १४ सुग्रीव ॥ विप्रपुत्र तुम शीश सँभारो । राखि लेहि अब ताहि पुकारो १५ लव–गौरीछंद ॥ सुग्रीव कहा तुमसों रणमांड़ों। तोको अतिकायर जानिकै छांड़ों ॥ बालि तुम्हैं बहुनाच नचायो । कहा रणमंडन मोसन आयो १६ ॥

भरत मुनिबालक पद कह्यो है तासों कुश यह कहत हैं ११ । १२ शिक्षा दै हमारो बोध करो इत्यर्थः १३ । १४ छंद उपजाति है १५ फल कहे गांसी ता बाणके लागे बात सम अर्थ औ उर सम बहुत भ्रमत भये औ मुरझात भये १६ ॥

तारकछंद ॥ फलहीन सो ताकहँ बाण चलायो । अतिबातभ्रम्यो बहुधा मुरझायो ॥ तब दौरिकै बाण विभीषण लीन्हो । लव ताहि विलोकतही हँसिदीन्हो १७ सुन्दरी छंद ॥ आउ विभीषण तू रणदूषण । एक तुहीं कुलको कुलभूषण ॥ जूझ जुरे जे भले भयजीके । शत्रुहि आइ मिले तुम नीके १८ दोधकछंद ॥ देववधू जबहीं हरिल्यायो । क्यों तबहीं तजि ताहि न आयो ॥ यों अपने जियके उर आये । क्षुद्र सबै कुलछिद्र बताये १९ दोहा ॥ जेठो भैया अन्नदा राजा पितासमान ॥ ताकी पत्नी तू करी पत्नी मातु समान २० को जानी कै बार तू कही न ह्वैहै माइ ॥ सोई तैं पत्नी

करी सुनु पापिनके राइ २१ तोटकछंद ॥ सिगरे जगमांझ हँसावत है । रघुवंशिन पाप नशावत है ॥ धिक तोकहँ तू अजहूँ जो जियै । खल जाइ हलाहल क्यों न पियै २२ ॥

जूझ जूरे पर भले जीके भय सों शत्रुको आइ मिलै १७ देववधू सीता १८ । १९ । २० । २१ । २२ ॥

कछुहै अब तो कहँ लाज हिये । कहि कौन विचार हथ्यार लिये ॥ अब जाइ करीषकि आगि जरौ । गरुवांधिकै सागर बूड़िमरौ २३ दोहा ॥ कहा कहौं हौं भरत को जानत है सब कोय ॥ तोसो पापी संग है क्यों न पराजय होय २४ बहुत युद्धभो भरतसों देव अदेवसमान ॥ मोहि महारथपर गिरे मारे मोहनबान २५ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांभरतमोहनोनाम सप्तत्रिंशत्प्रकाशः ॥ ३७ ॥

करीष सूख्यो गोबर बिनुआ कंडा करि प्रसिद्ध है २३ । २४ । २५ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायां सप्तत्रिंशत्प्रकाशः ॥ ३७ ॥

दोहा ॥ अड़तीसयें प्रकाशमें अंगदयुद्ध बखान ॥ व्याजसैन रघुनाथको कुश लव आश्रमजान १ भरतहि भयो विलंब कछु आये श्रीरघुनाथ ॥ देख्यो वह संग्रामथल जूझिपरे सब साथ २ तोटकछंद ॥ रघुनाथहि आवत आइ गये । रण में मुनि बालक रूपरये ॥ गुणरूप सुशीलन सों रण में । प्रतिबिंब मनो निज दर्पण में ३ मधुतिलकछंद ॥ सीतासमान मुखचन्द्र विलोकि राम । बूझ्यो कहां बसतहौ तुम कौन

ग्राम ॥ माता पिता कवन कवनहि कर्म कीन । विद्या-विनोद शिष कौन्यहि अस्त्र दीन ४ ॥

१ । २ गुण औ रूप औ शील स्वभावन सहित रणमें अर्थ रण करने में मानो दर्पण में आपने प्रतिबिंबही आइगये हैं जैसे दर्पण के निकट जातही दर्पण में आपनेही स्वभावादिसों युक्त आपने प्रतिबिंब आइजात हैं ताविधि रणभूमिरूपी दर्पण के निकट रामचन्द्र के आवतही रामचन्द्रहीके स्वभावादि सों युक्त प्रतिबिंबसम लव कुश आये इत्यर्थः ३ भाग्यवान् पुत्र को मुख माता को ऐसो होतहै " धन्यो मातृमुखः सुतः-इति प्रमाणात् " कहो कहे कौन स्थान में कर्म जातकर्मादि ४ ॥

कुश-रूपमालाछंद ॥ राजराज तुम्हैं कहा मम वंश सों अब काम । बूझि लीन्हेहु ईश लोगन जीति कै संग्राम ॥ राम ॥ हौं न युद्ध करौं कहे विन विप्रवेष विलोकि ॥ वेगि वीर कथा कहौ तुम आपनी रिस रोकि ५ कुश ॥ कन्यका मिथिलेश की हम पुत्र जाये दोइ । बालमीकि अशेषकर्म करे कृपारस भोइ ॥ अस्त्र शस्त्र सबै दये अरु वेदभेद पढ़ाइ । बापको नहिं नाम जानत आजुलौं रघुराइ ६ दोधकछंद ॥ जानकिके मुख अक्षर आने । राम तहीं अपने सुत जाने ॥ विक्रम साहस शील उचारे । युद्धकथा कहि आयुध डारे ७ राम ॥ अंगद जीति इन्हैं गहि ल्यावो । कै अपने बल मारि भगावो ॥ वेगि बुझावहु चित्तचिताको । आजु तिलोदक देहु पिताको ८ अंगद तौ अँगअंगनि फूले । पौनके पुत्र कह्यो अति भूले ॥ जाइ जुरे लवसों तरु लैकै । बात कही शतखंडन कैकै ९ ॥

५ । ६ जानकी को नाम लीन्हों तासों औ अपने सदृश विक्रम साहस शीलहूसों विचार्यो कि हमारे ही पुत्र हैं ७ हम तुमसों कहि राख्यो है कि कोऊ हमारे वंश में तुमसों युद्ध करिहै सो ये हमारेही पुत्र हैं तासों इनको

जीतिकै ता समयसों क्रोधाग्निसों जरत चित्तरूपी जो चिता है ताको बुझाओ औ रघुवंशिन सों युद्धकरि पिताको तिलोदक देन कह्यो है सो देउ अथवा हमारे ही पुत्र ह्वैकै हमारे अश्वबांधि वृथा युद्ध करयो ता क्रोध सों जरत जो चित्तरूपी चिता है ताको बुझाओ औ पिताको तिलोदक देहु ८। ६॥

लव॥ अंगद जो तुमपै बल होतो। तौ वह सूरजको सुत कोंतो॥ देखतही जननी जो तिहारी। वासँग सोवति ज्यों बरनारी १० जादिनते युवराज कहाये। विक्रम बुद्धि विवेक बहाये॥ जीवतपै कि मरे पहँ जैहै। कौन पिताहि तिलोदक दैहै ११ अंगद हाथ गहै तरु जोई। जात तहीं तिलसों कटि सोई॥ पर्वतपुंज जिते उन मेले। फूलके तूललै बाणन झेले १२ बाणन बेधि रही सब देही। वानर ते जो भये अब सेही॥ भूतलते शरमारि उड़ायो। खेलिके कंदुकको फल पायो १३ सोहत है अध ऊरध ऐसे। होत वटा नटको नभ जैसे॥ जान कहूं न इतै उत पावै। गोबलचित्त दशोदिशि धावै १४ बोल घट्यो सो भयो सुरभंगी। ह्वैगयो अंग त्रिसंकुको संगी॥ हा रघुनायक हौं जन तेरो। रक्षहु गर्व गयो सब मेरो १५ दीन सुनी जनकी जब बानी। जो करुणा लव बाण न आनी॥ छांड़ि दियो गिरिभूमि परयोई। विह्वलह्वै अति मानो मरयोई १६॥

बरनारी अर्थ विवाहिता स्त्री १० जो रामचन्द्र कह्यो कि इनको जीतिकै आजु पिता को तिलोदक देहु सो सुनिकै लव कहत हैं कि हमको जीतिकै जो तिलोदक तुम देहौ सो जीवत पिता जे सुग्रीव हैं तिनको प्राप्त ह्वैहै कि मरे पिता जे बालिहैं तिनको प्राप्त ह्वैहै ११ झेले दूरि किये १२ सेही सल्लकी नाम वनजंतु विशेष १३। १४ त्रिशंकुको संगी अर्थ त्रिशंकुसम शीश नीचे चरण ऊपर भये १५। १६॥

विजयछंद॥ भैरवसे भट भूरि भिरे बल खेत खड़े करतार

करे कै । भारे भिरे रणभूधर भूप न टारे टरे इभकोटि अरे कै ॥ रोषसों खड्ग हने कुश केशव भूमि गिरे न टरेहू गरे कै । राम विलोकि कहैं रस अद्भुत खाये मरे नग नाग मरे कै १७ दोधकछंद ॥ वानर ऋक्ष जिते निशिचारी । सेन सबै यकबाण सँहारी ॥ बाणविंधे सबही जब जोये । स्यंदन में रघुनंदन सोये १८ गीतिकाछंद ॥ रणजोइकै सब शीश भूषण संग रहे जे भले भले । हनुमंत को अरु जामवंतहि वाजि सों असि ले चले ॥ रणजीतिकै लव साथलै करि मातुके कुश पां परे । शिर सूंघि कंठ लगाय आनन चूमि गोद दुवौधरे १९ ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्र-चन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांकुशलवजयवर्ण-नन्नामाष्टत्रिंशत्प्रकाशः ॥ ३८ ॥

भैरव ऐसे जे भूरिभट हैं ते बलसों भिरे हैं सो इन भटन को कहे कैधौं याही परे कहे अति विकट खेत कहे युद्ध के लिये कर्तार विधातैं करे कहे बनायो है अर्थ त्रिकालज्ञ विधाता यह अति विकट युद्धभावी जानि कै ताके लिये ऐसे प्रबल वीर आपने हाथसों बनायो है या युद्ध में येई वीर भिरे हैं और वीर न भिरिसकै इति भावार्थः अथवा बलसों खड़े जे खेत हैं तिनके कर कहे कर्ता अर्थ जिन रावणादि सों रण कीन्हों है ऐसे जे भैरव ऐसे भूरिभट हैं ते करे कहे अतिकठोर मारु मारु इत्यादि तार कहे उच्चस्वर कै कहे करिकै रण में भिरे हैं कोऊ कादरस्वर नहीं बोलत इति भावार्थः औ भूधर पर्वतसम अचल जे भारे भूप हैं अथवा भूधर कहे भूमि के धरनहार अर्थ जेती भूमिधरैं तेती कैसहू न छोड़ैं ऐसे जे भारे भूप हैं ते कोटिन इभ जे हाथी हैं तिनको अरे कहे हठै करिकै अर्थ पगन में जंजीरादि डारि जामें टरैं नहीं ऐसे करके युद्ध में भिरे हैं ते भट औ भूपमरे कै कटेहूँ अर्थ शिर कटिगयो है ताहूपर भूमि में न गिरे अर्थ जिनको कबंधहू लरत रह्यो औ तिन हाथिन को परे देखिकै अद्भुतरस युक्त ह्वै रामचन्द्र कहत हैं कि नग जे पर्वत हैं तिनकै खायें कहे खावां मारे हैं कि नाग कहे

हाथी मरे हैं अर्थ ऐसे मरे हाथिन के कतारे परे हैं मानों पर्वतन के खावां मारे हैं अथवा नागनग जे गजमुक्ता हैं तिन के खायेंसम मारि गये हैं अर्थ यह जहां गजमुक्तन के खावां मारि गये हैं तहां हाथिन की कौन कहै १७ तेंतीसयें प्रकाश में कह्यो है कि " राम की जय सिद्धि सों सियको चले वन छांड़ि " सो जय सिद्धिरूप जे सीता हैं तिनको तौ वनमें छोंड्यो जय सिद्धि कैसे प्राप्त होय सो त्रिकालज्ञ जे रामचन्द्र हैं ते यह विचारि कै सोई रहे १८ । १६ ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसाद-निर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायामष्टत्रिंशत्प्रकाशः ॥ ३८ ॥

दोहा ॥ नवतीसयें प्रकाश सिय राम सँयोग निहारि ॥ यज्ञपूरि सब सुतनको दीन्हों राज विचारि १ रूपमाला छंद ॥ चीन्हि देवरको विभूषण देखिकै हनुमंत । पुत्र हौं विधवा करी तुम कर्म कीन दुरंत ॥ बापको रण मारियो अरु पितृ भ्रातृ सँहारि । आनियो हनुमंत बांधि न आनियो म्वहिं गारि २ दोहा ॥ माता सब काकी करी विधवा एकहि बार ॥ मोसे और न पापिनी जाये वंशकुठार ३ दोधकछंद ॥ पाप कहां हति बापहि जैहौ । लोकचतुर्दश ठौर न पैहौ ॥ राजकुमार कहै नहिं कोऊ । जारज जाइ कहावहु दोऊ ४ कुश ॥ मोकहँ दोष कहा सुनि माता । बांधि लियो जो सुन्यो उनि भ्राता ॥ हौं तुमहीं त्यहिबार पठायो । राम पिता कब मोहिं सुनायो ५ दोहा ॥ मोहिं विलोकि विलोकिकै रथपर पौढ़े राम ॥ जीवत छोड़्यो युद्ध में माता करि विश्राम ६ ॥

१ दुरंत अनुत्तम गारि कलंक २ । ३ । ४ । ५ विश्राम क्षमा ६ ॥

सुंदरीछंद ॥ आइ गये तबहीं मुनिनायक । श्रीरघुनंदन के गुणगायक ॥ बात विचारि कही सिगरी कुश । दुःख कियो मनमें कलिअंकुश ७ रूपवतीछंद ॥ कीजै न विडंबन

संतत सीते । भावी न मिटै सुकहूं जगगीते ॥ तू तो पति-देवनकी गुरु बेटी । तेरी जग मृत्यु कहावत चेटी ८ तोटक छंद ॥ सिगरे रणमंडलमांझ गये । अवलोकतहीं अतिभीत भये ॥ दुहुँ बालनको अतिअद्भुत विक्रम । अवलोकि भयो मुनिके मन संभ्रम ९ ॥

कैसे हैं मुनिनायक कलि जो कलियुग है ताके अंकुश हैं ७ विडंबन दुःख हे बेटी ! तू पतिदेव कहे पतिव्रतनकी गुरु है चेटी दासी तेरी आज्ञासों मृत्यु मरे वीरन को जियाइ है ८ इति भावार्थः छंद उपजाति है ९ ॥

दंडक ॥ शोणितसलिल नरवानरसलिलचर गिरिबालि-सुत विष विभीषण डारेहैं । चमरपताका बड़ी बड़वाअनल सम रोगरिपु जामवंत केशव विचारे हैं ॥ वाजि सुरवाजि सुरगजसे अनेक गज भरत सबंधु इंदु अमृत निहारे हैं । सोहत सहित शेष रामचन्द्र कुश लव जीतिकै समरसिंधु सांचेहू सुधारेहैं १० सीता--दोहा ॥ मनसा वाचा कर्मणा जो मेरे मन राम ॥ तौ सब सेना जीउठै होहि घरी न विराम ११ दोधकछंद ॥ जीय उठी सब सेन सभागी । केशव सोवतते जनु जागी ॥ स्यो सुत सीतहि लै सुखकारी । राघवके मुनि पांयनपारी १२ मनोरमाछंद ॥ शुभ सुंदरि सोदर पुत्र मिले जहँ । वर्षा वर्षैं सुर फूलनकी तहँ ॥ बहुधा दिवि दुंदुभि के गण बाजत । दिगपाल गयंदन के गण लाजत १३ ॥

कविजन समरको सिंधुसम कहतई हैं औ कुश लव समर जीतिकै अंगनन सहित सांचो सिंधु सँवारयो इत्यर्थः सो कहत हैं सलिलचर ग्राहादि गिरि मैनाक रुधिर रंग सों अरुण चमर जानो रोगरिपु धन्वंतरि अड़तीसयें प्रकाश में कह्यो है कि हनुमंत को अरु जामवंतहि वाजिसों ग्रसि लै चले तासों इहां दूसरे जामवंत जानो अथवा प्रथम ग्रसिलैगये हैं

फेरि छोड़िदिये हैं तेऊ तहां हैं भरत चंद्रमा हैं शत्रुघ्न अमृत हैं १० विराम बेर ११। १२। १३॥

अंगद-स्वागताछंद॥ रामदेव तुम गर्वप्रहारी। नित्य तुच्छ अतिबुद्धि हमारी॥ युद्धदेव भ्रमतैं कहि आयो। दास जौनि प्रभु मारग लायो १४ रूपमालाछंद॥ सुंदरी सुतलै सहोदर वाजिलै सुखपाइ। साथलै मुनि वालमीकिहि दीह दुःख नशाइ॥ रामधाम चले भले यश लोकलोक बढ़ाइ। भांति भांति सुदेश केशव दुंदुभीन वजाइ १५ भरत लक्ष्मण शत्रुहा पुर भीर टारतजात। चौंर ढारतहैं दुवौदिशि पुत्र उत्तमगात॥ छत्रहै कर इन्द्रके शुभ शोभिजै वहुभेव। मत्तदंति चढ़े पढ़ैं जयशब्द देव नृदेव १६ दोधकछंद॥ यज्ञ-थली रघुनंदन आये। धामनि धामनि होत बधाये॥ श्री मिथिलेशसुता बड़भागी। स्योसुत सासुनके पगलागी १७॥

पचीसयें प्रकाश में अंगद कह्यो है कि "देवहौ नरदेव वानर नैर्ऋता-दिकवीर हौ" तावातको ते कहत हैं कि हे देव! तव जो हमसों युद्ध करिबे को कहि आयो रहै अर्थ हम युद्ध करिबे को कह्यो रहै सो भ्रमसों कह्यो रहै सो दास जानिकै हमारो गर्व दूरि करिकै हमको मार्ग राह लगायो रामचन्द्रहूको वचन रह्यो कि कोऊ मेरे वंशमें तोसों युद्ध करि है तव तेरो मन मोसों शुद्ध ह्वैहै सो इहां अंगद को मन शुद्ध भयो जानो१४। १५। १६।१७॥

दोहा॥ चारि पुत्र द्वै पुत्र सुत कौशल्या तव देखि॥ पायो परमानंद मन दिगपालन सम लेखि१८रूपमालाछंद॥ यज्ञपूरण कै रमापति दान देत अशेष। हीर नीरज चीर माणिक वर्षि वर्षा वेष॥ अंगराग तड़ाग बाग फले भले वहु भांति। भवन भूषण भूमि भाजन भूरि वासर राति १९ दोहा॥ एक अयुत गज बाजि द्वै तीनि सुरभि शुभवर्ण॥ एक एक विप्रहि दई केशव सहित सुवर्ण २० देव अदेव

नृदेव अरु जितने जीव त्रिलोक ॥ मन भायो पायो सबन कीन्हे सबन अशोक २१ अपने अरु सोदरनके पुत्र विलोकि समान ॥ न्यारे न्यारे देश दै नृपति करे भगवान २२ कुश लव अपने भरतके नंदन पुष्कर तक्ष ॥ लक्ष्मणके अंगद भये चित्रकेतु रणदक्ष २३ भुजंगप्रयातछंद ॥ भले पुत्र शत्रुघ्न द्वै दीप जाये । सदा साधु शूरे बड़े भाग पाये ॥ सदा मित्रपोषी हनैं शत्रुघाती । सुबाहै बड़ो दूसरो शत्रुघाती २४ दोहा ॥ कुश को दई कुशावती नगरी कौशलदेश ॥ लवको दई अवंतिका उत्तर उत्तमवेश २५ पश्चिम पुष्करको दई पुष्कर-वाति है नाम ॥ तक्षशिला तक्षहि दई लई जीति संग्राम २६ अंगद कहँ अंगदनगर दीन्हों पश्चिम ओर ॥ चन्द्रकेतु चन्द्रावती लीन्हों उत्तर जोर २७ ॥

१८ नीरज मोती [illegible] रातो दिन देत कहे देत भये १९ अयुत दश हजार सुवर्ण दशमाशे का स्वर्णमुद्रा सुवर्ण दशमाशिक २० । २१ । २२ । २३ । २४ । २५ । २६ । २७ ॥

मथुरा दई सुबाहुको पूरण पावनगाथ ॥ शत्रुघातको नृप कस्यो देशहिको रघुनाथ २८ तोटकछंद ॥ यहि भांतिसों रक्षित भूमि भई । सब पुत्र भतीजन बांटि दई ॥ सब पुत्र महाप्रभु बोलि लिये । बहुभांतिन के उपदेश दिये २९ चामरछंद ॥ बोलिये न झूंठ ईढ़ि मूढ़पै न कीजई । दीजिये जो बात हाथ भूलिहू न लीजई ॥ नेहु तोरिये न देहु दुःख मंत्रि मित्रको । यत्र तत्र जाहुपै पत्याहुजै अमित्रको ३० नाराचछंद ॥ जुवा न खेलिये कहू जुबानवेद रक्षिये । अमित्र भूमिमाह जै अभक्ष भक्ष भक्षिये ॥ करौ न मंत्र मूढ़सों न गूढ़ मंत्र खोलिये । सुपुत्र होहु जै हठी मठीनसों न बोलिये ३१

वृथा ने पीड़िये प्रजाहि पुत्रमान पारिये । असाधु साधु बूझि कै यथापराध मारिये ॥ कुदेव देव नारिको न बालवित्त लीजिये । विरोध विप्रवंशसों सो स्वप्नहू न कीजिये ३२ ॥

देशहिके अर्थ अयोध्याके समीप देशको २८ । २९ इति मित्रता जो वस्तु बात करिकै अथवा हाथ करिकै दीजिये ताको फेरि न लीजै ३० वेदको जुबान कहे वचन भूमि कहे स्थान ३१ पुत्रमान कहे पुत्रसम असाधु सदोष साधु निर्दोष कुदेव ब्राह्मण ३२ ॥

भुजंगप्रयातछंद ॥ परद्रव्य को तौ विषप्राय लेखौ । परस्त्रीनसों ज्यों गुरुस्त्रीन देखौ ॥ तजौ कामक्रोधौ महामोह लोभौ । तजौ गर्वको सर्वदा चित्तक्षोभौ ३३ यशौ संग्रहौ निग्रहौ युद्ध योधा । करौ साधुसंसर्ग जो बुद्धिबोधा ॥ हितू होइ सो देइ जो धर्मशिक्षा । अधर्मीनको देहु जै वाकभिक्षा ३४ कृतघ्नी कुवादी परस्त्रीविहारी । करौ विप्र लोभी न धर्माधिकारी ॥ सदा द्रव्य संकल्पको रक्षि लीजै । द्विजातीनको आपुही दान दीजै ३५ सवैया ॥ तेरहमंडल मंडित भूतल भूपति जो क्रमही क्रम साधै । कैसेहु ताकहँ शत्रु न मित्र सु केशवदास उदास न बाधै ॥ शत्रु समीप परे त्यहि मित्रसे तासु परे जो उदासकै जोवै । विग्रह संधिन दानानि सिंधु लीलै चहुँ ओरन तौ सुख सोवै ३६ ॥

काम, क्रोध, मोह, लोभ औ गर्व कहे मद औ क्षोभ कहे मात्सर्य ये जे छः हैं तिन को त्याग करियो ३३ योधा कहे शत्रु अथवा जो लरिबे को उन्मुख होइ भीतादि को न मारियो इति भावार्थः । बुद्धिबोधा बुद्धियुक्त जो धर्मशिक्षा देइ सोई तुम्हारो हितू होइ अर्थ ताही को हितू करियो अधर्मीनसों बोलियो न इत्यर्थः ३४ ये जे पांच हैं तिनको धर्माधिकारी न करियो संकल्प को द्रव्य जे दिये ग्रामादि हैं तिनकी रक्षा करियो आपुही अर्थ आपनेही हाथसों ३५ आपने देशके समीप को जो राजा है

ताको शत्रुता के आगे को मित्रताके आगे को उदासीन जोवै देखै जानै इति । याही भांति चारिहू ओर तीन तीन राजमंडल सब द्वादश राजमंडल जानो औ मध्यमें आपनो राजमंडल जोरि सब तेरह मंडल प्रसिद्ध हैं तिनसों युक्त जो भूतल है ताको या प्रकार क्रमही क्रम साधै तौ ताको शत्रु मित्र उदासीनता बाधै कैसे साधै सो कहत हैं कि शत्रु को विग्रह कहे दंड उपाय सों औ मित्र को साधि कहे साम उपाय सों उदासीनको दान उपायसों युक्त करै इति शेषः तो सिंधुपर्यंत चारों ओर लैकै सुखसों सोवै "विषयानन्तरो राजा शत्रुर्मित्रमतः परम् । उदासीनः परतर इत्यमरः" ३६ ॥

दोहा ॥ राजश्रीवश कैसेहू होहु न उर अवदात ॥ जैसे तैसे आपुवश ताकहँ कीजै तात ३७ यहि विधि सिखदै पुत्र सब बिदा करै दै राज ॥ राजत श्रीरघुनाथसँग शोभन बंधु समाज ३८ रूपमालाछंद ॥ रामचन्द्रचरित्र को जो सुनै सदा सुखपाइ । ताहि पुत्र कलत्र सम्पति देत श्रीरघुराइ ॥ यज्ञ दान अनेक तीरथ न्हानको फल होइ । नारिका नर विप्र क्षत्रिय वैश्य शूद्र जो कोइ ३९ रूपक्रांताछंद ॥ अशेष पुण्य पापके कलाप आपने बहाइ । विदेह राज ज्यों सदेह भक्तरामको कहाइ ॥ लहै सुभुक्ति लोकलोक अंत मुक्ति होहि ताहि । कहै सुनै पढ़ै गुनै जो रामचन्द्रचन्द्रिकाहि ४० ॥

इति श्रीमत्सकललोकलोचनचकोरचिन्तामणिश्रीरामचन्द्रचन्द्रिकायामिन्द्रजिद्विरचितायांकुशलवसमागमोनामैकोनचत्वारिंशत्प्रकाशः ॥ ३९ ॥

३७ शोभन सुंदर ३८ । ३९ कलाप समूह पुण्यपापके नाशसों मुक्ति होति है " अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् इति प्रमाणात् " अथवा याके धारणसों प्राप्त जो यज्ञादिको अशेष संपूर्ण पुण्य है तासों पापके कलाप बहाइ कै ४० ॥

इति श्रीमज्जगज्जननिजनकजानकीजानकीजानिप्रसादाय जनजानकीप्रसादनिर्मितायांरामभक्तिप्रकाशिकायामेकोनचत्वारिंशत्प्रकाशः ॥ ३९ ॥

——o——

कवित्त "कैधौं शुभ सागर विराजमान जामें पैठि पाइयत परमपदारथ की रासिका। कंठ में करत शोभ धरत सभा के मध्य कैधौं सोहै माल उर विमल उजासिका ॥ सेवतही जाको लहै सुमन प्रवीणताई जानकी-प्रसाद कैधौं भारती हुलासिका । ज्ञानकी प्रकाशिका मुकुतिप्रदकासिका है सेइये सुजन रामभगतिप्रकाशिका १ दोहा ॥ रामभक्ति उर आनिकै राम-भक्तजन हेतु । रामचंद्रिकासिंधु में रच्यो तिलकको सेतु २ जो सुपंथ तजि सेतु को चलहि और मग ओर । रामचन्द्रिकासिंधु को लहहि कौन विधि ओर ३ ॥"

कवित्त ॥ तूरचो शम्भुधनु भृगुनाथ को गरब चूरयो ऊरयो निज राज पूरयो पितु को परन है । वन वरवास कीन्हें निशिचर नास कीन्हें रविसुत आस कीन्हें आवत शरन है ॥ कपिकर लंक जारचो पारचो सेतु सिंधु-महँ मारचो दशशीश बंधु धारयो नृपधन है । ख्यालसम कीन्हें जिन अद्भुत काम बंदियत अभिराम नृप राम के चरन है १ ॥

इति श्रीरामचन्द्रिका सटीका समाप्ता ॥